श्रमजीवी
श्रम विभाग का वार्षिकोत्सव अंक

विषय-सूची

१ मार्च, १९५२ को दर्शनपुरवा केन्द्र में श्रीमती ओंकारनाथ मिश्र द्वारा श्रम हितकारी प्रदर्शिनी का उद्घाटन

इस विशेषांक के लेखों में प्रकट किये गये विचार लेखकों के अपने निजी विचार हैं, तथा यह आवश्यक नहीं है कि उक्त विचार किसी भी प्रकार से सरकारी नीति या दृष्टिकोण के प्रतीक हों।

Kishori Lal ...

श्रमजीवी

उत्तर प्रदेशीय श्रम विभाग का साप्ताहिक मुखपत्र

वर्ष ४ संख्या २५ | कानपुर, दिनांक ९ मार्च, १९५२ | इस अंक का मूल्य चार आना

उत्तर प्रदेश में चीनी के कारखानों के मज़दूरों के लिये गृह-निर्माण योजना

ओंकारनाथ मिश्र, आई. ए. एस.

भारत के श्रमिक-वर्ग की समस्याओं में एक महत्व-पूर्ण किन्तु सम्भवतः सबसे जटिल समस्या मजदूरों के लिए कम किराये पर रहने योग्य मकानों की व्यवस्था करना है। मजदूरों के लिए मकानों की व्यवस्था करने के प्रश्न का औद्योगीकरण की व्यापक समस्याओं से गहरा सम्बन्ध रहा है। औद्योगीकरण के फलस्वरूप बहुत से गृह-विहीन मजदूर एक स्थान पर एकत्र होते हैं और उनके लिए निवास के समुचित साधन जुटाना

आवश्यक होता है। अन्य देशों में औद्योगीकरण की वृद्धि के साथ साथ कालान्तर में औद्योगिक कर्मचारियों के निवास का भी प्रबन्ध होता गया। किन्तु भारत में ऐसा नहीं हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि उद्योग क्षेत्रों में बस्तियों का योजनाहीन असम्बन्ध विकास होता गया और संकीर्ण, घनी तथा गन्दी बस्तियां बनती गईं। आज भारत के सभी बड़े-छोटे औद्योगिक नगरों में अधिकांश मजदूर गन्दे व रहने के अयोग्य मकानों में जीवन बिताते हैं।

उत्तर प्रदेश के चीनी के कारखानों में काम करने वाले मजदूरों के निवास व्यवस्था के सम्बन्ध में कुछ और भी विशेष प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। चीनी के कारखाने साल में केवल तीन-चार महीने ही चलते हैं और शेष समय में बन्द रहते हैं। अतः अधिकांश मजदूर इन कारखानों में वर्ष में केवल तीन-चार महीनें ही के लिए आते हैं। उत्तर प्रदेश में चीनी के अधिकतर कारखाने गाँवों, कस्बों या छोटे छोटे नगरों में हैं, जहां या तो किराये के लिए फालतू मकान मिलते ही नहीं है और या बहुतही अपर्याप्त संख्या में होते हैं। जिन तीन-चार महीनों के लिए चीनी के कारखाने चालू होते हैं, उस समय इन छोटे गांवों या कस्बों की अति सीमित निवास-व्यवस्था पर काम पर आये हुए बाहरी मजदूरों का इतना बोझ पड़ता है कि उसको वे वहन करने में असमर्थ होते हैं। निवास-व्यवस्था सम्बन्धी यह एक विशेष प्रकार की समस्या उत्तर प्रदेश के चीनी के उत्पादक क्षेत्रों में पाई जाती है।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है औद्योगिक मजदूरों के मकानों की समस्या बहुत जटिल है। पिछले कई वर्षों से समय समय पर इसको सुलझाने के प्रयत्न किये गये, किन्तु अभी तक अधिक सफलता नहीं मिली थी। इस समय जमीन और इमारती सामान का मूल्य एवं भवन-निर्माण का व्यय बहुत बढ़ा-चढ़ा है। आज-कल स्वीकृत स्तर के साधारणतया अच्छे मकान की लागत बहुत अधिक आती है। मजदूरों के मकानों की सारी समस्या का निचोड़ है, ऐसे मकानों का निर्माण करना जो एक समुचित, निर्दिष्ट स्तर के अनुकूल होते हुए भी इतने सस्ते हों कि किराये के रूप में उनका भार श्रमिकों की सीमित आय वहन कर सके। किन्तु आज की परिस्थितियों को देखते हुए तो समस्या का इस प्रकार से हल करना मिठाई को खाने और उसको अपने पास बनाये रखने के दोनों आनन्द को एक साथ प्राप्त करने के समान असम्भव-सा ही मालूम पड़ता है, यदि मकानों को एक निर्दिष्ट स्तर से नीचे नहीं गिराना है तो उनकी लागत और फलस्वरूप उनका आर्थिक दृष्टि से उचित किराया अवश्य ही काफी अधिक होगा। दूसरी ओर यदि आर्थिक दृष्टि से उचित किराये को मजदूर को सीमित आय के अनुकूल कम रखने के लिए कम लागत के मकान बनवाये जाँय, तो वे निर्दिष्ट स्तर से काफी नीचे गिरे हुए होंगे। बढ़ी हुई लागत के मकानों के अनुकूल आर्थिक दृष्टि से उचित किराये और मजदूर की आय के अनुकूल किराये के बीच के इस भारी व्यवधान को दूर करना ही मजदूरों के मकान की आज सबसे बड़ी समस्या है। इन सब बातों को देखते हुए यह निश्चित सा ही है कि बिना आर्थिक अनुदान के आज मजदूरों के लिए अच्छे मकानों का प्रबन्ध नहीं किया जा सकता। यह अतिरिक्त आर्थिक

श्रमिकों के लिए मकानों की समुचित व्यवस्था करना आज एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। खास तौर से चीनी के कारखानों में काम करने वाले मजदूरों के लिए, जो वर्ष में केवल तीन चार माह ही मिलों में आकर काम करते हैं, रहने की व्यवस्था करना नितान्त आवश्यक है। प्रादेशिक सरकार ने इस समस्या को सुलझाने के लिए जो कदम उठाये हैं और चीनी के मजदूरों के रहने के लिए मकानों के बनवाने की जो व्यवस्था की है, उसका अधिकार पूर्ण विवरण इस लेख में दिया गया है।

अनुदान कहाँ से मिले ? यदि आज के आर्थिक संकट के युग में समाज के एक छोटे अंग (औद्योगिक मजदूर) की सुविधा के लिए सारे समाज पर कर-भार नहीं लादना है, तो यह आर्थिक अनुदान उद्योग-धंधों से ही प्राप्त किया जा सकता है।

मजदूरों के कल्याण के लिये उद्योग धंधों पर आर्थिक अनुदान का भार रखने का सिद्धान्त भारत के लिए बिलकुल नया नहीं है। कोयला खानों एवं अभ्रक की खानों के मजदूरों के कल्याण के लिये निर्मित कोष (कोल माइन्स वेलफेयर फन्ड और माइका माइन्स वेलफेयर फन्ड) इसी सिद्धान्त के आधार पर बनाये गये हैं। उत्तर प्रदेश की सरकार नें भी चीनी के कारखानों में काम करने वाले मजदूरों के लिये मकान बनाने की व्यवस्था के हेतु इसी सिद्धान्त को अपनाया है । सरकार नें चीनी उद्योग के मजदूरों के लिए गृह निर्माण, उनके कल्याण-कार्य एवं चिकित्सा व्यवस्था के निमित्त धन संग्रहीत करने के उद्देश्य से चीनी और चालक मद्यसार उद्योग श्रमिक कल्याण और विकास निधि कानून, १९५१ (उत्तर प्रदेश शुगर एन्ड पावर अलकोहल इन्डस्ट्रीज लेबर वेलफेयर एन्ड डेवलपमेन्ट फन्ड एक्ट, १९५१) बनाया। यह कोष चीनी के कारखानों में उत्पन्न होने वाले शीरे की खुली बिक्री से प्राप्त अतिरिक्त द्रव्य को हस्तगत करके बनाया गया है। उक्त कानून के अन्तर्गत चीनी और चालक मद्यसार (पावर अलकोहल) उद्योग कल्याण और विकास कोष की स्थापना की गई है। इस कोष के तीन खाते हैं : (१) गृह-निर्माण खाता, (२) सामान्य कल्याण खाता और (३) विकास खाता। इस समय इस कोष की सम्पूर्ण धनराशि ४१,४६,३०० रु० है।

गृह निर्माण खाते की रकम मुख्यतः मकानों के निर्माण, उनके देखभाल और मरम्मत, मकानों की योजना बनाने तथा भूमि खरीदने और गृह-निर्माण मंडल (हाउसिंग बोर्ड) के सदस्यों के भत्ते आदि पर खर्च की जायगी।

चीनी के कारखानों में काम करने वाले मजदूरों के मकानों को बनाने की योजनाको कार्यान्वित करने के लिये १ अक्तूबर १९५१को उक्त कानूनके अन्तर्गत गृह-निर्माण मंडल की स्थापना की गई। इस मंडल में तीन सरकारी, तीन मजदूरों के प्रतिनिधि तथा तीन मिल मालिकों के प्रतिनिधि हैं और इस मंडल के अध्यक्ष प्रादेशिक लेबर वेलफेयर कमिश्नर हैं । इसके अतिरिक्त इस कोष सम्बन्धी सम्पूर्ण विषयों पर अधिकारियों को परामर्श देने के लिए प्रदेशीय सरकार ने एक परामर्श-दात्री समिति की भी स्थापना की है। इस समिति के अध्यक्ष प्रदेश के माननीय श्रम मंत्री महोदय हैं।

उक्त योजना के अन्तर्गत प्रदेश के ६६ चीनी-कारखानों में मजदूरों के लिए कुल १,७०० मकानों का निर्माण करना निश्चित किया गया है। इनमें १,०५० मकान एक कमरे वाले होंगे और ६५० दो कमरे वाले। इन मकानों में बरांडा, पाकशाला, स्नानागार एवं शौचालय की व्यवस्था भी रहेगी। अनुमानतः एक कमरे वाले एक मकान के बनवाने की लागत २०४० रु० और दो कमरे वाले की ३,८०० रु० होगी। मकानों को बनाने का दायित्व कारखानों के मालिकों को सौंपा गया है। इस कार्य के लिए उनको इमारती सामान व जमीन प्राप्त करने में सहायता एव कोष से आर्थिक अनुदान सरकार की ओर से प्राप्त होगा। ६६ कारखानों में १,७०० मकान बनाने के लिए उक्त कोष में से ३९,००,१४१ रु० नियत किया गया है। यह धनराशि कारखाने के मालिकों को एक ही बार में नहीं दे दी जायेगी। कारखानों में जैसे जैसे भवन निर्माण की प्रगति होती जायगी वैसे ही वैसे थोड़ा थोड़ा रुपया कई बार में दिया जायगा।

जिन कारखानों में स्वीकृत धन राशि ७००००) के लगभग या उससे अधिक थी, वहाँ प्रादेशिक सरकार के टाउन एन्ड विलेज प्लानर ने हमारी प्रार्थना पर, मजदूरों के मकान एक बस्ती के रूप में बनाने की योजना बनाई है। यह योजना हर एक कारखाने के लिये भिन्न

(शेष पृष्ठ ६० पर)

एशिया में श्रम सम्बन्धी कानून

भारत व अन्य एशियाई देशों की प्रगति का तुलनात्मक अध्ययन

महेशचन्द पन्त

श्रम सम्बन्धी कानूनों व सरकारी सामाजिक नीति के क्षेत्र में भारत का स्थान समस्त एशियाई देशों में सर्व प्रथम है। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् और विशेष कर स्वतत्रंता प्राप्ति के पश्चात् इस दिशा में प्रशंसनीय प्रगति हुई है। यही नहीं पाश्चात्य देशों में भी कुछ देशों को छोड़कर अधिकांश की तुलना में भारत इस दिशा में प्रगतिशील है। कुछ क्षेत्रों में यह शंका प्रकट की जानें लगी है कि देश की आर्थिक स्थित; औद्योगिक विकास व सामाजि दिशा को देखते हुए यह गति बहुत अधिक है पर लेखक के विचार में यदि श्रमिक व उद्योगपति अपने उत्तरदायित्व को समझ कर काम करें तो सरकार की इस उदार नीति से समाज का भला ही होगा।

२४ फरवरी को कानपुर में कामकरों की राज्य बीमा योजना के उद्घाटन समारोह के अवसर पर बोलते हुए उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री माननीय पं० गोविन्द वल्लभ पन्त ने कहा था कि श्रमिक वर्ग के हित में कानून बनानें कीदिशा में समस्त एशियाई देशों में भारत का स्थान अग्रगण्य है। जन साधारण की यह धारणा है कि औद्योगिक विकास की दिशा में भारत अभी काफी पिछड़ा हुआ है और इसीलिए श्रमिकों के हित में बनाये गये कानूनों के मामले में भी भारत की गणना पिछड़े हुए देशों में हो होनी चाहिये, विशेषतः यदि जापान जैसे अधिक सुविकसित अथवा चीन जैसे नव निर्मित जन सत्तावादी देश से उसकी तुलना की जाय। किन्तु विभिन्न एशियाई देशों के श्रम सम्बन्धी

कानूनों के तुलनात्मक अध्ययन से यह धारणा सर्वथा भ्रान्ति मूलक सिद्ध होती है। वास्तव में एशियाई देशों में तो भारत इस दिशा में सदा ही अग्रगण्य रहा है और यूरोप में भी कुछ अधिक विकसित देशों को छोड़ कर अन्य देशों की अपेक्षा भारत अधिक प्रगतिशील रहा है। इस लेख में एशियाई देशों में श्रम सम्बन्धी कानूनों के तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा इसी बात पर प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है।

तालिका १(पृष्ठ ६, ७) में यह दिखलाया गया है कि श्रमिक-वर्ग की विभिन्न २८ समस्याओं पर एशिया के १५ देशों में से किस किस देश में कानून बने हुए हैं। किसी श्रम-समस्या पर किसी देश में यदि साधारण कानून है तो इस प्रकार का एक चिन्ह * दिखाया गया है। यदि उस सम्बन्ध में कोई विशिष्ट कानूनी व्यवस्था है तो ऐसे दो चिन्ह * * दिखाये गये हैं। यदि उस समस्या पर किसी देश में किसी भी प्रकार के कानून की व्यवस्था नहीं है तो ऐसा चिन्ह—दिखाया गया है।

इस तालिका को देखने से पता चलता है कि भारतवर्ष में २८ में से २३ समस्याओं से सम्बन्धित कानून की व्यवस्था है। इनमें से १३ मामलों पर तो विशेष रूप से व्यवस्था की गई है। श्रम समस्याओं से सम्बन्धित विशिष्ट एवं साधारण कानूनी व्यवस्था उपलब्ध करने के दृष्टिकोण से क्रम के अनुसार एशिया के विभिन्न देश इस प्रकार से हैं :—

तालिका सं० २

क्रम संख्या	देश	कानूनी व्यवस्था के विशिष्ट दृष्टान्त	कानूनी व्यवस्था के साधारण दृष्टान्त	योग
१	भारत	१३	१०	२३
२	हिन्दचीन	३	१७	२०
३	जापान	४	१५	१९
४	चीन	३	१६	१९
५	सीलोन	९	८	१७
६	बर्मा	६	१०	१६
७	पाकिस्तान	१	१३	१४
८	फिलिपाइन्स	१	१२	१३
९	भारतमें फ्रान्सिसी उपनिवेश	०	१३	१३
१०	इन्डोनेशिया	१	११	१२
११	हाँगकांग	२	९	११
१२	अफगानिस्तान	०	११	११
१३	मलाया	१	९	१०
१४	सिंगापुर	०	८	८
१५	थाइलैन्ड	०	४	४

उपर्युक्त सूची में भारत का स्थान क्रम के अनुसार एशियाई देशों नें सर्वोपरि है। यहां पर एशियाई देशों के अतिरिक्त अन्य देशों का भी तुलनात्मक विवरण दिया जाना चाहिए, किन्तु स्थानाभाव के कारण ऐसा कर सकना सम्भव नहीं है। यों तो जैसा ऊपर कहा जा चुका है, पाश्चात्य देशों में भी कुछ देशों को छोड़कर अधिकांश की तुलना मे भारत इस दिशा में अधिक प्रगतिशील है।

किसी भी देश में प्रगतिशील श्रम-सम्बन्धी कानूनों का अस्तित्व या तो सम्पूर्ण समाज की प्रगतिशील सामाजिक चेतना के फलस्वरूप हो सकता है अथवा सामाजिकता की भावना से प्रेरित सरकार की नीति उसका कारण हो सकती है। किन्तु यदि सरकारी नीति के अनुरूप सामाजिक कानूनों का ऐसा कार्यक्रम अपनाया जाय जिसके लिए पर्याप्त सामाजिक चेतना के अभाव में वह समाज पूरी तरह से तैयार न हो तो ऐसी दशा में परिस्थितियों के प्रतिकूल जबर्दस्ती लादा गया कानून या तो केवल कोरा कागजी मसविदा ही बना रह जाता है, और या, यदि उसको किसी न किसी तरह सक्रिय रूप से लागू किया ही जावे, तो उसका बोझ समाज झेल नहीं पाता।

भारत वर्ष में श्रम सम्बन्धी सामाजिक कानूनों का श्रीगणेश ब्रिटिश शासन में ही हो गया था और अधिकांशतः वे ब्रिटिश श्रम कानूनों के नमूने पर ही बनाये

(शेष ५७ पृष्ठ पर)

तालिका

		औद्योगिक दुर्घटना (एक्सिडेन्ट्स)	खेतिहर मजदूर (एग्रीकल्चरल वर्कर्स)	बच्चे व अल्प वयस्क व्यक्ति (चिल्ड्रेन एंड यंग पर्सन्स)	सामूहिक समझौते (कलेक्टिव एग्रीमेन्ट्स)	संराधन और मध्यस्थ निर्णयन (कंसीलियेशन एन्ड आर्बिट्रेशन)	शिशु-गृह (क्रैशे)	जहाजी और जहाज घाट के मजदूर (डाक वर्कर्स एन्ड सी मैन)	घरेलू नौकर (डोमेस्टिक वर्कर्स)	मजदूरों पर दायित्व (इम्प्लाईज : देयर ड्यूटीज)	मालिकों पर दायित्व (इम्प्लायर्स : देयर ओब्लीगेशन्स)	काम दिलाऊ संस्था (इम्प्लायमेन्ट सर्विस)	स्वास्थ्य बीमा (हेल्थ इन्श्योरेन्स)	सवेतन छुट्टी (होली डे विद पे)	काम के घंटे व विश्राम की अवधि (आवर्स आव वर्क एन्ड रेस्ट पीरियड्स)	गृह निर्माण की व्यवस्था (हाउसिंग)	[illegible]	निरीक्षण (इन्सपेक्शन)
१.	अफ़गानिस्तान	*	–	*	–	–	–	–	–	*	*	–	–	*	*	–		*
२.	बर्मा	*	**	**	–	*	*	*	–	–	*	–	–	–	**	–	*	**
३.	सीलोन	*	–	**	–	*	–	*	–	–	**	–	–	**	**	*	*	**
४.	चीन	*	**	*	*	*	–	*	–	*	*	*	–	*	*	*		*
५.	भारत में फ्रान्सीसी उपनिवेश	*	–	*	*	*	*	–	–	–	–	–	–	*	*	–		*
६.	हांगकांग	–	–	**	–	*	–	*	*	–	–	–	–	–	*	–		*
७.	भारतवर्ष	**	*	**	–	**	**	**	–	–	**	–	*	*	**	*	*	**
८.	हिन्दचीन	*	*	*	*	*	*	*	–	–	*	*	–	*	**	*	*	*
९.	इंडोनेशिया	*	–	*	–	–	–	*	–	–	*	*	–	*	**	*		*
१०.	जापान	**	*	*	**	*	–	**	–	–	*	–	*	*	*	–		*
११.	मलाया	*	–	**	–	*	–	*	–	–	*	–	–	*	–	–		*
१२.	पाकिस्तान	*	–	*	–	*	*	–	–	–	*	–	–	*	*	–		*
१३.	फिलीपाइन्स	*	–	*	–	*	–	*	–	–	**	*	–	–	*	–		*
१४.	सिंगापुर	–	–	*	–	*	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–		*
१५.	थाईलैंड	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	*	–	–	–	–		*

यद्यपि भारतवर्ष में काम दिलाऊ संस्था सम्बन्धी कोई कानून नहीं है, तथापि इस देश में इस प्रकार की संस्था कितनी क

तालिका संख्या १

निरीक्षण (इन्स्पेक्शन)	मातृत्व (मेटर्निटी)	न्यूनतम मजदूरी (मिनिमम वेजेज़)	व्यावसायिक रोग (ओक्यूपेशनल डिज़ीज़)	प्राविडेंट फंड	दुकानों व कार्यालयों के कर्मचारी (एस्टैब्लिशमेंट्स)	श्रमिक संघ (ट्रेड यूनियन्स)	बेरोजगारी का बीमा (अनइम्प्लायमेंट इन्श्योरेन्स)	मजदूरी (वेजेज़)	कल्याण कार्य (वेलफेयर)	स्त्री मजदूर (वीमेन वर्कर्स)	कार्य समिति (वर्क्स कमेटीज़)	योग: विशेष व्यवस्था	योग: साधारण व्यवस्था	पूर्ण योग
*	–	–	*	–	–	–	–	*	*	–	–	०	११	११
**	–	*	*	–	–	*	–	*	*	**	–	६	१०	१६
**	–	*	**	–	*	*	–	**	*	**	–	९	८	१७
*	–	*	–	–	–	**	–	**	*	*	–	३	१६	१९
*	–	*	–	–	–	*	–	*	–	*	–	०	१३	१३
*	–	*	–	–	–	*	–	*	–	**	–	२	९	११
**	*	*	**	**	*	*	–	*	**	**	*	१३	१०	२३
*	*	*	*	–	–	*	–	**	–	*	–	३	१७	२०
*	–	–	*	–	–	–	–	–	–	*	–	१	११	१२
*	*	*	*	–	*	–	*	**	–	*	–	४	१५	१९
*	–	*	*	–	–	–	–	*	–	–	–	१	९	१०
*	–	–	*	–	–	*	–	–	*	**	*	१	१३	१४
*	–	*	–	–	–	*	–	*	–	*	–	१	१२	१३
*	–	*	*	–	–	*	–	–	–	–	–	०	८	८
*	–	–	*	–	–	–	–	–	–	–	–	०	४	४

किसी कानून के आधार के बिना कार्य कर रही है और देश के सभी प्रमुख नगरों में काम दिलाऊ कार्यालय हैं।

कारखाना कानून, १९४८ के अन्तर्गत श्रम-हितकारी नियोजन

उदयवीर सिंह

कारखाना कानून, १९४८ के अन्तर्गत मज़दूरों के स्वास्थ्य एवं उनके हितों के लिये कुछ महत्वपूर्ण व्यवस्थायें कर दी गई हैं। इन व्यवस्थाओं से पूरा लाभ उठाने के लिये यह जरूरी है कि इनकी जानकारी मज़दूरों को भलीभांति हो। प्रस्तुत लेख में लेखक ने इन व्यवस्थाओं का पूर्ण विवरण दिया है

भारत सरकार ने कारखाना कानून, १९४८ में ऐसे संशोधन किए हैं, जिनसे श्रमिकों की स्वास्थ्य रक्षा के लिए व्यवस्थायें उपलब्ध करना अनिवार्य हो गया है। कारखाना कानून, १९४८ उन कारखानों में लागू है जिनमें १० या १० से अधिक मजदूर काम करते हैं और जिनमें बिजली या आयल इंजिन से मशीन का काम होता है। यह कानून उन कारखानों में भी लागू है, जिनमें बिजली या आयल इंजिन से मशीन नहीं चलाई जाती, पर जिनमें २० या २० से अधिक मजदूर काम करते हैं। यह कानून हमारे देश में १ अप्रैल सन् १९४९ से लागू है। इस कानून में जो व्यवस्थायें श्रमिकों के हित के लिए की गई हैं, उनका जानना कारखानों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए आवश्यक है। यहाँ पर मैं केवल स्वास्थ्य सम्बन्धी हितकारी व्यवस्थाओं का उल्लेख करता हूँ।

(१) नहाने धोने की व्यवस्था :—१ अप्रैल १९५१ के पहिले प्रत्येक कारखाने में नहाने धोने की समुचित व्यवस्था कर दी जायगी। उन कारखानों में जहां काम की गन्दगी और अस्वस्थता के कारण शरीर गन्दा हो जाता है, श्रमिकों को कारखाने से साबुन भी दिया जायगा। नहाने धोने की जगहें ऐसे स्थान पर होना चाहिए, जहां मज़दूर आसानी से आ जा सकें, और उन स्थानों को पूर्णतः स्वच्छ रखना अनिवार्य है। पानी के पम्पों के आसपास पक्का फर्श होना चाहिए, और पानी के निकास के लिए नाली इत्यादि ठीक २ बनी होना चाहिए। ऐसे कारखानों में जहां काम करने के लिए गन्दी चीजों को छूना पड़ता है, प्रत्येक १५ मजदूरों के लिए १ पानी का पम्प होना चाहिए। दूसरे कारखानों में पानी के पम्प इस प्रकार होंगे :—

श्रमिकों की संख्या		पम्पों की संख्या
१ से २० तक	—	१
२१ से ३५ तक	—	२
३६ से ५० तक	—	३
५१ से १५० तक	—	४
१५१ से २०० तक	—	५
२०१ से ५०० तक	—	५ + प्रत्येक ५० मजदूरों के लिए १ पम्प
५०० से अधिक	—	११ + प्रत्येक १०० मजदूरों के लिए १ पम्प।

(शेष पृष्ठ ६० पर)

कामकरों की राज्य बीमा योजना

डा० जे० एन० अग्रवाल

कामकरों की राज्य बीमा योजना कानपुर और दिल्ली में २४ फरवरी, १९५२ से प्रारम्भ की जा चुकी है। एशिया में भारत ही ऐसा देश है जहाँ सामाजिक बीमा का श्री गणेश किया गया है। प्रस्तुत लेख में यह दिखलाया गया है कि इसके अन्तर्गत कामकरों को कौन से हित लाभ मिलेंगे।

कामकरों की राज्य बीमा योजना जो दिल्ली और कानपुर में २४ फरवरी, १९५२ से प्रारम्भ की जा चुकी है हिन्दुस्तान में सामाजिक बीमा का पहिला विधान है। यह योजना सबसे पहले उन सब कामकरों (स्त्री अथवा पुरुषों) पर लागू होगी जिनकी मासिक आय ४०० रु० से अधिक नहीं है और जो उन कारखानों में काम करते हैं जिनमें बिजली या किसी दूसरी शक्ति से काम लिया जाता है और २० या उससे अधिक लोग काम करते हैं। इस विधान के द्वारा पांच मुख्य फायदे कामकरों को मिलेंगे। सबसे पहला फायदा तो यह है कि हर कामकर की चिकित्सा मुफ्त की जायगी। इसके अलावा उनके बीमारी के कारण अयोग्य होने पर या काम पर चोट लग जाने के कारण अयोग्य होने पर उनको आर्थिक हितलाभ मिलेगा। स्त्री कामकरों को आर्थिक मातृका हितलाभ मिलेगा और कामकरों के काम करते समय चोट लगने के कारण मौत हो जाने पर, उनके आश्रितों को पेंशन मिलेगी। इस तरह इस योजना के द्वारा कामकरों को चार प्रकार के आर्थिक हितलाभ मिलेंगे जिनका ब्योरा संक्षेप में दिया जाता है।

बीमारी में आर्थिक हितलाभ

यह लाभ बीमा युक्त कामकरों को प्रमाणित बीमारी के काल में मिलेगा। इस योजना के अनुसार बीमारी उस दशा को माना गया है जबकि कामकर बीमारी के कारण काम पर न जा सके और उसको चिकित्सा कराने की आवश्यकता हो। बीमारी के आर्थिक हितलाभ की दर लगभग उसकी औसत दैनिक आय का आधा हिस्सा है। चूंकि यह लाभ उसकी बीमारी की अवधि के सब दिनों में अर्थात् रविवार और अन्य छुट्टी के दिनों में भी मिलता रहेगा, इसलिये इसकी दर उसकी साप्ताहिक आमदनी का लगभग ७।१२ हिस्सा होगी। किन्हीं ३६५ दिन के निरन्तर काल में बीमारी का आर्थिक

लाभ ५६ दिन मिल सकता है। बीमारी के पहिले दो दिनों में आर्थिक लाभ नहीं मिलेगा, किन्तु यदि कोई बीमारी जिसके लिये उसको पहले हितलाभ मिल चुका हो, उसके १५ दिन या उससे कम दिनों के पहले शुरू हो जाती है तो उसको पहले दिन से ही हितलाभ मिलने लग जायगा।

मातृका हित लाभ

बीमा की हुई स्त्री कामकरों को प्रसूतावस्था में दिया जाने वाला हितलाभ है। यह लाभ १२ आने प्रति दिन या बीमारी आर्थिक हितलाभ की दर, जो भी अधिक हो, उसके हिसाब से १२ हफ़्ते (६ सप्ताह बच्चा पैदा होने से पहले और ६ सप्ताह बच्चा पैदा होने के बाद) तक मिलेगा। यह लाभ भी उसको सप्ताह के सभी दिनों में अर्थात् रविवार और अन्य छुट्टी के दिनों में भी मिलेगा इसलिये इसकी दर भी उसकी औसत् साप्ताहिक कम से कम ७।१२ हिस्से होगी। क्योंकि मातृका लाभ की कम से कम दर १२ आने प्रतिदिन है इसलिये उन स्त्री कामकरों के लिये जिनका वेतन १।। रु० रोज से कम है, मातृका लाभ का अनुपात उनकी आमदनी के ७।१२ हिस्से से भी अधिक होगा। कानपुर रीजनल आफिस के द्वारा भिन्न भिन्न कारखानो में काम करने वाली स्त्री कामकरों की गणना से यह मालूम हुआ है कि अब भी काफी स्त्री कामकरों की औसत् आमदनी १।। रु० प्रति दिन से कम है।

अपाहिज हो जाने पर हितलाभ

बीमा युक्त कामकर को उस समय मिलेगा जब कि वह काम पर चोट लग जाने या औद्योगिक बीमारी के कारण अपाहिज हुआ है। काम करते हुये चोट लगने के कारण कामकर स्थायी या अस्थायी रूप से अपाहिज हो सकता है।

अस्थायी रूप से अपाहिज होने पर लाभ की दर लगभग उसकी औसत् साप्ताहिक आमदनी का ७।१२ हिस्सा होगी और यह लाभ जब तक वह अस्थायी रूप से अपाहिज रहेगा उसको मिलता रहेगा। इस लाभ के मिलने के लिय बीमारी आर्थिक हितलाभ की तरह को अवधि नहीं है।

स्थायी अपाहिजपन दो तरह का हो सकता है, पूर्ण या अपूर्ण। स्थायी अपाहिज होने पर हितलाभ की दर उसके कमाने की योग्यता की प्रतिशत पर निर्भर होगी और यह एक डाक्टरी बोर्ड की सलाह से वर्कमैन कम्पेनसेशन कानून की ४ धारा के अनुसार तय की जायगी। वर्कमैन कम्पेन्सेशन कानून की पहली सूची में कुछ खास २ चोटों के द्वारा कमाने की योग्यता में जो क्षति होती है वह दी गई है। यह दाहिने हाथ की कोनी या उससे ऊपर से हानि होने से ७० प्रतिशत होती है, बाँयें हाथ की कोनी पर या उससे ऊपर से हानि होने पर ६० प्रतिशत, दाहिने हाथ की कोनी के नीचे से हानि होने से ६० प्रतिशत, पैर के घुटने से या उसके उपर से हानि होने से ६० प्रतिशत, बाँयें हाथ की कोनी के नीचे से हानि होने से ५० प्रतिशत, पैर के घुटने के नीचे से हानि होने से ५० प्रतिशत, इत्यादि। दोनों आँखों की हानि होने से या दो या उससे अधिक अंगों में हानि होने से जिससे कि कमाने की योग्यता में कुल १०० प्रतिशत या उससे अधिक कमी हो जाय, उसको पूर्ण अपाहिजपन माना गया है।

स्थायी रूप से पूर्ण अपाहिज होने के कारण मिलने वाले हितलाभ की दर अस्थायी रूप से अपाहिज होने पर मिलने वाले हितलाभ की दर के बराबर यानी साप्ताहिक आय के लगभग ७।१२ के बराबर होगी और यह दर (Full Rate) फुल रेट कहलायगी। स्थायी रूप से अपूर्ण अपाहिज होने पर मिलने वाले हितलाभ की दर (पूरी दर) का वही प्रतिशत होगी जितनी कि बीमायुक्त कामकर की योग्यता में हानि डाक्टरी बोर्ड नियत करेगा। स्थायी रूप से अपाहिज होने पर हित-लाभ जिन्दगी भर मिलता रहेगा। चाहे वह पूर्ण रूप से अपाहिज हुआ है या अपूर्ण रूप से। अस्थायी रूप से अपाहिज होने पर हितलाभ मिलने के लिए काम से गैर हाजिर होना एक जरूरी शर्त है लेकिन स्थायी रूप से अपाहिज होने पर, चाहे पूर्ण अथवा अपूर्ण अपाहिज

हो, हितलाभ के मिलते हुए भी काम करके अपनी आय को बढ़ा सकता है। वास्तव में कामकरों की राज्य बीमा योजना का यह एक उद्देश्य है कि अपाहिज कामकरों को उनके करने योग्य कामों की शिक्षा देकर उनको फिर से काम में लगाने में मदद की जाय।

आर्थिक हितलाभ

अगर कामकर की काम पर चोट लग जाने के कारण मौत हो जाय तो उसकी विधवा और बच्चों को पेंशन के रूप में हितलाभ मिलेगा। कामकर की विधवा या विधवाओं को पूरी दर' का ३।५ हिस्से के हिसाब से जिन्दगी भर या दूसरी शादी होने तक पेंशन मिलती रहेगी। किसी कामकर के अगर दो या उससे अधिक विधवा हैं तो उनका हिस्सा आपस में बराबर बाँट दिया जायगा। हर एक पुत्र और अविवाहित पुत्री को 'पूरी दर' के २।५ हिस्से के बराबर १५ साल की उम्र तक हितलाभ दिया जायगा और अगर वे कारपोरेशन की तसल्ली के लायक शिक्षा पा रहे हैं तो यह लाभ उनको १८ वर्ष की उम्र तक मिलता रहेगा। अगर ऊपर लिखे हुए हिसाब से विधवाओं और बच्चों को मिलने वाले हितलाभ का कुल जोड़ 'पूरी दर' से अधिक हो जाता है तो उनका लाभ इस तरह कम कर दिया जायगा कि पूरी दर से ज्यादा न हो। अगर कोई कामकर चोट के कारण मरते समय कोई विधवा या बच्चा नहीं छोड़ता है तो आश्रितों का हितलाभ उसके माता पिता या दादा दादी को जिन्दगी भर मिलेगा अथवा किसी पुरुष अथवा अविवाहित या विधवा स्त्री को १५ साल की उम्र तक मिलेगा, हितलाभ की दर बीमा कोर्ट्स (Insurance Courts) के द्वारा तय की जायगी।

इस विधान से बीमा युक्त कामकर के चोट लगने के कारण अपाहिज होने पर मिलने वाले हितलाभ या मौत हो जाने की हालत में आश्रितों को मिलने वाले हितलाभ के लिए चन्दा देने की शर्त को पूरी करना जरूरी नहीं हैं। ये हितलाभ तो उसको चोट लगने से काम पर न जाने के पहले दिन से ही मिलने लगेंगे। लेकिन बीमारी हितलाभ या मातृका हितलाभ के मिलने के लिए हर एक चन्दा की अवधि में मुनासिब चन्दा देना जरूरी है। मामूली तौर पर २६ सप्ताह की एक चन्दा की अवधि (Contribution Period) होगी और उसी के मुताबिक एक २६ सप्ताह की हितलाभ अवधि होगी। इन दोनों अवधियों में १३ सप्ताह का अन्तर होगा। इसलिए ये लाभ कामकर की बीमा योजना के अन्तर्गत आने के लगभग ९ माह के बाद मिलने शुरू होंगे।

अब अगर हम कामकरों की राज्य बीमा योजना मे मिलने वाले आर्थिक हित लाभों का मुकाबला उन लाभों से करें जो कि कामकरों को मौजूदा कर्मचारियों के लिए बनाए गए कानूनों के द्वारा मिलते हैं तो हमें पता चलता है कि अभी किसी भी कानून के अन्दर उन्हें बीमारी के लिए मुआवजा देने की व्यवस्था नहीं है। कामकरों की राज्य बीमा योजना द्वारा जो हितलाभ उनको बीमारी की अवस्था में मिलेगा वह उनको एक बिलकुल नई देन है। मातृका लाभ के से विधानों (Meternity Benefit Acts) और मजदूरों की मुआवज़ा कानूनों (Workman's Compensation Acts) के द्वारा अभी भी उनको मातृका और काम पर चोट लग जाने की हालतों में कुछ लाभ मिलने की व्यवस्था है लेकिन इन हालतों में भी जो हितलाभ उन्हें कामकरों की राज्य बीमा योजना द्वारा मिलेंगे वे उनसे कहीं अधिक होंगे। इसमें जो दो खास बातें ध्यान देने लायक है, वे हैं लाभ प्राप्त करने की सुविधायें और लाभ की मात्रा।

मातृका लाभ के कानून और कामकरों को मुआवजा देने के कानून, दोनों में ही आर्थिक लाभ देने की जिम्मेदारी (श्रेय) कारखानों के मालिकों पर रक्खी गई है। बहुत दिनों के अनुभव से यह सिद्ध हो चुका है कि इस तरीके से न तो कामकरों की आर्थिक समस्या ही हल होती हैं और न उन्हें इससे आर्थिक सुरक्षा का ही अनुभव होता है। मातृका हितलाभ तथा मुआवजा कानूनों की व्यवस्था पर वार्षिक रिपोर्टों से यह साफ साफ मालूम होता है कि उनमें बहुत सी कमियों के कारण कामकरों को ज्यादातर मौक़ों पर या तो मुआ-

वजा बिलकुल मिलता ही नहीं है और अगर मिलता भी है तो उसकी मात्रा जितना मिलना चाहिए उससे बहुत कम होती है। इसके अलावा मातृका हितलाभों के कानूनों का दूसरा असर यह पड़ा कि स्त्री कामकरों की संख्या जब से ये कानून लागू हुए हैं, कम होती जा रही है। इसका अन्दाजा हमको इस बात से लगता है कि स्त्री कामकरों की संख्या उत्तर प्रदेश में १९३९ में ४८०३ थी और वह घटकर १९५० में केवल २३९७ ही रह गई, अर्थात् ५० प्रतिशत से भी कम, इसी तरह बम्बई में कुल कामकरों की संख्या १९२९-३० में २०.४ प्रतिशत से गिरकर १९४२ में १३.५ प्रतिशत रह गई है। यह बात तो अब सार्वजनिक रूप से मानी जा चुकी है कि इन अवस्थाओं से जो आर्थिक संकट होता है उसको सामाजिक रूप से हल करना ही एक संतोषजनक तरीका है। कामकरों की राज्य बीमा योजना से भारत में पहली दफा इन समस्याओं को सामाजिक तरीके से हल करने का उपाय किया गया है।

अब जहाँ तक आर्थिक हितलाभों की मात्रा का सम्बन्ध है उन पर विचार करने से यह मालूम पड़ता है कि स्त्री कामकरों को बच्चा पैदा होने की अवस्था में हितलाभ के कानूनों द्वारा अधिकतर मातृका लाभ ८ सप्ताह के लिये ही दिया गया है लेकिम कामकरों की राज्य बीमा योजना में यह लाभ १२ सप्ताह तक मिलेगा। इस व्यवस्था से स्त्री कामकरों को उचित आराम मिल जायगा और माता और बच्चे दोनों के स्वास्थ्य को भी लाभ होगा। काम पर चोट लग जाने की हालत में जो मुआवजा कानून (Workman's Compensation Act) में मिलता है उससे कामकरों की राज्य बीमा योजना में जो फायदा मिलेगा उसमें और भी विशेष अन्तर है। पहले कानून के मुताबिक अस्थायी अपाहिज होने की हालत में ज्यादा से ज्यादा ५ साल तक ही फायदा मिल सकता है और पहले सात दिन के लिये तो कोई मुआवजा मिलता ही नहीं। बीमा योजना के अनुसार यह मुआवजा चोट लगने के पहिले दिन से ही मिलने लगेगा और जब तक कामकर अपाहिज रहता है, उसको हितलाभ मिलता रहेगा। काम पर चोट लगने से स्थायी अपाहिजपन होने अथवा मौत होने पर वर्कमेन्स कम्पेनसेशन कानून के द्वारा केवल एक मुश्त में आर्थिक लाभ मिलता है लेकिन सामाजिक बीमा योजना द्वारा ये लाभ पेंशन के रूप में जिन्दगी भर मिलते रहेंगे। इस बात में कोई सन्देह नहीं हो सकता कि एक मुश्त में मिलने वाले आर्थिक हितलाभ से अपाहिज मनुष्य को या उसके आश्रितों को आर्थिक सुरक्षा नहीं मिल सकती है। वर्कमेन्स कम्पेनसेशन कानून के [द्वा]रा जो औसत मुआवजे प्रति घटना के लिये उत्तर प्रदेश के कारखानों में कामकरों के अस्थायी और स्थायी अपाहिज होने पर या मौत हो जाने पर उनके आश्रितों को मिले उनका ब्योरा वार्षिक रिपोर्टों में दिया गया है। १९४१-४७ तक जो औसत मुआवजे प्रति घटना के लिये ऐसी हालतों में मिले हैं, वे नीचे की तालिका के अनुसार हैं।

उत्तर प्रदेश में औसत मुआवजा

नीचे लिखी प्रति घटना में औसत मुआवजे की रकम:—

वर्ष	मृत्यु	स्थायी अपाहिजपन	अस्थायी अपाहिजपन
१९४१	५८८	२३४	१०
१९४२	९७५	३२७	११
१९४३	८७३	२८३	१०
१९४४	८५३	३५८	१३
१९४५	९०९	२७५	११
१९४६	१०८१	४०३	१२
१९४७	१०३२	४६४	१३

ऊपर की तालिका में जो रकमें दी गई हैं, वे इतनी कम हैं कि उनको देखकर निराशा होती है। उन्हें देखने से इस बात में कोई सन्देह नहीं रह जाता कि वर्कमेन्स कम्पेनसेशन कानून के द्वारा जो हितलाभ अपाहिजों को या उनकी मौत की हालत में उनके आश्रितों को मिलता है वह सिर्फ नाम मात्र का ही है और उससे उनकी आर्थिक सुरक्षा नहीं होती।

अब अगर हम भारतीय सामाजिक राज्य बीमा योजना द्वारा जो हितलाभ मिलेंगे उनको दूसरे

(शेष पृष्ठ १६ पर)

कानपुर में नियोजन सेवा की प्रगति

—रतन स्वरूप
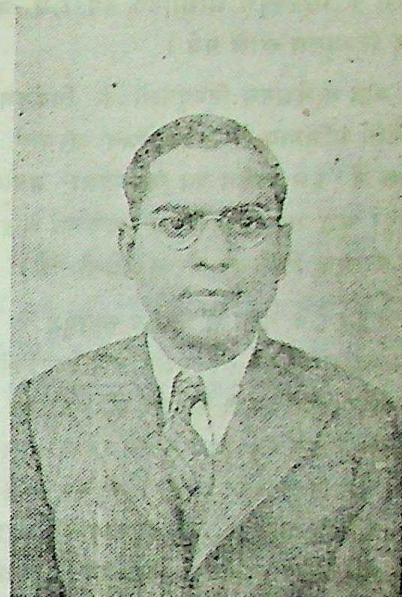
१९१९ में वाशिंगटन के प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-सम्मेलन के स्वीकृत समझौते में अन्य बातों के साथ साथ एक केन्द्रीय अधिकार के नियन्त्रण में निःशुल्क नियोजन संस्थाओं की व्यवस्था की गई थी। १९२१ में भारत ने इस समझौते को अपनी स्वीकृति दे दी। इस प्रकार की स्वीकृति देने वाले कुछ देशों में भारत एक था। देश की प्रान्तीय सरकारों ने अपने अपने प्रान्तों में बेकारी जांच कमेटियाँ स्थापित कीं। देश में बेकारी का सामना करने के लिये इन कमेटियों ने निःशुल्क सार्वजनिक नियोजन सेवा के मूल्य को पूरी तरह स्वीकार किया। उन्होंने देश में सार्वजनिक नियोजन संस्थाओं के स्थापित करने के विचार का समर्थन किया। फिर भी

> भारत की औद्योगिक अर्थ व्यवस्था में नियोजन संस्थाएँ बेरोजगार लोगों को काम दिलाकर और उन्हें व्यावसायिक शिक्षा देकर महत्वपूर्ण कार्य कर रही हैं। प्रस्तुत लेख में लेखक ने कानपुर नियोजन संस्था के जन्म और विकास पर प्रकाश डाला है और यह दिखलाया है कि अब तक इस संस्था द्वारा कितना महत्वपूर्ण कार्य किया जा चुका है।

वैधानिक परिवर्तनों से उत्पन्न देश की अशान्त राजनीतिक दशाओं के कारण १९३८ में भारत ने उक्त समझौते के प्रति अपनी अस्वीकृति व्यक्त की। समझौते को भारत ने इसलिए अस्वीकार नहीं किया कि उसे समझौते में निहित सिद्धान्त पसन्द नहीं थे वरन् इस लिए कि इस समझौते की व्यवस्थाओं को कार्यान्वित करने में बहुत कठिनाइयां थीं। समायोजित नियोजन कार्य प्रणाली की स्थापना की दिशा में पहले पहल युद्ध काल में ठोस कदम उठाया गया।

द्वितीय महायुद्ध में अधिक उत्पादन की आवश्यकता को सर्वत्र महसूस किया गया। सरकार ने जितना भी संभव हो सका देश के उत्पादन को बढ़ाने के लिये भरसक प्रयत्न किये। युद्ध कालीन उद्योग की जन शक्ति सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये १९४०

मे देश के महत्वपूर्ण औद्योगिक नगरों में नेशनल सर्विस लेबर ट्रिब्युनल खोले गये।

बाद में नेशनल ट्रिब्युनलों के नियंत्रण के अन्तर्गत सीमित अभिप्राय से ६ नियोजन संस्थाएँ खोली गईं। भारत में इस किस्म का यह पहला प्रयोग था। चूँकि कानपुर युद्ध सामग्रियों के उत्पादन का केन्द्र था अतएव यहां पर एक नियोजन संस्था खोली गई।

१९४५ के मध्य में द्वितीय महायुद्ध के अंतिम दिनों में भारत सरकारके तत्कालीन श्रम विभागके अंतर्गत पुनर्वास और नियोजन के निदेशक का कार्यालय खोला गया। निदेशक के इस कार्यालय के खोलने का मुख्य अभिप्राय विघटित सैनिकों और अलग किये गये युद्ध-कर्मचारियों के पुनर्वास के कार्य में रक्षा विभाग की सहायता करना था। धीरे-धीरे भारत में नियोजन संस्थाओं का एक जाल फैला दिया गया। प्रादेशिक निदेशक के अंतर्गत सारा देश ८ प्रदेशों में बाँट दिया गया। ७० नियोजन संस्थाएं खोली गईं। इनमें एक केन्द्रीय, ९ प्रादेशिक और ६० उप प्रादेशिक नियोजन संस्थाएँ थीं। विभाजन के फल स्वरूप २ प्रादेशिक और १५ उप प्रादेशिक नियोजन संस्थाएँ पाकिस्तान में चली गईं। देश में राष्ट्रीय नियोजन सेवा की यह शुरूआत थी।

प्रारम्भ में ये संस्थाएँ केवल विघटित सैनिकों, अलग किये गये युद्ध-कर्मचारियों और टेकनीशियनों की सहायता करती थीं। बाद में इनका कार्यक्षेत्र बढ़ाया गया जिससे कि काम चाहने वाले अन्य लोगों के लिये भी उनकी सेवाएँ उपलब्ध हो सकें। इस प्रकार विघटित सैनिकों और युद्ध कर्मचारियों के पुनर्वास के सीमित अभिप्राय से जो नियोजन सेवा संस्था खोली गई थी सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय सेवा बन गई जिसकी निःशुल्क और निष्पक्ष सहायता सभी काम चाहने वालों के लिये उपलब्ध होने लगी। १९४७ में विभाजन के फलस्वरूप भारत आने वाले लाखों देशवासियों को फिरसे बसाने में राष्ट्रीय नियोजन सेवा बहुत ही सहायक सिद्ध हुई।

कानपुर नियोजन संस्था की स्थापना नेशनल सर्विस लेबर ट्रिब्युनल के एक भाग के रूप में १९४४ में हुई। धीरे धीरे कानपुर संस्था का कार्य बढ़ा और नवाबगंज क्षेत्र की छोटी इमारत को, जहां उसके कार्यालय का श्रीगणेश हुआ था, छोड़कर फूलबाग के के० ई० एम्० हाल में उसके कार्यालय को खोलना पड़ा। १९४५ के अन्त में जब राज्य सरकार ने नियोजन सेवा के खर्च के एक भाग को वर्दाश्त करना स्वीकार कर लिया तो बढ़े कार्य के उपयुक्त एक नई इमारत का विचार उत्पन्न हुआ। कानपुर नियोजन संस्था की इमारत १९४६ के दिसम्बर में बन कर तैयार हो गई। इस इमारत का निर्माण ब्रिटेन की नियोजन संस्थाओं की कुछ इमारतों के ढंग पर हुआ। कानपुर बड़ा शहर है, एक संस्था से, भले ही वह बीचोबीच में स्थित हो, नगर और पड़ोस की इतनी मिलों की भर्ती की समस्या को ठीक २ हल नहीं किया जा सकता। अतएव मालिकों तथा काम चाहने वालों की सुचारु रूप से सेवा करने के विचार से नगर में बहुत से उप कार्यालय खोले गये। इस नीति के फलस्वरूप ग्वालटोली, कालपीरोड, कूपरगंज, जूही, सीसामऊ, हूलागंज, हालसी रोड और अभी हाल में छावनी एरिया में उप कार्यालय खोले गये।

इस बीच इन सफलताओं से प्रोत्साहित होकर उत्तर प्रदेश श्रम त्रिदलीय सम्मेलन नियोजन संस्थाओं द्वारा मज़दूरों की आकस्मिकता निवारण भर्ती के प्रश्न पर विस्तार के साथ विचार कर रहा था। इस कमेटी ने १ जनवरी, १९४९ को अथवा उसके बाद छंटनी किये गये मज़दूरों का एक समूह बनाने की सिफारिश की। इस समूह के बनाने का उद्देश्य सूती मिलों में रिक्त होने वाले स्थानों की पूर्ति इसी समूह से करना था। दूसरा अभिप्राय एक मिल के अधिक मजदूरों को कमी वाली मिल में भेजकर आकस्मिकता निवारण को कार्य रूप देना था। समूची योजना राष्ट्रीय नियोजन सेवा, राज्य सरकार के अधिकारियों, उत्तरी भारत के मिल मालिक संघ और मजदूर नेताओं के बीच होने वाले समझौते पर आधारित है। समूह और आकस्मिकता निवारण की यह योजना, जो १९ अप्रैल, १९५० को कानपुर में शुरू की गई, पिछले २० महीनों में बहुत ही सफल रही। समूह और आकस्मिकता निवारण के ३५,१६३

मजदूर रजिस्टर किये गये हैं और १८,३३० उपयुक्त कामों पर लगा दिये गये। सूती मिलों के मजदूरों का समूह बनाने के अतिरिक्त समूह योजना के अन्तर्गत ४ उपकार्यालय अपने अपने क्षेत्रों में अन्य मिलों की जन-शक्ति आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इसी अवधि में ३६,२४४ मजदूर रजिस्टर किये गये और अन्य कारखानों में उपयुक्त स्थानों में १३,४८८ मजदूर रखे गये। सूती वस्त्र उद्योग में समूह योजना की सफलता के फलस्वरूप उसे अन्य कारखानों में लागू किया जा चुका है। अभी हाल म्युनिसिपल और कैन्टोन्मेन्ट बोर्डों की सहायता के लिये सफाई सेवा समूह बनाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। इस समूह योजना के अन्तर्गत १८,३३० मज़दूरों को काम दिलाने में एक उम्मेदवार को नौकरी पर रखने में ३.१ रुपये खर्च हुये। एक उम्मेदवार को नौकरी पर रखने में खर्च होने वाली इस रकम की तुलना संसार के किसी भी देश में एक उम्मेदवार को नौकरी पर रखने में खर्च होने वाली रकम के साथ भली प्रकार की जा सकती है। सूती मिलों के अतिरिक्त अन्य मिलों में उम्मेदवारों को रखने से सम्बन्धित उपकार्यालयों की कार्यवाहियों को यदि शामिल कर लिया जाय तो यह रकम और अधिक घट कर १.७६ रुपया हो जाता है।

कानपुर में अनिपुण मजदूरों की एक बहुत बड़ी संख्या इमारती ठेकेदारों, छोटे वैयक्तिक नियोजकों, पी० डब्ल्यू० डी० के ठेकेदारों तथा अन्य लोगों द्वारा आकस्मिक रूप से काम पर लगा ली जाती है। यह देखा गया कि ऐसे नियोजकों की मांग मुख्य कार्यालय से पूरी नहीं की जा सकती। फलस्वरूप कानपुर के तीन महत्वपूर्ण मजदूर केन्द्रों—सीसामऊ, हूलागंज और हालसीरोड में उपकार्यालय खोले गये। ये कार्यालय आकस्मिकता निवारण योजना के ही सिद्धांतों पर खोले गये हैं। इन कार्यालयों के अन्तर्गत क्षेत्रों के अधिक मजदूर अन्य कमी वाले क्षेत्रों में भेज दिये जाते हैं। काम अधिक है और दिन प्रति दिन बढ़ता ही जाता है। १९४६ से १९५१ के अन्त तक कानपुर की नियोजन संस्था द्वारा किया जाने वाला कार्य इस प्रकार है :—

वर्ष	रजिस्ट्रेशन	नौकरी पर रखे गये
१९४६	१७१२५	८०३१
१९४७	२१२२५	१०७२०
१९४८	४०६८८	२००२५
१९४९	८११०१	४०३४६
१९५०	८६७१७	४६२३२
१९५१	६१६१३	५४१११

कानपुर में एक उम्मेदवार को नौकरी पर रखने में होने वाला खर्च धीरे धीरे कम होता जा रहा है। यह नीचे की तालिका से स्पष्ट हो जायगा :—

वर्ष	प्रति उम्मेदवार खर्च
१९४६–१९४७	१४·४ रुपया
१९४७–१९४८	६·६ रुपया
१९४८–१९४९	५·१ रुपया
१९४९–१९५०	४·४ रुपया
१९५०–१९५१	३·१ रुपया
१९५१ (मार्च से दिसम्बर, १९५१)	२·९ रुपया

पुनर्वास और नियोजन के निदेशक के प्रधान कार्यालय की ट्रेनिंग योजनाएँ भारत में नियोजन सेवा का एक अभिन्न अंग है। हमारी राष्ट्रीय नियोजन सेवा का वह एक विशेष अंग है। टेकनिकल और वोकेशनल (व्यावसायिक) ट्रेनिंग योजना का प्रारम्भिक अभिप्राय भूतपूर्व सैनिकों को काम पर लगाये जाने में वृद्धि करना था जिससे कि नागरिक जीवन में प्रविष्ट होने की उन्हें सुविधा मिल सके। धीरे-धीरे ट्रेनिंग योजनाएँ विस्थापितों के लिये भी खोल दी गई और अभी हाल बिना किसी भेद-भाव के सभी श्रेणियों के उम्मेदवारों के लिये इन योजनाओं को खोल दिया गया है। उत्तर प्रदेश में इस प्रकार की ट्रेनिंग निम्न केन्द्रों में दी जाती है :—

१—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, मेरठ।
२—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, रामपुर।
३—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, अलीगढ़।
४—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, आलम बाग, लखनऊ।
५—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, अलमोड़ा।
६—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, रानीबाग।

७—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, गवर्नमेण्ट टेकनिकल इन्स्टीट्यूट लखनऊ से मिला हुआ।

८—गवर्नमेण्ट बुक वर्किग इन्स्टीट्यूट, बरेली।

९—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, बी० एच० यू० बनारस से जुड़ा हुआ।

१०—इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा।

मार्च, १९५१ से ३१ दिसम्बर, १९५१ तक कानपुर नियोजन संस्था ११२ विस्थापित व्यक्तियों को अप्रेन्टिस शिप ट्रेनिंग देने के लिये उत्तरदायी है। उत्तर प्रदेश में देहरादून और चुनार मे महिला उम्मेदारों को भी ट्रेनिंग दी जाती है। यहाँ पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान के विस्थापित कुछ नागरिक उम्मेदवारों के साथ ट्रेनिंग पा रहे हैं।

(शेष पृष्ठ १२ से आगे)

प्रमुख देशों की सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के द्वारा जो लाभ और सुविधायें मिल रही हैं उनसे मुकाबला करें तो वह कुछ भूल सी मालूम होगी। भारत जैसे पिछड़े ए देश में मनुष्यों की आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था होना एक बहुत बड़ी चीज है। कामकरों की राज्य बीमा योजना द्वारा जो हितलाभ मिलेंगे और जितने कामकरों को मिलेंगे उससे तो उस समस्या का एक अंश मात्र ही हल हो पायगा। लेकिन जहां तक हितलाभों की मात्रा का सम्बन्ध है वह दूसरे प्रमुख देशों में जो हितलाभ मिल रहे हैं, उनसे कुछ कम नहीं है। आस्ट्रेलिया, इंगलैंड, न्यूजीलैंड इत्यादि में जहाँ कि हितलाभ की दर बीमायुक्त व्यक्ति की आमदनी पर निर्भर नहीं हैं, उनके मुकाबले में भारतीय राज्य बीमा योजना में जो हितलाभों की दर हैं, वे ज्यादा उदार हैं। इन देशों में हितलाभ की दर उनकी औसत आमदनी के ५० प्रतिशत से भी कम है। इसके अलावा जिन देशों में हितलाभ की दर बीमा युक्त कामकरों की आमदनी पर निर्भर हैं, वहाँ भी मामूली तौर से हितलाभ की दर उनकी आमदनी के लगभग ५० प्रतिशत है। लेकिन हिन्दुस्तान में हितलाभ की दर उनकी आमदनी के करीब ५८ प्रतिशत के बराबर है।

इस विषय में यह बात विशेष रूप से ध्यान देने लायक है कि दुनिया के सभी देशों की आर्थिक सुरक्षा योजनाओं में सामाजिक बीमा योजनाओं का विस्तार धीरे धीरे हुआ है। किसी भी देश में सामाजिक सुरक्षा की पूर्ण व्यवस्था एक दम नहीं की गई थी। अधिकतर दूसरे देशों में जैसे कि इंगलैंड, फ्रांस, बेलजियम, जरमनी, न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया इत्यादि जहां अब बहुत ही पूर्णरूप की सामाजिक सुरक्षा की योजनायें लागू हो चुकी हैं, वहाँ भी सामाजिक बीमा योजनायें या सामाजिक मदद की योजनायें ५० साल या उससे भी पहले से शुरू कर दी गई थीं और उन सब अलग अलग छोटी छोटी योजनाओं को मिला कर एक पूर्ण रूप की योजना कुछ ही समय पहले लागू की गई हैं। जहाँ तक एशिया महाद्वीप का प्रश्न है, भारतवर्ष को इस बात का गर्व है कि वह सामाजिक बीमा योजनाओं में सबसे आगे है। इस दिशा में हमारी आगे की उन्नति बहुत कुछ इस योजना की सफलता पर निर्भर है। अगर हमें इस योजना में सफलता मिलती है तो हम विश्वास के साथ यह आशा कर सकते हैं कि इस योजना के हितलाभों को समाज के दूसरे अंगों को भी दिया जा सकेगा और दूसरे संकटों जैसे कि बेकारी, बुढ़ापा इत्यादि में भी हितलाभ मिलने की व्यवस्था की जा सकेगी। इसलिये यह हर एक मनुष्य के लिये हितकर होगी कि वे इस योजना को सफल बनावें, जिससे कि भारत में भी एक बहुत पूर्णरूप की सामाजिक सुरक्षा योजना जल्दी ही लागू की जा सके और भारत के सभी मनुष्यों को सुरक्षा का अनुभव हो सके।

वर्तमान संराधन प्रणाली और औद्योगिक झगड़े निपटाने का उचित तरीक़ा

जे० प्रसाद

प्रस्तुत लेख में लेखक ने वर्तमान एवं पहले की संराधन प्रणाली पर प्रकाश डाला है और इस बात पर जोर दिया है कि औद्योगिक झगड़ों को निपटाने के लिये केवल कानूनी तरीकों का सहारा न लेना चाहिये, बरन् सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण को सामने रखना चाहिये। राष्ट्रीय महत्व के इस कार्य में संलग्न लोगों के लिये धैर्य, अविराम प्रयत्न एवं लगनशीलता की नितान्त आवश्यकता है।

वर्तमान संराधन कार्यप्रणाली अपने इस रूप के पहले विभिन्न परिवर्तनों से गुजर चुकी है। १९४९ में संराधन कार्यप्रणाली में प्रादेशिक समझौता बोर्ड होते थे, जिनके अध्यक्ष प्रदेशों के प्रादेशिक समझौता अधिकारी होते थे। बोर्ड में दो सदस्य होते थे जिनमें एक मालिकों और एक कर्मचारियों का प्रतिनिधि होता था। बोर्ड द्वारा किसी मामले पर विचार करने के पूर्व यह आवश्यक था कि सभी तीन सदस्य उपस्थित हों। यह भी आवश्यक था कि बोर्ड में आने वाला झगड़ा पहले कर्म समिति में पेश हो चुका हो। कर्म समिति में मालिकों और कर्मचारियों के बराबर बराबर प्रतिनिधि होते थे किन्तु उनमें से किसी के प्रतिनिधियों की संख्या ७ से अधिक नहीं होती थी। कर्म समिति का अध्यक्ष मालिकों की ओर से और मंत्री कर्मचारियों की ओर से होता था। मालिकों और कर्मचारियों के बीच के सभी झगड़े इस समिति के सामने आते थे। सबसे पहले वह समझौता कराने का प्रयत्न करती थी किन्तु यदि वह समझौता कराने में असफल होती थी तो मामले को प्रादेशिक समझौता बोर्ड के पास भेज दिया जाता था जो या तो सर्व सम्मति से या बहुमत से अपना निर्णय देता था। सदस्यों के बीच मतभेद होने की दशा में बहुमत से किया गया निर्णय माना जाता था। प्रादेशिक समझौता बोर्ड के निर्णय पर औद्योगिक न्यायालयों में, (Industrial Courts) जो चार शहरों कानपुर, आगरा, इलाहाबाद और लखनऊ में स्थापित किये गये थे, अपील हो सकती थी। ऐसा १९५१ तक होता रहा जब तक कि यह अनुभव नहीं किया गया कि बदली हुई दशाओं में इस कार्य प्रणाली में कुछ संशोधनों की आवश्यकता है!

मौजूदा संराधन कार्यप्रणाली में समझौता बोर्ड, ट्रिब्यूनल और एपेलेट ट्रिब्युनल हैं। श्रम न्यायालयों के क्षेत्र में एपेलेट ट्रिब्युनल सबसे ऊँचा ट्रिब्युनल है।

समझौता बोर्ड का कार्य पार्टियों के बीच समझौता कराने का प्रयत्न करना है। इसके पूर्व पार्टियों को बोर्ड के सामने झगड़े के प्रश्नों पर आपस में वाद विवाद करने का पूरा मौका दिया जाता है। ऐसा इसलिये किया जाता है कि श्रमिक न्यायालय में मामले के जाने के पूर्व औद्योगिक मेल बनाये रखने के हित में पार्टियों के बीच समझौता हो जाय। फिर भी यदि सफलता नहीं मिलती तो यह अध्यक्ष के ऊपर है कि वह श्रम कमिश्नर के द्वारा राज्य सरकार के पास बोर्ड की सिफारिशें एवं अपनी रिपोर्ट भेज दें। पहले के प्रादेशिक समझौता बोर्ड की भाँति मौजूदा समझौता बोर्ड में मालिकों और कर्मचारियों के प्रतिनिधियों का उपस्थित रहना आवश्यक नहीं है। अध्यक्ष को अधिकार है कि वे उनमें किसी के प्रतिनिधि

की अनुपस्थिति में भी मामले पर विचार करना जारी रखें।

ट्रिब्युनल के समक्ष शिकायत कर्ता अपने दावे को रखता है जिसका उत्तर देने के लिये विरोधी पक्ष को अधिकार प्राप्त है। ट्रिब्युनल में या तो एक ही अभिनिर्णायक होता है या स्टेट इण्डस्ट्रियल ट्रिब्युनल जिसमें तीन सदस्य होते हैं। उनमें एक सदस्य ट्रिब्युनल का अध्यक्ष होता है। ये अभिनिर्णय आदेश राज्य सरकार द्वारा अलग अलग ट्रिब्युनलों में भेज दिये जाते हैं। ट्रिब्युनलों द्वारा निर्णय घोषित करने की अवधि निर्धारित है। यह अवधि राज्य सरकार द्वारा बढ़ाई जा सकती है बशर्ते कि सरकार को इस बात का सन्तोष हो जाय कि अवधि का बढ़ाना आवश्यक है।

अभिनिर्णायक के निर्णय के विरुद्ध एपेलेट ट्रिब्युनल में अपील होती है किन्तु सभी प्रश्नों पर नहीं वरन् केवल कुछ मामलों पर जो नीचे दिये गये हैं—

(अ) वह अपील जिसमें कानून सम्बन्धी खास प्रश्न हो।

(ब) निम्न विषयों से सम्बन्धित अपीलें :—

[१] मजदूरी

[२] बोनस

[३] पेंशन फंड या प्राविडेण्ट फंड

[४] मजदूरों पर किये गये विशेष खर्च

[५] पदच्युति पर दी जाने वाली ग्रेचुटी

[६] वेतन क्रम का वर्गीकरण

[७] कर्मचारियों की छटनी आदि

एपेलेट ट्रिब्युनल का निर्णय अन्तिम होता है उसके विरुद्ध अपील नहीं होती।

इस प्रकार जहां तक झगड़े की दूसरी और तीसरी स्थिति का सम्बन्ध है, वह कानूनी तौर पर निर्णय देने का प्रश्न है। प्रत्येक पार्टी को अधिकार है कि वह अपने प्रतिनिधि द्वारा, जो वकील न हो, अपनी बात कह सकती है, गवाही पेशकर सकती है और ऐसी अन्य सामग्री पेश कर सकती है जिससे कि मामले पर प्रकाश पड़ सकता हो। अतएव अपने मामले में सफलता प्राप्त करने के लिये यह अच्छे से अच्छे ढंग से लड़ने का सवाल है।

औद्योगिक झगड़े सामान्य दीवानी के मुकदमों से भिन्न होते हैं। अतएव वे दीवानी के मुकदमों की भांति तय नहीं किए जा सकते। औद्योगिक झगड़े सामाजिक न्याय और समानता पर आधारित मागों के कारण पैदा होते हैं। यदि इन मामलों को बिल्कुल ठहराव के ही आधार पर तय किया जाय तो औद्योगिक मेल-मिलाप में अड़चन पैदा हो। बिल्कुल कानूनी-दृष्टिकोण से मालिक और उसके कर्मचारी के बीच के झगड़े ठहराव के ही आधार पर तय किए जा सकते हैं किन्तु ऐसा न तो समयानुकूल होगा और न अन्य देशों में प्रचलित प्रथा के अनुसार ही, जहाँ औद्योगिक सम्बन्ध महत्वपूर्ण स्थित पर पहुँच चुके हैं।

अतएव मालिक और मजदूर के बीच के झगड़ों को तय करने के तरीके पर बहुत कुछ निर्भर करता है। वह सामान्य मामले जैसा नहीं होता जिसमें केवल सबूत का ही मूल्य हो। परिस्थितियाँ, जिनके बीच झगड़ा खड़ा होता है, मांग का औचित्य तथा नियोजक द्वारा अदा करने की क्षमता कुछ ऐसे तथ्य हैं जो औद्योगिक झगड़े को तय करने में अपना प्रभाव डालते हैं। संराधन कार्य-प्रणाली का प्रमुख उद्देश्य पार्टियों के बीच समझौता करना है न कि उनको कानूनी मुकदमें की लम्बी कार्यवाही में डालना। दोनों पार्टियों के लिए मान्य कोई निश्चित प्रस्ताव करने के पहले दोनों पार्टियों के दृष्टिकोणों पर विचार करना होता है।

झगड़े को तय करने की दिशा में दी और ली की भावना एक आवश्यक वस्तु है। यदि पार्टियां अपनी बात पर अड़ी रहने वाली हुई तो झगड़ा तय करना संभव नहीं। अतएव कार्य उस समय कठिन हो जाता है जबकि झगड़ा तय करने वाले अधिकारी को शान्तिपूर्ण समझौते के अपने उद्देश्य का आधार तैयार करना पड़ता है। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जब धैर्य कम होने लगता है किन्तु यदि कोई इस कार्य को उठाता है तो उसे इस बात का विश्वास होना चाहिये कि वह धैर्य

(शेष २४ पृष्ठ पर)

स्थायी आदेश व्यवस्था एवं उसका महत्व

—पवन बिहारीलाल

कानून की दृष्टि में प्रत्येक ठहराव (contract) की शर्तें होना आवश्यक हैं, चाहे वे शर्तें प्रत्यक्ष (लिखित) हों अथवा अप्रत्यक्ष (अलिखित) । यह नियम मालिक व नौकर के महत्व पूर्ण ठहराव पर भी लागू होता है। मालिक-नौकर का सम्बन्ध स्थापित होते ही कुछ विषयों जैसे नौकरी की अवधि, वेतन, छुट्टी एवं अन्य लाभों इत्यादि पर ठहराव होना अनिवार्य है। मालिक तथा नौकर दोनों के हित में है कि नौकरी की शर्तें विस्तृत एवं सुस्पष्ट रूप से निश्चित कर लिखित रूप में नियोजन के साथ ही निर्धारित कर दी जावें। यदि ऐसा नहीं होता तो नौकरी सम्बन्धी विवाद उठने पर कानून की शरण लेने की आवश्यकता पड़ती है जिसमें समय एवं शक्ति का अनावश्यक अपव्यय करना पड़ता है और नौकरी की वे शर्तें जो प्रारम्भ में (जानकर या अनजाने) निर्धारित नहीं की गयीं थीं, न्यायाधिकारी द्वारा निर्धारित की जाती हैं और ऐसी परिस्थिति में बहुधा मालिक व नौकर के सम्बन्ध कटु हो जाते हैं।

औद्योगिक कार्य नियोजन के विस्तृत क्षेत्र में इस प्रकार की कटुता होना न केवल उत्पादन के लिए ही घातक है वरन् सामाजिक सुव्यवस्था में भी बाधक सिद्ध होती है। अतः सन् १९४६ ई० में भारत सरकार ने औद्योगिक कार्य नियोजन (स्थायी आदेश) कानून बनाया जिसके अन्तर्गत कुछ प्रकार के औद्योगिक प्रतिष्ठानों (Industrial Establishments) के लिए अपने काम-करों (Workmen) की काम की शर्तों को स्थायी आदेशों (Standing orders) के रूप में लिखकर प्रमाणित कराना अनिवार्य कर दिया गया

भारत में सर्व प्रथम बम्बई प्रान्त की सरकार ने बाम्बे इन्डस्ट्रियल डिस्पयूट्स ऐक्ट, १९३१, के अन्तर्गत यह व्यवस्था की, कि उस उद्योग अथवा व्यवसाय, जिस पर वह ऐक्ट लागू किया जावे, के मालिक श्रम कमिश्नर की स्वीकृत के लिए स्थायी आदेश बनाकर प्रस्तुत करें जिनमें मालिक और उसके कर्मचारियों के सम्बन्धों को नियमित करने के लिए उन सब विषयों पर नियम सम्मिलित हो जो ऐक्ट में निर्धारित हैं। अन्य प्रान्तों के लिए १९४६ के पूर्व स्थायी आदेश सम्बन्धी कोई कानून न था। परन्तु उत्तर प्रदेश में श्रम कमिश्नर ने प्रदेश के मिल मालिकों की संस्था इम्प्लायर्स एसोसिएशन आफ नार्दर्न इन्डिया, कानपुर, से विचार-विमर्श कर इसके लिए तैयार किया कि एसोसिएशन अपने समस्त सदस्यों के लिए स्थायी आदेश बनाएं और उन्हें श्रम कमिश्नर से स्वीकृत कराकर सदस्यों द्वारा लागू करावें। श्रम कमिश्नर का यह प्रयत्न सफल हुआ और उत्तर प्रदेश के अधिकतर मिलों में १५ जुलाई, १९४४ से एसोसिएशन द्वारा बनाए गए और श्रम कमिश्नर द्वारा स्वीकृत स्थायी आदेश लागू हो गए। इन स्थायी आदेशों के आधार पर ही एसोसिएशन के सदस्य मिलों के औद्योगिक विवादों पर श्रम कार्यालय द्वारा संराधन की व्यवस्था भी हो गई। साथ ही श्रम कमिश्नर ने प्रान्त की चीनी मिलों की एक मात्र संस्था इन्डियन शुगर मिलस एसोसिएशन को भी लिखा कि वह एसोसिएशन भी प्रान्त की समस्त चीनी मिलों के लिए उसी प्रकार स्थायी आदेश स्वीकृत कराकर लागू करने का प्रबन्ध करे, जिस प्रकार इम्पलायर्स एसोसिएशन ने किया। फलतः इंडियन शुगर मिलस एसोसिएशन ने भी अपने स्थायी आदेशों का आलेख्य प्रस्तुत किया परन्तु उस पर श्रम कमिश्नर कीस्वीकृति के पूर्व १९४६ई०

का स्थायी आदेश कानूनलागू हो गया और इंडियन शुगर ऐसोसिएशन को मिलस आदेश दिया गया कि वह उक्त के अन्तर्गत ही कानून अपने स्थायी आदेश प्रमाणित कराने के लिए कार्यवाहीप्रारम्भ करें।

उधर भारत सरकार ने, पिछले (दूसरे) महायुद्ध के दौरान में, उत्पादन मे अधिकाधिक वृद्धि की आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए, यह अनुभव किया कि औद्योगिक क्षेत्र में कर्मचारियों की नौकरी की शर्तें निर्धारित करना श्रम और पूंजी में सद्भावना पूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने के लिए नितान्त आवश्यक है। परन्तु भारतीय सुरक्षा नियमों के अन्तर्गत औद्योगिक विवादों को निपटाने की व्यवस्था उपलब्ध होने के कारण भारत सरकार ने श्रमिकों की काम की शर्तें बनाने के सम्बन्ध में कोई अलग कानून बनाना स्थगित रक्खा। परन्तु युद्ध समाप्त होने के पश्चात् स्थायी आदेश सम्बन्धी कानून बनाने पर सरकार ने शीघ्र विचार किया और ८ अप्रैल १९४६ को भारत सरकार ने एक बिल प्रस्तुत किया जिसमें व्यवस्था की गयी कि १०० या १००से अधिक कामकर नौकरी में रखने वाले सभी औद्योगिक प्रतिष्ठान स्थायीआदेश बनावें जिनमें वे नौकरी की शर्तो को सविस्तार लिखित रूप में दें और उन्हें प्रमाणित करावें। इस बिल को कानून का रूप २३ अप्रैल १९४६, को मिला, जिस दिन से औद्योगिक कार्य नियोजन (स्थायी आदेश) कानून, १९४६, लागू किया गया।

१९४६ के स्थायी आदेश

कानून के अन्तर्गत बहुत से औद्योगिक प्रतिष्ठान आ जाते हैं जिनमें कारखाने, रेलें, मिलें, पत्थर व तेल की खानें, बगीचे, वर्कशाप, पानी के जहाज, गोदाम, ट्राम व मोटर बस सर्विस, भी सम्मिलित हैं। साधारण रूप से वे ही औद्योगिक प्रतिष्ठान इस कानून के अन्तर्गत आते हैं जिनमें १००या १०० से अधिक कामकर (workmen) २३ अप्रैल १९४५ के बाद किसी भी दिन नियुक्त हों या रहे हों। परन्तु सरकार को यह भी अधिकार है कि वह इस कानून को ऐसे भी औद्योगिक प्रतिष्ठानों पर एक विज्ञप्ति द्वारा लागू कर दे जिनमें १०० या कम कामकर नियुक्त हों या रहे हों।

इस कानून के अन्तर्गत आने वाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के प्रबन्धकों के लिए अनिवार्य है कि वे अपने प्रतिष्ठान में कानून लागू होने से ६ माह के अन्दर प्रमाण पत्र दाता अधिकारी (श्रम कमिश्नर) के पास प्रतिष्ठान में लागू किए जाने वाले प्रस्तावित स्थायी आदेशों के आलेख्य भेज दें। स्थायी आदेशों के आलेख्य में उन सभी विषयों सम्बन्धी नौकरी की शर्तें सुस्पष्ट रूप से उल्लिखित होनी चाहिए जिन विषयों की सूची कानून के अन्त में दी अनुसूची (शेड्यूल) में निर्धारित हैं। यदि सरकार ने कानून में प्रदत्त तत्सम्बन्धी अधिकार का प्रयोग करते हुए स्थायी आदेशों का कोई नमूना प्रकाशित कर दिया है तो प्रबन्धकों के लिए यह भी अनिवार्य है कि यथा सम्भव उस नमूने के आधार पर ही वे अपने स्थायी आदेशों के आलेख्य तैयार करें। कानून में स्थायी आदेशों के आलेख्य प्रस्तुत करने की विशेष विधि भी दे दी गयी है। एक से अधिक प्रबन्धक मिलकर अपने स्थायी आदेशों का एक संयुक्त आलेख्य भी प्रस्तुत कर सकते हैं।

कानून की धारा ४ के अनुसार वे स्थायी आदेश प्रमाणित होने योग्य होते हैं जिनमें शेड्यूल की सभी बातें सम्मिलित कर ली गयी हों तथा जो अन्य प्रकार से भी कानून में दी गयी व्यवस्था के अनुरूप हों। प्रमाणपत्र दाता अधिकारी को कानून यह अधिकार नहीं देता कि वे स्थायी आदेशों के उचित अथवा युक्ति पूर्ण होने पर विचार कर तदनुसार कोई निर्णय दे सकें।

स्थायी आदेशों के आलेख्य प्राप्त होने पर प्रमाणपत्र दाता अधिकारी को आलेख्य की एक प्रति निर्धारित विधि के अनुसार सम्बन्धित प्रतिष्ठान के कामकरों के आक्षेप मागने के लिए कामकरों की प्रमाणित ट्रेडयूनियन अथवा उनके अन्य प्रतिनिधि को भेजनी पड़ती है और इसके लिए १५ दिन का समय प्रदान किया जाता है। तत्पश्चात दोनों पक्षों को सुनवाई का एक अवसर देकर प्रमाण पत्र दाता अधिकारी के आदेशानुसार स्थायी आदेशों में आवश्यक संशोधन कर वे प्रमाणित कर दिए जाते हैं और उनकी एक-एक प्रति प्रबन्धक व कामकरों के यूनियन अथवा निर्वाचित प्रतिनिधि को भेज दी जाती है।

यदि कोई पक्ष प्रमाण पत्र दाता अधिकारी के आदेश से असंतुष्ट हो तो उसे आदेश की प्रति भेजे जाने की तिथि से २१ दिन के अन्दर ही कानून की धारा ६ के अनुसार सरकार द्वारा नियुक्त ऐपीलेट अँथारिटी को अपील करने की व्यवस्था भी है। ऐपीलेट अँथारिटी यदि उचित समझे तो प्रमाण पत्र दाता अधिकारी द्वारा स्थायी आदेशों में किए गए संशोधन रद्द कर दे या उन पर ही अपनी स्वीकृति प्रदान करें। स्थायी आदेशों को अंतिम रूप से प्रमाणित कर दें, ऐपीलेट अँथारिटी पर भी धारा ४ में दिए गए प्रतिबन्ध लागू है।

प्रमाण पत्र दाता द्वारा प्रमाणित स्थायी आदेश उस तारीख से ३० दिन बाद लागू होते है जिस तारीख को प्रमाणित प्रति दोनों पक्षों को भेजी गई हो। परन्तु यदि प्रमाण पत्र दाता अधिकारी के आदेश पर कोई अपील की गयी हो तो स्थायी आदेश उस तारीख से ३० दिन बाद लागू होते हैं जिस तारीख को ऐपीलेट अँथारिटी द्वारा अपना आदेश दोनों पक्षों को भेजा जावे। प्रमाणित स्थायी आदेशों की एक प्रति सम्बन्धित प्रतिष्ठान के मुख्य द्वार पर तथा प्रतिष्ठान के प्रत्येक विभाग में भी इसी हेतु लगाये गये विशेष बोर्डों (पटरों) पर अंग्रेजी तथा अधिकांश कार्यकरों द्वारा समझी जाने वाली भाषा में टांग रखना अनिवार्य है।

अन्तिम रूप से प्रमाणित स्थायी आदेशों में ६ माह तक कोई संशोधन नहीं हो सकते। ६ माह के पश्चात् केवल प्रबन्धक को यह अधिकार होता है कि वह संशोधन प्रमाणित कराने के लिये प्रमाण-पत्र दाता अधिकारी को निर्धारित विधि से उसी प्रकार प्रार्थना-पत्र भेजे, जिस प्रकार उसने सर्व प्रथम स्थायी आदेश प्रमाणित कराये थे। इस ६ माह की अवधि के बीच भी संशोधन हो सकते हैं परन्तु इस शर्त पर कि संशोधन के लिये प्रबन्धक एवं कामकर दोनों की अनुमति प्राप्त हो। संशोधन प्रमाणित करने के लिये प्रमाण-पत्र दाता अधिकारी को वही विधि अपनानी होती है जो स्थायी आदेशों के प्रथम आलेख्य प्रमाणित करने के लिये अपनानी होती है।

कानून के अन्तर्गत प्रमाण-पत्र दाता अधिकारी एवं अपीलेट अधिकारी को जाब्ता फौजदारी कानून की धारा ४८० व ४८२ द्वारा प्रदत्त न्यायालयों के अधिकार प्राप्त हैं।

कानून की धारा २३ के अन्तर्गत स्थायी आदेशों के आलेख्य प्रमाणित कराने के लिये प्रस्तुत न करना तथा प्रमाणित स्थायी आदेशों में अनाधिकृत संशोधन करना प्रबन्धकों के लिये जुर्म है, जिसके लिये ५०००) रु० तथा जुर्म चलते रहने तक २००) रु० प्रति दिन जुर्माना हो सकता है। साथ ही यदि कोई प्रबन्धक अपने प्रमाणित स्थायी आदेशों के विपरीत कार्य करता है तो उसे १००) रु० का जुर्माना और जुर्म चलते रहने तक २५) रु० जुर्माना प्रति दिन हो सकता है। कानून के अन्तर्गत मुकद्दमा चलाने के लिये सरकार की पूर्व अनुमति आवश्यक है।

धारा १४ के अन्तर्गत सरकार को अधिकार है कि वह किसी प्रतिबन्ध के साथ अथवा बिना कोई प्रतिबन्ध किसी एक अथवा किसी प्रकार के सभी औद्योगिक प्रतिष्ठानों को कानून की आंशिक व पूर्ण व्यवस्था से मुक्त कर दें।

धारा १५ के अनुसार सरकार को कानून के अन्तर्गत नियम तथा नमूने के स्थायी आदेश बनाने का अधिकार है इनके बनाने के पूर्व प्रबन्धकों एवं कार्यकरों के प्रतिनिधियों से विचार विमर्श करना अनिवार्य है। कार्यकरों के प्रतिनिधियों ने समय समय पर स्थायी आदेश सम्बन्धी कानूनी व्यवस्था में निम्नलिखित सुधार करने की आवश्यकता पर जोर दिया है।

(१) स्थायी आदेशों के प्रमाणितकर्त्ता अधिकारियों को स्थायी आदेशों के औचित्य अनौचित्य पर विचार कर उसके आधार पर संशोधन करने का अधिकार होना चाहिये।

(२) स्थायी आदेशों के आलेख्य नौकरी की वर्तमान शर्तों के आधार पर ही बनाये जावें।

(३) स्थायी आदेशों में संशोधन कराने का अधिकार कामकरों (कर्मचारियों) को भी दिया जावे; तथा

(४) प्रमाणित होने के लिये भेजे गये स्थायी

आदेशों के आलेख्य उस भाषा में भी प्रस्तुत किये जावें जिन्हें सम्बन्धित प्रतिष्ठान के बहुसंख्यक कामकर समझें

स्पष्ट है कि उपर्युक्त विषयों का स्थायी आदेश कानून मे समावेश कामकरों के लिए हितकर होगा परन्तु यह कानून अपने वर्तमान रूप में भी देश के औद्योगिक क्षेत्र के लिए अत्यन्त हितकर है। श्रमिकों की नौकरी सम्बन्धी बहुत सी छोटी २ बातें भी सुनिश्चित रूप से लिखित न होने पर उनके सम्बन्ध में अनावश्यक विवाद उत्पन्न हो जाते थे और बहुधा बिना पर्याप्त कारण के व्यवस्थापकों और उनके कर्मचारियों में मन-मुटाव हो जाता था। स्थाई आदेशों के बन जाने से इस प्रकार की निराधार दुर्भावनाओं को रोकने में काफी सफलता मिली है और स्थायी आदेशों में उपलब्ध औद्योगिक क्षेत्र की समस्याओं के सुस्पष्ट समाधानों के आधार पर इन समस्याओं को गंभीर रूप धारण करने से रोका जा सकता है। स्थायी आदेश न होने से कर्मचारियों को अपनी नौकरी की शर्तों की अनभिज्ञता होने से जो हानि हो जाती थी उसकी भी संभावना स्थायी आदेशों के अनुकूल कार्य करने पर नहीं रह जाती। प्रबन्धकों के पक्ष में भी स्थायी आदेश बहुत हितकर है। सुस्पष्ट रूप से कानून द्वारा मान्य नौकरी की शर्तों के बन जाने से उन्हें शासन व्यवस्था में बड़ी सहायता मिलती है और छोटे २ झगड़ों के लिए पहिले की भांति न्यायाल में जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस प्रकार औद्योगिक क्षेत्र में दोनों पक्षों को सहायता प्रदान कर स्थायी आदेशों द्वारा देश में उत्पादन वृद्धि करने में सफलता मिली है इसमें कदाचित अतिशयोक्ति नहीं है।

भारत सरकार के श्रम मंत्री ने २४ जनवरी १९५० को भारतीय संसद में जो लेबर रिलेशन्स बिल रक्खा उसमें स्थायी आदेश कानून में सुधार करने और उसके प्रशासन की कठिनाइयों को दूर करने की ओर भी कदम उठाया गया है। इस बिल में स्थायी आदेश कानून १९४६ के आधार पर ही कुछ संशोधन के साथ स्थायी आदेश बनाने की कानूनी व्यवस्था का भी समावेश कर दिया गया है। इस बिल पर संसद में काफी विचार विमर्श होने के पश्चात् उसे एक प्रवर समिति (सेलेक्ट कमेटी) को विचारार्थ सुपुर्द कर दिया गया था। प्रवर समिति ने बिल में कुछ संशोधन कर अपनी प्रस्तावनाएं अब संसद के विचारार्थ प्रस्तुत कर दी हैं। प्रवर समिति ने बिल में जो संशोधन किए हैं उसके पश्चात् उसमें की गयी स्थायी आदेशों सम्बन्धी व्यवस्था में निम्नलिखित उलेखनीय हैं—

(१) प्रमाण पत्र दाता अधिकारी के स्थान पर रजिस्ट्रिंग आफिसर होंगे जो अपने २ क्षेत्र के प्रतिष्ठानों के स्थायी आदेशों के आलेख्य रजिस्टर करेंगे।

(२) औचित्य एवं अनौचित्य पर विचार न कर सकने वाला प्रतिबन्ध बिल में नहीं है और रजिस्ट्रिंग आफिसर स्थायी आदेशों में सुधार भी कर सकेंगे।

(३) स्थायी आदेशों सम्बन्धी अपीलें अन्य औद्योगिक विवादों पर विचार करने के लिए स्थापित लेबर ट्रिब्यूनल को ही की जावेंगी।

(४) जिन संस्थाओं पर कानून लागू होता है उनमें सरकार द्वारा बनाए गए नमूने के स्थायी आदेश उस समय तक लागू रहेंगे जब तक कानून के अनुसार स्थायी आदेशों के आलेख्य प्रबन्धक द्वारा प्रमाणित नहीं करा लिए जाते।

(५) प्रमाणित स्थायी आदेशों की प्रतियाँ कामकरों के सूचनार्थ विशेष बोर्डों पर अंग्रेजी या हिन्दी तथा बहुसंख्यक कामकरों की भाषा में टाँगी जावेगी।

६—प्रमाणित स्थायी आदेशों का उल्लंघन करने पर प्रबन्धक को १०००) रु० तक जुर्माना देना होगा।

प्रवर समिति द्वारा संशोधित लेबर रिलेशन्स बिल अभी भारतीय संसद में विचार के लिए पुनः रक्खा जावेगा और आशा है कि शीघ्र ही उस पर संसद की स्वीकृति प्राप्त हो जावेगी। इस बिल के पास हो जाने से वर्तमान स्थायी आदेश कानून स्वतः समाप्त हो जावेगा और स्थायी आदेश व्यवस्था की जो कमियां आलोचना का विषय बन गयी हैं, आशा है शीघ्र दूर हो जावेंगी। उक्त बिल के पास हो जाने से स्थायी आदेश व्यवस्था एक स्वस्थ आधार पर आ जावेगी और औद्योगिक सम्बन्ध सुधार की दिशा में प्रशंसनीय प्रगति होगी, ऐसी पूर्ण आशा है। नई व्यवस्था के अन्तर्गत बने आदेशों द्वारा निश्चित ही देश में न केवल औद्योगिक विवादोंमें कमी होगी, बरन् प्रबधकों एवं कामकरों के संबंधों से उत्पन्न समस्याओं के लिये आपसी समझौते से तय हो जाने का मार्ग भी प्रशस्त होगा। ——

१९५१ में दूकान कानून एवं कारखाना कानून का प्रशासन

१९५१ में उत्तर प्रदेशीय दुकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून मालिकों और कर्मचारियों के बीच बहुत ही लोक प्रिय रहा और विचाराधीन वर्ष में उसे उन नगरों में जहां यह अभी लागू नहीं है जैसे कि गोंडा बस्ती, इटावा, मिर्जापुर, रामपुर, कईमगंज, रुड़की, कोसीकलां (मथुरा) पिपराइच, (गोरखपुर) गाजियाबाद में लागू करने के लिए बार बार अनुरोध किया गया। किन्तु आर्थिक संकट के कारण राज्य सरकार के लिए यह सम्भव नहीं हो सका कि वह निरक्षिकों की संख्या में वृद्धि कर सके और कानून के विस्तार क्षेत्र को बढ़ा सके। फिर भी उसे लखनऊ, मोरादाबाद और झाँसी के रेलवे नोटीफाइड एरियों मे लागू किया गया और इन स्थानों में काम करने वाले निरीक्षकों को इन क्षेत्रों का भी निरीक्षक बना दिया गया।

कानून का प्रशासन करने वाले मौजूदा अधिकारियों में कोई परिवर्तन नहीं किया गया। मुख्य कारखाना निरीक्षक मुख्य दूकान निरीक्षक के पद पर भी काम करते रहे उनकी सहायता के लिए एक प्रति मुख्य निरीक्षक और १३ पूरे समय काम करने वाले निरीक्षक थे। ये निरीक्षक कानपुर, इलाहाबाद. आगरा, बरेली, बनारस, मोरादाबाद, अलीगढ़, झांसी, मेरठ, लखनऊ, फैजाबाद, और गोरखपुर में नियुक्त थे। शेष नगरों में जहाँ कानून लागू है, जैसे कि देहरादून, मसूरी, नैनीताल, फरुखाबाद, फतेहगढ़, कन्नोज, हापड़, मुजफ्फर नगर, सहारनपुर, मथुरा, हाथरस, और फिरोजाबाद तथा राज्य में चीनी के कारखाने, सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट दूकानों के पदने निरीक्षक की भांति काम करते रहे। इसके अतिरिक्त सहारनपुर, हाथरस, और फैजाबाद में नियुक्त विभाग श्रम निरीक्षक तथा रामपुर के अतिरिक्त प्रादेशिक समझौता अधिकारी एवं श्रम निरीक्षक अपने अपने नगरों में कानून के लागू होने के कार्य को देखते रहे। हाथरस के श्रम निरीक्षक ने मथुरा में भी कानून के लागू होने के कार्य को देखा। अंश कालिक निरीक्षक कानून के लागू होने के प्रति काफी ध्यान नहीं दे सके फलस्वरूप इन नगरों में कानून को प्रभावशाली रूप से लागू किया जाना संभव नहीं हो सका। १२ नगरों में जहां विभाग के पूरे समय काम करने वाले निरीक्षक तैनात हैं, कानून का प्रचलन काफी सन्तोष जनक रहा।

निरीक्षण—१९५१ में पूरे समय काम करने वाले १३ निरीक्षकों द्वारा किए गए निरीक्षणों की संख्या ३६,५७१ रही और राज्य के विभिन्न भागों में प्रति मुख्य दुकान निरीक्षक द्वारा ३४४ निरीक्षण किए गए इस प्रकार कुल मिलाकर इस वर्ष ३६,९१५ निरीक्षण किए गए। इसके पहले वाले वर्ष में ३८,९९३ निरीक्षण किए गए।

निम्न तालिका में पूरे समय काम करने वाले १३ निरीक्षकों द्वारा विभिन्न नगरों में किए गए निरीक्षणों की संख्या दी गई है :—

नगर	निरीक्षकों की संख्या	निरीक्षणों की संख्या
कानपुर	२	६,३५१
आगरा	१	३,०८१
अलीगढ़	१	२,६८७
इलाहाबाद	१	३,०२१
बनारस	१	४,००१
बरेली	१	३,२५०
फैजाबाद	१	२,७५०
गोरखपुर	१	३,०००
झांसी	१	२,६५१
लखनऊ	१	२८३०
मेरठ	१	२७१३
मोरादाबाद	१	२,६३६
योग	१३	३६,५७१

इन निरीक्षणों के अतिरिक्त फैजाबाद, हाथरस, सहारनपुर, के निवासी क्षम निरीक्षकों तथा रामपुर के श्रम निरीक्षक ने क्रम से २३१, ४०७, ४४१ और ६६३ निरीक्षण किए। इस प्रकार निरीक्षणों की कुल संख्या ४१, ६५७ रही।

नीचे की तालिका में इन कानून के लागू होने के समय से कुल निरीक्षणों की संख्या पूरे समय काम करने वाले निरीक्षक द्वारा किए गये औसत निरीक्षणों की संख्या दी गई है—

वर्ष	निरीक्षणों की संख्या	प्रति निरीक्षक औसत
१९४८	२५,४३२	१९५६
१९४९	३२,३४८	२४८८
१९५०	३६,८७४	२८३६
१९५१	३६,५७१	३०४४

अभियोग—विचाराधीन वर्ष में कानून के अंतर्गत ३८० अभियोग चलाये गए। पिछले वर्ष में अभियोगों की संख्या ६२२ थी। आलोच्य वर्ष में चलाये गए अभियोगों का विवरण इस प्रकार है।

१—पिछले वर्ष की समाप्ति के समय विचाराधीन मामलों की संख्या १६१

२—आलोच्य वर्ष में चलायें गए अभियोगों की संख्या ३८०

योग ५४१

३—निर्णीत मामलों की संख्या ४४५

४—मामलों की संख्या जिनमें सजा दी गई ४३३

५—मामलों की संख्या जिनमें रिहाई की गई ५

६—वापस लिए गये मामले १

७—कोर्ट द्वारा जमा कर दिये गए मामलों की संख्या ६

८—जुर्माना की गई कुल रकम ७,६६१ रु०

९—वर्ष की समाप्ति के समय विचाराधीन मामलों की संख्या ९६

(पृष्ठ १८ का शेष)

नहीं खो सकेगा और न आवेश को ही स्थान देगा यदि पार्टियों के बीच समझौते की भावना मौजूद होती है तो कार्य कम कठिन हो जाता है अन्यथा वह बहुत ही दुरुह कार्य है और यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि सभी कठिन कार्यों के लिए धैर्य, अविराम प्रयत्न और काम के प्रति लगन शीलता की आवश्यकता होती है।

यह स्पष्ट है कि जब दो पार्टियां झगड़ा तय करने वाले अधिकारी के समक्ष आती हैं तो उनके बीच ध्रुवों जैसी दूरी हो सकती है और जितना ही इस तथ्य का अनुभव किया जाता है उतनी ही समस्या आसान बन जाती है, बशर्ते कि सफलता के साथ झगड़े को समाप्त करने के लिए दृढ़ निश्चय कर लिया जाय। इन झगड़ों में दबाव वरन् आग्रह से काम लेना चाहिये। फिर भी इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रत्येक झगड़ा तय किया जाने योग्य होता है और हमेशा पार्टियां समझदारी से ही काम लेंगी किन्तु केवल इसी कारण राष्ट्रीय महत्व के इस कार्य में संलग्न किसी को डरना अथवा परेशान नहीं होना चाहिये कि वह अपने कर्त्तव्य पालन करने की अपनी क्षमता और शक्ति को कम होने दे। प्राचीन और लोकप्रिय कहावत 'अविराम-प्रयत्न' (try and try again) यहां बिलकुल चरितार्थ होती है और यदि लगातार असफलताएँ अंत में सफलता में परिवर्तित हो जायें तो कार्य सफल माना जायगा।

—०—

४३३ मामलों में कुल ७६३१ रु० जुर्माना किया गया। इस प्रकार प्रति मामला पीछे औसत १८ रु० जुर्माना किया गया। इन छोटे जुर्मानों से कोई रोक नहीं होती क्योंकि इतने कम जुर्माने से कानून का उल्लंघन करने के आदी लोगों का नैतिक ह्रास होता है और वे ऐसे जुर्मानों की कोई परवाह नहीं करते।

शिकायतें

विचाराधीन वर्ष में १६५७ शिकायतें प्राप्त हुई थीं जबकि पिछले वर्ष २१०९ शिकायतें प्राप्त हुईं। पिछले वर्ष में १४३ शिकायतें शेष थीं। इस तरह इस वर्ष में कुल मिलाकर १८०० शिकायतें रहीं। इनमें १६४२ शिकायतों पर अन्तिम रूप से विचार किया गया और ११८ शिकायतों पर जाँच जारी रही। अधिकांश शिकायतें मजदूरों की अनुचित पदच्युति और वेतन न देने से सम्बन्धित थीं।

कानून के शुरू होने से लेकर अब तक शिकायतों की संख्या इस प्रकार रही :—

वर्ष	शिकायतें
१९४८	१४२०
१९४९	१८८६
१९५०	२१०९
१९५१	१६५७

कारखाना कानून

१ अप्रैल, १९५१ से संशोधित उत्तर प्रदेशीय कारखाना नियम १९५० के अन्तर्गत लाइसेन्स सम्बन्धी व्यवस्थाओं को लागू करने के फलस्वरूप आलोच्य वर्ष में उत्तर प्रदेश में १०४० कारखानों को लाइसेन्स दिये गये। इनमें से ८६ नये कारखानों को लाइसेन्स दिये गये जो ३१ मार्च १९५१ को अथवा उसके पूर्व कारखाना कानून के अन्तर्गत नहीं थे।

निरीक्षण

आलोच्य वर्ष में मुख्य कारखाना निरीक्षक के कार्यालय द्वारा प्रशासित विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत ४३८९ निरीक्षण किये गये, जब कि १९५० के वर्ष में निरीक्षणों की संख्या ४५३८ थी।

इस वर्ष विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत निरीक्षणों की संख्या इस प्रकार रही :—

कारखाना कानून	३६२४
वेतन वितरण कानून	५९७
उत्तर प्रदेशीय जच्चा-बच्चा सुविधा कानून	३२
बालक नियोजन कानून	१३६
योग	४३८९

इस वर्ष के पिछली छमाही में ५ निरीक्षक नियुक्त किये गये। बढ़े हुये काम को सँभालने के उद्देश्य से मुख्य कारखाना निरीक्षक के सहायतार्थ इस वर्ष एक प्रति मुख्य कारखाना निरीक्षक की नियुक्ति की गई।

नक्शे

इस वर्ष कुल मिलाकर मुख्य कारखाना निरीक्षक के कार्यालय द्वारा स्वीकृत किये जाने के लिये नई इमारतों के ७१७ नक्शे प्राप्त हुये, इनमें से ४९ नक्शे जलपान गृहों (कैन्टीन) तथा आराम गृहों और शेष अन्य कारखाना इमारतों से सम्बन्धित थे।

शिकायतें और अभियोग

आलोच्य वर्ष में ६१८ शिकायतें प्राप्त हुईं इनमें से २७९ कारखाना कानून के अन्तर्गत, ३३० वेतन वितरण कानून के अन्तर्गत और ९ विभिन्न थीं।

कारखाना कानून, वेतन वितरण कानून तथा उनके अन्तर्गत बनाये गये नियमों के उल्लंघन करने वाले ४७५ कारखानों पर अभियोग चलाये गये। वेतन वितरण कानून और नियमों के अन्तर्गत १३ मामले चलाये गये।

दुर्घटनाएँ

कुल ५९९९ आकस्मिक दुर्घटनाएँ हुईं, इनमें से २९

(शेष पृष्ठ २९ पर)

१९५१ के कार्यों का संक्षिप्त विवरण

श्रमिक संघ एवं स्थायी आदेश

इस वर्ष भी उत्तर प्रदेश के उप श्रम आयुक्त, श्री महेशचन्द्र जी पन्त, ही उत्तर प्रदेश के श्रमिक संघों के रजिस्ट्रार रहे। उन्हें श्रमिक संघ कानून, १९२६, के प्रशासन में सहायता देने का तथा इस प्रभाग के कार्य संचालन का भार प्रदेश के श्रमिक संघों के सहायक रजिस्ट्रार, श्री पवन बिहारीलाल, पर रहा। श्रमिक संघों की निरीक्षण व्यवस्था एवं इन संघों से सम्बन्धित विवादों में जांच करने का कार्य भार प्रदेश के श्रमिक संघ निरीक्षक श्री ए० डी० सिर्सवाल पर रहा।

२–श्रमिक संघ कानून, १९२६, के अन्तर्गत प्रमाणित संघों की संख्या वर्ष के प्रारम्भ में (१–१–५१ को) ५५३ थी। वर्ष के अन्तर्गत १०६ नये श्रमिक संघ प्रमाणित हुये। वर्ष के अन्तर्गत अप्रमाणित होने वाले संघों की संख्या १ १ थी। इन सघों के अप्रमाणित होने का कारण इनके पदाधिकारियों द्वारा वार्षिक हिसाब का विवरण पत्र न भेजना था। वर्ष के अन्त में (अर्थात् ३१–१२–५१ को) उत्तर प्रदेश के प्रमाणित श्रमिक सघों की संख्या ५५८ थी। इसमें दो महासंघ (फेडरेशन्स) भी सम्मिलित हैं।

३—वर्ष के अन्त में राज्य के प्रमुख औद्योगिक नगरों में श्रमिक संघों की संख्या इस प्रकार थी:—

कानपुर	१००
लखनऊ	५२
आगरा	५१
गोरखपुर	३७
इलाहाबाद	२७
देवरिया	२०
बनारस	१५
बरेली	१४

४—वर्ष के अन्त में प्रदेश के विभिन्न उद्योगों में प्रमाणित संघों की संख्या निम्न प्रकार थी:—

(क)	चीनी उद्योग	१०८
(ख)	सूती उद्योग	६५
(ग)	नगर पालिकायें	६०
(घ)	रेल तथा यातायात	५६
(ण)	इंजीनियरिंग उद्योग	३२
(च)	मुद्रण उद्योग	[illegible]१
(छ)	खेती	१८
(ज)	विविध	१९८

उपरोक्त संख्याओं से स्पष्ट है कि प्रदेश में चीनी उद्योग ही ऐसा उद्योग है, जिसमें सब से अधिक श्रमिक संघ हैं तथा इस उद्योग के श्रमिक सब से अधिक संगठित हैं।

इस स्थल पर उत्तर प्रदेश के प्रमाणित संघों की संख्या की तुलना अन्य राज्यों से करना भी उपयोगी होगा।

राज्य	३० सितम्बर सन् १९५१ तक प्रमाणित संघों की संख्या
बम्बई	७१७
मद्रास	६१२
उत्तर प्रदेश	५४५
मध्य प्रदेश	२३० (३१-८-५१ को)
दिल्ली	११२

अन्य राज्यों की संख्यायें अभी तक उपलब्ध नहीं हुई हैं।

७—उत्तर प्रदेश के श्रमिक संघों के निरीक्षक ने आलोच्य वर्ष में १६६ संघों का निरीक्षण किया तथा श्रमिक संघों से संबंधित १७ विवादग्रस्त मामलों में जांच की। श्रमिक संघ निरीक्षक का समय अधिकतर संघों की उन शिकायतों की जाँच करने में लग जाता रहा है जो दलबन्दी के कारण बहुधा उत्पन्न हो जाती है। श्रमिक संघों के निरीक्षणों से यह ज्ञात हुआ कि संघों के पदाधिकारी साधारणतया निम्नांकित आवश्यक विषयों पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते :—

१—अधिकांश श्रमिक संघ अपने संघ का हिसाब-किताब भली प्रकार नहीं रखते।

२—संघ का रुपया मंत्री अथवा कोषाध्यक्ष के पास बहुधा संघ के विधान के विपरीत पड़ा रहता है। उसे विधानानुसार किसी बैंक अथवा पोस्ट आफिस में जमा करने की व्यवस्था समय से नहीं की जाती।

३—चुनाव, विधान के अनुसार समय से नहीं होते और बहुधा चुनाव सम्बन्धी नियमों का पूर्ण रूप से पालन न होने के कारण दलबन्दी हो जाती है।

४—संघ के कार्यकर्त्ता (पदाधिकारी) सदस्यों के हितों पर समुचित ध्यान नहीं देते। इससे संघ के कार्यों में बाधा पहुँचती है तथा सदस्यों को उनमें अविश्वास उत्पन्न होता है।

श्रमिक संघों के सदस्यों में दलबन्दी से उत्पन्न शिकायतें कभी कभी इतनी अधिक हो जाती हैं कि एक श्रमिक संघ निरीक्षक के लिए अपनें साधारण निरीक्षक कार्य के साथ ही उन सबकी जांच करना असम्भवप्राय हो जाता है। अतः ऐसी दशा में स्थायी आदेश निरीक्षकों से भी इस कार्य में सहायता लेना आवश्यक हो जाता है। आलोच्य वर्ष में स्थायी आदेश के श्रम निरीक्षकों ने भी विभिन्न स्थानों के कई श्रमिक संघों की जाँच की।

स्थायी आदेश शाखा

इस वर्ष भी उत्तर प्रदेश में स्थाई आदेशों के प्रमाणपत्र दाता अधिकारी राज्य के श्रमायुक्त श्री ओंकारनाथ जी मिश्र, आई० ए० एस०, ही रहे। श्रमिक संघों के सहायक रजिस्ट्रार श्री पवन बिहारी लाल की देख रेख में स्थायी आदेश सम्बन्धी कार्य्य होता रहा। प्रमाणित स्थायी आदेशों का सम्यक पालन हो रहा है अथवा नहीं, इसकी देख रेख के लिए दो श्रम निरीक्षक नियुक्त हैं। प्रमाणपत्रदाता अधिकारी के आदेशों पर अपील सुनने का अधिकार सरकारी विज्ञप्ति संख्या ६७१ (एल० एल०) १८-७ (एल० एल०) ५१ दिनांक १५-३-५१ के अन्तर्गत उत्तर प्रदेशों में स्टेट इन्डस्ट्रियल ट्रिब्यूनल को दे दिया गया है।

२—यह कानून राज्य के उन समस्त औद्योगिक प्रतिष्ठानों पर लागू है, जिनमें २३-४-४५ से अब तक किसी भी दिन १०० या १०० से अधिक कार्यकर काम कर चुके हों या कर रहे हों। उत्तर प्रदेशीय सरकार ने यह कानून सौ से कम कार्यकर रखने वाले निम्न प्रकार के औद्योगिक प्रतिष्ठानों पर भी लागू कर दिया है:—

१—जो उत्तरी भारत मिल मालिक संघ, कानपुर अथवा उत्तर प्रदेशीय तेल मिल संघ के सदस्य हों, या

२—जो विद्युत कम्पनी अथवा जलकल में हों, या

३—जो काँच के कारखाने हों, या

४—जिनमें प्रबन्धक स्थायी आदेशों को अपनी स्वेच्छा से प्रमाणित कराना चाहते हों।

३—वर्ष के प्रारम्भ में (१-१-५१ को) उन समस्त औद्योगिक प्रतिष्ठानों की संख्या, जिनके स्थायी आदेश प्रमाणित हो चुके हैं, ४१३ थी। वर्ष के अन्त में (अर्थात् ३१-१२-५१ को) ऐसे प्रतिष्ठानों की संख्या ५०७ हो गई।

वर्ष के अन्तर्गत प्रमाणित स्थायी आदेशों में फिरोजाबाद के काँच के ६६ कारखानों के लिए स्थायी आदेशों का प्रमाणित हो जाना विशेषतः उल्लेखनीय है। इसके पूर्व कांच के उद्योग में कार्यकरों की नौकरी की शर्तों को स्पष्टतः इतने विस्तृत रूप से निर्धारित नहीं किया गया

था। आशा है इन स्थायी आदेशों के बनने से कांच उद्योग के प्रबन्धकों एवं कार्यकर्ता के हितों को लाभ ही नहीं होगा, वरन् इस उद्योग की भी उत्तरोत्तर वृद्धि होगी।

इस वर्ष प्रमाणपत्र दाता अधिकारी के आदेशों पर मार्टिन बर्न एन्ड कम्पनी, कलकत्ता द्वारा संचालित राज्य की विद्युत कम्पनियों की ओर से कानून की धारा ६ (१) के अन्तर्गत अपील की गई। इस अपील में स्टेट इन्डस्ट्रियल ट्रिब्यूनल ने फैसला सुनाते हुए यह विचार प्रकट किये कि "जहां माडल स्थायी आदेश निर्धारित हैं, वहां पर स्थायी आदेश, जहां तक सम्भव हो सके, माडल स्थायी आदेश से समता रखते हुए होने चाहिये" इस निर्णय द्वारा प्रमाणपत्र दाता अधिकारी को आवश्यकतानुसार स्थायीआदेशों को माडल स्थायी आदेशों के अनुकूल बनाने के लिए संशोधन करने के अधिकार की पुष्टि होती है।

४—प्रमाणित स्थायी आदेशों पर संशोधनों के लिए अनेक प्रार्थना पत्र प्राप्त हुए। इनमें से निम्नांकित ९ के संशोधन प्रमाणित हो चुके हैं—

(१) आगरा इलेक्ट्रिक सप्लाई क० लि०, आगरा।
(२) बरेली ,, ,, ,, ,, बरेली।
(३) बनारस इलेक्ट्रिक लाइट एन्ड पावर कं० लि० बनारस
(४) यू० पी० ,, सप्लाई कं० लि० लखनऊ।
(५) ,, ,, ,, ,, ,, इलाहाबाद।
(६) अपर जमुना वैली इलेक्ट्रिक सप्लाई कं० लि० मेरठ।
(७) ,, गेंजेस ,, ,, ,, ,, ,, मुरादाबाद।
(८) टुबैको मन्यूफैक्चरर्स (इन्डिया) लि० सहारनपुर।
(९) पीलीभीत इलेक्ट्रिक सप्लाई कं० पीलीभीत।

(५) स्थाई आदेशों के श्रम निरीक्षकों ने इस वर्ष उत्तर प्रदेशीय औद्योगिक कार्य नियोजन (स्थाई आदेश) नियम, १९४६ के अन्तर्गत ४५ जाचें कीं तथा नियम १० के अन्तर्गत २० प्रतिष्ठानों के कार्यकर्ता के प्रतिनिधियों के ३ चुनाव किए। इसके अतिरिक्त उन्होंने औद्योगिक प्रतिष्ठानों के प्रमाणित स्थायी आदेशों की पालन व्यवस्था सम्बन्धी जाँच के लिए १६८ निरीक्षण किये। निरीक्षण द्वारा यह ज्ञात हुआ कि कुछ औद्योगिक प्रतिष्ठानों ने अपने स्थायी आदेशों के अन्तर्गत निर्धारित फार्मों में अनधिकृत रूप से परिवर्तन कर लिए थे। अतः प्रमाणपत्र दाता अधिकारी नें ऐसे सभी प्रतिष्ठानों को यह चेतावनी दी कि वे या तो उक्त अनधिकृत परिवर्तनों को तुरन्त दूर करें अथवा उनको एक ही धारा १० के अन्तर्गत प्रमाणित करा लें, अन्यथा उन पर ऐक्ट की धारा १३ के अन्तर्गत अभियोग चलाये जावेंगे। इस चेतावनी के फलस्वरूप प्रमाणित स्थायी आदेशों एवं उनके अन्तर्गत निर्धारित कार्यो के पालन के लिये पर्याप्त सुधार हुआ है।

६—स्थायी आदेशों के पालन सम्बन्धी निरीक्षण व्यवस्था अभी समुचित नहीं कही जा सकती। समस्त राज्य के लिए केवल दो निरीक्षक इस कार्य को करने में असमर्थ हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें समय समय पर ऐक्ट के अन्तर्गत चुनाव और जाँच भी करनी पड़ती हैं तथा इन दो में से एक निरीक्षक को कार्यालय में रहकर सहायक रजिस्ट्रार को सहायोग देना आवश्यक है, क्योंकि अधिकांशतः प्रबन्धक अपने स्थायी आदेश त्रुटिपूर्ण भेजते हैं तथा बहुत से प्रबन्धकों द्वारा पूर्णरीति से स्थाई आदेश प्रस्तुत करने के लिये उनका पीछा सा करना पड़ता है।

७—कानून की धारा १४ के अन्तर्गत इस वर्ष किसी भी औद्योगिक प्रतिष्ठान को इस कानून से मुक्त नहीं किया गया है। केवल वैक्यूम पान शुगर फैक्टरियों को इस कानून से सन् १९४८ में मुक्ति इस कारण दी गई थी कि उनके स्थायी आदेश उत्तर प्रदेशीय औद्योगिक विवाद कानून, १९४७ के अन्तर्गत एक समझौते के फलस्वरूप तय हो गए थे।

८—बनारस, रामपुर एवं टेहरी गढ़वाल की भूतपूर्व रियासतों के उत्तर प्रदेश में मिल जाने के कारण राज्य के प्रमाण पत्र दाता अधिकारी का कार्यक्षेत्र अपेक्षाकृत बढ़ गया है, क्योंकि इन स्थानों पर भी सरकार ने

२३-२-५१ से स्थाई आदेश कानून, १९४६ को लागू कर दिया है। इसके फलस्वरूप इन नये जिलों के औद्योगिक प्रतिष्ठानों द्वारा भी स्थायी आदेश प्रमाणित कराने के लिए प्रस्तुत किये जाने लगे हैं।

९—प्रमाणित स्थायी आदेशों में की गई व्यवस्था का स्पष्टीकरण कराने के लिए भी समय समय पर प्रबन्धकों एवं कार्यकरों द्वारा प्रार्थनायें प्राप्त होती रहती हैं। यद्यपि स्थायी आदेशों के प्रमाण पत्र दाता अधिकारी को कानून के अन्तर्गत इस प्रकार के स्पष्टीकरण करने की व्यवस्था नहीं है, तथापि दोनों पक्षों—प्रबन्धकों एवं कार्यकरों के आपसी मतभेद एवं भ्रम जनित विवादों को दूर करने के लिए स्थायी आदेशों के स्पष्टीकरण कर दिए जाते हैं तथा आवश्यक सम्मति दे दी जाती है। इससे औद्योगिक शान्ति में समुचित सहायता मिली है।

१०—इस वर्ष कानून की धारा १३ (२) के अन्तर्गत टीकाराम एन्ड सन्स लिमिटेड, अलीगढ़, पर स्थायी आदेशों का उचित पालन न करने के कारण अभियोग भी चलाया गया, तथा अपराधियों को न्यायालय द्वारा दण्ड दिया गया।

११—भारत के अन्य राज्यों से प्राप्त औद्योगिक कार्य नियोजन (स्थायी आदेश) कानून की गत वर्ष की रिपोर्टों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है, कि उक्त कानून के पालन में उत्तर प्रदेश अन्य राज्यों की तुलना में अग्रगामी रहा है। इतना ही नहीं, स्थायी आदेशों के आलेख्यों पर सुनवाई के समय यथा सम्भव दोनों पक्षों-प्रबन्धकों एवं कार्यकरों–की सहमति से स्थायी आदेशों को क्रियात्मक रूप देने का प्रयत्न किया गया था। उक्त कानून की वैधानिक कठिनाइयों को देखते हुए, इस ओर आशातीत सफलता भी मिली। द्वितीय विशेषता प्रमाणित स्थायी आदेशों का सम्यक पालन कराने के लिए निरीक्षण व्यवस्था करना है।

—०—

(पृष्ठ २५ का शेष)

सांघातिक और ५९७० असांघातिक हुई।

१९५० के वर्ष में कुल ७११३ (३४ सांघातिक) आकस्मिक दुर्घटनाएँ हुई थीं।

ब्वायलर उप-विभाग—

उत्तर प्रदेशीय मुख्य ब्वायलर निरीक्षक के कार्यालय द्वारा १९५१ में निम्न निरीक्षण किये गये—

खुला निरीक्षण १५२०, जल परीक्षण ८२२, वाष्प परीक्षण ३३ और आन्तरिक निरीक्षण ७ इस प्रकार कुल मिलाकर २३८२ निरीक्षण किये गये। आलोच्य वर्ष में ३६ ब्वायलरों का रजिस्ट्रेशन किया गया। ब्वायलरों में होने वाली दुर्घटनाओं की भी ब्वायलर निरीक्षकों ने जांच की।

———
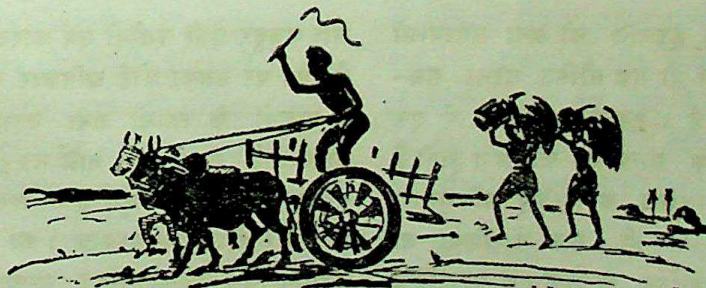
हड़ताल

एक समस्या के रूप में अध्ययन

—रघुवरदत्त पन्त

मिल मालिकों और मजदूरों के पारस्परिक सम्बन्ध की जितनी भी समस्याएँ हैं उनमें हड़ताल तथा तालाबन्दी ही सबसे अधिक अधिदर्शनीय एवं जनसाधारण का ध्यान आकर्षित करने वाली होती हैं। किसी भी हड़ताल की तात्कालिक माँगें थोड़ी सी ही हो सकती हैं। किन्तु बहुधा हड़ताल की जड़ें तात्कालिक मांगों तक है। बड़े बड़े उद्योग धंधों के स्थापित होने के बाद उत्पादन के साधन (मशीन–कारखानें इत्यादि) के मालिक एवं मशीन, कारखानों में काम करने वाले साधन–विहीन मजदूरों के बीच में एक नए प्रकार के सम्बन्ध बनते गए। मालिक मशीन-कारखानों का स्वामी है किन्तु वह स्वयं उन पर काम नहीं करता। दूसरी

> हड़ताल से न केवल मालिकों और मजदूरों को ही क्षति होती है अपितु सारे समाज को भी नुकसान पहुँचता है। इसलिये क्या मजदूर को हड़ताल करने का अधिकार है ? लेखक के विचार में वर्तमान औद्योगिक व्यवस्था में हड़ताल को एक अनिवार्य घटना के रूपमें स्वीकार करना ही होगा। फिर भी इसका दुरुपयोग भी हो सकता है। लेखक नें सरकार द्वारा नियंत्रण रखने के लिये जिस मध्यम मार्ग का सुझाव दिया है, वह विचारणीय है।

ही सीमित नहीं रहती हैं। हड़ताल को अन्य समस्याओं से सम्बन्धित, केवल अपने ही तक सीमित घटना समझना एक भारी भूल है। हड़ताल वास्तव में एक विराट् आर्थिक-सामाजिक आन्दोलन का अंग होती है और उसके उद्देश्य एवं उपलक्षण का सम्यक् अधिमूल्यन भी आधारभूत समस्या के ही रूप में किया जा सकता है। हड़ताल का उद्देश्य आर्थिक एवं सामाजिक सम्बन्धों में एक नवीन व्यवस्थापन उत्पन्न करना होता और मजदूर ऐसी मशीनों एवं कारखानों पर काम करता है जिन पर उसका कोई अधिकार नहीं होता। उत्पादन के साधनों के स्वामी तथा उत्पादन के साधनों की सहायता से काम करने वाले मजदूरों का यह विशिष्ट सम्बन्ध ही आज के युग के मालिक–मजदूर संघर्ष एवं सम्बन्ध (औद्योगिक सम्बन्ध) का आधार है। हड़ताल वर्तमान युग के औद्योगिक सम्बन्ध का एक अनिवार्य भाग है, मजदूरों के संगठित होने के अधिकार को सभी

ओर से मान्यता मिली हुई है। जब संगठित होने का अधिकार स्वीकार किया जा चुका है तो उसके फलस्वरूप हड़ताल का अधिकार भी स्वीकार करना आवश्यक है। यह सत्य है कि हड़ताल से हानियां भी होती हैं, किन्तु यह सब होते हुए भी वर्तमान औद्योगिक व्यवस्था में हड़ताल एक अनिवार्य घटना के रूप में स्वीकार करनी ही पड़ती है। अतः कल्याण की भावना से ओत-प्रोत किसी भी निरपेक्ष सरकार का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह हड़ताल करने के अधिकारों का उपयुक्त रीति से ऐसा नियन्त्रण करे कि उससे उत्पन्न होने वाली हानि कम से कम हो, मगर हड़ताल करना एकदम गैरकानूनी न ठहरा दिया जाय।

हड़ताल केवल दो दलों का अथवा मालिक-नौकर का सामान्य पारस्परिक झगड़ा मात्र ही नहीं है। हड़ताल से उत्पादन कार्य रुक जाने के कारण उत्पादन की हानि होती है और उसके फलस्वरूप मालिक के मुनाफे की एवं मजदूर की मजदूरी की हानि होती है। उदाहरणार्थ सन् १९५० ई० में उत्तर प्रदेश में ६१ हड़तालें हुईं थीं जिनके कारण होने वाली जन-शक्ति की हानि २,३२४५० जन-दिवसों* में आँकी गई तथा मजदूरों की मजदूरी में होने वाली हानि २४,१५,१६४ रु० थी। यह स्पष्ट है कि हड़ताल मजदूरों का एक प्रकार का हथियार है और उससे काफी आर्थिक हानि होती है, न केवल मालिक को ही, वरन् तात्कालिक रूप में स्वयं मजदूर को और सारे समाज को भी। हड़ताल एक ऐसा अनोखा झगड़ा है जिससे केवल सम्बन्धित दलों को ही नहीं वरन् झगड़े से असम्बन्धित लोगों—सारे समाज—को नुकसान पहुँचता है। उत्पादन की हानि, मजदूरी की हानि, जनशक्ति की हानि ये सब अन्ततोगत्वा सारे समाज की ही हानि हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से हड़ताल सारे जन समाज की समस्या होती है यह तो हम देख ही चुके। वह केवल व्यक्तिगत मामला ही नहीं है। इसके अतिरिक्त हड़ताल के अवसर पर शान्ति व व्यवस्था बनाये रखने का भी प्रश्न उठता है। इस प्रकार से हड़ताल सारे समाज की समस्या होती है, और जनता की प्रतिनिधि कोई भी जन-प्रिय सरकार हड़ताल के प्रति उदासीन रहकर हस्तक्षेप न करने की नीति नहीं अपना सकती। सरकारी कानून द्वारा हड़तालों के समुचित नियंत्रण करने के सिद्धान्त का आधार इन ही सब बातों पर है।

हड़ताल द्वारा होने वाली सम्पूर्ण समाज की हानियों का दिग्दर्शन ऊपर कराया गया है, किन्तु यह तो स्थिति का केवल एक तरफा दृश्य ही है। हमें यह भी देखना है कि हड़ताल की कैसे आवश्यकता होती है और मजदूरों का हड़ताल करने का अधिकार किस प्रकार उचित एवं मान्य है।

वर्तमान औद्योगिक अवस्था में साधन सम्पन्न मालिक एकाकी मजदूर की अपेक्षा कहीं अधिक सबल होता है। यदि एक अकेला मजदूर अपने मालिक से नौकरी की शर्तें, काम करने की हालतों, मजदूरी इत्यादि के विषय में मोल-भाव करता है तो निश्चय ही वह इस सौदे में नुकसान में रहेगा और मालिक को अपनी सबल स्थिति का लाभ मिलेगा। मजदूर अपनी इस कमजोरी की स्थिति को दूर करने के लिए ही आपस में मिल कर एक समूह का रूप धारण कर लेते हैं। मजदूरों के सामूहिक रूप से सौदा करने के सिद्धान्त का आधार यही है। सामूहिक रूप से सौदा करने की नीति के उद्देश्यों एवं परिणामों को स्पष्ट रूप से समझ लेना आवश्यक है। एक मजदूर व्यक्तिगतरूप से अपने मालिक की अपेक्षा कहीं अधिक हीन होता है; किन्तु सामूहिक रूप में उपस्थित होकर अधिक सख्या के बल से उनकी यह कमी दूर हो जाती है और वे अपने मालिक से बराबरी के दर्जे से बातचीत कर सकते हैं। हड़ताल भी इसी प्रकार का एक सामूहिक रूप से किया गया कार्य है, जिसमें सब मजदूर मिलकर काम करने से इनकार कर देते हैं।

क्या मजदूर को हड़ताल करने का अधिकार है? कानूनी सिद्धान्त की कसौटी पर कसने के लिए समस्या

*एक मजदूर की एक दिन की कार्य शक्ति को एक जन-दिवस कहते हैं।

को इस रूप में रखा जा सकता है। क्या उन मजदूरों को, जिन्होंने पहिले नौकरी की शर्तों के अनुसार काम करना स्वीकार किया है, यह अधिकार है कि किसी अवसर पर सामूहिक रूप से काम करने से इन्कार कर दें? इस सम्बन्ध में "षड़यन्त्र का सिद्धान्त" (कॉन्सपिरेसी डॉक्ट्रिन) के नाम से प्रख्यात एक सिद्धान्त है, जिसका कुछ ऐतिहासिक महत्व है। बहुत पहिले इंगलैन्ड में कई मुकदमों में इसी सिद्धान्त के अनुसार मजदूरों का संगठित होना गैर कानूनी ठहराया गया था। 'षड़यंत्र सिद्धान्त' का आधार यह है कि एक अकेले व्यक्ति की अपेक्षा अनेक मिलकर दुष्कर्म करने में अधिक समर्थ होते हैं। कोई भी अकेला व्यक्ति संगठित दल के मुकाबले में नहीं टिक सकता। अकेला व्यक्ति अकेले दुश्मन का मुकाबिला कर सकता है, किन्तु शत्रु के संगठित दल के सामने उसकी पराजय अवश्यम्भावी है। एक के मुकाबले में अनेकों का संगठित होना अन्याय पूर्ण है। इन्हीं सब पुराने विचारों के आधार पर मजदूरों का संगठित होना अन्याय पूर्ण माना जाता था।

किन्तु नवीन सामाजिक विचार धारा के उदय होने के साथ साथ लोगों के इस दृष्टिकोण में भी परिवर्तन होता चला गया। नये औद्योगिक युग की नई नई समस्याओं का हल ढूंढ़ने के लिये पुराने विचारों को छोड़ना आवश्यक हो गया; षड़यंत्र का सिद्धान्त टिक नहीं सका और उसका स्थान मजदूरों के 'संगठित होने के अधिकार' ने ले लिया। वर्तमान युग में मजदूरों के इस अधिकार को सभी स्वीकार करते हैं। यह सत्य है कि हड़ताल करने के अधिकार का दुरुपयोग भी सम्भव है, विशेषतः उस समय जब कि मालिक-मजदूर सम्बन्ध की समस्याओं को पारस्परिक सद्भावना से सुलझाने के तरीकों की उपेक्षा करके हड़ताल का आश्रय लिया जाय। किन्तु हड़ताल की आवश्यकता और उपयोग को भी सर्वथा नहीं भुलाया जा सकता है। कई मौकों पर, जबकि और कोई चारा नहीं रह जाता है, तब हड़ताल के द्वारा ही न्यायपूर्ण समझौते के होने में मदद मिल सकती है। हड़ताल एक हथियार के समान है, उसका उपयोग भी हो सकता है और दुरुपयोग भी। दुरुपयोग से बचना आवश्यक है। किन्तु इसके लिये हथियार को बिल्कुल ही खत्म नहीं किया जा सकता और न हथियार का अनियंत्रित उपयोग ही करने दिया जा सकता है। आज के औद्योगिक समाज में कोई भी सरकार न तो हड़ताल का पूर्ण निषेध ही कर सकती है और न उसके लिये बिल्कुल खुली छूट ही दे सकती है। एक ऐसा बीच का सन्तुलित मार्ग निर्धारित होना चाहिये जिससे मजदूर मालिक एवं सम्पूर्ण समाज की अधिक से अधिक भलाई हो। हड़ताल करने के अधिकार का सन्तुलित (अर्थात् न बहुत अधिक और न बिल्कुल कम) नियंत्रण ही इस समस्या का उचित हल है।

सरकार द्वारा हड़ताल के अधिकार के नियंत्रण की नीति का आधार एवं उद्देश्य 'संगठित होकर सौदा' (कलेक्टिव बार्गेनिंग) करने की नीति को प्रोत्साहन देना ही चाहिये। समुचित रूप से उन्नत औद्योगिक समाज में औद्योगिक लोकतंत्र (इंडस्ट्रियल डेमोक्रेसी) को बढ़ावा ही मिलना चाहिये। किन्तु यदि मालिक और मजदूर में एक भी दल कमजोर है तो कमजोर दल के हितों की देखभाल करना सरकार का कर्त्तव्य हो जाता है। ऐसी अवस्था में इस हद तक औद्योगिक लोकतंत्र के सिद्धांत में समुचित संशोधन करना आवश्यक हो सकता है। अविकसित या अर्द्धविकसित औद्योगिक समाज में सरकारी नियंत्रण का अधिकाधिक स्थान होना अनिवार्य है। दोनों दल जब बराबर के नहीं हैं तो सामाजिक न्याय की दृष्टि से ऐसा करना आवश्यक हो जाता है। मजदूर संगठन अभी पर्याप्त विकसित अवस्था को प्राप्त नहीं कर सका है। मजदूर आन्दोलन में मजदूरों के सीधे सीधे हितों के अतिरिक्त अनेक बाहरी बातों (जैसे राजनीति, मजदूर-नेताओं की व्यक्तिगत दौड़, इत्यादि) का भी काफी गहरा प्रभाव है। उद्योग भी सम्पूर्ण विकास प्राप्त नहीं कर सके हैं। इन सब हालतों को देखते हुए सरकार के लिये मध्यम मार्ग की नीति का अपनाना ही श्रेयस्कर है। सरकार को चाहिये कि ठीक उस हद तक नियंत्रण लगाय जितना पर्याप्त और परमावश्यक हो; और साथ

(शेष ३४ पृष्ठ पर)
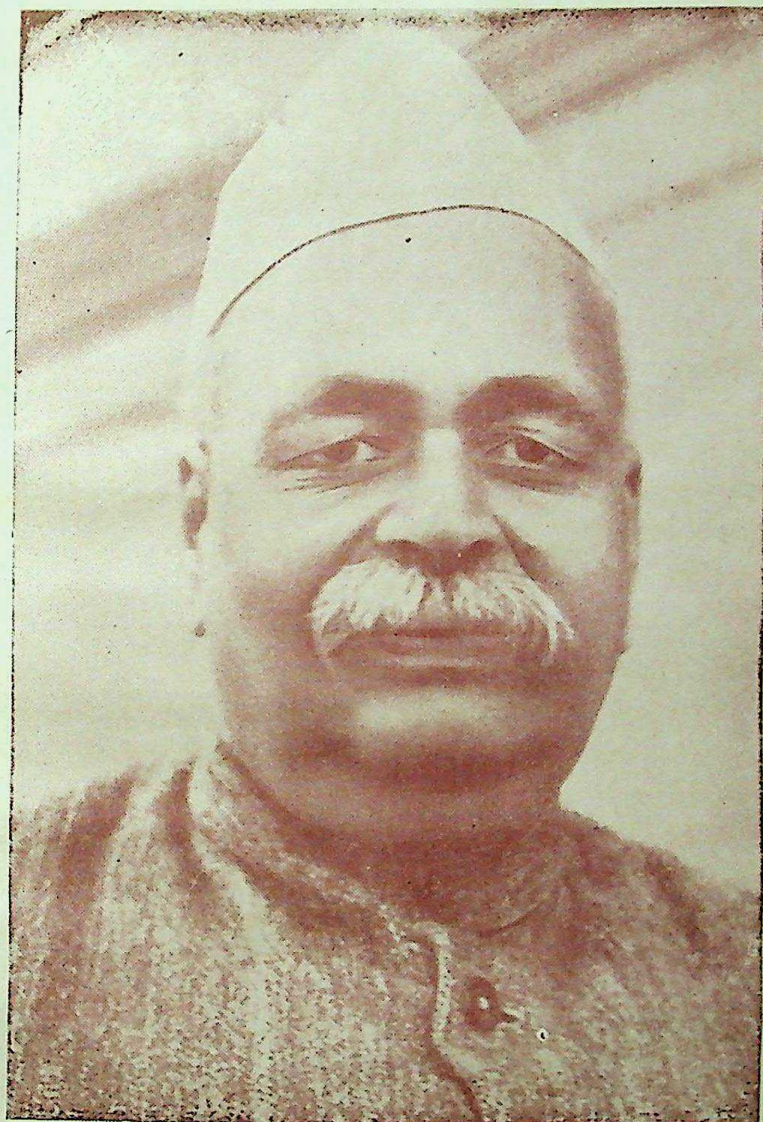
माननीय पं० गोविन्दवल्लभ पंत
मुख्य मंत्री, उत्तर प्रदेश

मज़दूरों की सेवा करने के लिये जिस प्रकार के पत्र की आवश्यकता है, उसकी पूर्ति "श्रमजीवी" कर रहा है। "श्रमजीवी" की वर्तमान एवं पिछली सेवाओं को देखकर मैं आशा करता हूँ कि आगे भी वह इसी प्रकार मज़दूरों की सेवा करता रहेगा।

गो. व. पंत
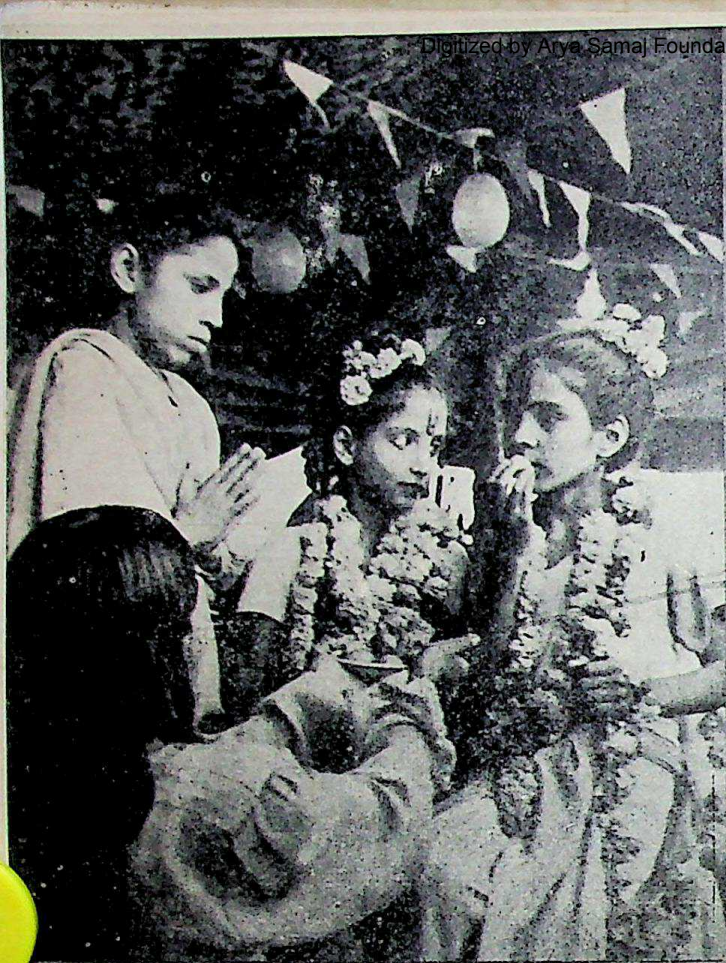
वार्षिक खेल-कूद पारितोषिक वितरण उत्सव १९५२

(१) श्रमिक बच्चों द्वारा प्रदर्शित "भिलनी के बेर" का एक दृश्य

इस वर्ष के चैम्पियन अपने पुरस्कारों के साथ—

(२) श्यामा (सीनियर)
—ग्वालटोली केन्द्र

(३) प्रेमनारायण (जूनियर)
—दर्शनपुरवा केन्द्र

(१)

(२)

(३)

(६) (७)
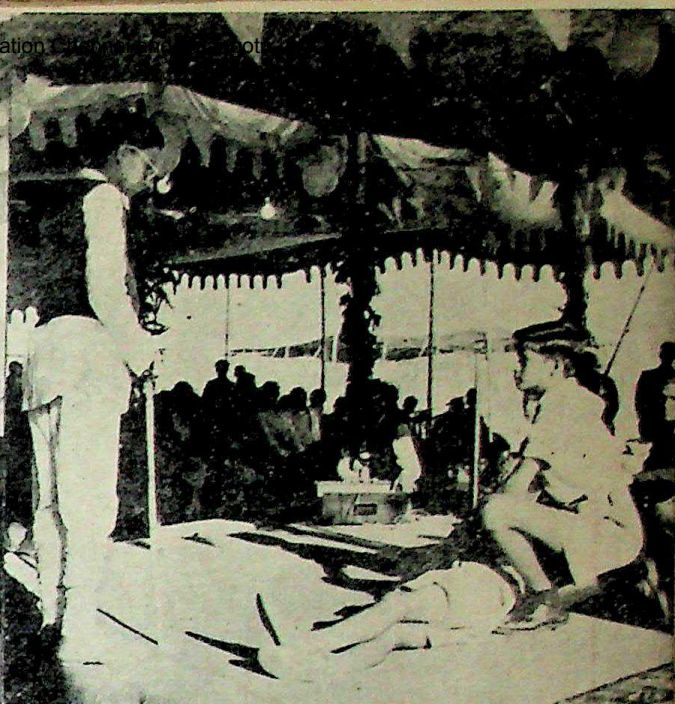
(४) मोरारी (माइनर बालकों में)—डिप्टी का पड़ाव (५) ग्रेस (माइनर बालिकाओं में)—चमनगंज केन्द्र (६) जिलाधीश श्री सतीशचन्द्र विजयी खिलाड़ियों को पुरस्कार दे रहे हैं (७) श्रमिक स्काउटों द्वारा प्रदर्शित "स्काउटों के कर्तव्य" का एक दृश्य।

(४) (५)
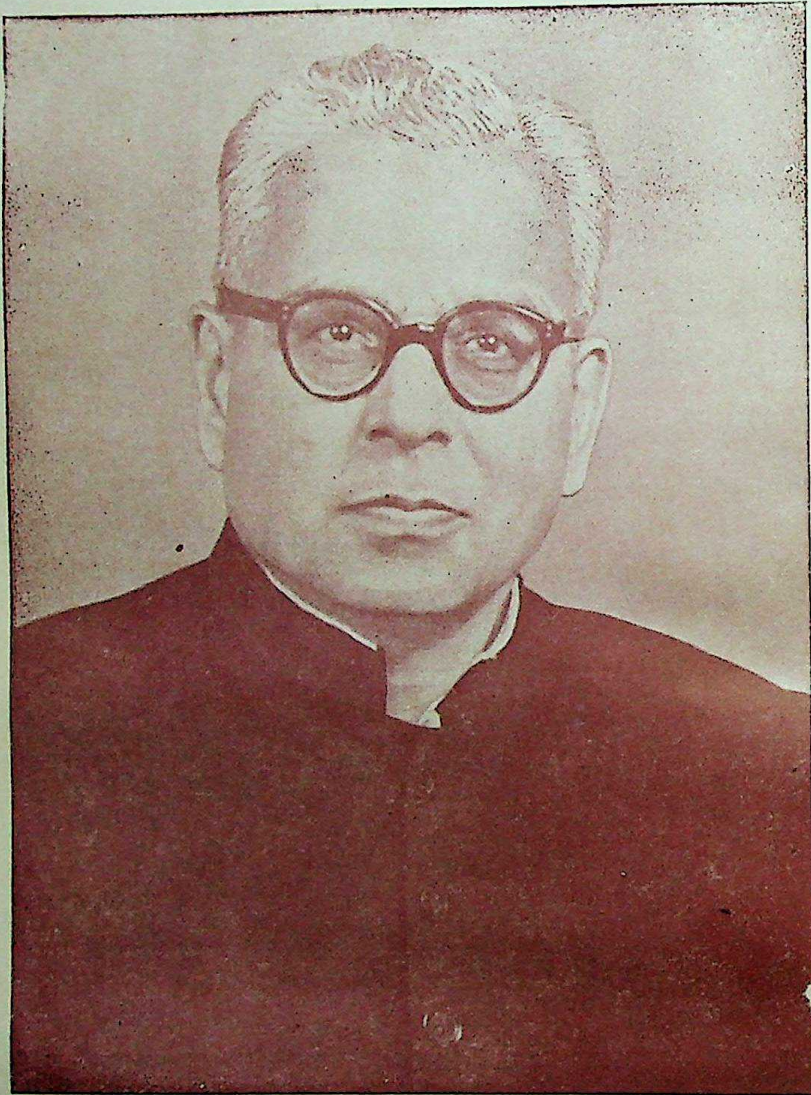
मान्नीय सैयद अली जहीर
श्रम मंत्री, उत्तर प्रदेश

"श्रमजीवी" को मैंने देखा है। उसमें जो सामग्री प्रकाशित होती है, वह निस्सन्देह श्रमिकों और मालिकों दोनों के ही लिये उपयोगी है। मेरा विश्वास है कि ऐसे निष्पक्ष पत्र को मालिक और श्रमिक दोनों ही अपना अमूल्य सहयोग देते रहेंगे। "श्रमजीवी" को अपने इस प्रयास में काफी सफलता मिली है और मैं आशा करता हूँ कि वह इसी प्रकार बराबर उन्नति करता रहेगा।

—*सैयद अली ज़हीर*

श्रमिक संघ कानून १९२६, क्यों और कैसे ?

—सूर्यप्रसाद अवस्थी
एम. एल. ए.
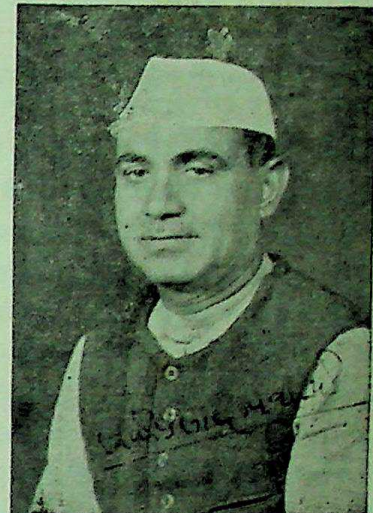
भारतीय श्रमिक संघ कानून, १९२६ का निर्माण किन परिस्थितियों में हुआ और भारतीय श्रमिकों को इसके लिये जो संघर्ष करना पड़ा, उसका विवरण लेखक ने यहां प्रस्तुत किया है।

श्रमिक संघों का मूल उद्देश्य अपने सदस्यों की आर्थिक उन्नति एवं आर्थिक जटिलताओं को सरल बनाने की दिशा में प्रयत्न करना है। श्रमिक संघों के विगत इतिहास को देखने से विदित होता है कि मानव जीवन की आर्थिक जटिलताओं के साथ श्रमिक संघों का निर्माण हुआ है और उनका आन्दोलन भी जोर पकड़ता गया है।

भारत में यान्त्रिक युग के प्रादुर्भाव, कारखानों की स्थापना तथा अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर व्यापार होने के फलस्वरूप कुछ विशिष्ट कठिनाइयों का अनुभव करने वाले लोगों को अपना एक संगठन बनाना पड़ा जिससे कि उन कठिनाइयों को सामूहिक रूप से हल किया जा सके। कठिनाइयों को सामूहिक रूप से हल करनेवाले ऐसे ही संगठनों को श्रमिक संघ कहते हैं।

प्रत्येक देश में श्रमिक संघों के निर्माण और उनकी मान्यता के पीछे संघर्षों का इतिहास है। ग्रेट ब्रिटन उन देशों में से एक है जहाँ श्रमिक संघों को अपनी कानूनी मान्यता के लिये बहुत संघर्ष करना पड़ा है। १९ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में वहाँ श्रमिक संघ आन्दोलन की शक्ति बढ़ी किन्तु सरकार के विरोध के समक्ष उसे सफलता न मिल सकी। इस कार्य में सरकार की ही ओर से नहीं बल्कि मालिकों ने भी बाधाएँ उपस्थित कीं। फिर भी श्रमिकों ने अपनी कार्यवहियों को इन तमाम विरोधों के बावजूद भी जारी रखा और संघर्ष का सामना करते रहे, परिणाम स्वरूप १८७१ में वहाँ श्रमिक संघ कानून पास हुआ। कुछ समय बाद इस आन्दोलन ने इतना जोर पकड़ा और शक्तिशाली हो गया कि १९४५ में वहां मजदूर दल की सरकार की स्थापना हो गई।

योरप के प्रायः सभी देशों में अन्य देशों की अपेक्षा अधिक शक्ति शाली श्रमिक संघ हैं। ब्रिटेन की ट्रेड यूनियन कांग्रेस, अमरीका के मजदूर फेडरेशन तथा फ्रेन्च कन्फेडेरेशन न केवल अपने ही देशों में वरन् अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में भी प्रभाव रखते हैं।

भारत में यंत्र युग का प्रारम्भ १८५१ से हुआ। इस वर्ष बम्बई में एक सूती मिल खोली गई। १८५५ में वहां एक जूट मिल की भी स्थापना हुई। इसके पूर्व यहाँ पर इस प्रकार के कारखाने नहीं थे। इन कारखानों के मालिक अंग्रेज होते थे और बहुत बड़ी संख्या में भारतीय स्त्री पुरुषों की भर्ती होती थी। इन श्रमिकों से १६-१६ घंटे तक काम लिया जाता था। श्रमिकों को बाहर न तो सूर्योदय के, और न सूर्यास्त के ही दर्शन होते थे। उनके रहने आदि की भी कोई व्यवस्था नहीं थी। कुछ फुट--पाथों पर सो रहते थे और कुछ कोठरियों में रहते थे। एक--एक कोठरी में कई श्रमिकों को गुजर करनी पड़ती थी। वेतन इतना कम मिलता था कि जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की भी पूर्ति नहीं हो पाती थी। श्रमिकों की बेकारी, बीमारी, बुढ़ापे की क्षति पूर्ति आदि की सुविधाओं का नाम ही नहीं था।

१९३५ में बम्बई सरकार ने सूती मिलों के श्रमिकों के पारिश्रमिक का हिसाब लगाया तो पता चला कि उस समय शोलापुर मिल के श्रमिकों में ६२ प्रतिशत को ५) से १०) तक, २० प्रतिशत श्रमिको १५) से कम पारिश्रमिक मिलता था। कहने का तात्पर्य यह है कि मिल मालिक भारतीय श्रम से और भारतीय कच्चे माल से मनमानी लाभ उठाते थे और श्रमिकों की लेश मात्र भी परवाह नहीं करते थे। इस शोषण का परिणाम यह होता था कि भारतीय मिलों द्वारा तैयार माल इतना सस्ता होता था कि ब्रिटेन में परेशानी बढ़ गई।

१८७४ में ब्रिटिश हाउस आफ कामन्स में एक प्रश्न द्वारा भारत सचिव का ध्यान बम्बई के श्रमिकों की ओर आकर्षित किया गया और यह कहा गया कि भारत में सूती उद्योग के विकास के फलस्वरूप भारतीय श्रमिकों पर होने वाले अत्याचारों से उत्पन्न खतरों का उत्तरदायित्व किस पर होगा। १८७५ में एक बार पुनः भारतीय श्रमिकों की दुर्दशा के ऊपर प्रश्न उठाया गया परिणाम यह हुआ कि एक बम्बई फैक्टरी कमीशन इन बातों की जाँच करने के लिये बैठाया गया।

उपर्युक्त कार्यवाही मानवीय दृष्टिकोण से नहीं वरन् इसलिये हुई कि भारत में तैयार सस्ते माल के फलस्वरूप ब्रिटेन में खलबली मची हुई थी। यहाँ तक कि ३० जुलाई, १८७५ में हाउस आफ लार्ड्स में बोलते हुये अर्ल आफ शेफ्ट्स बरी ने कहा कि यह ध्यान देने योग्य बात है कि भारत में कच्चे माल और श्रम की सुन्दर सुविधाएँ प्राप्त हैं। यदि कोई प्रतिबन्ध न लगाया गया तो मैनचेस्टर में भारत का ही बना माल दिखाई देने लगेगा। इसी दृष्टि-कोण के फलस्वरूप समय समय पर कमीशन बिठाकर जांच की गई किन्तु भारतीयों के समक्ष कुछ और ही रूप रखा गया और कहा गया कि उनकी तकलीफें दूर करने केलिये ही यह सब किया जा रहा है।

१८८० में १७००० श्रमिकों द्वारा श्री लोखंडे के सभापतित्व में प्रथम बार भारत में "मिडलैण्ड एसोसियेशन" के नाम से एक संस्था का निर्माण किया गया। इस संस्था का उद्देश्य श्रमिकों की तकलीफों को दूर करने की दिशा में कदम उठाना था। परन्तु इस संस्था का कोई वास्तविक रूप नहीं था। इसका कोई कानून नहीं था तथा इसके पदाधिकारी सलाहकार के रूप में काम करते थे। इस कारण इस संस्था को पूर्ण रूप से श्रमिक संघ नहीं कहा जा सकता।

(पृष्ठ ३२ का शेष)

साथ ठीक उस हद तक हड़ताल करने की आजादी और औद्योगिक-लोकतंत्र की सत्ता भी दे जितना उचित हो और लोक हित में हो। भारतवर्ष में एवं हमारे राज्य उत्तर प्रदेश में श्रम-सम्बन्ध विषयक जो कानून है, और सरकार ने जो श्रम नीति निर्धारित की है उनका निर्माण ऊपर कहे गये सिद्धांतों के आधार पर ही किया गया है।

—०—

सर्व प्रथम इस संस्था ने १८८१ के "फैक्टरी ऐक्ट" का विरोध किया। इस ऐक्ट के विरोध में इस संस्था ने सभाएँ करनी शुरू कीं। १८८४ में एक प्रस्ताव पास किया जिसमें ५५०० श्रमिकों के हस्ताक्षर थे। उस समय आये हुये "बाम्बे फैक्टरी कमीशन" के सभापति को यह प्रस्ताव दिया गया। इस प्रस्ताव में बम्बई के श्रमिकों की दशाओं के उल्लेख के अतिरिक्त काम के घन्टों की कमी, साप्ताहिक अवकाश, कार्यकाल में अवकाश, क्षति पूर्ति और नियत समय पर पारिश्रमिक की माँगों को रखा। इस संस्था ने "दीनबन्धु" नामक श्रमिकों का भारत में सर्वप्रथम पत्र भी निकाला। संस्था को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई तथा श्रमिकों का साहस बढ़ा और इसके निर्माण के २० वर्ष के अन्दर बहुत सी संस्थायें श्रमिकों में काम करने के लिये बन गईं।

सन् १८९७ में "अमलगमेटेड सोसाइटी आफ इण्डिया," १९०५ में "प्रिन्टर्स यूनियन कलकत्ता", १९०९ में "कामगर हितवर्धक सभा", १९०७ में "बाम्बे पोस्टल यूनियन" और १९१०में "सोशल सर्विस आफ लीग" का निर्माण हुआ। ये सारी संस्थायें "मिडलैंड एसो-सियेशन" के आधार पर ही चलती थीं। ये संस्थायें प्रधानतः श्रमिकों के भलाई के कार्य करती थीं। दवादारू पढ़ाई, लिखाई, लेनदेन के परस्पर सम्बन्धों को स्थिर रखती थी।

उस समय भारतीय श्रमिक विदेशों में भी भेजे जाते थे। संस्थाओं का रुख इसके विरोध में हो गया था और डटकर विरोध भी होने लग गया था। इसी बीच में १९१४ में विश्व व्यापी युद्ध का श्री गणेश हो गया। युद्ध अवस्था में इन संस्थाओं ने तथा भारतीय श्रमिकों ने बड़ी लगन और परिश्रम के साथ युद्ध में सहायता पहुँचाई। "कामगर हितवर्धक सभा" जैसी संस्थाओं ने युद्ध में सहायता करने का प्रचार किया। इस समय आन्दोलन के जोर न पकड़ने का कारण यह था कि अगर कोई बात उठाई जाती थी तो यह कहा जाता था कि देश पर संकट है, इसके समाप्त होने पर सुधार का आश्वासन दिया जाता था।

सन् १९०५ में बम्बई में ७९ सूती मिलें थी, जिनमें १,१४००० श्रमिक काम करते थे। १८१८ में भारत में ३,४३६ मिलें हो गई जिनमें ११,२२,९२२ श्रमिक काम करते थे। कारखाना कानून बनाये गये थे परन्तु उनका पालन सही मानों में नहीं किया जाता था। इन परिस्थितियों पर भी श्रमिक देश पर संकट के नाम पर चुप थे अन्यथा आन्दोलन बहुत जोर पकड़ता।

हड़तालों का होना प्रारम्भ हो चुका था, रेलवे में "ईस्ट बंगाल रेलवे हड़ताल", कलकत्ता में "राजकीय प्रेस हड़ताल" और बम्बई में ६ दिन की आम हड़ताल श्री लोकमान्य तिलक की सजा के विरोध में सफलता पूर्वक हो चुकी थी। ये उस समय की महत्वपूर्ण हड़तालें थीं।

युद्ध के बाद संसार में क्रान्ति की लहर उठी हुई थी और भारत में उसकी चिनगारियाँ आग को प्रज्वलित कर रही थीं। एक ओर श्रमिक आन्दोलन था और साथ ही दूसरी ओर राजनीतिक आन्दोलन भी प्रारम्भ था। इसी बीच में १९१८ में महात्मा गांधी के नेतृत्व में "अहमदाबाद टेक्सटाइल यूनियन", जिसकी स्थापना वे पहले कर चुके थे, ने जोरदार हड़ताल की। यह हड़ताल २ सप्ताह तक चली, और अन्त में सफल रही। श्रमिकों की माँगें पूरी हुईं और श्रमिक काम पर गये। १९१८ में बम्बई की सूती मिलों में भी बहुत बड़ी हड़ताल हुई।

कानपुर, जमालपुर, बम्बई, कलकत्ता, रंगून, शोला-पुर, आदि औद्योगिक नगरों में हड़तालें प्रारम्भ हो गईं। १९२० की छमाही में २०० हड़तालें हुईं जिनमें १५ लाख श्रमिकों से अधिक ने भाग लिया।

यहाँ पर "मद्रास टेक्सटाइल यूनियन" का प्रसंग दे देना आवश्यक जान पड़ता है। श्रीमती एनी बेसेन्ट के एक सहयोगी ने जिनका नाम बी० पी० वाडिया था १९१८ में "मद्रास टेक्सटाइल यूनियन" का निर्माण

(शेष पृष्ठ ४० पर)

—प्रभाकर तिवारी

उत्तर प्रदेश में औद्योगिक झगड़ों को निपटाने की जो व्यवस्था १९४७ से प्रचलित रही है, वह लोक तंत्रवाद पर आधारित है। इस प्रणाली में औद्योगिक झगड़ों को आपसी बातचीत से सुलझाने का पूर्ण अवसर रहा है।

युद्ध काल में लोगों का अनुमान था कि युद्ध के समाप्त होते ही जरूरी चीजों का उत्पादन बढ़ेगा किन्तु ऐसा नहीं हुआ। देश हित को सामने रखकर केन्द्रीय सरकार ने १९४६ में प्रान्तीय मंत्रियों का सम्मेलन बुलाया जिसमें श्रम संबंधी कानूनों को बदलने के अलावा मालिकों और मजदूरों के आपसी झगड़ों को दूर करने की ओर ज्यादा ध्यान दिया गया और सरकार ने मालिक और श्रमिकों के प्रतिनिधियों का एक त्रिदल सम्मेलन बुलाने का निश्चय किया।

त्रिदल सम्मेलन में अन्य बातों के अतिरिक्त एक औद्योगिक सुलहनामा किया गया। तीनों दलों ने यह तय किया कि देश में उत्पादन बढ़ाया जावे और तीनों दल अपनी अपनी जगह पर कोई खास अड़चन न डालें। इस औद्योगिक सुलह से एक बड़ा भारी लाभ हुआ। हर चीज के उत्पादन में वृद्धि के आसार दिखाई पड़ने लगे। स्पष्ट है कि यह लोकतांत्रिक ढंग उद्योग धन्धों के लिए बड़ा ही कारगर साबित हुआ

युद्ध कालीन औद्योगिक कानून केवल उस समय के अनुकूल थे, पर बाद मे उनसे काम न चल सका। अतः औद्योगिक झगड़ों का तांता सा लग गया। फलतः १९४७ में औद्योगिक झगड़ा कानून बनाया गया। इस कानून ने बहुत सी कमियां दूर कर दीं। इसका सहारा लेकर बहुत से प्रान्तों में भी अलग अलग कानून अपनी अपनी सुविधानुसार बनाये गये।

विलायत के उद्योग धन्धों में लड़ाई के जमाने में सह-उत्पादन कमेटियां बनीं थीं, जिनके द्वारा हर चीज की उत्पत्ति खूब बढ़ी थी। यहां तक कि लोगों की धारणा

है कि इन उत्पादन कमेटियों के बल पर ही द्वितीय महायुद्ध जीता गया। अतः उसी आधार पर हमारे देश में कुछ वैसी ही कारखाना कमेटियों का श्री गणेश किया गया। दूसरे शब्दों में इसे यदि व्यवसाय में प्रजातंत्रवाद की पहली झांकी कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।

हमारे प्रान्त में इनका श्री गणेश शक्कर के व्यवसाय में पहले पहल किया गया। अप्रैल, सन् ४८ में शक्कर के कारखानों में जहां २०० से अधिक मजदूर थे, वहाँ वर्क्स कमेटियों के निर्माण की आज्ञा निकाली गई। चूंकि शक्कर के क्षेत्र में मजदूर संगठित थे, अतः मौसम खत्म होने के बाद भी इस प्रयोग को कार्यान्वित करने का आदेश निकाला। इसके द्वारा दोनों पक्षों को अवसर दिया गया कि वे अपने अपने मामलों को पहले पहल अपने आप सुलझावें। भेदभाव मिटाने का यही नया किन्तु सरल तरीका था। साथ ही नियमों को कुछ इस प्रकार बनाया गया कि जिससे दोनों दल अपनी अपनी हिचकिचाहट दूर कर आपसी सम्बन्धों को अधिक मजबूत करें। कमेटी के उद्देश्यों में प्रायः उन सभी बातों को रख दिया गया कि जिनसे मन मुटाव पैदा होने की गंजाइश ही न रहे। जिन जिन कारखाने दारों ने कमेटी के तत्वों को समझ कर उसकी आत्मा को पहचान कर कार्य किया, अनुभव में आया है कि उनके यहाँ मन मुटाव ही नहीं हुआ बल्कि औद्योगिक झगड़ों की संख्या भी कम हो गई।

इन वर्क्स कमेटियों द्वारा सबसे पहली चीज जो मजदूर को मिली वह उसके विश्वास को और भी बढ़ाने वाली थी। मजदूर या तो अपने प्रतिनिधियों का स्वयं चुनाव करे या अपने रजिस्टर्ड ट्रेड यूनियन द्वारा प्रतिनिधि भेजे जो मजदूर ही हों। दूसरे शब्दों में इनके निर्माण द्वारा अविश्वास की जड़ को उखाड़ फेंका गया। इससे मजदूरों को कम से कम इतना मौका मिल गया कि वे अपनी अपनी तकलीफों को अपने मालिकों के सामने रखकर उनसे फैसला मागें। उनकी तकलीफों को दूर करने में जहां कम से कम एक मास लगता था, वहाँ हर पन्द्रह्वी में उनकी सुनवाई तथा फैसला होने लगा। बहुत दिनों से यह धारणा चली आ रही थी कि मजदूरों की शिकायतों को रफा दफा करने की मशीनरी भी बड़ी सुस्त और कीटक चाल वाली है। अतः इन कमेटियों ने उसे बहुत कुछ दूर किया।

वर्क्स कमेटियों के साथ साथ स्वाभाविकतया समझौता मशीनरी में काफी रद्दोबदल हुआ। उत्तर प्रदेश के तीन प्रादेशिक समझौता कार्यालयों के स्थान पर सात प्रादेशिक समझौता कार्यालय कर दिए गए। इस प्रकार समझौते की मशीनरी को ही न बढ़ाया गया, अपितु प्रदेश भर में प्रत्येक फैक्टरी में जहां भी दो सौ या उससे ऊपर मजदूर हों वहाँ, कारखाना कमेटियां बनाने का एक नया आदेश सन् ४६ के प्रारम्भ में निकाला गया। फलतः कारखाना कमेटियों का विस्तार हुआ और उनको ठीक चलाने के लिए प्रादेशिक और प्रान्तीय समझौते बोर्ड भी बनाये गए। प्रान्त के प्रमुख व्यवसायों जैसे कपड़ा, शक्कर, चमड़ा, शीशा, बिजली तथा इन्जीनियरिंग के बोर्ड बनाये गए। जिनमें उद्योगपति और श्रमिकों के प्रतिनिधियों की संख्या बराबर बराबर रक्खी गई। इस प्रकार कारखाना कमेटियों की कार्यवाही के बाद जो मसले तय होने से रह जाते उनको प्रादेशिक संराधन बोर्डों द्वारा तय करने का कार्य किया गया। इन बोर्डों के चेयरमैन प्रत्येक प्रादेशिक अफसर बनाये गए। जो मसले प्रादेशिक क्षेत्रों के बाहर होते उन मसलों पर प्रान्तीय बोर्ड फैसले देकर उलझी हुई समस्यायें सुलझाते। इस प्रकार कारखाना कमेटियों की देखभाल और उनके आये हुए अत्याधिक उलझे मसलों को सुलझाने के लिए इन बोर्डों की जरूरत हुई। बोर्डों द्वारा भी दोनों दल अपने अपने मसलों को आमने सामने बैठकर तय कर सकते थे केवल उनके सहायतार्थ दो अन्य न्यायाधिकारी और होते थे, जो अपना निष्पक्ष फैसला समझौता न होने पर ही देते थे।

लड़ाई के जमाने में धारा ८१ के अन्तर्गत जो मशीनरी औद्योगिक झगड़ों की खड़ी की गई थी, वही कुछ हेर फेर से सन् ४७ के प्रारम्भ तक चली पर उसमें अनेक दोष थे। औद्योगिक क्षेत्र से सम्बन्धित दोनों दलों

का कहना था कि ऐडजुडिकेटरों के फैसलों की अपील नहीं हो सकती। मजदूर और मिल मालिक दोनों में ही बड़ा असंतोष भी था। सरकार भी इस चीज को महसूस कर रही थी। अतः ज्यों ही वर्क्स कमेटियों और प्रादेशिक तथा प्रान्तीय बोर्डों का निर्माण हुआ, यह सोचा गया कि इस कमी को भी दूर कर दिया जावे। फलतः इन प्रादेशिक और प्रान्तीय बोर्डों के फैसलों पर भी यदि कोई पक्ष असन्तुष्ट रहे तो वह अपील औद्योगिक न्यायालय में भी कर सके। अतः इनके द्वारा संराधन समितियों के फैसलों को न्याय और कानून की दृष्टि से आँकने का एक मौका और दिया गया। औद्योगिक क्षेत्र में भी औद्योगिक अपील की चार अदालतें बनाई गईं। व्यवसाय की भिन्न भिन्न औद्योगिक अदालतें भी खोली गईं। कानपुर में कपड़े की, लखनऊ में शकर की, आगरे में चमड़े व शीशे की तथा इलाहाबाद में बिजली और इन्जीनियरिंग की। इन औद्योगिक अदालतों के निर्माण का आधार वही था और उनमें उद्योगपतियों और मजदूरों को बराबर बराबर प्रतिनिधित्व दिया गया। इन अदालतों के प्रेसीडेन्ट वहाँ के स्थानीय डिस्ट्रिक्ट जज बनाये गए। इनके निर्माण द्वारा बची हुई जितनी कठिनाइयां थीं, वे सभी दूर की गईं और मजदूर अथवा मिल मालिक दोनों को इस बात का पूरा पूरा मौका दिया गया कि यदि वे बोर्ड के फैसलों से असन्तुष्ट हों तो अपनी अपनी अपील आगे दायर कर सकते हैं।

प्रान्त के चार प्रमुख व्यवसायों के मामलों और झगड़ों के निपटाने का यह प्रथम प्रयास था और इसकी सफलता इस बात पर थी कि हर व्यवसाय के लिए उसकी अपनी अपनी निजी अदालतें थीं जो कि अहम मामलों पर अपना फैसला देतीं थीं और वह दोनों पक्षों को मान्य होता था। कारखाना कमेटी से शुरू होकर औद्योगिक अदालत तक की इमारत खड़ी करने का सबसे अच्छा तरीका यही हो सकता था जो हमारी प्रदेशीय सरकार ने किया फिर भी अनुभव में यह आया कि न तो उद्योगपति ही उसकी तह तक पहुँच सके और न मजदूर वर्ग तथा उनके नुमाइन्दे।

अतः १५ मार्च १९५१ को पुनः प्रांतीय सरकार ने इस व्यवस्था को फिर बदला। वर्क्स कमेटियां, प्रादेशिक संराधन समितियां, एवं चारों औद्योगिक न्यायालय इन सब को रद्द कर एक नई दिशा में कदम उठाने का प्रयास किया गया। वस्तुतः इस नई मशीनरी का प्रथम प्रयास था संराधन समितियाँ। अभी जहाँ केवल ६ उद्योगों में प्रादेशिक संराधन समितियाँ थीं, वहां उनको तोड़कर १५ मार्च ५१ के बाद प्रायः सभी उद्योगों में संराधन समितियां कायम की गईं। इनमें प्रत्येक क्षेत्र का प्रादेशिक अधिकारी चेयरमैन होता है तथा दोनों दलों के एक एक सदस्य नामजद होते हैं। इस प्रकार बोर्ड पहले झगड़े सुलझाने की कोशिश करता है। यदि झगड़ा सुलझ गया तो ठीक ही है और यदि न सुलझा तो बोर्ड के चेयरमैन अपनी रिपोर्ट सरकार तथा श्रम आयुक्त के पास अपनी सिफारिश के साथ भेज देता है। इसके आधार पर श्रमायुक्त अपने अनुमोदन भी सरकार के पास भेज देते हैं, और यदि सरकार चाहती है तो वह इन मामलों को किसी पंच निर्णायक के पास भेज देती है। इसके अतिरिक्त जो छोटे छोटे मसले होते हैं, उनको पंचों के सुपुर्द कर दिया जाता है जो प्रायः श्रम विभाग के ही अधिकारी होते हैं। उनके विरुद्ध एपेलेट ट्रिब्युनल में अपील भी की जा सकती है। इसी के साथ साथ उत्तर प्रदेश की सरकार ने एक प्रादेशीय औद्योगिक न्यायालय भी खोला है। इसके चेयरमैन एक सीनियर ग्रेड के आई० ए० एस० और दो रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट जज उसके सदस्य हैं। ये लोग प्रदेश के उद्योगों के अहम मसलों पर ही अपना फैसला देते हैं।

इस प्रकार एक नए तरीके का सूत्रपात किया गया है। गत ९ मास का अनुभव तो यही बताता है कि अब औद्योगिक झगड़ों में सुलहनामा करने की अधिक प्रवृत्ति दोनों दलों में बढ़ती दिखाई दे रही है और वर्क्स कमेटियों तथा प्रादेशिक संराधन समितियों द्वारा जो मुकदमेबाजी और आपसी मनमुटाव बढ़ गया था, वह कुछ कुछ हलका सा हो चला है।

औद्योगिक झगड़ों को सुलझाने का जो यह नया कदम उठाया गया है, वह अत्यंत ही सरल और सीधा है। किसी भी पक्ष को अब किसी तरह की शिकायत न होनी चाहिये। हमारी औद्योगिक सुलह की यही वह सीढ़ी है जिस पर चढ़कर हम उत्पादन को और अधिक बढ़ा सकते हैं।

क्षय रोग और उसकी रोक थाम के लिये राजकीय प्रयत्न

—डा० जे० एन० सक्सेना,
एम.बी.बी.एस., डी.टी.डी., डी.एम.आर.ई.
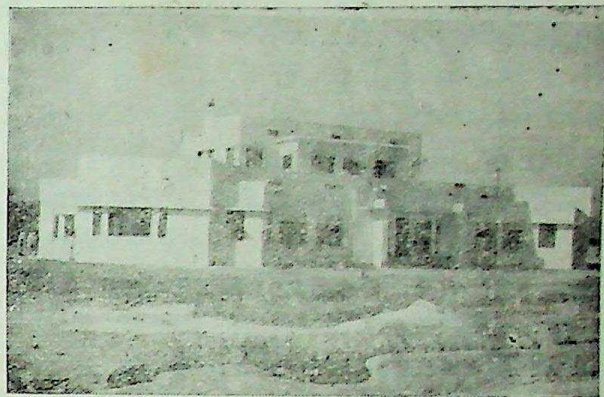
मजदूरों के लिये कानपुर में नव निर्मित क्षय रोग का अस्पताल

सार्वजनिक स्वास्थ्य और आर्थिक दोनों ही दृष्टि कोणों से क्षय रोग एक बहुत बड़ी समस्या है। अनुमानतः भारत में प्रति वर्ष ५००,००० व्यक्ति क्षय रोग से मरते हैं और लगभग २,५००,००० व्यक्ति किसी भी समय बीमार रहते हैं। चूँकि कानपुर औद्योगिक और व्यापारिक केन्द्र है अतएव यहाँ पर क्षय रोग से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या भारत में सबसे अधिक है।

इसके पूर्व कि सरकार द्वारा क्षय रोग को रोकने के लिये भारत में और विशेषकर कानपुर में किये गये प्रयत्नों पर प्रकाश डाला जाय, क्षय रोग के कारणों और उसकी रोक थाम के तरीकों का उल्लेख करना उचित होगा।

प्रारम्भिक बचपन की अवस्था में यह रोग अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है। लड़के-लड़कियों के स्कूल जाने की अवस्था में उससे कम और ३० वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियों में तो बहुत ही कम रहता है। क्षय रोग होने की साधारण अवस्था १५ वर्ष और ४५ वर्ष के बीच है। स्त्रियों में यह अवस्था ५ और १५ वर्ष के बीच है, विशेषकर जब उनका विवाह कम आयु में कर दिया जाता है। पुरुषों में क्षय रोग अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है क्योंकि बाहर की दुनिया से उनका सम्पर्क अधिक रहता है।

गाँवों की अपेक्षा शहरों में इस रोग से बीमार होने की सम्भावनाएँ अधिक हैं और कारखाने के मजदूरों तथा गरीब लोगों में अधिक पाया जाता है।

क्षय रोग बेसिलस नामक कीटाणुओं से फैलता है जो इतने छोटे होते हैं कि उन्हें खुर्दबीन की सहायता के बिना देखा नहीं जा सकता और वह भी कुछ विशेष तरीके अपनाने पर। अधिकतर क्षय रोगी के थूक से यह रोग फैलता है। रोगी का थूक सूखकर धूल से मिल जाता है और साँस के साथ धूल में मिले हुये थूक के अन्दर के कीटाणु फेफड़ों में चले जाते हैं। यदि रोगी की प्रतिरोध शक्ति अच्छी है तो इन कीटाणुओं का प्रभाव नहीं होता और यदि प्रतिरोध शक्ति कम होती है तो रोग हो जाता है।

सबसे अधिक प्रचलित फेफड़े का क्षय रोग है किन्तु

याद रखना चाहिये कि शरीर का कोई भी भाग इससे बचा नहीं कहा जा सकता। हड्डी, जोड़, आँत, मस्तिष्क, गिलटी का भी क्षय रोग होता है।

क्षय रोग की पहचान निम्न बातों से की जा सकती है:—

१—बुखार विशेषकर शाम को बढ़ जाना
२—खांसी
३—खांसी के साथ, कफ का निकलना
४—खांसी के साथ खून निकलना
५—सीने में दर्द
६—साँस लेने में तकलीफ
७—वजन में कमी
८—साधारण निर्बलता
९—भूख की कमी
१०—थकावट
११—आवाज में भारीपन
१२—पेट में दर्द
१३—कब्ज
१४—शरीर के किसी भाग में गिल्टी निकलना—अधिकतर गले और पेट में।
१५—स्त्रियों में मासिक का बन्द हो जाना।
१६—रात्रि में पसीना आना।

क्षय रोग घातक नहीं है। यदि क्षय रोग होते ही उसका निदान हो सके, तो रोगी के बच जाने की पूरी सम्भावना है। रोग के निदान में देरी होने से ही अधिकांश लोग क्षयरोग से मर जाते हैं।

इस देश में क्षय रोग के निदान और उपचार की व्यवस्था अपर्याप्त है। कानपुर में अब से कुछ काल पूर्व तक क्षय रोग के निदान की पर्याप्त सुविधा न थी। अब यहां पर क्षयरोग के तीन चिकित्सालय (क्लीनिक) खुल जाने से इस कमी की पूर्ति हो गई है। यह बात अवश्य है कि इन चिकित्सालयों में निदान सम्बन्धी जो सुविधाएँ उपलब्ध हैं, जनता उनसे यथा सम्भव पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाती। बहुत से तो ऐसे लोग हैं, जिन्हें क्षय रोग लगा रहता है, परन्तु वे स्वयं इस बात को नहीं जानते और फलतः वे इन चिकित्सालयों तक जाने से बचते रहते हैं। वे छोटी-मोटी तकलीफों का उपचार

(पृष्ठ ३५ का शेष)

सही यूनियन के ढंग पर किया और यहीं से देश में श्रमिक संघ का जन्म होता है। यद्यपि इसके पूर्व भारत में श्रमिकों के संगठन की कोशिश की गई थी; परन्तु संगठन का आधार कमजोर था। "मद्रास टेक्सटाइल यूनियन" के जन्म दाता श्री वाडिया और उनके साथियों पर हड़ताल कराने के फलस्वरूप बिनी एन्ड कम्पनी ने डेढ़ लाख रुपये का मुकदमा चलाया और उन पर यह दोष लगाया गया कि वे श्रमिक संघ का काम करते हैं जो अवैध है तथा यह एक षडयन्त्र है। न्यायालय ने फैसले में १॥ लाख का जुर्माना श्री वाडिया और उनके साथियों पर कर दिया। परन्तु नेताओं के बीच में पड़ने से यह शर्त रक्खी गई कि यदि श्री वाडिया आन्दोलन से अलग हो जावें और भविष्य में कोई बाहरी आदमी श्रमिक संघ में भाग न लेगा तो जुर्माना क्षमा कर दिया जायेगा। श्री वाडिया ने स्वीकार किया और देश छोड़ दिया। इस फैसले से भारत के श्रमिक संघ आन्दोलन को बहुत बड़ा धक्का लगा।

मार्च, १९२१ में ब्रिटिश ट्रेड यूनियनिस्टों का एक दल भारत सरकार के सेक्रेटरी श्री मान्टेग्यू से मिला और मद्रास के फैसले के अन्याय पर प्रकाश डाला तथा श्रमिक संघ कानून बनाने पर जोर दिया। श्री मान्टेग्यू ने उसे स्वीकार किया और उसी वर्ष श्री एन० एम० जोशी द्वारा एसेम्बली भेजा गया और पास हुआ। श्रमिक संघ कानून का श्रेय 'मद्रास टेक्सटाइल यूनियन' ही को है। इस यूनियन ने अपने सदस्यों से एक आना प्रति मास चन्दा लेना प्रारम्भ किया तो यह प्रश्न उठा कि श्रमिक संघ को केवल आर्थिक एवं सामाजिक संगठन के रूप में ही रहना चाहिये अथवा उन्हें राजनीति में सक्रिय भाग लेना चाहिये। श्रमिकों ने यह अनुभव किया कि यदि श्रमिक वर्ग को जीवित रहना है तो देश में एक नियमित श्रमिक कानून की स्थिति पैदा करनी होगी। श्रमिक संघ कानून को पूर्णतः लागू होने में ५ वर्ष लग गये और वह १९२६ में लागू हुआ।

—०—

करते रहते हैं और क्षय बढ़ता रहता है। जब रोग बढ़ कर भयंकर रूप धारण कर लेता है, तब रोगी चिकित्सालय जाते हैं और उस समय इनमें जो सुविधाएँ उपलब्ध रहती हैं, वे अपर्याप्त हो जाती हैं। इस प्रकार के रोगियों की सहायता के लिए क्षयरोग के अस्पताल की आवश्यकता है।

ट्रेनिंग-प्राप्त स्वास्थ्य-निरीक्षक डाक्टरों के प्रयत्न से समाज में प्रारम्भिक क्षय का पता लगाने तथा रोगियों को चिकित्सालयों तक जांच के लिए लाने में मदद मिल सकती है। भारत में दिल्ली, पटना तथा मदना पल्ली (मद्रास) में चलते फिरते क्लीनिक की व्यवस्था है जो सर्व साधारण की क्षयरोग सम्बन्धी निःशुल्क जाँच करते रहते हैं। यदि क्षयरोग का संदेह हो जाय, तो क्षय पीड़ित व्यक्ति को चाहिए कि वह चिकित्सालय आकर जाँच और निरीक्षण करा लें।

समाज का कर्तव्य

क्षय एक संक्रामक रोग है, इसलिये यह जरूरी है कि सभी क्षय-पीड़ितों का पता लगाया जाय और उनके निदान और उपचार की व्यवस्था की जाय, जिससे उनकी वजह से उनके चारों ओर के वातावरण में इस रोग का प्रसार न हो सके। यह समाज के हित में अच्छा होगा कि क्षय-पीड़ित रोगी के संपर्क में रहने वाले स्वस्थ व्यक्ति इस रोग के शिकार न बनें। सामयिक कार्यवाही करने से इससे बचा जा सकता है। ज़रा सी असावधानी भी बहुत नुकसान पहुँचा सकती है।

ऐसा समझा जाता है कि कानपुर में २०,००० क्षय के रोगी हैं। इनके कारण रोग के फैलने की संभावना बनी रहती है, जो कानपुर की जनता के स्वास्थ्य के लिए एक गहरी चुनौती है। सभी रोगियों के रोग का उचित निदान नहीं हो पाता और अधिकांश तो बिना इलाज के यों ही चला करते हैं।

इलाज सम्भव

विश्राम और पौष्टिक भोजन क्षय के इलाज के लिये जरूरी है। क्षय के आधुनिक इलाज में शल्य चिकित्सा (सर्जरी) का बहुत बड़ा हाथ है। हाल की खोजों में ऐसी कई दवाओं का पता चला है, जिससे क्षय के इलाज में बड़ी मदद मिलती है। हां, अभी तक ऐसी कोई भी दवा नहीं मिली है, जो रोग को मूलतः उसी प्रकार अच्छा कर दे, जिस प्रकार अन्य रोगों को, जिन पर कि दवाओं ने विजय प्राप्त कर ली है। जहाँ तक मानव-ज्ञान का विस्तार है, ऐसी कोई भी दवा नहीं है, जो शरीर को बिना हानि पहुँचाए क्षय के कीटाणुओं को नष्ट कर सके। इसलिए क्षय का इलाज प्रायः अपरोक्ष और मन्दगति से होता है। लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस रोग का भी इलाज है।

कानपुर के जिन मजदूरों की रहने और काम करने की दशाएँ आदर्श नहीं हैं और सीमित आय में पौष्टिक भोजन की व्यवस्था नहीं की जा सकती, वे क्षय के सरलता से शिकार हो जाते हैं। यह ठीक है कि मजदूरों की रहन-सहन और काम करने की दशाओं में सुधार करने तथा उनके लिए पौष्टिक भोजन की व्यवस्था करने की दीर्घ कालीन योजनाओं के बनाने की आवश्यकता है, फिर भी, संदेह होने पर यदि क्षय-चिकित्सालय में जाकर नियमित रूप से जाँच करा ली जाया करे और उसका उचित इलाज शुरू कर दिया जाय, तो अनेकों रोगियों को बचाया जा सकता है।

बी० सी० जी० का टीका

क्षय रोग की रोक थाम के लिए सर्वत्र बी० सी० जी० का व्यापक पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है और भारत सरकार ने भी इस देश में बी० सी० जी० आन्दोलन को सफल बनाने में विशेष प्रयत्न किया है और कर रही है। बी० सी० जी० का टीका लगाने के पहले एक प्रकार का टेस्ट किया जाता है, यह जानने के लिए कि टीका लगाए जाने वाले व्यक्ति को क्षय रोग की छुआ-छूत तो नहीं लगी। यदि छुआ छूत नहीं लगी तो बी० सी० जी० का टीका लगाना सुरक्षित है, अतएव बी० सी० जी० उनके लिए लाभकारी है जिनके अंदर क्षय रोग के कीटाणु मौजूद नहीं होते।

इस रोग के बचाव के लिए भारत सरकार के तत्वावधान में यूनाइटेड नेशन्स इंटरनेशनल चिल्ड्रेन इमर्जेन्सी

फंड (अन्तर्राष्ट्रीय बाल संकट-निवारिणी निधि) और स्कैंडीनेवियन वालंटरी सोसाइटी के सहयोग द्वारा विश्व संघ की ओर से कानपुर में मजदूरों के बच्चों को व्यापक रूप से बी० सी० जी० का टीका लगाया जाना, दिसम्बर १६४६ से प्रारम्भ हुआ। उत्तर प्रदेशीय श्रम विभाग द्वारा बी० सी० जी० के टीके लगवाय जाने के लिये व्यापक प्रचार किया गया। श्रम विभाग के कर्मचारियों ने पूर्ण सहयोग देकर इस आन्दोलन को सफल बनाया। १६४६ के वर्ष में बी० सी० जी० सम्बन्धी आंकड़े नीचे दिए जा रहे हैं :—

(१) क्षय रोग सम्बन्धी प्रथम परीक्षण में परीक्षितों की संख्या ७, २५६

(२) क्षय रोग सम्बन्धी द्वितीय परीक्षण और बी० सी० जी० का टीका लगाते समय अनुपस्थित बच्चों की संख्या ३,६०४

(३) क्षय रोग सम्बन्धी दो परीक्षणों में पूर्ण रूप से परीक्षित बच्चों की संख्या ३,६५२

(४) सशक्तों की संख्या २,३६५

(५) अशक्तों की संख्या १, २५७

(६) संख्या जिन्हें बी० सी० जी० के टीके लगाये गये १, २५७

१६४६ से शुरू हुआ बी० सी० जी० आन्दोलन १६५० और १६५१ में भी जारी रहा। श्रम हितकारी विभाग की ओर से इस कार्य को सम्पन्न करने के भरसक प्रयत्न किये गये। १६५० के वर्ष के आंकड़े इस प्रकार हैं :—

(१) प्रथम परीक्षण	१४,६६७
(२) द्वितीय परीक्षण	८,१६६
(३) सशक्तों की संख्या	५,४४८
(४) अशक्तों की संख्या	२,७४८

(५) संख्या जिन्हें बी० सी० जी० के टीके लगाये गये ३,१८६

उत्तर प्रदेशीय सरकार के डाइरेक्टर आफ मेडिकल हेल्थ सर्विसेज ने १,१०० रु० की धन राशि दी जो श्रम विभाग द्वारा बी० सी० जी० सम्बन्धी प्रचार कार्य में खर्च किया गया। इस धन का अधिकांश भाग बच्चों में लेमन ड्राप बांटने में खर्च किया गया जिससे कि वे केन्द्र में आकर प्रारम्भिक जांच कराएँ और उनके टीका लगाया जा सके :—

१६५१ के वर्ष में बी० सी० जी० टीके के आँकड़े इस प्रकार हैं :—

प्रथम परीक्षण	११,१५४
द्वितीय परीक्षण	५,२६६
सशक्त	४,४५३
अशक्त	८१३
बी० सी० जी० के टीके लगाय गय	४१३

उत्तर प्रदेशीय सरकार के श्रम विभाग द्वारा बी० सी० जी० के आन्दोल को सफल बनाने के लिये पूरा पूरा सहयोग तो दिया ही गया इसके अतिरिक्त स्वयं उत्तर प्रदेशीय सरकार ने कानपुर में क्षय रोग की रोक थाम के लिये ठोस कदम उठाए। सरकार की इस सम्बन्ध में कार्यवाही दो क्षेत्रों में एक साथ प्रारम्भ हुई। प्रथम टी० बी० क्लीनिक खोलकर श्रमिकों और उनके परिवार के लोगों के लिये निःशुल्क चिकित्सा की व्यवस्था की और दूसरे कानपुर के गंदे हातों की सफाई का श्रीगणेश किया। गंदे हाते क्षय रोग की उत्पत्ति और प्रसार के लिये काफी जिम्मेदार हैं।

टी० बी० क्लीनिक

उत्तर प्रदेशीय सरकार ने कानपुर के श्रमिकों और उनके परिवार के लोगों की चिकित्सा के लिये टी० बी० क्लीनिक खोलने के लिये फरवरी, १६५० में धन राशि

स्वीकृत की। एक इमारत किराये पर ली गई और उसमें एक १०० एम० ए० एक्स-रे प्लान्ट तथा अन्य
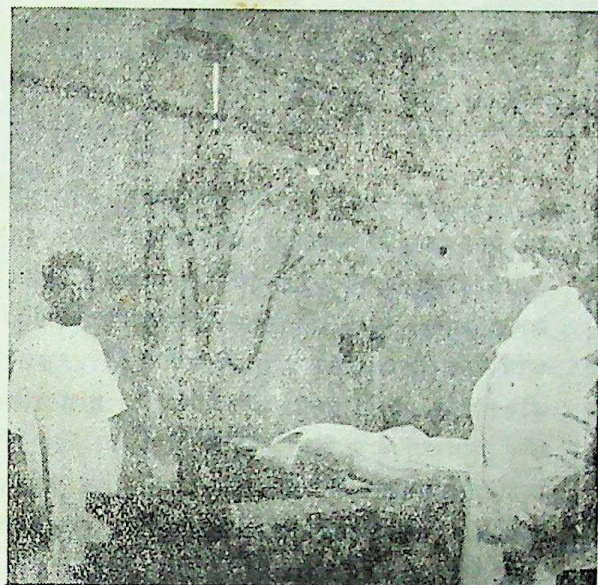
एक्स-रे प्लान्ट का एक दृश्य, एक मजदूर रोगी का एक्स-रे लिया जा रहा है।

आवश्यक सामान लगाया गया। एक मेडिकल सुपरिन्टेन्डेन्ट तथा अन्य कर्मचारी नियुक्त किये गये।

श्रम विभाग की ओर से टी० बी० क्लीनिक के खोले जाने के सम्बन्ध में जोरदार प्रचार किया गया, जिससे कि कानपुर के श्रमिक टी० बी० क्लीनिक की उपयोगिता को भली प्रकार समझ कर अधिक से अधिक लाभ उठा सकें।

यह क्लीनिक १०५।७३२ गांधी चौक, गांधी नगर, कानपुर में स्थित है। जिन मजदूरों की आमदनी १०० रु० (वेतन मेंहगाई मिलाकर) तक है, उनका और उनके परिवार के लोगों का इलाज मुफ्त किया जाता है।

क्लीनिक में रोगियों के खून, बलगम इत्यादि की जांच के लिये एक पाइथालाजी विभाग भी है, जिसमें यह जांच मुफ्त की जाती है।
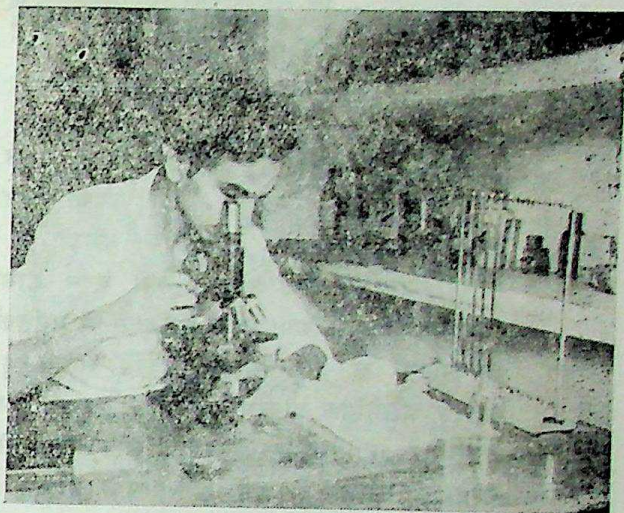
अस्पताल के पाइथालाजी विभाग का एक दृश्य।

डेवलपमेन्ट बोर्ड कानपुर ने रायपुरवा में १ एकड़ जमीन टी० बी० क्लीनिक की इमारत के लिये दी है। लगभग १,००,००० रुपये की लागत से इस वर्ष क्लीनिक के लिये एक सुन्दर इमारत भी तैयार हो गई है, जिसमें पाइथालाजी विभाग, एक्सरे कमरा, आपरेशन रूम, इमरजेंसी वार्ड तथा बाहरी विभाग इत्यादि का समुचित प्रबन्ध है। टी० बी० क्लीनिक शीघ्र ही किराये की इमारत से इस सरकारी इमारत में ले जाया जायगा।

मई से दिसम्बर १९५१ तक क्लीनिक में जिन व्यक्तियों की देख-भाल की गई और उनका इलाज किया गया, उनकी संख्या इस प्रकार है:—

पुरुषों की संख्या नये और पुराने	स्त्रियों की संख्या नये और पुराने	स्क्रीनिंग किये गये व्यक्तियों की संख्या	एक्सरे किये गये व्यक्तियों की संख्या	ए० पी० इलाज किये गये व्यक्ति	पी० पी० इलाज किये गये व्यक्तियों की संख्या
५६२७	५४४७	३१११	१०८६	१६३२	६६७

औद्योगिक सम्बन्ध, १९५१

औद्योगिक झगड़ों का असर न केवल उनसे सम्बन्धित पार्टियों पर पड़ता है, वरन् उनका असर सारे सम्प्रदाय पर पड़ता है। औद्योगिक झगड़ों का फैसला कानूनी न्याय की दृष्टि कोण से नहीं वरन् सामाजिक-न्याय की दृष्टि से किया जाता है, जिससे कि मालिकों और कर्मचारियों के बीच अच्छे सम्बन्ध कायम रह सकें। अतएव औद्योगिक सम्बन्ध सामाजिक समस्या है, आर्थिक समस्या है, मनोवैज्ञानिक समस्या है और शान्ति और व्यवस्था की समस्या है। इस अभिप्राय से सरकार ने एक स्वचालित, लोकतंत्रवादी प्रणाली की व्यवस्था की है। जिससे कि औद्योगिक झगड़े रोके जा सकें और उनको हल किया जा सके। सरकार के विचार से यदि पार्टियां इस प्रणाली का पूरा पूरा लाभ उठायें तो हड़ताल व तालाबन्दी के अवसर बहुत कम हो जांय।

अप्रैल, १९४६ में भारत रक्षा कानून की समाप्ति के बाद भारत सरकार ने औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ बनाया। यह शान्ति काल में बनाया गया कानून था। फिर भी यह देखा गया कि विस्तृत अशान्ति से प्रान्तों (अब राज्य) में उत्पन्न संकट कालीन स्थिति का समाधान औद्योगिक झगड़ा, कानून, १९४७ से संतोष जनक रूप से नहीं हो सकता था। अतएव प्रान्तीय सरकार को अंतिम व्यवस्था के रूप में उत्तर प्रदेश औद्योगिक झगड़ा आर्डिनेंस, १९४७ लागू करना पड़ा। आर्डिनेन्स के स्थान पर शीघ्र ही उत्तर प्रदेश औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ बनाया गया जो १ फरवरी, १९४८ से लागू हुआ। औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ (केन्द्रीय) तथा उत्तर प्रदेशीय औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ दो मुख्य कानून हैं, जिनके अन्तर्गत १९४८ से राज्य में औद्योगिक झगड़े तय किए जाते हैं।

१९४८ में सरकार ने औद्योगिक झगड़ों को रोक और तय करने की प्रणाली को मान्यता दी। म प्रणाली के अन्तर्गत (अ) सभी वैकुअम पैन चीनी कारखाने तथा २०० से अधिक मजदूरों का नियो करने वाले कारखानों में वर्क्स कमेटियाँ (ब) टेक्सटा और होजरी, चीनी, चमड़ा और काँच तथा एलेक्ट्रि और इंजीनियरिंग के कारखानों के लिए प्रान्तीय अ प्रादेशिक समझौता बोर्ड तथा (स) प्रान्तीय एवं प्रादेशि समझौता बोर्डों के निर्णयों के विरुद्ध अपीलें सुनने व औद्योगिक न्यायालय थे।

उक्त प्रणाली को मार्च, १९५१ में पुनः संगठि किया गया और वर्क्स कमेटियों, प्रादेशिक समझौ बोर्डों तथा औद्योगिक न्यायालयों के लिए निर्धारित का वाही के स्थान पर समझौता बोर्डों और स्टेट इंडस्ट्रि ट्रिब्युनल को स्थापित किया गया।

औद्योगिक न्यायालयों द्वारा सुनी जाने वाली अप लेबर एपेलेट ट्रिब्युनल द्वारा सुनी जाने लगीं जो औ गिक झगड़ा (एपेलेट ट्रिब्युनल) कानून, १९५० अंतर्गत बनाया गया।

१५ मार्च, १९५१ के राजकीय आदेश के लागू हो के पूर्व जिन कारखानों में वर्क्स कमेटियां नहीं थीं अथ जिन उद्योगों के लिए प्रादेशिक अथवा प्रान्तीय समझौ बोर्ड नहीं थे, उनके झगड़े समझौता अफसरों द्वारा किये जाते थे।

समझौता अफसरों के निर्णय पार्टियों पर कानूनी त पर लागू नहीं होते थे किन्तु उत्तरी भारत के मालिक संघ के सदस्य कारखाने आम तौर से

निर्णयों को मानते थे, क्योंकि उन्होंने सरकार को इस आशय का वचन दिया था। जो कारखाने उत्तरी भारत के मिल मालिक संघ के सदस्य नहीं थे, उनके औद्योगिक झगड़ों को निर्णय किए जाने के लिए उसी दशा में लिया जाता था, जबकि पार्टियों द्वारा उक्त आशय का वचन मिल जाता था।

१५ मार्च, १९५१ के राजकीय आदेश के लागू होने के पूर्व जिन मामलों में समझौता अफसरों की सिफारिशें मालिकों द्वारा कार्यान्वित नहीं की जाती थीं अथवा जिन अन्य मामलों को, जिनमें जनहित के दृष्टिकोण से सरकार का हस्तक्षेप आवश्यक था, समझौता अफसर तय करने में असफल होते थे, उन्हें उ० प्र० औद्योगिक झगड़ा, कानून १९४७ के अन्तर्गत सरकार द्वारा अभिनिर्णय के लिये भेज दिए जाते थे। झगड़ों के अनिवार्य हल का एक ही तरीका था, और वह यह कि उन्हें अभिनिर्णय के लिए भेज दिया जाय। इस कार्य के लिए नियुक्त अभिनिर्णायिकों को एक निर्धारित समय के भीतर अपने निर्णय को सरकार के सामने भेजना होता था। और जब उनका निर्णय सरकार द्वारा लागू कर दिया जाता था तो वह दोनों पार्टियों के लिए मान्य होता था। अभिनिर्णयक के निर्णय के विरुद्ध अपील करने की कोई व्यवस्था नहीं थी।

१५ मार्च १९५१ के सरकारी आदेश के लागू होने के बाद अभिनिर्णय के लिये मामलों के भेजे जाने की स्थिति में परिवर्तन हो गया। इस आदेश के अनुसार यदि राज्य सरकार को संतोष हो जाता है कि औद्योगिक झगड़ा है तो अपनी ओर से अथवा समझौता बोर्ड की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद अथवा इस आशय के आवेदन पत्र पर किसी भी झगड़े को इंडस्ट्रियल ट्रिब्यूनल के पास भेज सकती है अथवा झगड़े के रूप अथवा पार्टियों की सुविधा की दृष्टिकोण से ऐसे किसी व्यक्ति के पास झगड़े को भज देती है जो निर्णय के लिये सरकार की ओर से नियुक्त हो। यह राजकीय आदेश सरकार को अधिकार देता है कि वह ऐसे प्रतिष्ठानों को अभिनिर्णय में शामिल करले, जहाँ पर झगड़ा इस ढंग का है कि कोई अन्य प्रतिष्ठान अथवा प्रतिष्ठानों का दल अथवा वर्ग उससे दिलचस्पी रखता हो अथवा प्रभावित होता हो। यह आदेश राज्य सरकार को यह भी अधिकार देता है कि अतिरिक्त विषयों को ट्रिब्युनल अथवा अभिनिर्णायक के पास, जहाँ झगड़ा विचाराधीन है, भेज दे। राज्य सरकार ट्रिब्युनल अथवा अभिनिर्णायिक के समक्ष उपस्थित हो सकती है और उसकी सुनवाई हो सकती है मानों कि वह ऐसी कार्यवाहियों से सम्बन्धित एक पार्टी हो। अभिनिर्णयों के विरुद्ध अब एपेलेट ट्रिब्युल में अपील हो सकती है।

प्रादेशिक समझौता बोर्ड

१५ मार्च, १९५१ के राजकीय आदेश के बाद प्रादेशिक समझौता बोर्डों का स्थान समझौता बोर्डों ने ले लिया।

निम्न तालिका में १९४८, १९४९, १९५० तथा १९५१ के वर्षों में प्रादेशिक समझौता बोर्डों में भेजे गये, उनके द्वारा तय किये गये तथा उनके विचाराधीन मामलों की संख्या दी जा रही है–

वर्ष	भेजे गय मामले	तय किये गये मामल	विचाराधीन
१९४८	१६७	१४५	२२
१९४९	५३०	४१५	११५
१९५०	१०२८	८९७	१३१
१९५१	५१६	५१६	–

प्रान्तीय समझौता बोर्ड

१५ मार्च, १९५१ के राजकीय आदेश के लागू होने के बाद प्रान्तीय समझौता बोर्ड समाप्त हो गये।

निम्न तालिका में १९४८, १९४९, १९५० और १९५१ के वर्षों में प्रान्तीय समझौता बोर्डों में आये तथा उनके द्वारा तय किये गये मामलों की संख्या दी जा रही है। निर्णीत मामलों की संख्या कोष्ठों में दी गई है।

प्रान्तीय समझौता बोर्ड	प्रस्तुत किये गये और निर्णीत मामलों की संख्या			
	१६४८	१६४६	१६५०	१६५१
१—सूती वस्त्र और होजरी	(६)	११(८)	१६(१४)	२(२)
२—चीनी	(२)	६(६)	१(१)	—
३—एलेक्ट्रिसिटी तथा इंजीनियरिंग	(२)	२(२)	२(२)	२(२)
४—चमड़ा और कांच	—	—	—	—

औद्योगिक न्यायालय

१५ मार्च, १६५१ के राजकीय आदेश के लागू होने के बाद औद्योगिक न्यायालय भी समाप्त हो गये।

निम्न तालिका में १६४६, १६५० और १६५१ के वर्षों में विभिन्न औद्योगिक न्यायालयों द्वारा निर्णीत मामलों की संख्या दी गई है।

औद्योगिक न्यायालय	१६४६	१६५०	१६५१
१	२	३	४
सूती वस्त्र और होजरी (कानपुर)	६२	८५	४६
चीनी (लखनऊ)	१००	८७	३३
एलेक्ट्रिसिटी और इंजीनियरिंग (इलाहाबाद)	१६	५७	१७
चमड़ा और कांच (आगरा)	१८	२७	२५
योग	१६६	२५६	१२४

समझौता बोर्ड

१५ मार्च, १६५१ के राजकीय आदेश के द्वारा समझौता अधिकारियों को अधिकार दिया गया कि वे अपने अपने क्षेत्रों के औद्योगिक झगड़ों को तय करने के लिये समझौता बोर्डों का निर्माण करें। इन समझौता बोर्डों में एक अध्यक्ष और दो सदस्य होते हैं। एक सदस्य मालिकों और दूसरा कर्मचारियों का प्रतिनिधि होता है। सदस्यों की नियुक्ति झगड़े से सम्बन्धित पार्टियों के परामर्श से अध्यक्ष द्वारा की जाती है।

किसी कर्मचारी, मालिक, रजिस्टर्ड संघ, श्रमिक संघ ऐसे संघों अथवा श्रमिक संघों के महा संघ, अथवा जहां कर्मचारियों का प्रमाणित संघ नहीं है, वहाँ कर्मचारियों के प्रतिनिधियों (५ से अधिक नहीं) जो इस उद्देश्य से की गई कर्मचारियों की बैठक में बहुमत से चुने गये हों, के द्वारा आवेदन पत्र देने पर समझौता बोर्ड मामले को ले सकता है।

राज्य सरकार अपनी ओर से अथवा आवेदन पत्र के आने पर लिखित आदेश द्वारा किसी औद्योगिक झगड़े को एक समझौता बोर्ड से अन्य क्षेत्र के समझौता बोर्ड के पास निर्णय के लिये भेज सकती है।

समझौता बोर्ड झगड़े में समझौता कराने का प्रयत्न करते हैं। समझौता बोर्ड जब समझौता कराने में सफल होता है तो वह ३० दिन के अन्दर (छुट्टियों को छोड़कर किन्तु हाईकोर्ट के अधीन न्यायालयों द्वारा मनाई जाने वाली वार्षिक छुट्टी को छोड़कर नहीं) समझौते की शर्तों का स्मृति पत्र तैयार करता है, जिस पर अध्यक्ष और झगड़े से सम्बन्धित पार्टियों के हस्ताक्षर होते हैं। स्मृति पत्र की प्रतियां पार्टियों, सरकार और श्रम कमिश्नर के पास भेज दी जाती हैं।

यदि एक या एक से अधिक प्रश्नों पर समझौता नहीं होता तो अध्यक्ष कार्यवाहियों की समाप्ति के ७ दिन के भीतर (छुट्टियों को छोड़कर किन्तु हाईकोर्ट के अधीन न्यायालयों द्वारा मनाई जाने वाली वार्षिक छुट्टी को छोड़कर नहीं) अपनी पूरी रिपोर्ट सरकार और श्रम कमिश्नर के पास भेजते हैं।

राज्य सरकार अपनी ओर से या समझौता बोर्ड की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद अथवा आये हुये आवेदन पत्र पर विचार करने के बाद किसी भी झगड़े को

इंडस्ट्रियल ट्रिब्युनल अथवा अभिनिर्णय की योग्यता रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति के पास भेज सकती है।

१५ मार्च, १९५१ के राजकीय आदेश के अन्तर्गत मार्च १९५१ से दिसम्बर १९५१ के बीच १९५० मामले समझौता बोर्डों में भेजे गये और १५८६ मामलों पर निर्णय दिये गये।

स्टेट इण्डस्ट्रियल ट्रिब्युनल

स्टेट इण्डस्ट्रियल ट्रिब्युनल में ३ जज होते हैं। इनमें से एक जज ट्रिब्युनल का अध्यक्ष होता है। स्टेट इंडस्ट्रियल ट्रिब्युनल का प्रधान कार्यालय इलाहाबाद में है। १५ मार्च, १९५१ के राजकीय आदेशानुसार सरकार ने एक इंडस्ट्रियल ट्रिब्युनल का निर्माण किया। ट्रिब्युनल अभिनिर्णायक की भांति अभिनिर्णय देता है। सरकार द्वारा भेजे गये किसी भी मामले की सुनवाई, जैसा कि अध्यक्ष चाहे, ट्रिब्युनल के एक सदस्य द्वारा हो सकती है अथवा ट्रिब्युनल मामले की सुनवाई के लिये बेंच का भी निर्माण कर सकता है।

औद्योगिक विवाद (एपेलेट ट्रिब्युनल) कानून, १९५० के अन्तर्गत स्टेट इंडस्ट्रियल ट्रिब्युनल के निर्णय के विरुद्ध अपील हो सकती है।

१५ मार्च से ३१ दिसम्बर, १९५१ के बीच राज्य सरकार द्वारा स्टेट इंडस्ट्रियल ट्रिब्युनल के पास १९ मामले भेजे गये, १३ मामलों पर निर्णय दिये गये और वर्ष की समाप्ति पर ६ मामले विचाराधीन रहे।

१९५१ में श्रम स्थिति

१९५० की भांति १९५१ में भी व्यापार में मंदी रही और ऐसा बहुत से मामलों में उचित मूल्य पर कच्चे माल की कमी, स्टाक के जमा हो जाने, आर्थिक कठिनाइयों, प्लान्टों के टूट जाने तथा बिजली न मिल सकने के फलस्वरूप हुआ। तेल की मिलें काफी समय तक बन्द रहीं क्योंकि उनके द्वारा तैयार माल पर प्रतिबन्ध लगा रहा। इन तमाम कारणों से कारखानों में बन्दी, छटनी और बैठकी रही।

निम्न तालिका में १९५१ के वर्ष की हड़ताल, तालाबन्दी, बैठकी, बन्दी और छटनी का विवरण है।

वर्ष	हड़ताल			बैठकी		छटनी	बन्दी	
	संख्या	प्रभावित मजदूर	काम के दिनों की हानि	संख्या	प्रभावित मजदूर	छटनी किये गये मजदूरों की संख्या	संख्या	प्रभावित मजदूर
१९५०	६०	४६,४८९	२,२९,१४९	३२७	९८,५२६	१७६४	१६५	२४,६४३
१९५१	१०५	७४,४६२	३०,५७९२	७७१	१,३७,४५५	२५७३	८१	८,५४९

मजदूर के लिए बुढ़ापे में अथवा उसकी मृत्यु हो जाने पर उसके आश्रितों के भविष्य के लिए कोई आर्थिक व्यवस्था करना आवश्यक है। जहाँ तक बीमारी हित-लाभ, मातृका हितलाभ एवं बीमारी के समय नकद हितलाभ का प्रश्न है, इसकी व्यवस्था राज्य बीमा योजना के अन्तर्गत कर दी गई है। किन्तु इसके अति-रिक्त बुढ़ापे के लिए अथवा मजदूर की मृत्यु हो जाने पर उसके आश्रितों के लिये कोई आर्थिक व्यवस्था करना भी जरूरी है। पाश्चात्य देशों में इस प्रकार की व्यव-स्था बुढ़ापे में पेंशन और आश्रितों को पेंशन के रूप में सामाजिक बीमा अथवा सामाजिक सहायता योजनाओं के अन्तर्गत की गई हैं। भारत में वर्तमान आर्थिक दशा को देखते हुये मजदूरों के लिये इस प्रकार की पेंशन योजनाओं को निकट भविष्य में लागू करना सम्भव नहीं है। अतएव मजदूरों के भविष्य के लिए आर्थिक व्यवस्था करने का दूसरा तरीका प्राविडेन्ट फन्ड योजना है। प्राविडेन्ट फन्ड योजना से मजदूर को अपने कारखाने में स्थायी रूप से लगे रहने की प्रेरणा मिलती है, जिसकी आवश्यकता भी है।

प्राविडेन्ट फंड के विषय पर सर्व प्रथम १९४२ में होने वाले श्रम मंत्रियों के तीसरे सम्मेलन में विचार किया गया था। उस समय यह अनुभव किया गया कि योजना को अनिवार्य नहीं बनाना चाहिये वरन् नमूने के रूप में कुछ नियम केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाये जाने चाहिये और उन पर स्वेच्छा से अमल किये जाने के लिये मालिकों के पास भेज देना चाहिये। तदनुसार १९४४ में जिन नमूने के नियमों पर स्थायी श्रम समिति ने विचार किया, उन्हें १९४५ में मालिकों के पास भेज दिया गया। योजना को स्वेच्छा से लागू करने का प्रयत्न सफल नहीं रहा, क्योंकि अधिकाँश मालिकों ने अपने कारखानों में योजना को लागू करना नहीं चाहा। अतएव १९४७ में अनिवार्य योजना लागू करने का निर्णय किया गया। अंतर्राष्ट्रीय मजदूर संघ के एशियाई प्रादेशिक सम्मेलन ने भी इस बात की सिफारिश की कि एक प्राविडेन्ट फन्ड योजना, जिसमें मजदूर को भी चंदा देने के लिए बाध्य किया जाय, लागू करना उचित होगा।

भारतीय श्रम सम्मेलन, स्थायी श्रम समिति तथा कुछ औद्योगिक समितियों की बैठकों में इस बात से सभी सहमत थे कि एक योजना कानूनी तौर पर लागू की जाय।

१९४८ में केन्द्रीय विधान सभा में इस विषय पर एक गैर सरकारी बिल पेश किया गया किन्तु उसे श्रम मंत्री के इस आश्वासन पर वापस ले लिया गया कि सर-कार एक सम्पूर्ण बिल अपनी ओर से शीघ्र पेश करेगी। जनवरी, १९५१ में पटना में होने वाले श्रम मंत्रियों के सम्मेलन में प्राविडेन्ट फंड के प्रश्न पर विस्तार पूर्वक विचार किया गया। इन विचार विनिमयों के फलस्वरूप केन्द्रीय सरकार ने अभी हाल एक आर्डिनेन्स लागू किया

जो कर्मचारी प्राविडेन्ट फंड आर्डीनेन्स, १९५१ कहलाता है। यह आर्डिनेन्स सर्व प्रथम ६ प्रमुख उद्योगों (१) सीमेंट (२) सिगरेट, (३) एलेक्ट्रिकल, मेकनिकल तथा जनरल इञ्जीनियरिंग के कारखाने (४) लोहा और इस्पात (५) कागज और (६) वस्त्र उद्योग (चाहे सूती, या जूट या रेशम के हों) में, जहाँ ५० या अधिक मजदूर काम करते हैं, लागू होता है। केन्द्रीय सरकार, सरकारी गजट द्वारा अधिसूचित करके (यह सूचना २ महीने से कम नहीं होगी) इस आर्डिनेन्स को इन्हीं उद्योग के उन कारखानों में भी लागू कर सकती है, जहां ५० से कम मजदूर काम करते हैं। फिर भी आर्डिनेन्स ऐसे किसी कारखाने में लागू नहीं होगा जो आर्डिनेन्स लागू होने के पूर्व अथवा बाद में स्थापित हुआ हो और जब तक कि उसकी स्थापना हुये तीन वर्ष नहीं बीत जाते।

मालिक प्रत्येक कर्मचारी के कुल वेतन (मूल वेतन तथा महँगाई मिलाकर) के ६¼ प्रतिशत के बराबर चंदा देगा और कर्मचारी मालिक द्वारा उसके लिये दिए गए चंदे के बराबर देगा। यदि कर्मचारी चाहे अथवा योजना में ऐसी कोई व्यवस्था की जाय तो यह चंदा कुल वेतन के ८⅓ प्रतिशत तक हो सकता है। मँहगाई के भत्ते में मालिकों द्वारा दी गई खाद्य वस्तुओं का नकदी मूल्य भी शामिल होगा।

केन्द्रीय या राज्य सरकारें निम्न लिखित कारखानों को कुछ शर्तों के साथ गजट में अधिसूचित करके इस योजना से मुक्त कर सकती हैं।

(१) वे कारखाने जो सरकार अथवा स्थानीय संस्थाओं के अन्तर्गत हैं, और जिनमें प्राविडेन्ट फंड की ऐसी योजना हो जिसके द्वारा मिलने वाले लाभ उपर्युक्त योजना के अन्तर्गत मिलने वाले लाभों के बराबर या अधिक हों।

(२) कोई अन्य कारखाना जिसमें प्राविडेन्ट फंड योजना लागू हो और जिसके अंतर्गत मिलने वाले लाभ उपर्युक्त योजना के अन्तर्गत मिलने वाले लाभों के बराबर या अधिक हों।

आर्डीनेंस के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार द्वारा प्राविडेन्ट फंड योजना लागू करने तथा उसके सक्रियरूप से प्रचलन के लिये कर्मचारी प्राविडेंट फंड योजना बनाने की भी व्यवस्था है। अन्य बातों के अलावा योजना में निम्न बातों की व्यवस्था रहेगी :—

(१) वे दशाएँ जिनके अन्तर्गत फंड से धन लिया जा सके।

(२) सदस्यों को दिये जाने वाले व्याज की दर।

(३) फंड के प्रशासन के लिये बोर्डों की स्थापना।

(४) धन को किस प्रकार रखा जायगा और किन कार्यों में लगाया जायगा।

(५) मालिकों और कर्मचारियों द्वारा चंदा कब और किस प्रकार अदा किया जायगा।

(६ कौन से कामकर इस फंड में शामिल होने के अधिकारी हो सकेंगे।

(७) कितने समय की नौकरी के बाद कर्मचारी मालिक के चंदे के पूर्ण या कुछ भाग का अधिकारी होगा।

(८) वे दशाएँ जिनके अन्तर्गत कर्मचारी मालिक के चंदे को प्राप्त करने से वंचित होगा।

अभी हाल १४-२-५२ को केन्द्रीय श्रम मंत्री माननीय श्री जगजीवन राम ने संसद में इस आशय का एक सरकारी बिल पेश किया था जिसे संसद ने गत २३-२-५२ को पास कर दिया है। अन्तिम रूप से स्वीकृत बिल के अनुसार यह योजना सरकारी कारखानों में लागू नहीं होगी। यद्यपि कानून के अन्तर्गत नियमों के बनने एवं योजना को वास्तविक रूप से लागू होने में अभी कुछ समय लगेगा फिर भी केन्द्रीय सरकार द्वारा जो यह कदम उठाया गया है, वह मजदूरों की दशा सुधारने की दिशा में एक महत्व पूर्ण कदम है।

कानपुर में श्रमिक हाते — और — उनका सुधार

—श्रीमती सुशीला गंजू

कानपुर भारतवर्षके प्रमुख औद्योगिक नगरोंमें से एक है। यहाँ लगभग सभी प्रकार के कारखाने हैं। कपड़े और चमड़े के कारखानों के लिये तो यह नगर प्रसिद्ध ही है। बहुत बड़ी संख्या में श्रमिक इन कारखानों में काम करते हैं।

कानपुर में श्रमिकों के रहने की समस्या दिन प्रति दिन गत ५० वर्षों से जटिल होती गई है। परन्तु सन् १९३९ के द्वितीय महायुद्ध ने उनकी रहने की दशा को बहुत ही दयनीय बना दी। द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने से कानपुर में सरकारी एवं निजी कारखानों की बहुत बड़ी संख्या में वृद्धि हुई। फलस्वरूप गांवों से आकर लोगों ने इन कारखानों में काम किया, और उनके रहने की समस्या उत्पन्न हुई। उन लोगों ने जिनके पास बड़े बड़े प्लाट के रूप में जगह पड़ी थी, इस स्थिति से लाभ उठाया और जगहों पर छोटी छोटी झोपड़ियाँ डलवाकर उन्हें किराये पर उठाया। उन झोपड़ियों में न तो दरवाजे, न छत और न ढंग की दीवारें थीं। केवल छोटी छोटी कच्ची दीवारें उठवाकर और उन पर खपरैल डलवाकर कोठरीका रुप दिया गया। भिन्न२स्थानोंमें जहां कहीं भी इस प्रकार की झोपड़ियाँ पर्याप्त संख्या में बनी, हाते के नाम से पुकारे जाने लगे। उस समय इन हातों के मालिकों ने इस प्रकार के हातों में पानी, रोशनी, टट्टी तथा नालियों आदि की कोई उचित व्यवस्था नहीं की।

यह बात अवश्य थी कि उस समय हातों के लिए न तो योजनाएँ ही थीं और न इस प्रकार की दयनीय झोपड़ियों के बनवाने वालों पर ही कोई प्रतिबन्ध था। इसलिए मालिकों ने मनमाने ढंग से थोड़े से व्यय पर इस
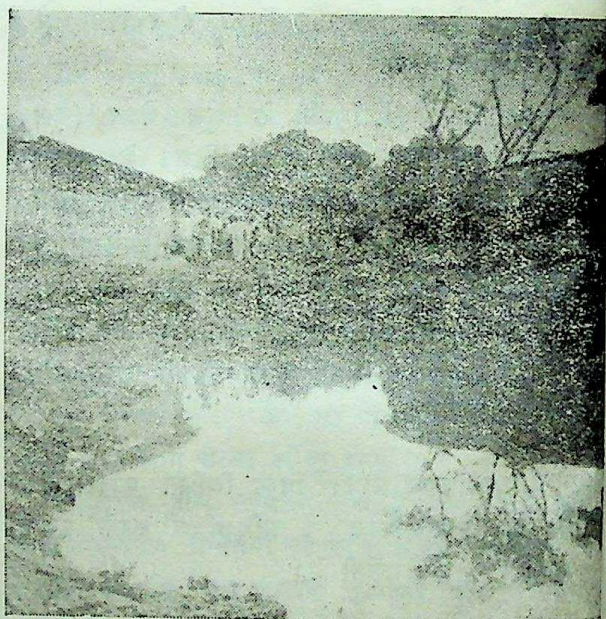
किशन प्यारी का हाता, जहां एकत्रित सड़े पानी के निकलने की कोई व्यवस्था नहीं है।

प्रकार की झोपड़ियों को बनवा डाला। कानपुर की लगभग ९५ प्रतिशत मजदूर जनता इन्हीं हातों में रहती है जो आज तक भी उसी रूप में चले आ रहे हैं।

कानपुर में ऐसे हाते केवल उंगुली पर गिने जा सकते हैं, जो कि मनुष्यों के रहने योग्य कहे जा सकते हैं। कुछ मालिकों ने अपनी मिलों में काम करने वाले श्रमिकों

के लिये मकान बनवाये जो कि सेटिलमेन्ट के नाम से पुकारे जाते हैं। इन सेटिलमेन्टों (बस्तियों) के मकान तो अवश्य साफ सुथरे हैं और उनमें पानी, टट्टी, रोशनी आदिका समुचित प्रबन्ध भी है। इस प्रकारके कूपरएलन, लाल इमली और एलगिन मिल सेटिलमेंट आदि है।

इन मिलों की बस्तियों को छोड़कर अन्य मजदूरों के रहने के जो हाते हैं, उनमें अधिकांश बहुत ही गन्दे तथा घने बसे हैं। उनमें पानी, रोशनी, टट्टी आदि का तो कछ प्रबन्ध है ही नहीं, धूप और साफ हवा का पहुँचना
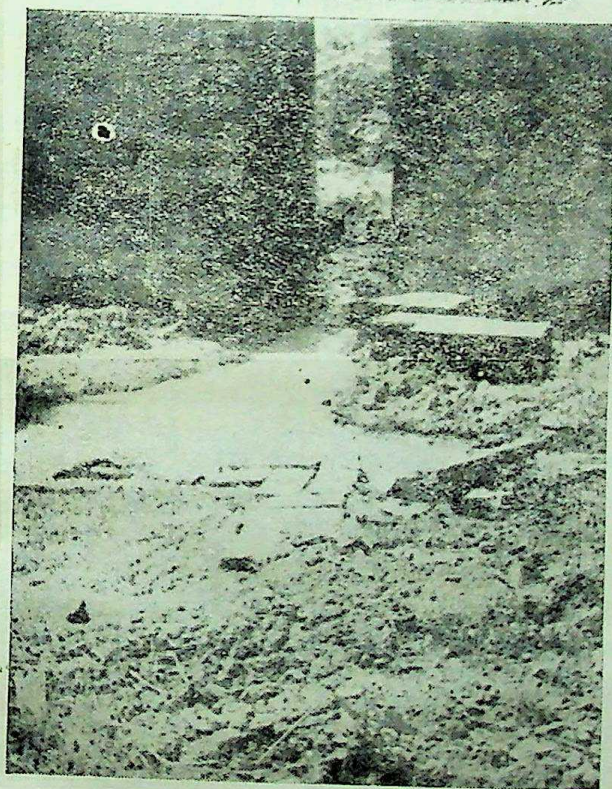
किशन प्यारी के हाते की टट्टी की दयनीय दशा जिसमें टट्टी साफ करने की कोई व्यवस्था नहीं है। टट्टी से बाहर बहते हुये पाखाने का एक दृश्य।

तो असम्भव हैं। इन हातों की हालत बहुत ही शोचनीय है। मनुष्यों के रहने योग्य तो शायद ही कोई हाता कहा जा सकता है। गर्द, गुबार, ा, कर्कट और सड़ी नालियां तो हर हाते में हैं ही किन्तु यहाँ पर ऐसे भी हाते हैं, जिनमें टट्टी तक जाने का कोई प्रबन्ध नहीं है। कच्ची जमीन वाली झोपड़ियों में एक एक कमरे में पाँच पाँच छः छः मजदूर रहते हैं। कुछ हातों में हरएक झोपड़ीं मिट्टी की बनी हैं और ऊपर टूटे फूटे खपरैल छाये हैं। अन्दर घुसने का दरवाजा इतना सँकरा और छोटा होता है कि उसमें मजदूर को झुक कर घुसना पड़ता है। खिड़कियों का तो नाम ही नहीं होता है। हाते सड़क की सतह से चार पाँच फीट नीचे हैं जिसके कारण इन झोपड़ियों में वर्षा ऋतु में पानी भर जाता है। बेचारे मजदूरों के पास सिवाय इसके कि वे अपनी अपनी गृहस्थी को उठाकर अपनी चारपाई पर रखकर भीगने से बचावें और कोई रास्ता नहीं रह जाता है। इन हातों की यह दुर्दशा लगभग ५० वर्षों से ही इसी प्रकार चली आरही है जिसका फल यह हुआ कि कानपुर जैसा औद्योगिक नगर क्षय रोग का घर बन गया है और इस सम्बन्ध में कानपुर भारतवर्ष में अपना प्रथम स्थान रखता है। क्षय रोग से पीड़ित लोगों में से सबसे अधिक संख्या मजदूरों ही की है। इसका कारण स्पष्ट है।

कानपुर के उन हातों को रहने योग्य बनाना और उनमें पानी, टट्टी, रोशनी आदि की समुचित व्यवस्था करना एक व्यापक समस्या है। इसके लिये उत्तर प्रदेशीय सरकार काफी विचार करती रही है। इस सम्बन्धमें अनेकबार जांचकी गई और माननीय प्रधानमंत्री एवं श्रम मंत्री ने भी स्वयं इन हातों में जाकर वहाँ की दशाओं का निरीक्षण किया। फलस्वरूप राज्य सरकार ने इसके लिये एक योजना बनाई है जिसके अन्तर्गत सन् १९५०-५१ के वर्ष में ५०,००० रुपये की स्वीकृति इन हातों के सुधार के लिये दी है। इस योजना के अनुसार कानपुर नगर सुधार बोर्ड एवं राजकीय श्रम हितकारी विभाग द्वारा योजना को कार्यान्वित किया जा रहा है। इस योजना का उद्देश्य श्रमिकों के रहने के स्थानों को स्वच्छ बनाना तथा उनमें पानी, टट्टी, रोशनी आदि की समुचित व्यवस्था करना है।
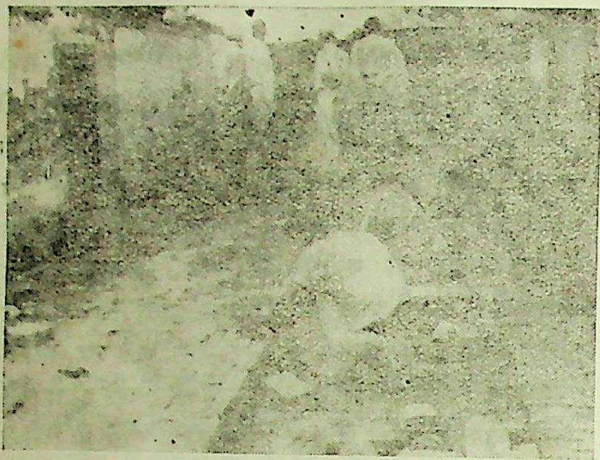
कालीचरन के हाते में योजना के अन्तर्गत नालियाँ पक्की की जा रही हैं।

इस उद्देश्य को लेकर समय समय पर हातों की स्थिति एवं आवश्यकताओं की श्रम विभाग एवं नगर सुधार बोर्ड द्वारा संयुक्त जाँचें हुई जिनके फलस्वरूप यह अनुभव किया गया कि हातों के मालिकों से भी सहयोग की आवश्यकता होगी। परन्तु अधिकांश हातों के मालिक इस प्रश्न पर उदासीन से रहे। कुछ मालिकों ने आशा से अधिक सहयोग भी दिया। हातों को ठीक रखना और उसमें पानी, रोशनी एवं टट्टी आदि की समुचित व्यवस्था करने का उत्तरदायित्व हातों के मालिकों का ही है। इस सम्बन्ध में स्थानीय सुधार बोर्ड ने मालिकों को कानूनी नोटिस दिया। कानपुरमें लगभग सभी गन्दे हातों को साफ कराया गया। उनका कूड़ा कबाड़ हटवाया गया, और मेहतरों आदि की व्यवस्था की गई है। हातों में आदमी की ऊँचाई के बराबर कूड़े के ढेर हटाये गये जिनके नीचे पक्की नालियां निकलीं।

रामेश्वर खेरेश्वर, (लक्ष्मीपुरवा) के हाते की यह दुर्दशा थी कि उसमें न तो नालियाँ ठीक थीं और न गलियों आदि की ही समुचित व्यवस्था थी। इस हाते में छोटे छोटे झोपड़े पड़े हुये हैं। प्रत्येक झोपड़े के आगे रहने वाला मजदूर एक गढ़ा खोद लेता था जिसमें मिट्टी की हाँड़ी का नीचे का हिस्सा गाड़ देता था। उसी गढ़े के किनारे वह नहाता-धोता, बर्तन साफ करता और अन्य काम करता था जिसका पानी बहकर उस गढ़े में इकट्ठा होता रहता था, जिससे कि हर वक्त मच्छर पैदा होते और दुर्गन्ध उठा करती थी। कई रोज बाद जब गढ़ा भर जाता था तो उसका गन्दा पानी बाल्टियों से निकालकर बाहर फेंका जाता था। यह दशा केवल उसी हाते की नहीं बल्कि मन्ना सुक्ला, किशनप्यारी आदि अन्य हातों की भी थी।

हातों के इस प्रकार के गढ़े समाप्त कर दिये गये हैं और सुन्दर पक्की नालियाँ बना दी गई हैं। कालीचरन, सकेरा स्टेट आदि के हातों में जहाँ की नालियाँ कच्ची थीं और पानी बहने की कोई व्यवस्था न थी, वहां नालियों को पक्की कराकर पानी का बहाव ठीक करा दिया गया है। कालीचरन के हाते की कच्ची नालियों का यह हाल था कि पानी बरसने के बाद गलियों में जाना खतरे से खाली न था, उन गलियों को पक्की करा दिया गया है।
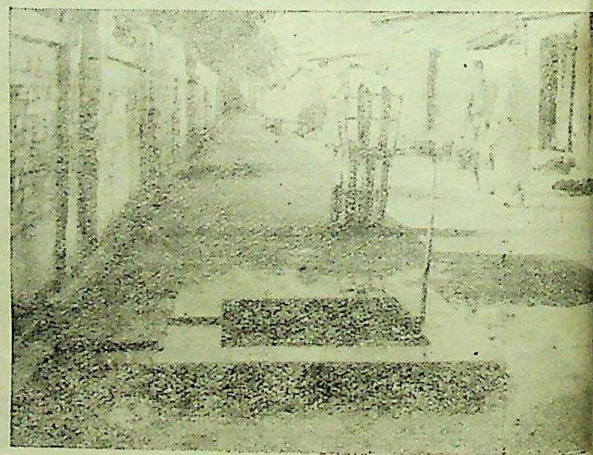
कालीचरन के हाते में जहां कोई पम्प की व्यवस्था नहीं थी अब ३ पम्प लग चुके हैं।

लोमड़ी के हाते में टट्टी का कोई प्रबन्ध नहीं था। फजलगंज के हाते की भी यही दशा थी। इन हातों में

पक्की टट्टियाँ बनाई जा रही हैं। जिन जिन हातों में पानी का कोई प्रबन्ध नहीं था वहाँ पर पम्प का इंतजाम कराया गया और कराया जा रहा है। कालीचरन जैसे हाते में केवल एक ही कुआँ था, वहाँ पर ३ नल लगवाये जा चुके हैं।

इस प्रकार जिन जिन हातों में पानी का अभाव था, वहाँ पर पानी की समुचित व्यवस्था कर दी गई है। जहाँ कहीं भी पार्क आदि के लिए जगह थी, वहां सुन्दर पार्क बनवा दिये गये हैं। किशनप्यारी हाते का मध्यभाग जहाँ कूड़ा करकट एकत्र किया जाता था और बरसात के दिनों में नर्क का रूप उपस्थित हो जाता था, एक सुन्दर पार्क के रूप में परिवर्तित हो चुका है। हाते में कुओं की फर्श आदि जो टूटी फूटी और गन्दी हालत में थीं, उनको पक्की करा दिया गया है। इस प्रकार कानपुर के अधिकतर हाते जिनकी यह दशा थी कि मनुष्य क्या पशु भी रहना पसन्द न करता, अब मनुष्य के रहने

किशनप्यारी के हाते में उत्तर प्रदेश के श्रम आयुक्त श्री ओंकारनाथ जी मिश्र द्वारा वृक्षारोपण।

योग्य बना दिये गये हैं। हातों की गलियाँ पक्की कर दी गई हैं, टट्टियां ठीक हो गई हैं और पानी का समुचित प्रबन्ध कर दिया गया है।

इसके अतिरिक्त हातों में श्रम विभाग एवं नगर सुधार बोर्ड के अधिकारियों के दल ने जा जाकर खुले स्थानों में अपने हाथों से वृक्षा रोपण किया है जिससे कि इन हातों में सुन्दर, स्वच्छ एवं रमणीक वातावरण बन सके।

यह कार्य अभी चल रहा है। इस योजना को पूर्ण होने में अभी समय लगेगा। परन्तु यह आशा ही नहीं अपितु विश्वास है कि यदि इसी प्रकार की सफलता मिलती रही तो वह दिन दूर नहीं जबकि हमारे श्रमिक हातों में भी रहकर एक मानवोचित सुखी जीवन का अनुभव कर सकने में समर्थ होंगे।

हाता सुधार योजना के अन्तर्गत सुधार किये हुये फजलगंज हाते का एक दृश्य।
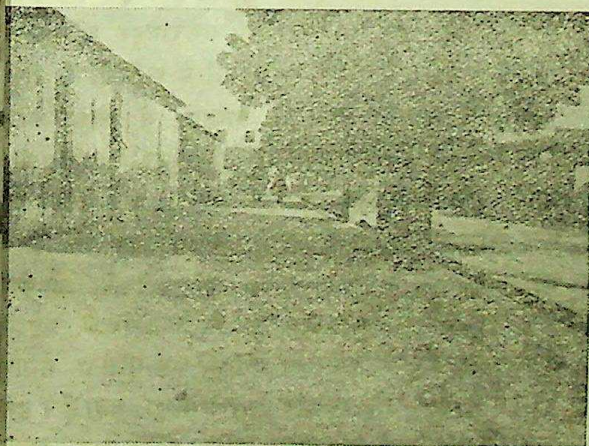
१९५१
में

श्रम हितकारी कार्यों की प्रगति

मजदूर समाज की क्रियात्मक शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। यह सम्पूर्णतः उसी के ही प्रयत्नों का फल है कि राष्ट्र की समृद्धि बढ़ती है। उत्तर प्रदेश, श्रम हित-कारी कार्यों के प्रति पिछले १० वर्षों से भी अधिक समय से जागरूक रहा है। प्रत्येक वर्ष की समाप्ति के बाद यहाँपर श्रम हितकारी कार्योंमें अपेक्षाकृत प्रगति हुई है।

लोकप्रिय सरकार ने श्रम हितकारी कार्यों का श्री गणेश १९३७ में १०,००० रु० की स्वीकृति से किया। यह धन राशि प्रत्येक वर्ष बढ़ती गई यहाँ तक कि १९५१-५२ के वर्षमें वह ६,९४,९३० रु० हो गई।

इस वर्ष के होने वाले टूर्नामेन्ट में, हाई जम्प के प्रथम विजेता आई० ए० एफ० के श्री कृष्णन जो ५'–४" कूदे

श्रम हितकारी केन्द्रों का वर्गीकरण

मौजूदा समय में राज्य में ३३ श्रम हितकारी केन्द्र हैं, जो अपनी कार्यवाहियों के अनुसार "ए", "बी" और "सी" श्रेणियों में विभक्त हैं। प्रत्येक केन्द्र श्रम बस्ती के बीचो बीच स्थित है और उसमें एक एलोपैथिक औषधालय, स्त्रियों और बच्चों का विभाग, सिलाई विभाग, कमरे के अन्दर और बाहर के खेल, पुस्तकालय वाचनालय और मनोरंजन की व्यवस्था है। "बी" श्रेणी के केन्द्र में 'ए' केन्द्र जैसी ही सुविधाएँ हैं केवल वहाँ एलोपैथिक औषधालय के स्थान पर होम्योपैथिक औषधालय है। "सी" श्रेणी का केन्द्र क्लब जैसा होता है जिसमें कमरे के अन्दर और बाहरके खेलों, पुस्तकालय, वाचनालय तथा मनोरंजन की व्यवस्था होती है। अभी हाल ६ "सी" श्रेणी के केन्द्र "बी" श्रेणी के बना दिये गये हैं। उनमें आयुर्वेदिक और यूनानी औषधालय खोल दिये गये हैं।

श्रम हितकारी केन्द्रों की संख्या

इस समय कानपुर में १३, लखनऊ में ३, बरेली में २, मोरादाबाद में १, सहारनपुर में २, गाजियाबाद में १, बनारस में १, मिर्जापुर में १, आगरा में १, फिरोजाबाद में २, अलीगढ़ में २, हाथरस में २, इलाहाबाद में १ और रुड़की में १ श्रमहितकारी केन्द्र है। इन ३३ केन्द्रों के अतिरिक्त खतौली, रामकोला, बलरामपुर और राजा का सहसपुर में चीनी के कारखानों के श्रमिकों के लिये ४ मौसमी केन्द्र हैं। चाय के बागानों में काम करने वाले श्रमिकों के लिये अभी हाल देहरादून के ईस्ट होप टाउन, उदयबाग और हरबंसवाल टी स्टेटों में ३ नये केन्द्र खोले गये हैं। इन केन्द्रों के संचालन के लिये भारत सरकार ने १०,००० रु० की स्वीकृति दी है। इन केन्द्रों को अधिक सुचारु रूप से चलाने के उद्देश्य से अधिकृत धन की स्वीकृति के लिये एक योजना तैयार की गई है और उसे सरकार के पास भेजा गया है। केन्द्रों में इस समय वाचनालय और पुस्तकालय, कमरे के अन्दर और बाहर के खेलों तथा सिलाई, कढ़ाई और औद्योगिक कक्षाओं की व्यवस्था है। इन कार्यों के लिये आर्गनाइजर तथा महिला शिक्षिकाएँ नियुक्त की जा चुकी हैं।

चिकित्सा की व्यवस्था

इस समय विभिन्न श्रम हितकारी केन्द्रों में ६ एलोपैथिक, १४ होम्योपैथिक, ५ आयुर्वेदिक और १ यूनानी औषधालय है।

कानपुर में श्रमिकों के लिये क्षयरोग अस्पताल खोले जाने के लिये सरकार ने १९५० में धन राशि स्वीकृत की। एक इमारत किराये पर ली गई और उसमें एक १०० एम० ए० एक्स-रे प्लान्ट तथा अन्य आवश्यक सामग्री लगाई गई। एक मेडिकल सुपरिन्टेन्डेन्ट तथा अन्य कर्मचारी नियुक्त किये गये। मई, १९५१ से इस अस्पताल म ५६२७ पुरुषों और ५४४७ स्त्रियों को देखा गया और इलाज किया गया। इस वर्ष अब इस अस्पताल के लिये रायपुरवा में एक इमारत बना दी गई है और शीघ्र ही क्षयरोग अस्पताल इस नई इमारत में चला जायगा।

बी० सी० जी० के टीके

१९५१-५२ के वर्ष में हाथरस, फिरोजाबाद और अलीगढ़ में बी० सी० जी० के टीके लगाने का कार्य किया गया और श्रम हितकारी कर्मचारियों के सहयोग से ये टीके श्रमिक परिवारों के सदस्यों को लगाये गये। इस वर्ष ११,१५४ प्रथम और ४,२६६ द्वितीय परीक्षाएँ की गईं, सशक्तों की संख्या ४,४५३ और अशक्तों की संख्या ८१३ रही। ८१३ बी० सी० जी० के टीके लगाये गये।

स्त्रियों-बच्चों का विभाग

"ए" श्रेणी के केन्द्र में २ मिडवाइफें और १ दाई होती है। "बी" श्रेणी के केन्द्र में १ मिडवाइफ और १ दाई होती हैं। मिडवाइफें स्त्री रोगियों तथा प्रसूति के पूर्व और बाद जच्चाओं का निरीक्षण करती हैं। केन्द्रों में आये बच्चों को नहलाती और तेल की मालिश करती हैं। बीमार और अर्द्ध पोषाहारी बच्चों, प्रसूताओं और संभावित माताओं तथा रोगियों को दूध बांटती हैं। गर्भवती स्त्रियों का परीक्षण करती हैं। आलोच्य वर्ष में ८५७ स्त्री-रोगियों, ५७० गर्भवती स्त्रियों और ४,४२४ बच्चों को दूध बांटा गया। कुल ५,८५१ व्यक्तियों को दूध बांटा गया। इनके अतिरिक्त २,६७३ अन्य व्यक्तियों को दूध बांटा गया। कुल मिलाकर ५०७७० सेर दूध बांटा गया।

आलोच्य वर्ष में केन्द्रों की परिचारिकाओं ने प्रसूति के पूर्व ३,१९३ स्त्रियों का निरीक्षण किया १,९४६ प्रजनन कार्य किये, प्रसव के बाद १,६४६ स्त्रियों का निरीक्षण किया; और घरों में जाकर ५८,०९० स्त्रियों को सलाह दी। सलाह के लिये १४५२५४ स्त्रियां केन्द्रों में आईं।

सिलाई और औद्योगिक कक्षाएँ

"ए" और "बी" श्रेणी के केन्द्रों में सिलाई और उद्योगों की २० कक्षाएँ चल रही हैं। इनमें स्त्रियों को उनके अवकाश के समय सिलाई, फीता बनानें, कढ़ाई तथा जरी का काम सिखाया जाता है।

आलोच्य वर्ष में सीखने वाली स्त्रियों की उपस्थिति संख्या ३,८७५ थीं, औसत उपस्थिति २,५०८ तथा आकस्मिक शिक्षिणार्थियों की संख्या ३,६१७ थी। इन कक्षाओं में २०,०२८ वस्तुएँ तैयार हुईं और ७,६९४६० की अनुमानित लागत का सामान तैयार हुआ।

लम्बी कुदान के इस वर्ष के तीन विजता दायें से बायें श्री बृजमोहन, श्री मुस्तफा हुसेन और श्री चुन्नीलाल

मनोरंजन

केन्द्रोंमें विभिन्न प्रकारके मनोरंजनों की भी व्यवस्था की जाती है। इनमें निःशुल्क सिनेमा अधिक लोकप्रिय

हैं। आलोच्य वर्ष में कानपुर तथा बाहर के केन्द्रों में सिनेमा के प्रदर्शन किये गये। "हम एक हैं", "संत तुलसीदास" और "सेवा ग्राम" नामक फिल्म इस वर्ष दिखाये गये जिन्हें हजारों श्रमिकों ने देखा। संत तुलसीदास कानपुर के १२ केन्द्रों में दिखाया गया।

केन्द्रों में ३४ रेडियो हैं। सायं और प्रातः श्रमिक रेडियोके कार्य क्रमों को सुनने आते हैं। १७अगस्त,१६५१ को नागपंचमी के अवसर पर दर्शनपुरवा (कानपुर) केन्द्र में श्रमिकों ने संगीत का एक विशेष कार्यक्रम आयोजित किया, जिसे आल इण्डिया रेडियो से प्रसारित किया गया।

प्रत्येक माह प्रत्येक केंद्र में संगीत कार्यक्रमों को आयोजित किया जाता है। नाटक भी खेले जाते हैं। आलोच्य वर्ष में जाजमऊ और डिप्टी का पड़ाव केन्द्र में ५ नाटक खेले गये।

शारीरिक व्यायाम

प्रत्येक केन्द्र में कमरे के अन्दर और बाहर के खेलों का सभी आवश्यक सामान रहता है। कानपुर के १३ केन्द्रों में खेलों का संगठन करने के लिए एक खेल आर्गनाइज़र है। कानपुर के बाहर के केन्द्रों में यह कार्य आर्गनाइज़रों द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न केन्द्रों में १० अखाड़े हैं।

आलोच्य वर्ष में कमरे के बाहर के खेलों से २,८१,२६४ श्रमिकों ने और जिमनाजियम से ६८,५५५ श्रमिकों ने लाभ उठाया।

शिक्षा की सुविधाएँ

केंद्रों के प्रत्येक पुस्तकालय में २,००० से लेकर २,५०० तक किताबें हैं। वाचनालयों में दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र मंगाये जाते हैं। आलोच्य वर्ष में पुस्तकालयों के सदस्यों की संख्या २५,२६६ थी, २५,६४३ पुस्तकें दी गईं, केन्द्रों में २२,२६३ पुस्तकें पढ़ी गईं और वाचनालयों में ५,०३,७८२ श्रमिक पढ़ने आये।

स्काउटिंग

कानपुर के श्रम हितकारी केन्द्र की उपयोगी कार्यवाहियों में से स्काउटिंग एक है। इस समय ६२१ स्काउट हैं। वर्ष भर स्काउट रैलियाँ आयोजित करते हैं, समाज सेवा शिविर डालते हैं, पिकनिक पर जाते हैं, कैम्प फायर और रूट मार्चों का आयोजन करते हैं। सरकार ने स्काउटों के लिए ७५० वर्दियाँ दे रखी हैं।

इमारत

अधिकाँश केन्द्र किराये की इमारतों में हैं। इस वर्ष हाथरस और रायपुरवा (कानपुर) में केन्द्रों के लिए २ इमारतें बनाई गई हैं।

टूर्नामेंट

१६३८-३६ के वर्ष से प्रतिवर्ष कानपुर में वार्षिक श्रम हितकारी टूर्नामेंट और उत्सव होते चले आये हैं। इन टूर्नामेंटों में श्रमिक बड़े उत्साह पूर्वक भाग लेते हैं। विजयी श्रमिकों को पुरस्कार दिया जाता है।
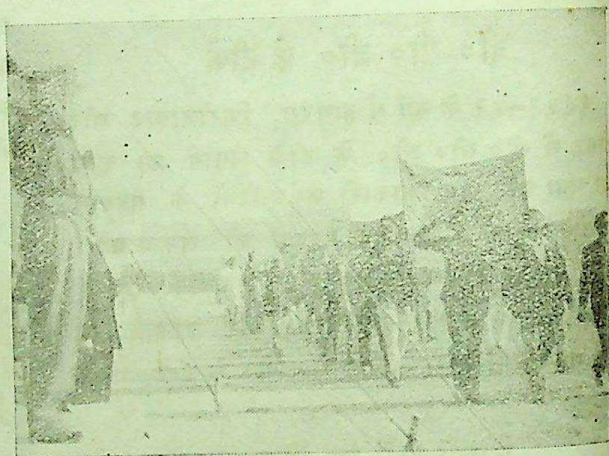
टूर्नामेन्ट के मार्च पास्ट का एक दृश्य
सीनियर पुलिस सुपरिन्टेंडेन्ट
श्री ओंकार सिंह सलामी ले रहे हैं।

हातों का सुधार

इस वर्ष कानपुर के हातों के सुधार का भी कार्य किया गया। सरकार ने इस कार्य के लिये ५०,००० रु० की धन राशि स्वीकृत की है। इस दिशा में आलोच्य वर्ष में बहुत काम किया गया।

(पृष्ठ ५ का शेष)

गये थे। यह कह सकना तो बहुत कठिन है कि इन कानूनों के बनाने में तत्कालीन सरकार को सामाजिकता एवं जनकल्याण की भावनाओं से किस हद तक प्रेरणा मिली थी। किन्तु इतना तो निर्विवाद ही है कि कम से कम प्रारम्भिक अवस्था में तो श्रम-कानून भारत के नव-स्थापित उद्योग धंधों पर भार लादने के अभिप्राय से लगाये गये थे जिससे इस प्रकार के कानूनों के भार को वहन करने वाले ब्रिटिश उद्योग धंधों को भारतीय उद्योग धन्धों की प्रतियोगिता में इस कारण से हानि न उठानी पड़े। भारत में श्रम कानून लागू करनेका वास्तविक अभिप्राय उस समय कुछ भी रहा हो, किन्तु इससे कोई इनकार नहीं किया जा सकता कि उनसे मजदूर वर्ग को और अन्ततोगत्वा सारे समाज को भरपूर लाभ पहुँचा। भारत वर्ष में सामाजिक कल्याण के लिये बनने वाले श्रम-कानूनों के श्रीगणेश की यही कहानी है।

गत दो विश्व-युद्धों के अवसर पर भारतवर्ष में श्रम-कानूनों की विशेष रूप से वृद्धि हुई। प्रथम महायुद्ध से पूर्व लागू किये गये श्रम-कानून किसी सुनिश्चित जन कल्याण की योजना अथवा सरकार की किसी सामाजिक नीति के फलस्वरूप नहीं थे। जैसा ऊपर बतलाया जा चुका है। उनका प्राथमिक उद्देश्य तो भारत के उद्योग-धन्धों की प्रतियोगिता में ब्रिटिश उद्योग-धन्धों की सम्भावित हानि का निराकरण करना ही था। किन्तु प्रथम महायुद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संस्था (इंटर नेशनल लेबर आर्गेनिजेशन) के जन्म से विश्व के अन्य देशों की भाँति भारत की श्रम सम्बन्धी नीति में भी गहरे प्रगतिशील परिवर्तन हुए। अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संस्था द्वारा निर्मित अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संहिता का प्रभाव भारत सरकार की श्रम सम्बन्धी नीति पर पड़ा और इस दिशा में एक नवीन प्रगतिशील दृष्टिकोण का आविर्भाव हुआ। १९३४ का नया कारखाना कानून, भारतीय श्रमिक संघ कानून, औद्योगिक झगड़ों का कानून, वेतन अदायगी कानून, मजदूर मुआवजा कानून, मातृत्व सम्बन्धी प्रादेशिक कानून इत्यादि श्रमिक वर्ग के कल्याण के हेतु बनाये गये अनेकों कानूनों का जन्म प्रथम और द्वितीय महायुद्ध के बीच के काल में हुआ। भारत के राजनीतिक जन-आन्दोलन एवं प्रदेशों में जनप्रिय सरकार के अल्प काल के लिये सत्तारूढ़ होने से भी प्रगतिशील श्रम-कानूनों को बढ़ावा मिला।

द्वितीय महायुद्ध की अवधि में मजदूर वर्ग को बहुत अधिक परिश्रम व लगन से काम करना पड़ा। युद्ध सम्बन्धी उद्योगों को अनवरत व सुचारुरूप से चलाये रहने के लिये श्रमिकवर्ग को सन्तुष्ट रखना आवश्यक था। साथ ही साथ युद्धकाल में इन उद्योगों ने भी बहुत काफी लाभ उठाया। भारत सरकार ने उस समय श्रम सम्बन्धी उदार नीति को अधिकाधिक अपनाना प्रारम्भ किया। ऐसी नीति श्रमिक वर्ग के कठिन परिश्रम के कारण आवश्यक भी थी, और उद्योग-धन्धों के पर्याप्त लाभ के कारण सम्भव भी। सरकार की उचित श्रम-नीति को निर्धारित करने के लिये त्रिदलीय-वार्ता (अर्थात् सरकार, मजदूर तथा मालिकों के प्रतिनिधियों का मिल कर श्रम-समस्याओं पर वाद-विवाद) की प्रणाली का श्री गणेश भी इसी काल में हुआ। स्मरण रहे कि इस प्रकार के त्रिदलीय वाद-विवाद की प्रेरणा भी अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संस्था से ही मिली। इन त्रिदलीय वार्त्ताओं में श्रमिक वर्ग के हित की अनेकों नई व पुरानी समस्याओं पर वादविवाद हुए और उनके फलस्वरूप सरकार की श्रम सम्बन्धी नीति व कार्यक्रम में आमूल परिवर्तन भी हुए।

भारतीय श्रम संहिता के उत्थान का तीसरा प्रक्रम द्वितीय युद्ध के उत्तर-काल एवं स्वतन्त्रता की प्राप्ति से प्रारम्भ होता है। नया कारखाना कानून १९४८, औद्योगिक वृत्ति-नियोजन (स्थायी आदेश) कानून १९४६, औद्योगिक झगड़ा कानून, दुकान व व्यवसायिक संस्थाओं के कानून, न्यूनतम मजदूरी कानून, कर्मचारियों का राज्य बीमा कानून, एवं प्राविडेंट फंड सम्बन्धी कानून यह सभी इसी काल की देन हैं। इन सब कानूनों द्वारा प्रस्तुत व्यवस्था एक नये युग, नवीन जनसत्तात्मक शासन प्रणाली तथा नवीन सामाजिक चेतना की प्रतीक है। यह है भारतीय श्रमिक संहिता (इंडियन लेबर कोड) के

उत्थान के तीन प्रक्रम का विवरण। ये तीन प्रक्रम हैं : (१) प्रथम युद्ध से पूर्व का काल; (२) प्रथम युद्ध से द्वितीय युद्ध तक का काल, और (३) द्वितीय युद्ध का उत्तर-काल।

हम यह देख चुके हैं कि भारतीय श्रम-संहिता में निरन्तर प्रगति होती ही रही है। ब्रिटिश शासन काल में एक समय था जबकि भारत, पाकिस्तान, लंका और बर्मा एक संयुक्त देश के रूप में थे, उस समय तक इन सभी भू भागों मे न्यूनाधिक रूप में लगभग एक से श्रम कानून लागू थे। किन्तु क्रमशः इन देशों के अलग-अलग हो जाने के पश्चात् प्रत्येक देश की श्रम नीति व श्रम कानून सम्बन्धी प्रगति में काफी अन्तर होता गया। आज पाकिस्तान, बर्मा और लंका इस दिशा में भारत की तुलना में काफी पिछड़े हुए पाये जाते हैं। इन भू-भागों के पृथक्करण के पश्चात् श्रमिक संहिता के उत्थान में भारत जिस गति से आगे बढ़ता गया, उस गति से उसके ये अन्य पड़ोसी देश नहीं बढ़े।

यह तो पहले ही देखा जा चुका है कि जहां तक अधिक से अधिक श्रमिक समस्याओं को कानून के घेरे में ले लेने का सवाल है, वहां तक भारत का एशियाई देशों मे सर्व प्रथम स्थान है। भारतीय श्रम संहिता के उत्थान में अन्ताराष्ट्रीय मजदूर संस्था द्वारा निर्मित अन्तारष्ट्रीय श्रम संहिता का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। अन्ताराष्ट्रीय श्रम संहिता में उक्त संस्था द्वारा स्वीकृत संप्रतिज्ञाए (कन्वेन्शन्स) और अभिस्ताव (रिकमेन्डेशन्स) होते हैं। संस्था के सदस्य-देशों से यह आशा की जाती है कि अन्ताराष्ट्रीय श्रम संहिता के द्वारा प्रस्तुत व्यवस्था का अपने देशीय कानूनों में समावेश करके उसको कार्यान्वित करें। निम्नांकित तालिका में यह दिखलाया गया है कि विभिन्न एशियाई देशों ने कितनी संप्रतिज्ञाओं को अपनाया है।

तालिका ३

१ जून, १९५१ तक अपनायी गयी संप्रतिज्ञाओं की संख्या:—

सदस्य देश	अपनाई गई संप्रतिज्ञाओं की संख्या
अफगानिस्तान	५
बर्मा (१)	१४
सीलोन	६
चीन	१४
भारत	२०
इन्डोनेशिया	०
जापान	१४
पाकिस्तान (२)	१९
फिलिपाइन्स	०
थाइलैन्ड	१
वियेत-नाम	०

उक्त तालिका के देखने से पता चलता है कि इस दिशा में भी भारत समस्त एशियाई देशों में सर्व प्रथम है।

तालिका १ के देखनें से पता चलता है कि कुल २८ श्रमिक समस्याओं में से २३ समस्याओं पर भारत में कानून बने हुए हैं, केवल ५ समस्याओं पर कोई कानून नहीं बनें हैं। ये ५ समस्याएं इस प्रकार से हैं:—

(१) सामूहिक समझौते (२) घरेलू नौकर
(३) मजदूरों का दायित्व (४) काम दिलाऊ संस्था
(५) बेरोजगारी का बीमा

यद्यपि सामूहिक समझौतों से सम्बन्धित इस प्रयोजन का कोई कानून भारत में नहीं है तथापि कार्य समिति (वर्क्स कमेटी) की स्थापना से सम्बन्धित कानून विद्यमान हैं। वर्क्स कमेटी के द्वारा सामूहिक समझौते होते हैं। इसके अतिरिक्त औद्योगिक झगड़ा कानून की कुछ व्यवस्था से भी सामूहिक समझौते को प्रोत्साहन मिलता है।

(१) भारत से पृथक होनें के पूर्व भारत द्वारा अपनाई गई १४ संप्रतिज्ञा बर्मा में अब भी लागू हैं।

(२) भारत से पृथक होने के पूर्व भारत द्वारा अपनाई गई १५ संप्रतिज्ञा इस संख्या में शामिल हैं।

भारत में एक व्यापक काम दिलाऊ संस्था विशद रूप से कार्य करती है, यद्यपि उसके लिये अभी किसी कानून का आधार नहीं है। इस संस्था के अन्तर्गत भारत के सभी प्रमुख नगरों में काम दिलाऊ दफ्तर हैं।

शेष तीन समस्याओं के सम्बन्ध में अभी भारत में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई है। वास्तव में ये समस्याएँ ऐसी हैं जिनके सम्बन्ध में अभी अधिकांश एशियाई देशों में कुछ भी नहीं हुआ है। घरेलू नौकरों के सम्बन्ध में केवल हांगकांग में ही कानून बना है। वहाँ की विशेष परिस्थियाँ ऐसी हैं, जिनके कारण इस प्रकार का कानून वहाँ के लिए परमावश्यक है। हांगकांग एक विशाल बन्दरगाह है जहाँ सभी देशों के लोग आते रहते हैं, वहाँ स्त्रियाँ और बच्चे काफी संख्या में घरेलू नौकरों के रूप में काम करते हैं। उनके उचित संरक्षण के लिए कानून का आश्रय लेना आवश्यक है।

श्रम सम्बन्धी कानून अधिकांशतः इस प्रकार के बने हुए हैं कि उनसे मजदूर वर्ग के हितों व अधिकारों की रक्षा होती है। ऐसे कानूनों से मालिकों व सरकार के ऊपर दायित्व पड़ता है। किन्तु चीन व अफगानिस्तान में मजदूरों पर रखे जाने वाले दायित्व के सम्बन्ध में भी कानून बने हैं। अफगानिस्तान में उद्योग धंधे अभी बहुत पिछड़ी हुई दशा में हैं तथा चीन में कई वर्षों तक निरन्तर चलने वाले विनाश के कारण नव-निर्माण की आवश्यकता है। इन्हीं कारणों से वहाँ मजदूरों के उत्तर दायित्व पर भी विशेष जोर देना आवश्यक समझा गया।

बेरोजगारी बीमा कानून केवल जापान में ही है। वास्तव में सामाजिक बीमा ही एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें भारत अपेक्षाकृत पिछड़ा हुआ रहा है, इस क्षेत्र में जापान अग्रगण्य रहा है। वहाँ १९२२ में कानून बनाया गया था और १९२४ से वह लागू हो गया, भारत की अपेक्षा जापान में औद्योगिक प्रगति अधिक हुई थी और वहाँ बेकारी भी बहुत कम थी। वहाँ की आर्थिक स्थिति भी भारत की अपेक्षा अधिक सुदृढ़ थी। किसी भी सामाजिक बीमा के लिये और विशेषतः बेरोजगारी के बीमा के लिये इन सब बातों का होना जरूरी है। यही कारण है कि भारत में इस क्षेत्र में अभी तक विशेष प्रगति नहीं हुई थी। किन्तु हाल ही में कानपुर व दिल्ली में कर्मचारियों की राज्य बीमा योजना के लागू होने से इस दिशा में शुभारम्भ हो गया है।

आज भारत श्रम-कानूनों के क्षेत्र में बहुत काफ़ी बढ़ा हुआ है। अधिकांश श्रम-समस्याओं पर सबसे पहले कानून बनाने के मामले में, एवं सबसे अधिक श्रम-समस्याओं को कानून के घेरे के अन्तर्गत लेने के मामले में, इन दोनों में ही भारत समस्त एशियाई देशों में निर्विवाद रूप से अग्रगामी है। एक विशिद और व्यापक श्रम-संहिता का उत्थान हुआ है और जन कल्याण की भावना से प्रेरित सरकार की सामाजिक-नीति के कारण भारत इस दिशा में काफ़ी तेज़ गति से आगे बढ़ रहा है। बल्कि कुछ क्षेत्रों में तो अब यह भी शंका प्रगट की जाने लगी है कि देश की आर्थिक स्थिति, औद्योगिक विकास व सामाजिक दशा को देखते हुए हमारी यह गति बहुत अधिक तेज तो नहीं है? हम ठोकर खाकर गिर तो नहीं पड़ेंगे? कुछ लोगों का विचार है कि हमको अपनी गति धीमी कर देनी चाहिये अन्यथा यह दौड़ हमको आर्थिक विनाश के गर्त में गिरा दे सकती है। किन्तु यदि मजदूर अपने बढ़ते हुए हितों और अधिकारों के साथ-साथ अपने दायित्व का भी पूरा पूरा ध्यान रखें, अपनी कार्यक्षमता को उच्च स्तर पर बनाये रखें, उत्पादन को बढ़ाते रहें, और दूसरी ओर उद्योगपति भी समय की आवाज को पहचान कर उसके अनुरूप चलें, तथा मजदूर से उत्पादन वृद्धि की आशा रखने के साथ साथ अपनी व्यवस्था सम्बन्धी क्षमता को भी उच्च स्तर पर स्थिर रखने का प्रयत्न करें तो सरकार की उदार सामाजिक-नीति से कोई खतरा नहीं है। सामाजिक क्षेत्र म हमारी यह गति विनाश के गर्त में पहुँचाने के स्थान पर सुख व समृद्धि के लक्ष्य पर शीघ्रातिशीघ्र पहुँचाने में सहायक होगी।

+++

(पृष्ठ ३ का शेष)

भिन्न है क्योंकि इसे बनाने में अन्य बातों के साथ यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि कारखाने के पास कितनी जमीन है और कहाँ और उस कारखाने में एक कमरे के मकानों की आवश्यकता है अथवा दो कमरों के। इस प्रकार की बस्तियों के नक्शे अब तक निम्नलिखित मिलों में बन चुके हैं :—

१. गंगा शुगर कारपोरेशन देवबन्द
२. अमृतसर शुगर मिल्स रोहना कलाँ
३. शादीलाल शुगर मिल्स मंसूरपूर
४. शिमभोली शुगर मिल्स बक्सर
५. राम लक्ष्मण शुगर मिल्स मोहीउद्दीनपुर
६. केशर शुगर मिल्स बहेरी
७. आर० बी० नरायनसिंह शुगर मिल्स लश्कर
८. जसवन्त शुगर मिल्स मेरठ
९. अयोध्या शुगर मिल्स राजा का साहसपुर
१०. अवध शुगर मिल्स हरगांव
११. नवाबगंज शुगर मिल्स गोंडा
१२. बाराबंकी रामचन्द्र एन्ड सन्स शुगर मिल्स
१३. हिन्दुस्तान शुगर मिल्स गोला
१४. सरच्चा शुगर फैक्टरी सरदार नगर
१५. अपर गंजेज शुगर मिल्स शिवहारा
१६. एल० एच० शुगर फैक्टरी पीलीभीत
१७. अपर इंडिया शुगर मिल्स खतौली
१८. रजा एन्ड बुलन्द शुगर कम्पनी, रामपुर
१९. दौराला शुगर मिल्स, दौराला
२०. लक्ष्मी शुगर एन्ड आयल मिल्स हरदोई
२१. यू० पी० शुगर कम्पनी लि० सिरोही
२२. मोदी शुगर मिल्स मोदीनगर
२३. आर० बी० लक्ष्मनदास मोहनलाल एन्ड सन्स शुगर मिल्स जरवल रोड
२४. एल० एच० शुगर मिल्स काशीपुर नैनीताल
२५. श्री सीताराम शुगर फैक्टरी बैतालपुर, देवरिया

प्रदेश के चीनी कारखानों के मालिकों ने सरकार की इस गृह-निर्माण योजना में सहयोग देना स्वीकार कर लिया है। अधिकांश चीनी-कारखानों के पास गृह-निर्माण के लिये अपनी निजी जमीन उपलब्ध है, किन्तु जिन कारखानों के पास निजी जमीन नहीं है, उनको जमीन प्राप्त करने में समुचित सरकारी सहायता दी जा रही है। प्रदेश के कई कारखानों में इस योजना के अन्तर्गत मजदूरों के मकान बनाने का कार्य प्रारम्भ हो गया है, और यह आशा की जाती है कि शक्कर बनाने के कार्य के अगले वर्ष आरम्भ होने के पहिले अधिकतर मिलों में ये मकान बन जायगे।

(पृष्ठ ८ का शेष)

पानी की व्यवस्था ऐसी होना चाहिए कि जिसको हेल्थ अफसर ने जाँच करके प्रमाणित कर दिया हो। नहाने धोने के लिए प्रत्येक मजदूर को प्रतिदिन ६ गैलन पानी दिये जाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

जिन कारखानों में स्त्रियाँ भी काम करती हैं, वहाँ पर स्त्रियों के लिये परददार स्नानागार बनाए जावेंगे, जो पुरुषों के स्नानागारों से अलग होंगे। इन स्नानागारों के बाहर यह नोटिस लगाया जायगा कि यह केवल स्त्रियों के लिये हैं।

(२) कारखानों में काम करने के समय निजी कपड़े रखने की व्यवस्था:—मजदूरों के पास कुछ ऐसे कपड़े होते हैं जिनको कारखानों में काम करने के समय वे नहीं पहिन सकते। कभी २ बरसात में कपड़े भीग भी जाते हैं। नहाने धोने के बाद गीले कपड़े सुखाने के लिए सुरक्षित स्थान की भी आवश्यकता है। इसलिये यह नियम बनाया गया है कि प्रत्येक ऐसे कारखाने में, जिन में नीचे लिखा काम होता है, अलग २ ऐसे कमरे बनाये जावेंगे जहां मजदूर अपने वे कपड़े रख सकें, जो काम करने के समय नहीं पहने जा सकते, और जहां वे अपने भीगे कपड़े सुखाने के लिये फैला सकें। इन कमरों में खूँटी और दरवाजेदार अलमारी भी होनी चाहिये। (क) इंजीनियरिंग, (ख) लोहा और ईस्पात, (ग) रसायन पदार्थ, (घ) तेल मिल, (ङ) मोटर के कारखाने।

(३) कारखानों में काम करने की जगहों में बैठे बैठे

काम करने की व्यवस्था :—जिन कारखानों में मजदूरों को खड़े खड़े काम करना पड़ता है, उनमें मजदूरों को काम करने की जगह पर बैठने का प्रबन्ध किया जायगा, जिससे कि वे बीच बीच में मौका पाकर थोड़ी देर बैठ कर आराम कर लिया करें।

(४) प्राथमिक चिकित्सा का प्रबन्ध:—प्रत्येक कारखाने में एक ऐसे स्थान में, जहां मजदूर शीघ्रता से पहुंच सकें, प्रत्येक ५० मजदूरों के लिये कम से कम एक प्राथमिक चिकित्सा का बक्स रहना चाहिए। इस बक्स में पट्टियाँ और दवाएँ इत्यादि रक्खी रहेंगी। जिन कारखानों में अधिक मजदूर काम करते हैं, और काम बिजली की मशीन से होता है, उनमें दवा के बक्सों में चीफ इन्स्पेक्टर आफ फ़ैक्ट्रीज़ के आदेश के अनुसार अधिक सामान रखा जावेगा। इन बक्सों के ऊपर सफ़ेद रंग लगा कर लाल क्रास (+) का निशान बना होगा। इस प्रबंध को देखने के लिए एक ऐसे जिम्मेदार व्यक्ति को रखा जायगा जो कारखाना के चालू रहने तक सदैव उपस्थित रहे।

जिन कारखानों में ५०० से अधिक मजदूर काम करते हैं, उनमें एक ऐंबुलेंस का कमरा अथवा दवाखाना बनाया जायगा। इस दवाखाने में एक डाक्टर और एक नर्स तथा अन्य कर्मचारी होंगे। इस दवाखानें में जिन मजदूरों का इलाज किया जायगा, उनका नाम इत्यादि एक रजिस्टर में दर्ज किया जायगा।

(५) कैंटीन:—जिन कारखानों में २५० से अधिक मजदूर काम करते हैं उनमें १ जुलाई सन् १९५१ तक कानून द्वारा बनाये गए नियमों के अनुसार खाने पीने के प्रबंध के लिए कैंटीन खोले जावेंगे। इन कैंटीन में सफाई, खाने पीने के लिए मेज, कुर्सी, और बर्तन इत्यादि रखे जाने की व्यवस्था करने के लिए नियम बनाए गए हैं।

(६) विश्रामालय और भोजनालय:—प्रत्येक ऐसे कारखाने में, जिसमें १५० से अधिक मजदूर काम करते हैं, एक विश्रामालय और भोजनालय बनाया जावेगा और उसको ठीक दशा में रखा जावेगा। यह कमरे पक्के होंगे और १२ फ़ीट से कम ऊँचे न होंगे, और सबसे बड़े शिफ्ट में काम करनें वाले मजदूरों की संख्या के अनुसार प्रति श्रमिक के लिए १२ वर्ग फ़ीट फ़र्श के हिसाब से स्थान का प्रबन्ध होगा। प्रत्येक कमरे में मेजें और कुर्सी या बेंचें पड़ी होंगी, जिनमें ओठंकने के लिए पीठ होगी। इन कमरों में समुचित रोशनी और हवा के आने जाने की व्यवस्था होगी। परन्तु जिन कारखानों में कैंटीन की व्यवस्था होगी, उनमें अलग से विश्रामालय या भोजनालय न बनाए जावेंगे। मजदूरों के लिए भी यह अनिवार्य होगा कि वह अपने साथ लाये हुए खाने को इन भोजनालयों में जाकर खावें, और कारखाने में किसी अन्य स्थान पर बैठकर न खावें। इन विश्रामालयों और भोजनालयों को तथा इनके आस पास साफ़ सुथरा रखने के लिए कर्मचारियों की नियुक्ति की जावेगी।

(७) शिशुगृह की व्यवस्था :—

प्रत्येक ऐसे कारखाने में जिसमें ५० या उससे अधिक स्त्रियां काम करती हैं, एक ऐसा शिशुगृह बनाया जावेगा, जिसमें उन स्त्रियों के ६ वर्ष से कम आयु के बच्चे उन स्त्रियों के कारखाने में काम करने के समय सुरक्षित रह सकें। इस शिशुगृह के प्रबन्ध के लिये एक ऐसी महिला रखी जावेगी, जो बच्चों की देख रेख के कार्य में कुशल हो। यह कमरे ऐसी जगह पर होंगे जहाँ कारखाने का धुआं और धूल इत्यादि न जाती हो।

कमरे पक्के और रोशनी और हवादार होना चाहिए, और इनकी ऊंचाई कम से कम १२ फिट होनी चाहिए तथा प्रत्येक बच्चे के लिये २० वर्ग फुट फर्श होनी चाहिए। प्रत्येक बच्चे के लिये एक पालना या खटोला और बिस्तर होना चाहिए। बच्चों की माताओं के बैठने के लिए उचित व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि वे बैठकर बच्चों को दूध पिला सकें। बच्चों के लिए खिलौने भी रखे जावेंगे। इस शिशुगृह से मिला हुआ बच्चों के लिए नहाने का स्थान, जिसमें साबुन तौलिया दिया जावेगा, तथा शौचालय बनाया जावेगा। बच्चों को दूध देने का भी प्रबन्ध किया जावेगा।

(८) श्रम हितकारी अफसरों की नियुक्ति :—

प्रत्येक ऐसे कारखाने में, जिसमें ५०० या उससे अधिक मजदूर काम करते हैं, एक या अधिक श्रम हित-कारी अफसर की नियुक्ति की जावेगी, जो कारखानों में श्रमिकों के लिए कानून द्वारा दी गई सुविधाओं को देने के लिए समुचित व्यवस्था करेंगे। श्रमिकों को चाहिए कि वे इन श्रम हितकारी अफसरों से सम्पर्क रखें और अपने स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने के लिए सरकार द्वारा बनाये गये कानून से लाभ उठावें।
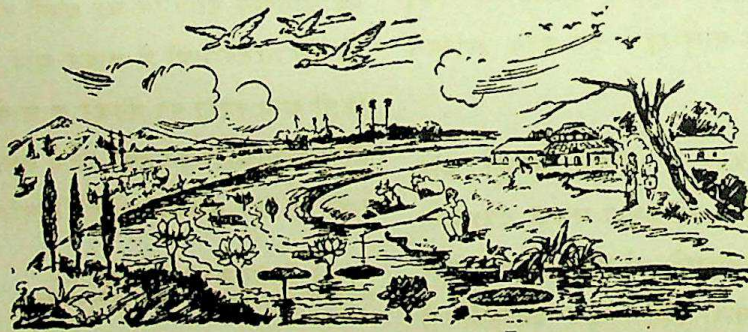
६ जनवरी, १६५१ को श्रम कमिश्नर, श्री ओंकारनाथ मिश्र ने कालपी रोड स्थित इम्प्लायमेन्ट एक्सचेञ्ज के उप-कार्यालय का निरीक्षण किया। चित्र में आप दैनिक रिक्त स्थान सूची (डेली वेकैन्सी लिस्ट) को देख रहे हैं।

१६५१ के वर्ष में निर्मित डिप्टी का पड़ाव 'श्रम हितकारी केन्द्र' के भवन का एक चित्र

रजिस्टर्ड नं० ए-५६८

तार का पता :—"LABORCOM."
टेलीफोन नं० ३२६६
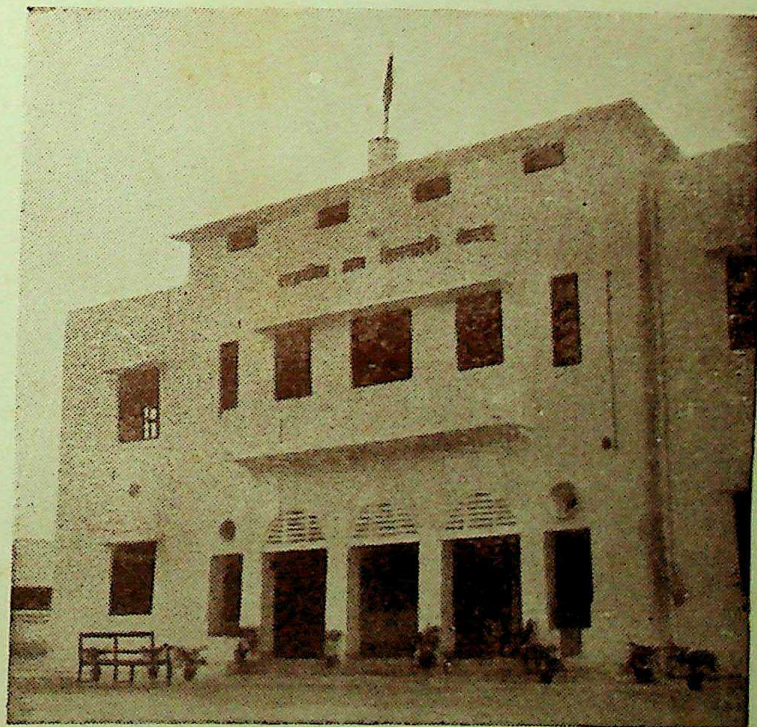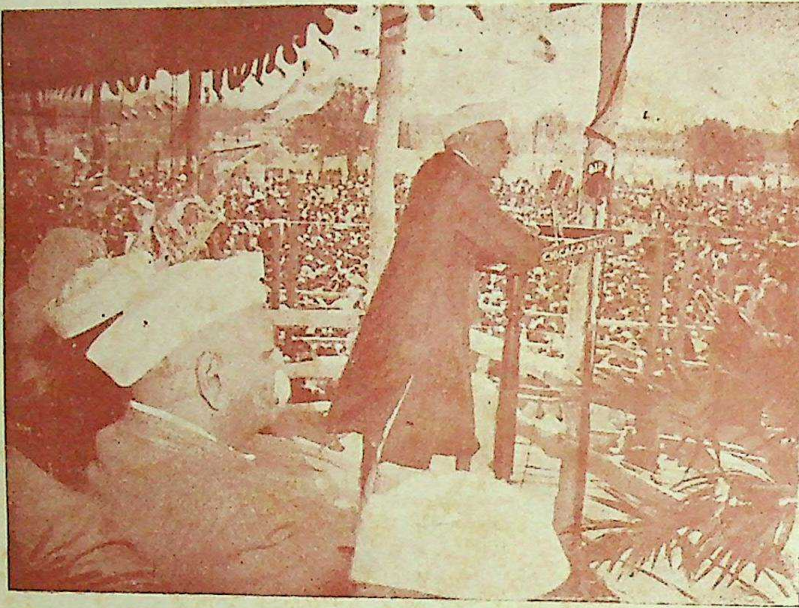
२४ फरवरी, १९५२ को भार
के प्रधान मंत्री माननीय पं
जवाहरलाल नेहरू ने कानपु
में कामकरों की राज्य-बीम
योजना का उद्घाटन किया।
चित्र में पं० नेहरू कर्मचारियों
की सार्वजनिक सभा में उद्
घाटन भाषण दे रहे हैं।

उत्तर प्रदेश के श्रम मंत्री माननीय सैयद अली ज़हीर ने १३ नवम्बर, १९५१ को चाय के बागानों में काम करने वाले मज़दूरों के लिये देहरादून में तीन श्रम-हितकारी केन्द्रों का उद्घाटन किया। यह चित्र उद्घाटन के अवसर का है।

श्रम आयुक्त, उ० प्र०, कानपुर द्वारा संपादित तथा प्रकाशित। मुद्रक—इण्डस्ट्रियल आर्ट प्रिन्टरी, कानपुर।

राजकीय श्रम-हितकारी केन्द्रों में मिलनेवाली सुविधायें

राजकीय श्रम - हितकारी केन्द्रों में मजदूरों को चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधाएँ निःशुल्क दी जाती हैं। यहाँ केन्द्र के अस्पताल का डाक्टर एक रोगी श्रमिक बच्चे की जाँच कर रहा है।

केन्द्रों में श्रमिक स्त्रियों को सिलाई, कढ़ाई, बुनाई आदि के सिखाने की निःशुल्क व्यवस्था है। यहाँ कुछ श्रमिक स्त्रियाँ कटाई व सिलाई कर रही हैं।

रजिस्टर्ड नं० ए—५६८

तार का पता : "LABORCOM"
टेलीफोन नं० ३२६६
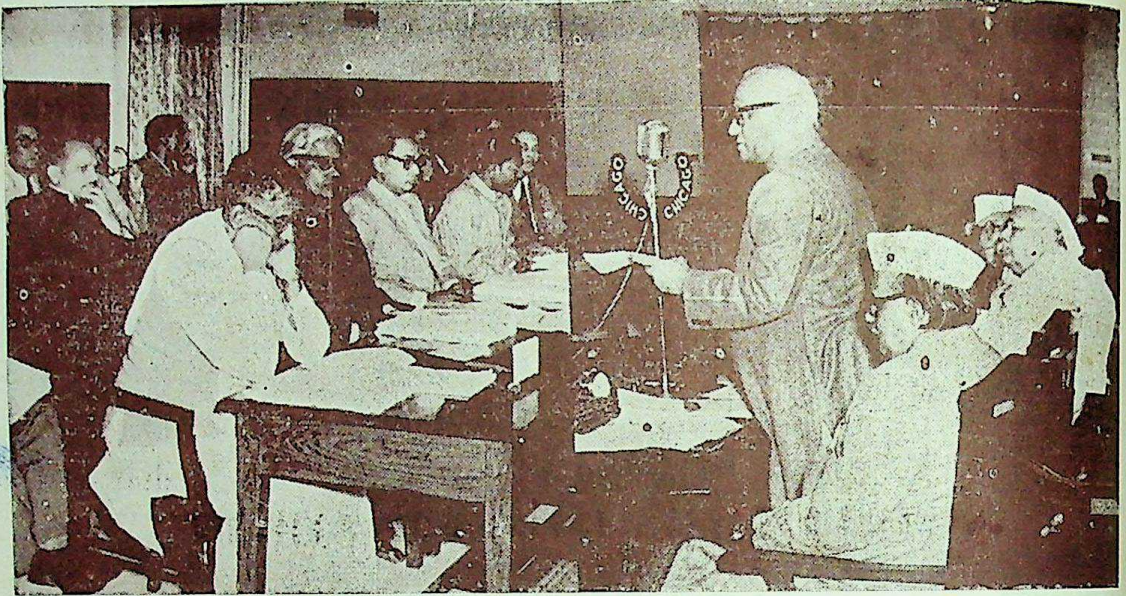
८ अक्टूबर, ५२ से नैनीताल में हुए भारतीय श्रम-सम्मेलन में केन्द्र के श्रम मन्त्री माननीय श्री वी० वी० गिरि भाषण दे रहे हैं।

२३ और २४ सितम्बर, को नैनीताल में हुए राज्य त्रिदल सम्मेलन का एक दृ[illegible] उ० प्र० के श्रम मंत्री मान[illegible] डा० सम्पूर्णानन्द भाषण [illegible] रहे हैं।

श्रम कमिश्नर, उ० प्र०, कानपुर द्वारा सम्पादित तथा प्रकाशित। मुद्रक—इन्डस्ट्रियल आर्ट प्रिंटरी, कानपुर। केवल मुखपृष्ठ अधीक्षक, मुद्रण एवं लेखन-सामग्री, इलाहाबाद द्वारा मुद्रित।

'श्रमजीवी' के लिए उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री

पं० गोविन्द वल्लभ पन्त का आशीर्वाद

आज हमारे देश में पैदावार बढ़ाने की सबसे बड़ी जरूरत है और हर एक नागरिक को अपनी सारी शक्ति इस ओर लगानी है। श्रम का सदुपयोग और मजदूरों का उत्साह इस उद्देश्य की सफलता के लिये आवश्यक है। मज़दूरों के अनेक प्रश्न हैं और उनके हल करने के लिये श्रमिक-वर्ग को देश और अपनी सभी समस्याओं पर सबोध और सजग होना है। सरकार की ओर से अनेक कार्यक्रम समय-समय पर इस निमित्त बनाने और कार्यान्वित करने का प्रयत्न किया जाता है ताकि अच्छे ढंग से और मिलजुल कर सब काम ठीक बढ़ता रहे। 'श्रमजीवी' गए साढ़े चार वर्षों से इस सम्बन्ध में उपयोगी कार्य करता रहा है। मुझे आशा है कि आइन्दा भी वह योग्यता और तत्परता से इसी तरह आगे बढ़ता रहेगा।

—गोविन्द वल्लभ पन्त

उत्तर प्रदेश के श्रम मंत्री

डा० सम्पूर्णानन्द का आशीर्वाद
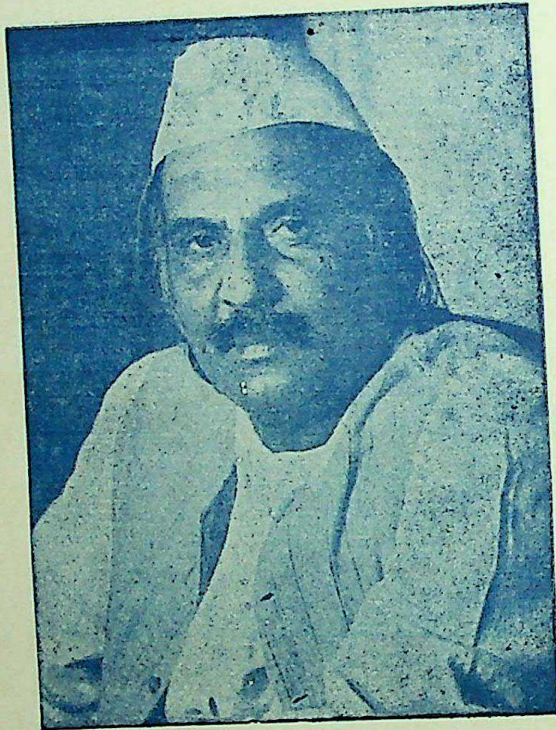
'श्रमजीवी' अपने क्षेत्र में उपयोगी काम कर रहा है। श्रमिकों से सहानुभूति रखते हुए भी वह यथास्थिति सूचना देता है, इसलिए उस पर सभी पक्षों को विश्वास है। मैं आशा करता हूँ कि यह आगे भी इसी प्रकार सेवा करता रहेगा।

—सम्पूर्णानन्द
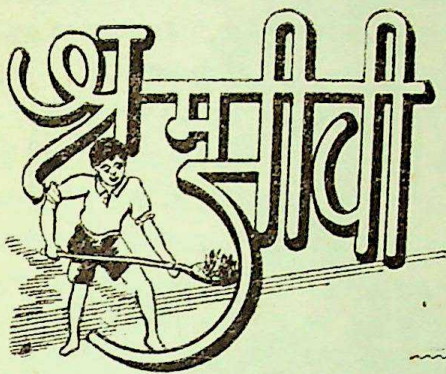
उत्तर प्रदेशीय श्रम-विभाग का
साप्ताहिक मुखपत्र

वार्षिक मूल्य २) + इस अङ्क का ।)

वर्ष ५] १५ फरवरी, १९५३ [संख्या २५
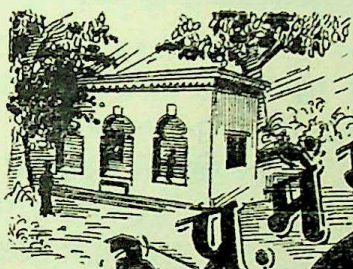
यह कहने की जरूरत नहीं कि सभ्य जीवन बिताने के लिये एक मुख्य आवश्यकता अच्छे घर की होती है और हर आदमी इस बात की चाह रखता है कि रहने के लिये उसे अच्छा-सा मकान अवश्य मिले। जब से अपने देश में औद्योगीकरण अर्थात् अधिक-से-अधिक मिल-कारखाने खोलने की ओर ध्यान दिया गया, तब से मजदूरों के लिये पर्याप्त मकानों की समस्या उठ खड़ी हुई है। बात यह है कि जब कहीं कोई कारखाना खुलता है, तब उसमें काम करने के लिये मजदूर सैकड़ों-हजारों की संख्या में वहाँ पहुँच जाते हैं और इस दिशा में उनके सामने जो पहली दिक्कत आती है, वह मकान की ही होती है। पिछले सालों में देश के उद्योग-धन्धों को अधिक-से-अधिक बढ़ाने के विचार से कारखाने तो यहाँ-वहाँ बहुत खोले गये, परन्तु उनमें काम करनेवाले मजदूर कहाँ कैसे रहेंगे, इस समस्या की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। फल यह हुआ कि जिन स्थानों में कारखाने खुले, वहाँ मजदूरों की संख्या तो बढ़ती गई, परन्तु उनके रहने की व्यवस्था पहले ही की तरह खराब बनी रही। इन्हीं दिनों महायुद्ध के छिड़ने से कारखानों का और भी विस्तार हुआ, जिससे मजदूरों की संख्या में भी वैसी ही बढ़ती हुई। परन्तु मजदूरों के रहने की व्यवस्था में कोई सुधार नहीं हो सका, उलटे वह और भी बिगड़ गई, क्योंकि एक ओर तो जमीन बहुत महँगी थी और दूसरी ओर इमारती सामान नहीं मिलता था।

इन सब हालतों ने मिलकर गन्दी बस्तियों को जन्म दिया। ये गन्दी बस्तियाँ आज देश के हर एक बड़े औद्योगिक नगरों, जैसे बम्बई, अहमदाबाद, शोलापुर, कलकत्ता, दिल्ली और कानपुर में मौजूद हैं।

जब से राष्ट्रीय सरकार के हाथ में शासन की बागडोर आई है, वह बराबर इस दिशा में प्रयत्न करती रही है कि मजदूरों को रहने के लिये अच्छे मकान दिये जायँ और गन्दी बस्तियाँ दूर कर दी जायँ। मकानों के बनवाने के सम्बन्ध में सबसे बड़ी समस्या धन की रही है और साथ ही ऐसे मकानों का बनवाना आसान काम नहीं है, जो अच्छे होते हुये भी इतने सस्ते हों कि उनका किराया मजदूर आसानी से दे सकें।

लेखक

पहला कदम

इस सम्बन्ध में उत्तर प्रदेशीय सरकार ने जो पहला कदम उठाया, उससे चीनी के कारखानों में काम करनेवाले मजदूरों की मकान-सम्बन्धी दिक्कत बहुत-कुछ दूर हो सकेगी। यह जानने योग्य है कि उत्तर प्रदेश में चीनी कारखानों में लगे मजदूरों के रहने की समस्या अपने ढंग की अनूठी है, क्योंकि चीनी के कारखाने सालमें केवल ३-४ महीने ही चलते हैं और बाकी समय बन्द रहते हैं। ऐसी दशा में उनमें काम करने अधिकांश मजदूर ३-४ महीने के लिए ही कारखाने के पास रहने आते हैं। चीनी के ये कारखाने अधिकतर गाँवों, कस्बों या छोटे नगरों में हैं और इन जगहों में किराए पर फालतू मकान एक तो मिलते ही नहीं और यदि मिलते भी हैं तो बहुत कम। इस प्रकार तीन-चार महीने के लिए आनेवाले इन मजदूरों के कारण उस जगह की सीमित आवास-व्यवस्था में भी गड़बड़ी हो जाती है। ऐसी दशा में मजदूरों के लिए ऐसे मकानों का बनवाना बहुत जरूरी हो जाता है, जो अच्छे और हवादार ही नहीं, किराये की दृष्टि से सस्ते भी हों। इस तरह के मकानों का बनवाना तब तक सम्भव नहीं था जब तक कहीं से, इसके लिए सहायता-रूप में धन प्राप्त न हो। अतएव यह निश्चय किया गया कि चीनी के कारखानों में जो शीरा उत्पन्न होता है, उसकी खुली बिक्री से होनेवाली अतिरिक्त आमदनी को इकट्ठा कर एक कोष बनाया जाय और उसे इन मकानों के बनवाने में खर्च किया जाय। इस निश्चय के अनुसार पिछले साल 'चीनी और चालक मद्यसार उद्योग श्रमिक कल्याण और विकास निधि कानून' नामक एक कानून बनाया गया। इस कानून के द्वारा उक्त कोष स्थापित किया गया और इसमें जो

> उत्तर प्रदेश में सरकार-द्वारा चीनी उद्योग तथा अन्य उद्योगों में लगे मजदूरों के लिए प्रमुख औद्योगिक केन्द्रों में रहने योग्य मकान बनवाए जा रहे हैं। इस सम्बन्ध में प्रस्तुत लेख अभी हाल में आल इण्डिया रेडियो, लखनऊ से वार्ता-रूप में प्रसारित हुआ था।

धन इकट्ठा होता गया, उसका ६८ प्रतिशत मजदूरों के लिए मकान बनवाने के लिए निश्चित किया गया। मकानों के बनवाने के लिए एक योजना तैयार की गई, जिसके अनुसार चीनी के कारखानों के मजदूरों के लिए १,५०० मकानों का बनाना निश्चित किया गया है। इन सभी मकानों में बरामदे, रसोई, स्नानागार और पाखाने की भी व्यवस्था रखी गई है। इस योजना के अनुसार मकान बनवाने का काम मिल-मालिकों को सौंपा गया। यह भी निश्चय हुआ कि मकानों के लिए इमारती सामान और जमीन दिलाने में सरकार उनकी सहायता करेगी और उन्हें आवश्यक धन भी मिलेगा। यही नहीं, जिन कारखानों को ७०,००० रु० या उससे अधिक मिलने को था, उनके लिये यह सुझाव रखा गया कि फुटकर मकान बनवाने के स्थान में वे अपने मजदूरों की बस्ती बनवाएँ। हो चुके थे और ५० छत की सतह तक बने थे। १४१ मकान नींव की सतह तक बन गए थे और ४१ मकान नींव की सतह के नीचे तक बने थे। इन मकानों के बनवाने के लिए विभिन्न कारखानों को ३,३०,२६५ रुपये दिए जा चुके थे। गत ११ अक्टूबर, १९५२ को केन्द्रीय श्रम-मंत्री ने बरेली जिले के बहेड़ी नामक स्थान पर केसर शुगर वर्क्स लि० नामक कारखाने द्वारा बनवाई गई मजदूर बस्ती का उद्घाटन किया। इस बस्ती के बनवाने के लिए उक्त कोष से कारखाने को ८२,०४२ रु० दिये गए थे, जिससे ४० मकानों की सुन्दर बस्ती बनकर तैयार हुई है। अब उक्त कारखाना अपने खर्च से १२ मकान और बनवा रहा है, जिनमें ४ मकान तभी तैयार हो चुके थे और बाकी तैयार हो रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि उक्त मकानों
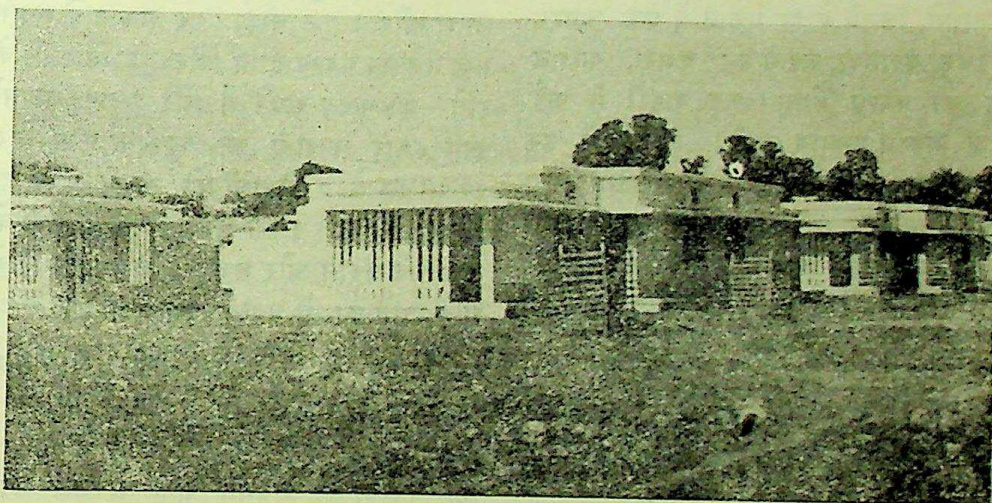
केसर शुगर वर्क्स लि०, बहेड़ी द्वारा निर्मित मजदूर बस्ती का एक दृश्य।

इसके लिये सरकार की ओर से उन्हें बस्ती की योजना भी तैयार करके देने की व्यवस्था की गई।

गृह-निर्माण की प्रगति

नवम्बर, १९५१ के अन्त तक मिली सूचनाओं से मालूम होता है कि तब तक २९ चीनी के कारखानों द्वारा मजदूरों के लिए ५१७ मकान बनवाए जा रहे थे। इन मकानों में से २८५ मकान लगभग तैयार के बन जाने से चीनी कारखानों के मजदूरों के रहने की समस्या आंशिक रूप में सुलझ जायगी।

केन्द्रीय सरकार की योजना

मकानों की समस्या केवल चीनी के कारखानों में काम करनेवाले मजदूरों के ही लिए नहीं, अन्य उद्योगों में काम करनेवाले मजदूरों के लिए भी रही है। सभी उद्योगों में लगे मजदूरों

के लिए पर्याप्त मकानों की व्यवस्था करना एक बड़ी समस्या रही है और उसे सुलझाने के लिए केन्द्रीय सरकार ने समय-समय पर कई योजनाएँ बनाईं। केन्द्रीय सरकार ने अभी हाल में ही एक योजना तैयार की है, जिसके अनुसार २८,००० मकान बनवाने का विचार किया गया है और इसके लिए करीब ७ करोड़ की रकम स्वीकार की गई है। इस रकम में सभी राज्य सरकारों, मिल-मालिकों, गृह-निर्माण-समितियों और सहकारिता-समितियों को आर्थिक सहायता मिलेगी, जिससे वे अपने-अपने क्षेत्र में मजदूरों के रहने के लिए जरूरी प्रबन्ध कर सकें। इस योजना के अनुसार मजदूरों के मकान बनवाने में जो खर्च होगा, उसका एक अंश केन्द्रीय सरकार स्वयं देगी और जो मकान बनेंगे, वे दो प्रकार के होंगे। बीच के दर्जे के शहरों में एकमंजिले मकान बनवाये जायँगे, जिनमें से हर मकान में एक कमरा, एक रसोईघर, बरामदा, नहाने का कमरा, पाखाने और नल का प्रबन्ध होगा। बड़े शहरों में कई मंजिलवाले मकान बनवाये जाएँगे, जिनमें से हर एक में एक कमरा और एक रसोईघर होगा तथा पाखाना एव स्नानागार सम्मिलित रहेगा। इन मकानों को बनवाने के लिए आवश्यक इमारती सामान प्राप्त करने तथा उसे मौके की जगह पहुँचाने में भी केन्द्रीय सरकार जरूरी सुविधाएँ प्रदान करेगी।

कानपुर और लखनऊ के लिए

केन्द्रीय सरकार की उक्त योजना से लाभ उठाने के लिए उत्तर प्रदेश सरकार ने कार्यवाही तुरन्त शुरू कर दी है। उसने एक योजना तैयार की है, जिसके अनुसार कानपुर और लखनऊ में मजदूरों के लिए एक कमरेवाले मकान बनने प्रारम्भ हो गए हैं. जिनमें से हर मकान पर २,७०० रु० खर्च होंगे। चालू आर्थिक वर्ष में लखनऊ और कानपुर में उक्त प्रकार के मकान बनवाने में ७५ लाख रुपये खर्च किए जाएँगे। लखनऊ में १५ लाख रुपये की लागत के मकान नगर-पालिका के द्वारा बनाए जा रहे हैं। कानपुर में पी० डब्लू० डी० ऐसे मकानों के बनवाने में ४० लाख और डेवलपमेंट बोर्ड २० लाख रुपये खर्च करेगा।

मकानों की डिजाइन एवं बस्ती के 'ले आउट' बनाने में पी०डब्लू०डी० तथा टाउन प्लानिंग विभाग से मदद ली गई है। दो तरह के मकान इस समय बनवाये जा रहे हैं। एक डिजाइन के अनुसार ब्लाकों में से हर एक में ८ मकान होंगे: ४ पहली मंजिल पर और ४ नीचे। दूसरी डिजाइन में ६ मकान होंगे, ४ नीचे और २ पहली मंजिल पर। हर मकान में ये सुविधाएँ रहेंगी: एक रहने का कमरा १२ फुट लम्बा और १० फुट चौड़ा, बरामदा और रसोईघर १२ फुट लम्बा और ८ फुट चौड़ा, एक स्नानागार ४ फुट लम्बा और ३ फुट चौड़ा, जिसके चारों ओर ४ फुट की पर्दा-दीवाल होगी और दो मकानों के लिए पानी से खुद धुलनेवाला एक पाखाना ४ फुट लम्बा और ३ फुट चौड़ा। हर मकान के स्नानघर में एक नल का प्रबन्ध होगा और दो बिजली के बल्ब होंगे—एक मुख्य कमरे में और दूसरा बरामदे में। इसी प्रकार पाखानों की व्यवस्था ऐसी रहेगी कि हर मंजिल के रहनेवालों को उनका उपयोग करने में आसानी हो। इसके अलावा बगीचे, बच्चों के लिये खेलने के मैदान और मजदूरों के उपयोग के लिये चौड़े मार्गों का भी प्रबन्ध रखा गया है।

कानपुर के डेवलपमेन्ट बोर्ड द्वारा गोविन्दनगर में मकान बनवाए जा रहे हैं। इस स्थान के विकास के लिए इसमें गन्दे पानी के निकास के लिये नालियों की व्यवस्था की जायगी, पानी के नल का प्रबन्ध किया जायगा और साथ ही इस प्रकार नई सड़कें बनाई जायँगी कि यह स्थान नगर से भले प्रकार सम्बन्धित हो जाय। इस योजना में २११ ब्लाक बनेंगे, जिनमें से हर एक में ८ मकान होंगे। आर्थिक चालू वर्ष में ऐसे ६३ ब्लाक बनाये जायँगे।

कानपुर के पी० डब्लू० डी० द्वारा २२६ ब्लाक बनवाये जायँगे। इनमें से हर एक में ६ मकान होंगे।

(शेष पृष्ठ ६२ पर)

*
**

[औद्योगिक दृष्टि से विकसित दूसरे देशों की भाँति भारत में मजदूरों और मालिकों के बीच सामूहिक वार्ता और आपसी समझौते की प्रथा का श्रीगणेश अभी नहीं हुआ है। भारत के श्रममंत्री श्री वी० वी० गिरि ने इस अभाव की पूर्ति एवं औद्योगिक झगड़ों के निपटारे की प्रचलित अनिवार्य अभिनिर्णय-प्रणाली में आमूल परिवर्तन करने के लिए देश के समक्ष एक नई योजना प्रस्तुत की है। इस योजना पर इस लेख में विस्तृत प्रकाश डालते हुए जो आशावादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है, वह सर्वथा व्यावहारिक एवं विचारणीय है।]

**
*

किसी भी देश के औद्योगिक विकास के लिए यह बहुत आवश्यक है कि वहाँ के मिल-मालिकों और मजदूरों के बीच सद्भावनापूर्ण सम्बन्ध स्थापित हों और वे परस्पर सहयोगपूर्वक उत्पादन बढ़ाने में प्रयत्नशील हों। ऐसा न होने पर तरह-तरह के औद्योगिक विवाद उठ खड़े होते हैं, जिनसे मिल-मालिकों और मजदूरों के आपसी सम्बन्ध खराब होने के साथ-साथ उत्पादन में ह्रास होने के कारण सारे देश को हानि पहुँचती है।

भारत में गत महायुद्ध के समय उत्पादन को यथासंभव नियमित रखने की दृष्टि से औद्योगिक विवादों के निराकरण के लिए विशेष प्रबंध की आवश्यकता हुई। यह जरूरी था कि हड़तालें न होने पायें और उत्पादन में अधिक-से-अधिक वृद्धि हो। अतएव भारत सुरक्षा नियमावली की धारा ८१-ए की सहायता ली गई। इस धारा के अनुसार

सरकार किसी भी औ क ववाद को अनिवार्य अभिनिर्णय के द्वारा निर्णीत करवा सकती थी। महा-युद्ध के बाद का समय भी इस देश के लिए आर्थिक, राजनैतिक और अन्य दृष्टियों से अत्यन्त जटिल था। ऐसी दशा में औद्योगिक क्षेत्र में आवश्यक संतुलन बनाए रखने के लिए युद्धकालीन व्यवस्था को और भी पुष्ट तथा स्थायी रूप देना पड़ा। इस व्यवस्था के आधार-भूत कानून 'औद्योगिक विवाद कानून, १९४७' के अनुसार अनिवार्य अभिनिर्णय का प्रबंध किया गया। इसके लिए प्रमुख स्थानों में समझौता-बोर्ड, जाँच न्यायालय और औद्योगिक-न्यायालय स्थापित हुए। इनके अलावा कलकत्ते में 'श्रम एपेलेट ट्राइब्यूनल' की स्थापना की गई।

अनिवार्य अभिनिर्णय

इस अनिवार्य व्यवस्था के कारण देश की उत्पादन-शक्ति और श्रम-दशा में एक प्रकार की स्थिरता अवश्य बनी रही, परन्तु जैसी प्रगति उद्योगों को करनी चाहिए थी, वह वे नहीं कर सके। यह बात नहीं कि उक्त व्यवस्था प्रगति के मार्ग में बाधक थी, परन्तु इससे इतना अवश्य हुआ कि मिल-मालिक और मजदूर दोनों ही में से आत्मनिर्भरता और स्वतः प्रयत्न की भावना बहुत-कुछ जाती रही। औद्योगिक विवादों की ओर से दोनों उदासीन हो चले, क्योंकि उनको निपटाने के लिये सरकारी व्यवस्था मौजूद ही थी। उनकी इस उदासीनता का फल यह नहीं हुआ कि विवाद उठें ही नहीं, वरन् उनमें धीरे-धीरे मुकदमेबाजी की-सी प्रवृत्ति जड़ पकड़ने लगी। श्रम-न्यायालयों और ट्राइब्यूनलों में उनकी यही प्रवृत्ति खुल कर खेलने लगी। दोनों ही पक्ष समझौते की भावना छोड़कर जय-पराजय की भावना से औद्योगिक विवादों के मामलों की पैरवी करते दिखाई पड़ने लगे। इससे समय, धन और श्रम—तीनों का ही अपव्यय होने लगा। इसके अलावा उक्त व्यवस्था का एक दुष्परिणाम यह हुआ कि मजदूरों का संघ-आन्दोलन शिथिल पड़ने लगा। शिथिल इस अर्थ में कि जहाँ मजदूर संघों पर मजदूरों को सुसंगठित और कार्य-तत्पर बनाने तथा उनके जीवन-स्तर को उठाने में सहायता पहुँचाने का उत्तरदायित्व था, वहाँ प्रायः वे सभी मुकदमेबाजी में रुचि लेने लगे। उनका एक प्रकार से यही उद्देश्य बन गया कि कोई भी कैसा ही विवाद क्यों न हो, उसमें मजदूर-पक्ष की विजय होनी चाहिये।

श्री वी० वी० गिरि की योजना

भारत के वर्तमान श्रम-मंत्री श्री वी० वी० गिरि ने अपना पद-भार सँभालते ही औद्योगिक विवाद-सम्बन्धी उक्त व्यवस्था और उससे होनेवाली प्रति-क्रियाओं की ओर विशेष ध्यान दिया। श्रम-आंदो-लन का व्यक्तिगत अनुभव रखने के कारण उन्होंने इस बात का शीघ्र ही निश्चय कर लिया कि देश की औद्योगिक प्रगति और स्थायी औद्योगिक शांति के लिये यहाँ के मजदूरों में स्वावलम्बन की भावना उत्पन्न करनी होगी और इसके लिये वर्तमान अनि-वार्य अभिनिर्णय-व्यवस्था के स्थान में आपसी समझौते, आपसी निर्णय और उन्हें स्वतः कार्यान्वित करने की प्रणाली को लोकप्रिय करना होगा। अपने इस निश्चय के अनुसार उन्होंने लोकमत भी बनाना प्रारम्भ कर दिया और शीघ्र ही यह बात दिखने लगी कि औद्योगिक समस्याओं में रुचि रखनेवाले सभी लोग समझौते की व्यवस्था में सुधार चाहते हैं। श्री० वी० वी० गिरि के विचारों से प्रभावित होकर जुलाई, १९५२ में अहमदाबाद के मिल-मालिकों और मजदूरों ने एक आपसी समझौता किया, जिसके अनुसार यह निश्चय हुआ है कि टेक्स्टाइल लेबर असोसियेशन तथा अहमदाबाद मिल ओनर्स असो-सियेशन के बीच होनेवाले सभी औद्योगिक विवादों को अदालत के बाहर ही सुलझा लिया जाय।

प्रश्नावली

इसी बीच केन्द्रीय सरकार द्वारा एक प्रश्नावली मिल-मालिकों, मजदूरों, मजदूर-नेताओं, राज्य-सर-कारों आदि के पास यह जानने के लिये भेजी गई कि

औद्योगिक सम्बन्धों के सुधार के सम्बन्ध में उनके क्या विचार हैं। इस प्रश्नावली के जो उत्तर प्राप्त हुए, उनसे यह स्पष्ट पता चलता है कि मिल-मालिक तो श्री वी० वी० गिरि के इस मत से सर्वथा सहमत हैं कि वर्तमान अनिवार्य व्यवस्था को हटाकर आपसी समझौते, आपसी निर्णय और उन्हें स्वतः कार्यान्वित करने की प्रणाली को प्रोत्साहन दिया जाय। परन्तु अधिकतर मजदूर इससे सहमत नहीं। मजदूरों का यह कहना है कि सरकार को औद्योगिक विवादों में हस्तक्षेप करना ही चाहिये, क्योंकि मिल-मालिक अपने स्वार्थ के आगे उनके हितों की कभी परवाह नहीं करेंगे और स्वयं मजदूर वर्ग उनसे अपनी उचित माँगों के भी मनवाने की सामर्थ्य नहीं रखता। इन दो परस्पर-विरोधी मतों में सामंजस्य लाने के लिए व्यापक रूप से विचार-विमर्श की आवश्यकता हुई। अतः इसी उद्देश्य से गत वर्ष अक्टूबर में नैनीताल में अखिल भारतीय त्रिदलीय श्रम-सम्मेलन का आयोजन किया गया।

त्रिदलीय सम्मेलन

उक्त सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री वी० वी० गिरि ने औद्योगिक विवादों के निर्णय के संबन्ध में अपनी यह योजना प्रकट की कि वर्तमान 'अनिवार्य अभिनिर्णय' की व्यवस्था के स्थान में आपसी समझौतों और अभिनिर्णयों की परिपाटी प्रचलित की जाय। इसके लिए उन्होंने यह प्रस्ताव रखा कि कुछ को छोड़कर सभी उद्योगों तथा कारखानों को दो श्रेणियों में बाँट दिया जाय। पहली श्रेणी में वे उद्योग रखे जायँ, जो सार्वजनिक उपयोगिता का कार्य करते हों, जैसे बिजली, जलकल, रेल, डाक, तार आदि और दूसरी श्रेणी में वे कारखाने रखे जायँ, जो वैसा कार्य न करते हों। इस श्रेणी में अन्य सभी उद्योग सम्मिलित होंगे। पहली श्रेणी अर्थात् जनोपयोगी कार्य करनेवाले उद्योगों में जो विवाद हों, उनमें सरकार को हस्तक्षेप करने का अधिकार हो परन्तु दूसरी श्रेणी के कारखानों में उठनेवाले विवादों के सम्बन्ध में आपसी समझौते को ही प्रोत्साहन दिया जाय। बाद में आपसी समझौते में सफलता मिलने पर पहली श्रेणी के उद्योगों में भी आपसी समझौते की नीति लागू कर दी जायगी। इस प्रकार धीरे-धीरे भारत के औद्योगिक क्षेत्र में अनिवार्य अभिनिर्णय की व्यवस्था की आवश्यकता न रहेगी और यहाँ के भी मजदूर सामूहिक वार्ता-द्वारा सन्तोषजनक शर्तों पर काम पा सकेंगे। इससे भारतीय मजदूर आन्दोलन पुष्ट और सबल होगा।

नैनीताल के सम्मेलन में भाग लेनेवाले मजदूर, मिल-मालिकों और राज्य सरकारों के प्रतिनिधियों ने श्री वी० वी० गिरि की नई योजना पर गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श किया। इससे यह ज्ञात हुआ कि प्रायः सभी वर्तमान व्यवस्था में परिवर्तन चाहते थे और इसके लिए उक्त योजना एक उपयोगी आधार थी। सम्मेलन में मिल-मालिकों ने इस बात पर जोर दिया कि औद्योगिक विवादों का निर्णय द्विपक्षीय समिति द्वारा किया जाय, जिसमें मिल-मालिकों और मजदूरों के प्रतिनिधि रखे जायँ। परन्तु मजदूरों और राज्य सरकारों का कहना था कि अनिवार्य अभिनिर्णय इसलिए आवश्यक है कि मिल-मालिकों से सामूहिक वार्ता-द्वारा संतोषजनक माँगें स्वीकृत न करवा पाने पर मजदूर उसका सहारा ले सकें। अन्त में सम्मेलन में यह निश्चय किया गया कि इस विषय पर विचार करने के लिए मालिकों और मजदूरों के प्रतिनिधियों की सात सदस्यों की एक समिति नियुक्त की जाय तथा उसके जो विचार हों, उन पर राज्य श्रम-मंत्रियों के सम्मेलन में विचार किया जाय। यह सम्मेलन अभी हाल में ६ और ७ फरवरी, १९५३ को दिल्ली में हुआ है। इसके निर्णय के अनुसार अब शीघ्र ही एक 'औद्योगिक सम्बन्ध बिल' पार्लियामेण्ट में प्रस्तुत किया जायगा।

समिति के समक्ष प्रस्तुत सुझाव

उक्त समिति के विचारार्थ सरकार की ओर से जो सुझाव रक्खे गये, वे इस प्रकार थे :

किसी औद्योगिक विवाद का निर्णय करने के लिये पंचसूत्री व्यवस्था बनाई जानी चाहिये :

(१) *नोटिस*—यदि कोई पक्ष किसी प्रकार का परिवर्तन करना चाहता है, तो उसे दूसरे पक्ष को उसकी नोटिस देनी होगी। ऐसा न करने पर दूसरे पक्ष को इस बात की नोटिस देने का अधिकार होगा कि वह परिवर्तन न किया जाय या रद्द कर दिया जाय। इसी प्रकार किसी विवाद के उठने पर कोई भी पक्ष दूसरे पक्ष को आपसी समझौता करने के लिये नोटिस दे सकता है।

(२) *अभिवार्ता*—३० दिन या एक निश्चित अवधि के भीतर परस्पर वार्ता करके दोनों पक्षों को विवादग्रस्त विषय पर समझौता करना होगा। इस अवधि में समझौता अधिकारी भी समझौता कराने का प्रयत्न करेगा। जनोपयोगी उद्योग में हड़ताल या तालाबन्दी की नोटिस आने पर, जिसकी एक प्रति समझौता अधिकारी को भी मिलेगी, उसे तुरन्त घटनास्थल पर पहुँचना होगा, परन्तु वैसा उद्योग न होने पर समझौता अधिकारी तब तक अपनी सेवाएँ नहीं देगा, जब तक दोनों पक्षों में से कोई इससे प्रार्थना नहीं करता। समझौता न होने पर समझौता अधिकारी कोई रिपोर्ट नहीं भेजेगा।

(३) *बोर्ड-द्वारा समझौता*—यदि समझौता अधिकारी की सहायता से हुई अभिवार्ता-द्वारा समझौता न हो, तो तुरन्त एक समझौता बोर्ड बनाना होगा। दोनों पक्षों को दो-दो सदस्य चुनने होंगे और सरकार-द्वारा स्वीकृत अध्यक्ष-तालिका में से एक अध्यक्ष चुनना होगा। अध्यक्ष के सम्बन्ध में मतैक्य न होने पर कोई भी पक्ष समझौता अधिकारी को सूचित करेगा, जो उक्त तालिका में से एक अध्यक्ष निर्दिष्ट कर देगा। यदि कोई पक्ष बोर्ड के बनाने आदि के सम्बन्ध में सहयोग न दे, तो सूचना पाने पर समझौता अधिकारी उसे आपसी समझौता करने को राजी करने का प्रयत्न करेगा। यदि इसमें उसे सफलता न मिली, तो वह सहयोग देने-वाले पक्ष को एक प्रमाण-पत्र देगा। इस प्रमाण-पत्र के उपस्थित करने और अनिवार्य अभिनिर्णय की माँग करने पर सम्बन्धित सरकार अनिवार्य अभि-निर्णय के लिये आवश्यक आदेश प्रदान करेगी, चाहे विवाद का सम्बन्ध जनोपयोगी उद्योग से हो या न हो। समझौता बोर्ड द्वारा समझौता हो जाने पर उसे रजिस्टर्ड करके कार्यान्वित किया जायगा और यदि समझौता न हुआ, तो बोर्ड एक रिपोर्ट सम्बन्धित सरकार को भेजेगा। यह रिपोर्ट प्रकाशित की जायगी।

(४) *आपसी अभिनिर्णय*—इस समय या इससे पहले किसी भी समय दोनों पक्ष सहमत होकर अपने विवाद को आपसी अभिनिर्णय-द्वारा सुलझा सकते हैं।

(५) *अनिवार्य अभिनिर्णय*—समझौता बोर्ड के असफल होने पर अनिवार्य अभिनिर्णय के लिये निश्चय किया जायगा। यदि विवाद जनोपयोगी उद्योग से सम्बन्धित है, तो सम्बन्धित सर-कार उसे अनिवार्य अभिनिर्णय के लिये आदेश देगी, परन्तु यदि वह उद्योग वैसा न हुआ तो सरकार तब तक उक्त आदेश न देगी, जब तक (अ) हड़ताल या तालाबन्दी अनिवार्य न हो या प्रारम्भ न हो गई हो, (ब) वह हड़ताल या तालाबन्दी सामाजिक जीवन के लिये आवश्यक सेवाओं या पूर्ति में बाधक न हो, या सम्बन्धित उद्योग पर भारी धक्का न पहुँचता हो, या उसके क्षेत्र और नियोजन में चिन्ताजनक कमी न हो।

योजना का उद्देश्य

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि आपसी समझौते की व्यवस्था की सफलता के लिये यह परमावश्यक है कि देश का मजदूर संघ आन्दोलन अधिक-से-अधिक संगठित हो। जैसा कि श्री वी० वी० गिरि के विचारों से स्पष्ट है, वे मजदूरों को यथासम्भव आत्मनिर्भर, स्वावलम्बी और उत्तरदायित्वपूर्ण

(शेष पृष्ठ ६२ पर)

मजदूरों और श्रमिकों के बीच के सम्बन्धों की समस्या अनिवार्यतः एक मानवीय समस्या है। लेखक ने उत्तर प्रदेश में इस समस्या को सुलझाने के लिये समय-समय पर हुये प्रयत्नों का एक संक्षिप्त ऐतिहासिक विवेचन प्रस्तुत किया है। औद्योगिक झगड़ों के निपटारे की वर्तमान व्यवस्था उपर्युक्त आधार पर ही स्थापित की गई है।

एक समस्या के रूप में औद्योगिक सम्बन्धों का आविर्भाव उत्तर प्रदेश में अभी हाल ही में हुआ है। देश के दूसरे भागों की भाँति उत्तर प्रदेश में भी इस समस्या को महत्व एक ओर तो औद्योगिक विकास के कारण और दूसरी ओर क्रमिक राष्ट्रीय जागृति के साथ सामाजिक दृष्टिकोण के क्रमिक परिवर्त्तन के कारण प्राप्त हुआ है। उत्तर प्रदेश में जनप्रिय सरकार की स्थापना के बाद तो इस समस्या का महत्व और भी अधिक समझा जाने लगा है। सरकार ने सम्पूर्ण समाज के व्यापक हित को देखते हुए मजदूरों और मालिकों के पारस्परिक सम्बन्धों के विकास के लिये कई कदम उठाए और इस समस्या की ओर विशेष रूप से ध्यान देने लगी।

तीन अवस्थाएँ

इस राज्य में औद्योगिक सम्बन्धों की समस्या को हल करने के लिए कानूनों का निर्माण और प्रशासन-सम्बन्धी व्यवस्था का विकास क्रमशः तीन अवस्थाओं में हुआ। सन् १९३७ के पूर्व की प्रथम अवस्था में इस समस्या को आज हम जिस रूप में देखते हैं, वह प्रायः नहीं के बराबर थी। इस समस्या को एक सामाजिक और मानवीय समस्या न समझ कर उस समय प्रमुखतः शांति-व्यवस्था की समस्या के रूप में ही ग्रहण किया जाता था। सन् १९३७ से १९४६ की दूसरी अवधि में प्रथम जनप्रिय सरकार ने इस समस्या के महत्व को पहिचाना और औद्योगिक झगड़ों की रोकथाम के लिए उसने एक श्रम-

अधिकारी की नियुक्ति कर दी। इस अधिकारी का यह कार्य था कि वह मजदूरों की शिकायतों की जाँच करे और श्रमिकों तथा मालिकों में मैत्रीपूर्ण संबन्ध स्थापित करे। द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होते ही सरकार ने पदत्याग कर दिया और विशेष कुछ न किया जा सका। १९४६ में जब पुनः जनप्रिय सरकार पदारूढ़ हुई, तो युद्धांत के कारण फैली हुई औद्योगिक अशांति की ओर उसका ध्यान आकृष्ट हुआ और उसे प्रजातंत्रात्मक ढंग से हल करने के लिए उसने तत्काल उचित कदम उठाए। १९४६-४७ से उत्तर प्रदेश में औद्योगिक संबन्धों के इतिहास का तीसरा और सर्वाधिक महत्वपूर्ण अध्याय प्रारंभ हुआ। इसी अवधि में इस समस्या के वास्तविक महत्व और उसके दूरगामी परिणामों को समझा जा सका।

औद्योगिक संबन्धों की समस्या के सफल समाधान में मालिकों और मजदूरों के संघों का महत्वपूर्ण हाथ रहता है। इन संघों के हार्दिक सहयोग के बिना बड़ी-से-बड़ी और दक्ष कोई भी व्यवस्था सफलता के साथ नहीं चल सकती। उपर्युक्त प्रथम दो अवस्थाओं में अर्थात् १९४६ के पूर्व श्रमिक संघों की संख्या कम होने और विशेष कर राज्य-व्यापी संघों के न होने से श्रमिक संघ इस समस्या के समाधान में विशेष भाग न ले सके। हाँ, कानपुर के मिल मालिकों ने सर्वप्रथम १९३८ में उत्तरी भारत मिल मालिक संघ नाम की एक संस्था अवश्य स्थापित की, जो कानपुर में आम हड़ताल हो जाने के फलस्वरूप ही बनाई गई थी।

प्रथम अवस्था में

१९३७ के पूर्व औद्योगिक सम्बन्धों की समस्या को सामाजिक समस्या के रूप में नहीं स्वीकार किया जाता था और सरकार भी इस ओर से उदासीन थी। इस समय तक श्रमिक क्षेत्रों में जो बाह्य शांति दीख पड़ रही थी, उसका एक कारण यह भी था कि श्रमिक संघों की स्थापना इस समय तक नहीं हुई थी, जिससे वे मजदूरों की ओर से आंदोलन करते या उनका प्रतिनिधित्व करते।

दूसरी अवस्था में

१९३७ से १९४६ तक की अवधि में युद्ध-उत्पादन को अक्षुण्ण रखने के लिए भारत सुरक्षा नियमों के अन्तर्गत जब-तब उठ खड़े होनेवाले औद्योगिक झगड़ों को निपटाने के लिए उन्हें अभिनिर्णय के लिए भेज दिया जाता था। औद्योगिक सम्बन्धों के नियमन के लिए कोई प्रजातंत्रात्मक तरीका काम में नहीं लाया गया। फलतः १९४६ में जब जनप्रिय सरकार की पुनः स्थापना हुई और १९४७ में जब बड़े पैमाने पर औद्योगिक अशान्ति फैली, तो इसके समाधान के लिए कोई उपयुक्त व्यवस्था स्थापित करने की आवश्यकता प्रकट हुई। युद्धकाल में शीघ्रगामी औद्योगीकरण के कारण औद्योगिक सम्बन्धों की समस्या को और भी अधिक महत्व दिया जाने लगा।

तीसरी अवस्था में

१९४७ के बाद इस राज्य की सरकार ने उपर्युक्त समस्या के समाधान के लिए समझौता अधिकारियों की संख्या बढ़ा दी। उनका काम यह था कि वे मजदूरों और मालिकों के झगड़े निपटावें और उनके बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का विकास करें। १९४७ में भारत सरकार ने औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ स्वीकृत किया, परन्तु उत्तर प्रदेश की सरकार ने देखा कि केन्द्रीय कानून से यहाँ का काम नहीं चल नहीं सकता। अतः इस राज्य में एक विशेष अध्यादेश (आर्डिनेंस) की घोषणा हुई, जिसे बाद में उ० प्र० औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ के रूप में स्वीकृत किया गया। यही कानून अभी तक चालू है और इससे सरकार को हड़तालों और तालाबंदियों को रोकने, मालिकों और मजदूरों को कुछ विशेष शर्तों का पालन करने के लिए बाध्य करने, औद्योगिक झगड़ों को संराधन और अभिनिर्णय के लिए प्रेषित करने, औद्योगिक न्यायालयों, ट्राइब्यूनलों आदि की

नियुक्ति करने का अधिकार प्राप्त है। इस कानून के अन्तर्गत अनेक आदेश निकाले गए, जिनका लक्ष्य था मजदूरों और मालिकों के बीच अच्छे औद्योगिक सम्बन्धों की स्थापना। इन आदेशों में झगड़ों के जल्द निपटारे की भी व्यवस्था थी।

औद्योगिक प्रजातंत्र

१० मार्च सन् १९४८ के आदेश द्वारा औद्योगिक झगड़ों के निपटारे के लिए एक व्यवस्था की स्थापना करके इस राज्य में प्रथम बार औद्योगिक प्रजातंत्र का श्रीगणेश हुआ। इस व्यवस्था के अन्तर्गत सूती वस्त्र एवं होजरी, चीनी, चमड़ा और काँच, बिजली और इंजीनियरिंग के महत्वपूर्ण उद्योगों के लिए प्रादेशिक एवं प्रांतीय समझौता बोर्डों की स्थापना की गई। कानपुर, लखनऊ, आगरा और इलाहाबाद में उपर्युक्त चार बड़े उद्योगों के लिए औद्योगिक न्यायालयों की भी स्थापना की गई। इन न्यायालयों में प्रादेशिक एवं प्रांतीय समझौता बोर्डों के विरुद्ध अपील सुनी जा सकती थी। जिला न्यायाधीश उक्त न्यायालय का अध्यक्ष होता एवं मजदूरों और मालिकों की ओर से एक-एक सहायक (असेसर) भी साथ में बैठता था। राज्य को औद्योगिक झगड़ों के जल्द निपटारे के लिए ७ प्रदेशों में बाँटा गया और प्रत्येक में एक एक समझौता बोर्ड की स्थापना की गई। एक प्रांतीय समझौता बोर्ड श्रम-विभाग के मुख्य केन्द्र कानपुर में स्थापित किया गया। प्रादेशिक समझौता बोर्डों का अध्यक्ष एक समझौता अधिकारी होता और प्रांतीय बोर्डों का अध्यक्ष श्रम कमिश्नर, प्रति श्रम कमिश्नर, या सहायक कमिश्नर होता था। मजदूरों और मालिकों का एक-एक प्रतिनिधि इसका सदस्य होता था। बोर्ड सर्वप्रथम इस बात का प्रयत्न करते थे कि औद्योगिक झगड़े का समझौते के द्वारा निपटारा हो जाय और यदि उसमें सफलता न मिले, तो उन्हें झगड़े के विषयों पर अभिनिर्णय देने का अधिकार प्राप्त था।

कर्म-समिति

१९४८ में मजदूरों के हित के लिये राज्य के सभी चीनी के कारखानों और २०० या इससे अधिक मजदूरों को रखनेवाले दूसरे कारखानों में कर्म-समितियाँ (वर्क्स कमेटीज़) का निर्माण किया गया। सर्वप्रथम झगड़ा उठने पर उसे कर्म-समितियों के पास भेजा जाता था और यदि उसमें कोई समझौता न हो सका तो झगड़े को निपटाने के लिये उपयुक्त समझौता बोर्ड के पास भेजा जा सकता था। कर्म-समितियों के द्वारा मजदूरों और मालिकों को झगड़े के विषयों अथवा मतभेदों पर बराबरी की हैसियत से बातचीत करने का अवसर मिलता था।

हड़तालों और तालाबन्दियों पर रोक

औद्योगिक झगड़े के निपटारे की प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था की स्थापना के साथ-साथ सरकार ने हड़तालों और तालाबन्दियों को रोकने की दिशा में भी कदम उठाया। सरकार ने उ० प्र० औद्योगिक झगड़ा कानून के अन्तर्गत जून, १९४८ में एक विशेष आदेश निकाला, जिसके द्वारा बिना उपयुक्त नोटिस और किसी कर्म-समिति, समझौता बोर्ड या औद्योगिक न्यायालय, आदि के समक्ष किसी झगड़े के चलते रहने की स्थिति में हड़तालें और तालाबन्दियाँ करना रोक दिया गया। इस आदेश से छोटी छोटी बातों पर होनेवाली हड़तालों या तालाबन्दियों की संख्या बहुत-कुछ कम हो गई।

नई व्यवस्था

कर्म-समितियाँ, समझौता बोर्ड और औद्योगिक न्यायालय १९५० तक संतोषजनक ढंग से काम करते रहे, परन्तु उक्त वर्ष के अन्त में इस संपूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन करने का निश्चय किया गया। इसका कारण यह था कि ३ वर्ष के अनुभव ने यह स्पष्ट कर दिया था कि इसमें सुधार करने की आवश्यकता है। दूसरे भारत सरकार ने औद्योगिक झगड़ा (एपेलेट ट्राइब्यूनल) कानून स्वीकार किया, जिसके कारण भी परिवर्तन आवश्यक हो गया। १५ मार्च, १९५१ को एक नया आदेश

निकालकर औद्योगिक झगड़ों के निपटारे के लिये समझौते और अभिनिर्णय की एक नई व्यवस्था स्थापित कर दी गई। इस आदेश के द्वारा समझौता बोर्डों और एक राज्य औद्योगिक ट्राइब्यूनल की स्थापना की गई।

पहले प्रादेशिक समझौता बोर्ड केवल कुछ उद्योगों के झगड़ों का ही निपटारा करते थे, परन्तु नई व्यवस्था के अनुसार प्रादेशिक समझौता अधिकारी के पास शिकायत आने पर सभी उद्योगों के लिए समझौता बोर्ड बनाए जा सकते हैं। पहले के प्रादेशिक समझौता बोर्ड न्यायिक संस्था थे, जिसे मुकदमे की जाँच करने और निर्णय देने का अधिकार प्राप्त था, परन्तु यह अधिकार नए बोर्डों को प्राप्त नहीं है। पहले के प्रादेशिक बोर्ड अभिनिर्णय देते थे, परन्तु नए बोर्डों का काम केवल दोनों पक्षों में समझौता कराना है, निर्णय देने का उन्हें अधिकार नहीं। जहाँ पहले के प्रादेशिक बोर्डों को समझौता न हो सकने पर स्वयं निर्णय देने का अधिकार था, वहाँ अब समझौता न होने पर बोर्ड सरकार के पास केवल अपनी रिपोर्ट भेज देते हैं, जो उस पर विचार कर १५ मार्च, १९५१ के राज्यादेश के अन्तर्गत अभिनिर्णायक नियुक्त कर देती है।

समझौता बोर्ड अब किसी प्रार्थनापत्र के आने पर झगड़े को विचारार्थ स्वीकार कर लेता है और जाँच प्रारम्भ कर देता है। बोर्ड को ३० दिन के भीतर अपनी जाँच समाप्त कर एक रिपोर्ट देनी होती है। इसी प्रकार अभिनिर्णायक को भी ४० दिन के भीतर अपना निर्णय दे देना होता है। इससे मुकदमे जल्द निपट जाते हैं।

श्रमिक और मालिक संघ

औद्योगिक संबन्धों का इतिहास श्रमिक संघों, मालिकों के संघों और त्रिदल-सम्मेलनों के वर्णन के बिना पूरा नहीं हो सकता। जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं, १९४७ के पूर्व तक श्रमिक संघों का विकास महत्वपूर्ण पैमाने पर नहीं हो सका था, १९४६-४७ से श्रमिक संघों की संख्या में वृद्धि प्रारम्भ हुई। यह संख्या १९४६-४७ में पूर्ववर्ती वर्ष की संख्या ८१ की तुलना में बढ़कर २११ हो गई। इण्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस को सरकार ने मजदूरों की प्रतिनिधि संस्था के रूप में मान्यता दी और उससे संबद्ध संघों को कर्म-समितियों में अपने प्रतिनिधि नियुक्त करने का अधिकार प्राप्त हो गया।

मालिकों की ओर से 'उत्तरी भारत मिल-मालिक संघ' और 'इण्डियन शुगर सिंडीकेट' ने प्रतिनिधित्व किया और सरकार मालिकों-मजदूरों के संबन्धों के सुधार की दिशा में उनके द्वारा किये गए विभिन्न प्रयत्नों में सहयोग देती रही।

त्रिदल-सम्मेलन

अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संस्था और केन्द्रीय सरकार की देखादेखी उत्तर प्रदेशीय सरकार ने मालिकों, मजदूरों और सरकार के त्रिदलीय सहयोग के आधार पर कानपुर के लिए १९४७ की द्वितीय तिमाही में एक त्रिदल श्रम-सम्मेलन की स्थापना की। इस सम्मेलन को प्राप्त सफलता देखकर उ०प्र० श्रम त्रिदल सम्मेलन मई, १९४८ में बुलाया गया। तब से सरकार ने अस्थायी और स्थायी ढंग पर अनेक त्रिदल सम्मेलन आयोजित किए। अभी सितम्बर (१९५२) में नैनीताल में राज्य श्रम त्रिदल सम्मेलन की बैठक रेशनलाइजेशन, त्योहारों की छुट्टियों और बैठकी की अवधि के लिए क्षतिपूर्त्ति के भुगतान के सरूपीकरण (स्टैण्डर्डाइजेशन) के प्रश्न पर विचारार्थ हुई। जब-तब सरकार ने सूती वस्त्र उद्योग और चीनी उद्योग के लिए भी विशेष त्रिदल सम्मेलन बुलाए हैं।

चीनी उद्योग के महत्व को देखते हुए सरकार ने इस उद्योग के मजदूरों की दशा तथा मालिक-मजदूर संबन्धों के सुधारने के लिए प्रायः विशेष प्रयत्न किया है। यह बताया जा चुका है कि चीनी के कारखानों में आपसी मतभेदों और झगड़ों को दूर करने के लिए बराबरी के आधार पर विचारार्थ कर्म-समितियों

(शेष पृष्ठ ४८ पर)
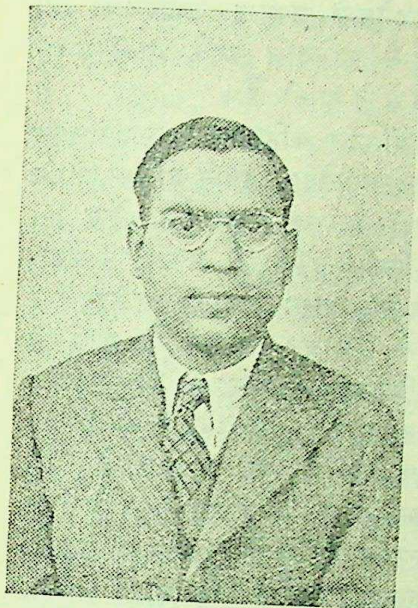
श्रमिकों का नियोजन और प्रशिक्षण

श्री रतनस्वरूप

बेकारी एक अत्यन्त जटिल समस्या रही है, जिसका सामना संसार के विभिन्न देशों को गत कुछ वर्षों में बराबर करना पड़ा है। भारत भी इसका अपवाद नहीं रहा और उसे इस समस्या के तीव्रतम रूप का सामना करना पड़ा है। साधारण अनुमानों के अनुसार १६३६ के पहले बेकारों की संख्या ४ से ५ करोड़ तक थी। महायुद्ध के समय भारत में पूर्ण नियोजन था। बेकारी एक विरल बात हो गई थी, परन्तु ये असाधारण दशाएँ थीं और इनके सदा बने रहने की आशा नहीं की जा सकती थी। १६४६ में युद्ध की समाप्ति होने पर दूसरे देशों के समान, भारत को भी युद्ध के उन कर्मचारियों को पुनः काम दिलाने की समस्या का सामना करना पड़ा, जो अब बेकार हो गए थे। इसके लिए नियोजन-संस्थाओं का क्षेत्र विस्तृत कर दिया गया और उनकी संख्या बढ़ा दी गई। ये नियोजन संस्थाएँ १६४३-४४ में नेशनल सर्विस लेबर ट्राइब्यूनल के अधीन और निर्देशन में इसलिए स्थापित की गई थीं कि युद्ध के उद्देश्यों के लिए टेक्निकल व्यक्तियों का अभाव अनुभव न होने पाए। श्रम-मंत्रालय के अन्तर्गत 'पुनर्वास एवं नियोजन के महा-निर्देशक का एक कार्यालय' खोला गया और उपर्युक्त नियोजन-संस्थाएँ उसके अधीन कर दी गईं। प्रशासनीय सुविधा के विचार से सारे देश को विभिन्न प्रदेशों में विभाजित किया गया, जिसमें से प्रत्येक में एक प्रादेशिक और अनेक उप-प्रादेशिक नियोजन-संस्थाएँ खोली गईं। परन्तु इन संस्थाओं का कार्य केवल युद्ध के बेकार कर्मचारियों और कुछ टेक्निकल कामकरों तक ही सीमित था। १६४७ में जब देश का विभाजन हुआ और हजारों की संख्या में लोग बे-घरबार और बेकार हो गए तब उनके पुनर्वास और नियोजन के कार्य में ये संस्थाएँ बहुत सहायक और उपयोगी सिद्ध हुईं। इस समय इन संस्थाओं को

सभी प्रकार के काम ढूँढ़नेवालों के लिए खोल दिया गया और इस प्रकार इन्होंने वास्तव में "राष्ट्रीय नियोजन-सेवा" का रूप ले लिया।

समय बीतने पर जब ये नियोजन-संस्थाएँ प्रसिद्ध हो गईं और इन्हें बढ़ती हुई संख्या में क्या सरकारी और क्या निजी—दोनों प्रकार के सेवायोजकों का सहयोग प्राप्त हुआ तब कुछ प्रदेशों में जिला नियोजन संस्थाएँ भी खोली गईं। उत्तर प्रदेशीय सरकार के हार्दिक सहयोग के फलस्वरूप इस प्रदेश में २० 'जिला नियोजन संस्थाएँ' और ५ 'तहसील सूचना ब्यूरो' खोले गए। इससे "राष्ट्रीय नियोजन सेवा" सर्वसाधारण के और भी निकट हो गई। आज उत्तर प्रदेश में ३५ नियोजन-संस्थाएँ, अनेक उप-कार्यालय तथा 'आउट हाउसेज़' हैं, जो राज्य के विभिन्न भागों में रहनेवाले सेवा-योजकों और काम ढूँढ़नेवालों—दोनों ही की माँगों को पूरा करने में तत्पर हैं।

"राष्ट्रीय नियोजन-सेवा" का मुख्य कार्य काम पैदा करना नहीं, किन्तु ठीक काम के लिए ठीक व्यक्ति जुटाना है। यह कार्य देखने में उतना सरल और साधारण भले मालूम हो परन्तु वास्तव में यह अत्यन्त वैज्ञानिक और गूढ़ है। ठीक काम के लिए ठीक व्यक्ति जुटाना इस बात पर निर्भर करता है कि श्रम-शक्ति की जहाँ जैसी आवश्यकता हो, वहाँ उसे उसी रूप में जुटाया जा सके परन्तु भारतीय मजदूर अपने स्थान को छोड़कर काम के लिए अन्यत्र जाना पसन्द नहीं करते। इससे परिस्थिति में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। इस असंतुलन को दूर करने के लिए 'स्थान-रिक्तता और श्रम-संयोजन' (Vacancy and Labour Clearing) की प्रणाली का प्रारंभ किया गया है, जो सर्वथा वैज्ञानिक है। केन्द्रीय नियोजन समन्वयन (Co-ordination) कार्यालय केन्द्र में और प्रादेशिक नियोजन समन्वयन कार्यालय प्रदेशों में उन समस्त रिक्त स्थानों की सूचना प्रचारित करते हैं, जिनके लिए किसी एक नियोजन संस्था में उपयुक्त उम्मेदवार प्राप्त नहीं होते। यह सूचना देश की सभी नियोजन संस्थाओं में पहुँचती है और इस प्रकार वे देश के एक भाग में रहनेवाले उपयुक्त उम्मेदवारों को देश के दूसरे भाग में रहनेवाले उनके भावी सेवा-योजकों के सम्पर्क में ले आती हैं।

विभिन्न बाधाओं और कठिन नियोजन-परिस्थिति के होते हुए भी नियोजन-सेवा ने अपने थोड़े से जीवन में जो प्रगति की है, वह ध्यान देने योग्य है। सरकारी और निजी—दोनों ही प्रकार के सेवा-नियोजकों का सहयोग क्रमशः बढ़ता ही जा रहा है।

उत्तर प्रदेश में नियोजन-संस्थाओं के कार्य की एक महत्वपूर्ण विशेषता कानपुर में 'समूह और आकस्मिकता-निवारण योजना' (pool and de-casualisation scheme) की कार्यवाही है। यह योजना औद्योगिक श्रम के नियोजन को नियमित करने के लिए प्रारम्भ की गई है। १६४८ में लखनऊ में आयोजित त्रिदलीय सम्मेलन में एकमत से यह निर्णय किया गया था कि भर्ती की एक संगठित व्यवस्था के लिए और फाटक-भर्ती को रोकने के लिए उसे किसी संस्था के अधीन लाना आवश्यक है और नियोजन-संस्थाएँ ही उपयुक्त माध्यम थीं, जो दलालों और सीरदारों-द्वारा भरती के चलन में वर्तमान घूसखोरी, भ्रष्टाचार तथा पक्षपात के दोषों को दूर कर सकती थीं। ये सिफारिशें अन्त में सरकार द्वारा स्वीकार की गईं और प्रादेशिक नियोजन संस्था, कानपुर की अधीनता और देख-भाल में कानपुर के विभिन्न महत्वपूर्ण स्थानों में चार उप-कार्यालय खोले गये। यह सच है कि पूरी योजना नियोजन-संस्था और उत्तर भारतीय मिल-मालिक संघ के बीच हुए एक 'सम्मानित समझौते' पर आधारित है, फिर भी यह जानना बड़े गर्व का विषय है कि इस छोटी अवधि में योजना ने कानपुर के बड़े उद्योगपतियों में से अधिकांश का सहयोग प्राप्त कर लिया है। १६५१ में इस योजना की उपयोगिता का कैण्टूनमेण्ट बोर्ड और नगरपालिका ने पूर्णतया अनुभव किया और इस योजना के कार्यक्षेत्र में इन संस्थाओं की 'सफाई

सेवाओं' को भी सम्मिलित कर दिया गया। इस योजना के कार्यान्वित करने में विभिन्न बाधाओं के होते हुए भी, जिनमें आर्थिक कमी भी शामिल है, इस योजना ने उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। अक्टूबर, १९५२ तक ३०,१६१ समूह एवं आकस्मिकता-निवारित श्रमिकों को ८९,२२२ रु० ६ आने का व्यय कर काम दिलाया गया। इसका यह अर्थ हुआ कि एक उम्मेदवार को नियोजित करने में २·९ रु० का व्यय किया गया। संसार के प्रति व्यक्ति व्यय से इस प्रति व्यक्ति व्यय की तुलना अत्यन्त अनुकूल है।

पुनर्वास एवं नियोजन के महा-निर्देशक के कार्यालय की कार्यवाहियाँ नियोजन-सम्बन्धी सहायता देने तक ही सीमित नहीं हैं। एक ओर नियोजन के योग्य व्यक्तियों में बेकारी और दूसरी ओर विभिन्न उद्योगों में दक्ष श्रमिकों का अभाव होने से इस बात की पुष्टि होती है कि देश के नागरिकों के लिए नियोजन पाने की समस्या वर्तमान बुद्धिमान व्यक्तियों को विभिन्न टेक्निकल और व्यावसायिक कामों में प्रशिक्षण देने की समस्या से घनिष्ठतया सम्बन्धित है, क्योंकि इससे उनकी नियोजन की योग्यता बढ़ जायगी। इसे ध्यान में रखते हुए और यह भी अनुभव करते हुए कि औद्योगिक विकास के युद्धोत्तर-काल में भारत को टेक्निकल व्यक्तियों के अभाव का सामना करना होगा, भारत सरकार ने १९४४ में टेक्निकल प्रशिक्षण के सम्बन्ध में एक परामर्शदात्री समिति इसलिए नियुक्त की थी कि नागरिक उद्योग की शांतिकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए टेक्निकल प्रशिक्षण योजना में आवश्यक समायोजनों पर विचार किया जा सके। इसी समिति की सिफारिशों के अनुसार नियोजन-संस्थाओं की स्थापना के साथ ही नवयुवकों को समुचित प्रशिक्षण देने के लिए प्रशिक्षण योजना का भी प्रारम्भ किया गया। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय में युद्ध-टेक्नीशियनों के लिए जो अल्प अवधि की प्रशिक्षण-योजना आरम्भ की गई थी, वह वास्तव में कामकरों को एक व्यवस्थित ढंग से टेक्निकल-प्रशिक्षण प्रदान करने का श्रीगणेश था। ये प्रशिक्षण-केन्द्र शीघ्र ही विस्थापित व्यक्तियों और वयस्क नागरिकों को प्रशिक्षण देने के काम में सक्रिय भाग लेने लगे। आज कोई भी विश्वासपूर्वक कह सकता है कि ये प्रशिक्षण-केन्द्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं क्योंकि दक्ष मानव-शक्ति के अत्यधिक अभाव को दूर करने में सहायक होकर वे देश के आर्थिक विकास को अग्रसर करते हैं। वे भारत की राष्ट्रीय नियोजन सेवा के अविभाज्य अंग और अनुपम विशेषता हैं और प्रशिक्षण-योजना का उल्लेख किए बिना 'नियोजन सेवा' की स्पष्ट झाँकी पाना असंभव होगा। केवल इन्हीं प्रशिक्षण-योजनाओं के द्वारा ही देश की मानव-शक्ति का उपयोग देश के सर्वोत्तम आर्थिक हित के लिए किया जा सकता है। वास्तव में इन प्रशिक्षण-योजनाओं को नियोजन-हेतु प्रशिक्षण की एक दीर्घकालीन योजना का अंग समझा जाता है। इन प्रशिक्षण-सुविधाओं को नियोजन-अवसरों से सम्बद्ध करना है।

आज भारतीय संघ में ५२ टेक्निकल प्रशिक्षण केन्द्र और १० व्यावसायिक केन्द्र हैं। कृषि-सम्बन्धी उद्योग, कुटीर उद्योग और अन्य छोटे पैमाने पर चलनेवाले उद्योगों का विकास करने की दृष्टि से प्रशिक्षण के प्रति विशेष ध्यान दिया जा रहा है। उत्तरप्रदेश में निम्नलिखित व्यापारों में प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए १० टेक्निकल और ४ व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र हैं :—

१. लोहार	८. साइकिल के पुर्जों का निर्माण
२. कार्डिंग	९. जूते आदि का निर्माण
३. बढ़ई	१०. सूटकेसों का निर्माण
४. विद्युत् विशेषज्ञ	११. आयरमेन
५. विद्युत्-रोपण (Electroplating)	
६. फिटर	१२. पेंटिंग एवं सजावट
७. शीशे के काम	१३. छपाई की मशीन के आपरेटर

१४. ग्रीज़मेन	२०. रेडियो मेकेनिक
१५. हैण्ड कंपोजीशन	२१. कताई
१६. होज़री	२२. टर्नर
१७. मेकेनिक, आई०सी०ई०	२३. घड़ी सुधारनेवाले
१८. मोटर मेकेनिक	२४. बुनाई
१९. मोल्डिंग	२५. वेल्डिंग (गैस एवं विद्युत्)

व्यावसायिक कामों के सम्बन्ध में पाठ्यक्रम की अवधि केन्द्र में १८ महीने और उद्योग में ६ महीने अप्रेंटिस का काम करने अर्थात् कुल २४ महीने की है। व्यावसायिक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में यह अवधि १२ महीने की है। प्रशिक्षण की अवधि के समाप्त होने पर सफल शिक्षणार्थियों को काम पाने में सहायता दी जाती है।

शिल्पकारों के प्रशिक्षण के अलावा निर्देशकों और पर्यवेक्षी कर्मचारी-गण के प्रशिक्षण के लिए एक केन्द्रीय संस्था १९४८ में कोनी बिलासपुर (मध्यप्रदेश) में स्थापित की गई थी। जैसे ही प्रशिक्षण-योजना कार्यान्वित हुई, यह अनुभव किया गया कि प्रशिक्षित निर्देशकों की कमी है। शिक्षा देना एक कला है और उक्त केन्द्र में निर्देशकों को इसी कला के सम्बन्ध में निर्देशन दिया जाता है।

देश के आर्थिक, सामाजिक और औद्योगिक विकास के प्रसंग में पुनर्वास एवं नियोजन संगठन के भविष्य की विवेचना करने और उसके भावी स्वरूप के संबन्ध में प्रस्ताव करने के विचार से भारत सरकार ने ७ सदस्यों की एक समिति बनाई है। इस समिति को काफी अधिकार दिए गए हैं और श्री बी० शिवा राव, एम० पी० इसके अध्यक्ष नियुक्त हुए हैं। अन्य लोगों में श्रम-कमिश्नर, श्री ओंकारनाथ मिश्र भी इस समिति के एक सदस्य हैं। यह समिति यह भी विचार करेगी कि किस आधार पर विभिन्न प्रशिक्षण योजनाएँ जारी रखी जाएँ। आशा है कि समिति अपने विचार शीघ्र ही प्रकट करेगी।

उपर्युक्त तथ्यों और अंकों से किसी को भी संतोष नहीं हो सकता, होना भी न चाहिए। यह तो केवल प्रारंभ है। कहीं अधिक अभी करना है। इस संगठन को सफल बनाने के लिए जनता में और भी विश्वास तथा और भी अधिक रुचि उत्पन्न करनी होगी। देश की जनता में मानव-शक्ति कैसी और कितनी है, इसका पता लगाने के लिए राष्ट्रीय नियोजन सेवा को माध्यम बनाना चाहिए। सेवा-योजकों, कामकरों और सर्वसाधारण जनता इन सभी को अपना पूरा सहयोग देना होगा। यदि यह निश्चित हो जाय और 'नियोजन-सेवा' को कर्मचारी-गण तथा अन्य साधनों की दृष्टि से मजबूत बना दिया जाय तो यह सेवा इस देश की 'अल्प-नियोजन' और 'बेकारी' की समस्याओं को सुलझाने में महत्वपूर्ण भाग ले सकेगी।
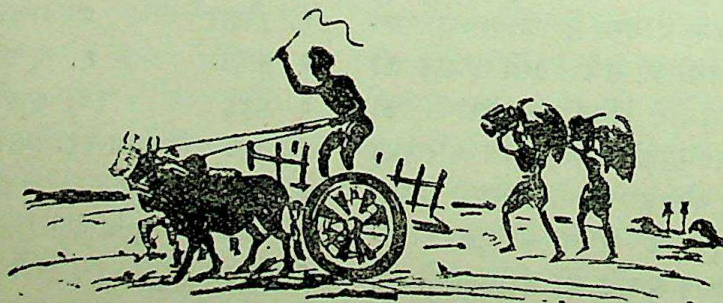
मजदूरों की सामाजिक सुरक्षा

❋

डा० जे० एन० अग्रवाल

भारतवर्ष के कामकरों के हितलाभ की योजनाओं के इतिहास में २४ फरवरी, १९५२ एक स्वर्णाक्षरों में लिखा जानेवाला दिन रहेगा। इस दिन प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने कामकरों की राज्य बीमा योजना का कानपुर में उद्घाटन किया। इस योजना से कारखानों में काम करनेवाले कर्मचारियों की बीमारी में, प्रसूतावस्था में और काम पर चोट लग जाने की हालत में आर्थिक लाभ मिलने की व्यवस्था की जा रही है।

साधारण रूप से कारखानों में काम करनेवाले कामकर अपनी स्त्री और बच्चों का पालन करने के लिये और अपने जीवन-निर्वाह के लिये अपनी तनख्वाह के बराबर मिलते रहने पर निर्भर रहते हैं और वे अपने साधारण खर्चों को उस आमदनी के अनुसार बना लेते हैं। लेकिन कठिनाई तब उपस्थित होती है जब काम पर जाने में असमर्थ होने में अथवा काम न मिलने के कारण उनकी आय बन्द हो जाती है। बीमारी, काम पर चोट लगना अथवा स्त्रियों के लिये बच्चा पैदा होना ऐसे मुख्य कारण हैं, जो कामकरों को काम पर जाने में असमर्थ कर देते हैं। अगर दुर्भाग्यवश किसी कामकर की काम करते समय चोट लग जाने से मृत्यु हो जाय, तो उसकी विधवा स्त्री तथा उसके बच्चों को देखनेवाला कोई नहीं रह जाता। आमदनी साधारणतया इतनी कम होती है कि उससे कुछ बचाकर रखना किसी भी मजदूर के लिये असम्भव-सा ही है। ऐसी हालत में काम पर जाने में असमर्थ होने से उसकी आमदनी बन्द हो जाने पर उसको बड़ी मुश्किल का सामना करना पड़ता है। एक तरफ तो उसकी आमदनी का रास्ता बंद हो जाता है और दूसरी तरफ बीमारी में खाने और दवा पर खर्च करना पड़ता है। अगर उसके पास अपनी बचत का थोड़ा-बहुत पैसा हुआ भी, तो वह जल्दी ही इलाज में खतम हो जाता है और फिर पैसे की कमी के कारण अपना इलाज अच्छी तरह

नहीं करा सकता है। उसकी बीमारी के ठीक होने में ज्यादा समय लगता है और उसको ज्यादा दिन काम से गैरहाजिर रहना पड़ता है थोड़े ही दिनों की बीमारी के बाद वह पैसे की कमी के कारण अपना इलाज भी अच्छी तरह नहीं करा पाता है और यदि बीमारी कुछ और समय बनी रही, तो पैसे की कमी के कारण उसके कुटुम्ब के लिये भूखों मरने की नौबत आ जाती है। ऐसी दशा में कर्ज लेने के अलावा उसके पास और कोई उपाय नहीं रहता। कर्ज बड़े ऊँचे ब्याज पर ७५ से १५० प्रतिशत और कभी-कभी ३०० प्रतिशत ब्याज की दर से मिलता है। कर्ज लेने पर ब्याज के चुकाने में ही उसकी आमदनी का काफी हिस्सा खतम हो जाता है और असली कर्ज तो उमर भर भी नहीं चुकाया जाता है। कर्ज बीमारियों के साथ-साथ बढ़ता ही जाता है।

दूसरे मुख्य-मुख्य देशों में, जहाँ व्यवसाय काफी उन्नति पर है और जहाँ बड़े-बड़े कारखाने हैं, वहाँ भी कामकरों को ऐसी मुसीबतों का सामना करना पड़ा था। इन देशों ने बहुत समय के अनुभव के बाद यही तय किया कि ऐसी मुसीबतों का सामना व्यक्तिगत रूप से नहीं किया जा सकता और कामकरों की आर्थिक सुरक्षा के लिये सामाजिक तरीका अधिक उपयुक्त है। बहुत से उपायों को अपनाने के बाद उन्होंने सामाजिक बीमा की व्यवस्था का निर्माण किया। इस व्यवस्था की मुख्य-मुख्य बातें इस प्रकार हैं—

१—समाज के जिस अंग पर ऐसी योजना लागू की जाती है, उसके सभी आदमियों को एक संविधान के बंधन से उसमें शामिल होना पड़ता है।

२—योजना के खर्च की व्यवस्था के लिये एक केन्द्रीय फंड बनाना पड़ता है, जिसमें बीमायुक्त लोगों का ही चन्दा नहीं होता, वरन् मिल-मालिकों और सरकारों का भी चन्दा होता है, क्योंकि कामकरों की भलाई में उनकी भी भलाई होती है।

३—बीमायुक्त लोगों की बीमारी में अथवा चोट लग जाने की हालत में मुफ्त दवा मिलने और इलाज करने की व्यवस्था के साथ अपने और अपने कुटुम्ब के पालन के लिये उनकी अपनी औसत तनख्वाह (आमदनी) का कुछ हिस्सा आर्थिक हितलाभ के रूप में अलग से दिया जाता है।

४—हितलाभ की अनुचित माँगों को रोकने के लिये कुछ चन्दे की अथवा दूसरी शर्तों का व्यवस्था की जाती है।

भारतवर्ष में भी अब यह निश्चय कर लिया गया है कि कामकरों के आर्थिक संकटों को हल करने के लिये सामाजिक बीमे के तरीके को ही अपनाया जाय और कामकरों का राज्य बीमा कानून; जो सन् १६४८ में पास हुआ था, इस विषय की पहली योजना है। भारतवर्ष को इस बात का गर्व है कि वह इस विषय में दक्षिण एशिया में सबसे अग्रसर है।

कामकरों की राज्य बीमा योजना शुरू में तो उन कामकरों पर लागू हुई है, जो ऐसे कारखानों में काम करते हैं, जिनमें बिजली या किसी दूसरी शक्ति से काम लिया जाता है और जहाँ २० या उससे अधिक लोग काम करते हों और जिनकी मासिक आमदनी ४०० रु० से ज्यादा नहीं है। इस योजना में इस बात का कोई खयाल नहीं किया जाता कि वह कामकर किस तरह का काम करता है, उसकी उम्र क्या है और वह स्त्री है अथवा पुरुष। मौसमी कारखानों जैसे शक्कर के कारखानों पर यह लागू नहीं है। योजना में अभी नीचे लिखे पाँच हित-लाभ दिये जा रहे हैं :—

१ डाक्टरी फायदा (*हित-लाभ*)—कामकरों की राज्य बीमा डिस्पेन्सरियों में इलाज, अस्पतालों में मुफ्त इलाज और मुफ्त रहने का इन्तजाम, दवाइयाँ, मरहम-पट्टी, अथवा दूसरे सामान, जो इलाज के लिये जरूरी हो, मुफ्त दिये जाते हैं। बीमायुक्त स्त्रियों के लिये प्रसूतावस्था के पहिले और बाद का इलाज और बच्चा होने के समय डाक्टरी देखभाल का प्रबंध भी होता है। बीमारियों के रोकने के साधन भी अपनाये जायेंगे। बीमारी, बच्चा पैदा होने काम पर चोट लग जाने अथवा मृत्यु होने के डाक्टरी प्रमाण

पत्र मुफ्त दिये जाते हैं। इन सुविधाओं के सिवाय अगर किसी बीमायुक्त कामकर की हालत इतनी खराब है कि वह अपने इलाज के लिए राज्य बीमा डिस्पेंसरी में न जा सके तो राज्य बीमा डाक्टर उसके इलाज के लिये घर पर देखने जाते हैं।

ऊपर बताई हुई डाक्टरी सुविधाओं से यह साफ पता चलता है कि कामकरों की राज्य बीमा योजना में कामकरों के लिये डाक्टरी हितलाभ की जो व्यवस्था की गई है, वह आजकल कामकरों को मामूली रूप से मिलनेवाली सुविधाओं से कहीं अधिक ऊँचे दर्जे की है। शुरू में तो इस योजना में डाक्टरी हितलाभ की व्यवस्था सिर्फ कामकरों के लिये ही की गई है लेकिन इस बात का पूरा प्रयत्न किया जा रहा है कि ये सुविधायें जल्दी-से-जल्दी उनके कुटुम्बियों को भी मिल सकें।

२. *बीमारी में आर्थिक हितलाभ*—किसी भी बीमायुक्त कामकर को बीमार होने पर राज्य बीमा डाक्टर से प्रमाण-पत्र मिलने पर और चन्दे की शर्त पूरी कर देने पर उसकी रोजाना आमदनी के लगभग आधे हिस्से की दर से आर्थिक हितलाभ दिया जाता है। यह लाभ उसको किसी ३६५ दिन के निरन्तर काल में ५६ दिन तक मिल सकता है।

३. *मातृका हितलाभ*—बीमायुक्त स्त्रियों को प्रसूतावस्था में १२ हफ्ते—६ सप्ताह बच्चा होनेके पहले और ६ सप्ताह बच्चा होने के बाद—तक मातृका हितलाभ १२ आने प्रतिदिन या उनकी औसत रोजाना आमदनी का आधा हिस्सा, जो भी अधिक हो, उसके हिसाब से मिलता है।

४. *काम पर चोट लग जाने के कारण अपाहिज होने पर दिया जाने वाला आर्थिक हितलाभ*—यह हितलाभ कामकर के अस्थायी अपाहिज होने पर उसको औसत रोजाना आमदनी के लगभग आधे हिस्से की दर से, जब तक वह अपाहिज रहता है, मिलता रहेगा। इसके लिये समय की कोई अवधि नहीं है। स्थायी रूप से पूर्ण अपाहिज होने पर उसको जिन्दगी भर पेंशन के रूप में आर्थिक हितलाभ उसकी औसत दैनिक आय के लगभग आधे के बराबर मिलता रहेगा। स्थायी रूप से अपूर्ण अपाहिज होने पर उसके हितलाभ की दर उसके काम करने की शक्ति की कमी के अनुसार है।

५. *आश्रितों को आर्थिक हितलाभ*—काम पर चोट लग जाने के कारण कामकर की मृत्यु हो जाने पर उसकी विधवा या विधवाओं को जिन्दगी भर या दूसरी शादी करने तक पेंशन मिलेगी और उसके बच्चों को १५ साल की उम्र तक और अगर वे पढ़ रहे हैं तो १८ वर्ष की उम्र तक हितलाभ मिलेगा। विधवा या विधवाओं अथवा बच्चों को जो पेंशन मिलेगी, उसका कुल जोड़ कामकर की औसत रोजाना आमदनी के आधे हिस्से से अधिक नहीं होगा। कामकरों की राज्य बीमा योजना में जो हितलाभ कामकरों को काम पर चोट लग जाने के कारण मिलेंगे, वे कर्मचारियों के मुआवजा कानून से ज्यादा उदार हैं। कर्मचारियों के मुआवजा कानून में कामकरों को चोट लगने के कारण अस्थायी अपाहिज होने पर पहले सात दिनों तक कोई आर्थिक हितलाभ नहीं मिलता है और उसके बाद भी हित-लाभ की अवधि ५ साल तक है, लेकिन राज्य बीमा योजना में उनको चोट लगने के पहले दिन से हित-लाभ मिलने लगता है और जब तक अपाहिजपन रहे तब तक मिलता रहेगा। इसके सिवाय कर्म-चारियों के मुआवजा कानून में स्थायी रूप से अपा-हिज होने पर या काम पर चोट लग जाने के कारण मौत होने पर मुआवजे का पैसा एकमुश्त रकम में मिलता है जिससे न अपाहिज कामकर को और न उसके आश्रितों को ही आर्थिक सुरक्षा मिलती है।

इस योजना को चलाने की आर्थिक व्यवस्था कामकरों और मिल-मालिकों के चंदे तथा केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों की सहायता से की गई है। कामकरों का चन्दा उनके वेतन के २ प्रतिशत से भी कम है लेकिन मिल-मालिकों का चन्दा कामकरों के वेतन-बिल के ४॥ प्रतिशत के लगभग है। जब तक राज्य बीमा योजना देश के सभी भागों में लागू नहीं

हो जाती, तब तक कामकरों से चन्दा तो उन्हीं जगहों में लिया जायगा, जहाँ योजना को लागू किया जा रहा है, लेकिन मिल-मालिकों का चन्दा देश के सभी कारखानों से लिया जा रहा है। अभी इस चन्दे की दर उनके कुल वेतन के खर्च के १। प्रतिशत के हिसाब से उन जगहों में लगाई गई हैं, जहाँ पर यह योजना लागू है और ३/४ प्रतिशत के हिसाब से उन जगहों में, जहाँ यह योजना अभी लागू नहीं है। केन्द्रीय सरकार योजना के प्रबन्ध के खर्च का २/३ हिस्सा दे रही है और प्रान्तीय सरकार इलाज पर जो खर्च हो रहा है, उसका १/३ हिस्सा देगी। हिसाब लगाने से यह मालूम पड़ता है कि कामकरों का चन्दा योजना के खर्च का लगभग २० प्रतिशत ही है, लेकिन योजना के फायदे उनके सिवाय और किसी को भी नहीं मिलते हैं। योजना के हितलाभों पर जो खर्च होगा, उसका मुख्य भाग मिल-मालिकों या सरकार को सहना पड़ेगा।

कामकरों के राज्य बीमा कारपोरेशन में, जो इस योजना को चलाने का इन्तजाम कर रहा है, केन्द्रीय सरकार, प्रान्तीय सरकारों, मिल-मालिकों, कामकरों, पार्लियामेन्ट और डाक्टरों के प्रतिनिधि हैं। कारपोरेशन की एक स्टैंडिंग कमेटी है, जो उसकी तरफ से योजना के चलाने का इन्तजाम करती है और एक बीमारी हितलाभ कौंसिल है, जो इलाज-सम्बन्धी बातों में कारपोरेशन को सलाह देती है। यह भी विचार है कि कारपोरेशन के प्रान्तीय और स्थानीय दफ्तरों के साथ-साथ प्रान्तीय बोर्ड और स्थानीय कमेटियाँ बना दी जायँ, जिनमें भी कामकरों और मिल-मालिकों के प्रतिनिधि रक्खे जायँ। इस प्रकार योजना के प्रबन्ध में कामकरों को अपने विचार प्रकट करने का पूरा अवसर दिया गया है। एक रीजनल बोर्ड बनाया गया है, जिसके प्रधान श्री ओंकारनाथ मिश्र, श्रम कमिश्नर, उत्तर प्रदेश हैं। उसमें डिप्टी डाइरेक्टर, मेडिकल एण्ड हेल्थ सर्विसेज, यू०पी० तथा तीन प्रतिनिधि कामकरों के तथा तीन प्रतिनिधि मिल-मालिकों के भी हैं। कारपोरेशन के रीजनल डाइरेक्टर उसके सेक्रेटरी हैं।

कानपुर में मेडिकल बोर्ड की स्थापना भी हो गई है। इस बोर्ड के तीन सदस्य हैं :—

१—चेयरमैन डा० शिवपुरी
२—सदस्य सिविल सर्जन
३—सदस्य सुपरिन्टेन्डेन्ट, ला० लाजपत राय चिकित्सालय, कानपुर।

इस बोर्ड का कार्य "स्थायी असमर्थता" के विषय में अपना निर्णय देना है।

झगड़ों तथा दावों का निर्णय करना

कामकरों की बीमा अदालत की स्थापना—प्रान्तीय सरकार ने सरकारी गजट ७२१(एल-एल)/१८-५२० (एल-एल)-४६, ता० ८—४—५२ में प्रकाशित विज्ञप्ति द्वारा कानपुर रीजन के लिये कामकरों की "बीमा अदालत" स्थापित की है। इसके वर्तमान जज श्री असगर अली शाह हैं। इस अदालत में कारपोरेशन या कर्मचारी सम्बन्धी विवादवाले सारे प्रश्नों का निपटारा कराया जा सकता है। कामकरों की बीमा अदालत के सामने प्रार्थना-पत्र द्वारा अभियोग दायर होंगे।

'कामकरों की राज्य बीमा योजना' भारतवर्ष में सामाजिक बीमे की पहली योजना है। भारतवर्ष एक बहुत बड़ा देश होने के कारण यह तय किया गया है कि इस योजना को देश के भिन्न-भिन्न हिस्सों में अलग-अलग समय में लागू किया जाय। यह योजना शुरू में कानपुर और देहली में २४—२—५२ से लागू की गई है।

कानपुर में यह योजना लगभग २०३ कारखानों में लागू हो गई है, जिनमें ८०,००० से अधिक आदमी काम करते हैं। कानपुर में १३ डिस्पेन्सरियाँ बीमारी के इलाज के लिये और ११ स्थानीय दफ्तर आर्थिक हितलाभ देने के लिये स्थापित किये गये हैं। ये डिस्पेन्सरियाँ और दफ्तर इस प्रकार चुने गये हैं कि कानपुर के अलग-अलग हिस्सों में रहनेवाले

(शेष पृष्ठ ५२ पर)

अभी देर नहीं हुई,

श्री महेश प्रसाद विद्यार्थी

आप जो इस लेख को पढ़ रहे हैं, मैं इसे कानपुर जाते समय ट्रेन में बैठा-बैठा लिख रहा हूँ। मैं समझता था कि अब बहुत देर हो गई और मेरा लेख समय के अन्दर नहीं पहुँच सकेगा, क्योंकि मुझसे ५ तारीख के पहले ही इसे माँगा गया था और आज ११ हो रही है पर कल ही श्री रमादत्त शुक्ल ने मुझसे कहा कि 'अभी बहुत देर नहीं हुई, अब भी समय है। आप कानपुर जा रहे हैं, अतः वहीं अपना लेख देते आयें" और मैंने 'अच्छा' कह दिया था। अतः अब इसे देने के लिये मैं बचन-बद्ध हूँ और इसीलिये इसे ट्रेन में ही लिखना आरम्भ कर दिया है। सोचा, शायद कानपुर में लिखने का अवकाश न मिल पाये, क्योंकि वहाँ मुझे एक ही दिन ठहरना है और अब भी यदि वहाँ जाकर उन्हें लेख न दिया तो बात जायेगी। अतः मैं भी जो यह इरादा कर चुका था कि 'अब लेख नहीं देना है',
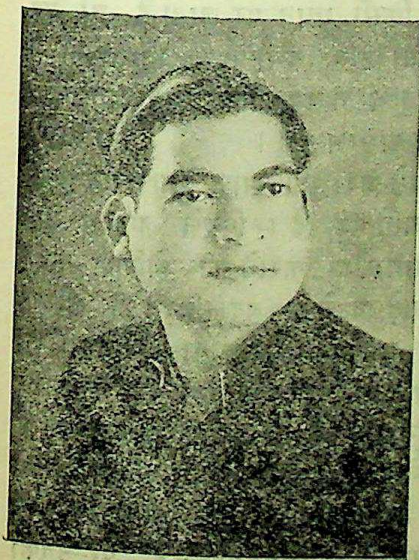
औद्योगिक झगड़ों के निपटारे की आवश्यकता अनुभव कर जिस समझौता-व्यवस्था को देश में प्रचलित किया गया है, उसके पूर्ण सफल होने में एक मुख्य बाधा यह रही है कि मिल-मालिकों में देने की भावना और कामकरों में समझौते की प्रवृत्ति उतनी नहीं पाई जाती, जितनी कि एक उत्तम और स्थायी समझौते के लिए आवश्यक है। प्रस्तुत लेख में अत्यन्त रोचक तथा हृदयग्राही शैली में उक्त तथ्य पर प्रकाश डाला गया है।

अपने इरादे को बदल कर यह नया इरादा कर रहा हूँ कि 'नहीं, अब तो लेख देना ही है; अब उनकी इच्छा मेरी इच्छा बन गई है' और यहीं पर मेरे और उनके बीच एक समझौता हो गया है।

उन्होंने कहा था कि आप के लिये 'समझौता-पद्धति की प्रगति' विषय चुना गया है। मैंने पूछा था कि 'क्या और किसी विषय पर नहीं लिख सकता?' उन्होंने कहा, 'क्यों नहीं, आप जिस विषय पर चाहें, लिख सकते हैं।' वहीं मेरे मन ने जबाब दिया 'यह व्यक्ति कितना उदार है, जो इतनी जल्दी मेरी बात मान गया। अब तो मैं समझौता-पद्धति पर ही लिखूंगा।' पर ऊपर से 'धन्यवाद' कह कर चुप रहा और अब बिना उनके कहे उसी विषय पर लिख रहा हूँ, जिस पर लिखने को उन्होंने पहले इशारा किया था और यही हमारे दोनों के बीच बिना कुछ कहे-सुने समझौता हो गया है, जिसे दूसरा पक्ष अभी जानता भी नहीं है। उनकी इतनी बात ने कि 'अभी देर नहीं हुई, अब भी समय है, आप जरूर लिखिये', मेरे इरादे को बदल दिया है।

आदमी के इरादे इसी प्रकार बनते और बदलते हैं। जरूरत है बदलनेवाले की। तब क्या हमारे इरादों को बदलनेवालों की कमी है, जो अभी तक समझौता-पद्धति में वांछनीय प्रगति नहीं हुई? परन्तु क्या सचमुच हमारी प्रगति नहीं हुई? इस प्रश्न का आप क्या उत्तर देंगे? आप कहेंगे, 'यह खूब रहा, लिखने को तुम्हें कहा गया है..और प्रश्न मुझसे कर रहे हो! शायद इसी प्रकार प्रश्नोत्तर में लेख पूरा कर देना चाहते हो!'

चलिए, मैं आप से कुछ नहीं पूछूँगा। जब समझौते के ऊपर लेख लिखने बैठा हूँ तो समझौते की प्रवृत्ति को भी नहीं छोड़ूँगा। अतः आपसे भी समझौता ही कर लूँगा। आप चाहते हैं कि मैं ही उत्तर दूँ, मैं ही प्रश्न पूछूँ..अच्छा, दोनों काम मैं ही करूँगा।

हाँ, तो मैंने पूछा था कि 'क्या सचमुच समझौते की पद्धति में कोई वांछनीय प्रगति नहीं हुई?' उत्तर है: 'नहीं! जो हो सकती थी या जितनी होनी चाहिये थी, उतनी नहीं हुई।'

'किन्तु इसका कारण क्या है?'

'कारण यह है कि प्रगति तभी होती है जब हम एक दिशा की ओर चलना निश्चित कर लेते हैं और फिर आगे बढ़ते हैं। जैसे मुझे कानपुर जाना है, यह सोचकर मैं इलाहाबाद से चला हूँ और अब धीरे हो या जोरों पर, मेरी ट्रेन उसी ओर जा रही है यानी उस दिशा में मेरी प्रगति हो रही है, पर यदि मैं चौराहे पर खड़े होकर यही सोचता रहता कि कानपुर जाऊँ या मिर्जापुर और दस कदम स्टेशन की ओर आता और दस कदम वापस जाकर सोचता, क्या जरूरत है कहीं जाने-आने की.. इलाहाबाद ही कौन खराब जगह है, जो यहाँ से कहीं जाया-आया जाय। यहीं क्यों न रहूँ, तो मेरी प्रगति किधर होती? घन्टे भर का समय नष्ट करके मैं जहाँ-का-तहाँ बना रहता!'

'लेकिन इलाहाबाद और कानपुर जाने-आने और समझौता-पद्धति में क्या सम्बन्ध है?'

'है..और बहुत गहरा है, समझने की कोशिश करने की जरूरत है। मेरा मतलब है कि जब एक स्थान से दूसरे किसी स्थान पर जाना है, तो यह निश्चित कर लिया जाय, तभी प्रगति हो सकती है और जब तक यह भी न तय किया गया, तब तक कोई प्रगति होनी असम्भव है।

अब मैं आपसे जरा साफ-साफ बताऊँगा कि हम अभी कितना आगे बढ़े हैं। पिछले लगभग सात सालों से हम समझौता कराने की कोशिश करते आये हैं पर झगड़े घटने के बदले बढ़ते ही जा रहे हैं। ऐसा नहीं हुआ कि समझौता हो जाता तो झगड़ा खत्म हो जाता और हमें किसी भी एक जगह इस काम से छुट्टी मिलती। इसका कारण यह है कि समझौते को ध्येय बनाकर तो हम कभी चले ही नहीं..'हम' से मेरा तात्पर्य है उन दो पक्षों से, जो हमारे पास समझौते के लिये आते हैं..पर उनकी

नीयत क्या रहती है ? क्या समझौते की नीयत लेकर किन्हीं दो झगड़ेवालों को तीसरे के पास जाने की जरूरत है ? नहीं है..और है तो उसी सीमा तक जहाँ दोनों मिलकर इतना ही समझौता कर लें कि 'चलो, हम दोनों मिलकर यह झगड़ा किसी तीसरे से तय करा लें'..पर जहाँ दोनों को समझौते के लिये बुलाया जाता है वहाँ वे लोग समझौते की इच्छा से नहीं आते। वहाँ तो वे आते हैं किसी तीसरे के सम्मुख आपस में लड़ने और जीतने की इच्छा लेकर और दूसरों को हरा देने की आशा से, और जहाँ एक दूसरे को हराना ही ध्येय है, वहाँ समझौते की क्या आशा की जा सकती है ? और इस दिशा में प्रगति भी क्या हो सकती है ?

सात साल पहले की बात जाने दीजिए, मैं आपसे कल की ही बात बताता हूँ..हाँ, एकदम कल की। दो पक्ष मेरे सम्मुख समझौते के लिए आए थे..आए क्या थे, बुलाए गए थे। एक पक्ष कहता था कि 'वेतन बहुत कम है, इसको दुगना कर दिया जाय।' दूसरा पक्ष कहता था, 'वेतन बहुत ज्यादा देना पड़ रहा है, इसीलिये घाटा हो रहा है और कारखाना बन्द करना पड़ेगा, अतः उसे घटाने की आज्ञा दी जाय।' फिर समझौता कैसे हो सकता था ? लगता तो यही है कि इस बात पर समझौता हो सकता था कि वेतन न बढ़ाया जाय न घटाया जाय, जहाँ है, वहीं रहने दिया जाय, पर इस बात पर भी समझौता नहीं हो सका। इसके कई कारण हैं परन्तु मुख्य कारण क्या है, यह बताता हूँ।

अगर मैं आपसे कहूँ कि 'देखिए, अब आगे मत पढ़िए और पढ़ना ही है तो पहले मुझे इस लेख का पारितोषिक दे दीजिये, तब पढ़िए' तो क्या आप मेरी बात मान लेंगे ? नहीं, आप मेरी बुद्धि पर हँसेंगे कि "श्रमजीवी" आपके पास है, लेख आपके हाथ में है और मैं आपसे बहुत दूर न जाने कहाँ हूँ। फिर भी मैं आपसे यह आशा रखता हूँ कि आप मेरी बात मानकर आगे नहीं पढ़ेंगे और पहले मुझे पारितोषिक भेजेंगे, फिर आगे देखेंगे। यह भी कहीं सम्भव है और यदि मैं आपके सामने ही होता और अखबार आपके हाथ से छीन लेता कि 'बस, आगे तभी पढ़ सकते हैं जब पहले मेरा पुरस्कार दें' तो भी शायद आप कहते, जाइए, ले जाइए अपना लेख, इस दो कौड़ी के लेख को पढ़ना ही कौन चाहता है।' पर मान लीजिए कि यह मेरा लेख न होता..यह कोई डी० एल० राय का नाटक होता, शरत्‌बाबू का उपन्यास होता या प्रेमचन्द्र जी की कहानी होती तो शायद आप इसे बीच में न छोड़ सकते और पुस्तक का मूल्य देकर भी उसे पढ़ने का अधिकार प्राप्त करने के लिये समझौता कर लेते।

अतः समझौता करने के लिये आवश्यक है दोनों पक्षों का स्वार्थ, दोनों पक्षों की इच्छा, दोनों की अपनी-अपनी जरूरत। और दोनों की जरूरत तभी हो सकती है जब दोनों एक दूसरे से कुछ लेने-देने की समता रखते हों। अगर आप ताकतवर हैं और मैं कमजोर, तो आप एक झटके में किताब मेरे हाथ से छीन लेंगे, फिर आप मुझे मूल्य क्यों देने लगे ? मूल्य तो तभी देंगे जब आपको यह विश्वास होगा कि बिना मूल्य दिये किताब नहीं मिल सकती।

तो क्या दोनों पक्ष बराबर नहीं है ? हाँ। मैं समझता हूँ कि दोनों पक्ष अभी बराबर नहीं कहे जा सकते। एक माँगता है, याचक है। दूसरा देता है अपने को दानी समझकर। फिर दान में मोल-भाव की गुंजाइश कहाँ ? और समझौते की चर्चा कैसी ? समझौता तो होता है बराबरवालों में। यहाँ तो "धन" और "ऋण" का अन्तर है।

कई बार मुझसे सबल पक्ष ने पूछा है कि किस कानून से उनसे किसी माँग-विशेष को पूरा करने के लिये कहा जा रहा है ? अर्थात् वह जानना चाहता है कि किसी माँग के पीछे कोई कानून की ताकत भी है या यों ही ? कानून होगा तो देंगे, नहीं तो नहीं देंगे अर्थात् पहले कानून बनवाने चाहिये, फिर माँग रखनी चाहिये। पर कानून कौन बनवा सकता है ? क्या किसी निर्बल के बनाये कानून बने हैं? कानून भी तो बहुमत-द्वारा ही बनते हैं या किसी "डिक्टेटर"

द्वारा। कानून के पीछे भी शक्ति का हाथ छिपा है, पर फिर भी कानून निर्बल की रक्षा करता है। क्यों? क्योंकि शक्ति हमेशा किसी एक के पास नहीं रह सकती। इस परिवर्त्तनशील संसार में शक्ति भी अपना स्थान बदलती रहती है। अतः शायद शक्तिशालियों ने भी यही सोचकर निर्बलों की रक्षा के लिये भी कानून बनाये होंगे कि क्या मालूम किसी दिन कहीं निर्बल न हो जायँ।

सबसे पहला कानून बना होगा किसी को मारने के खिलाफ, क्योंकि कोई भी नहीं चाहता कि वह दूसरे के हाथ मारा जाय। इस पर सब एक मत होंगे। इसीलिये मारने के जुर्म पर फाँसी की सजा रखी गई।

लेकिन मैं पूछता हूँ कि मनुष्य ने ऐसा क्यों किया? यदि आप मेरे इस प्रश्न पर हँसकर यह कहते हैं कि बीसवीं शताब्दी में ऐसा प्रश्न करके तुम समय और सभ्यता की प्रगति का अपमान करते हो, तो मैं आपसे कहूँगा कि आप कृपया यही उत्तर मेरे उन मित्रों को दीजिये, जो आए दिन मुझसे यह पूछा करते हैं कि भाई साहब, कारखाना मेरा, मैंने उसमें आदमी रखे हैं। मुझे अधिकार है, जिसे चाहूँ रखूं, जिसे चाहूँ निकालूँ, जब तक चाहूँ चलाऊँ, जब चाहूँ बन्द करदूँ और जितना ठीक समझूं, उतना वेतन दूँ। आप लोग बीच में क्यों कूद पड़ते हैं कि इसे गलत निकाला, उसे वेतन कम दिया या कारखाना बिना इजाजत क्यों बन्द कर दिया?

उनसे आप कहिये कि शरीर आपका है, जान आपकी है, सरकार को क्या पड़ी, जो आपको यह अधिकार भी नहीं कि जब चाहें आप एक को दूसरे से अलग कर दें या जिसे आप अपनी शक्ति से जंगल के हाथी की तरह अपने पैरों से कुचल सकते हैं, उसे न कुचलने दे। आपकी शक्ति-प्रयोग पर यह प्रतिबन्ध क्यों? तब शायद उनका आपके साथ आसानी से समझौता हो सके। पर मुझसे ऐसे पक्षों का समझौता करने में दिक्कत पड़ती है, जब एक पक्ष तो अपनी शक्ति में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं होने देना चाहता और दूसरा कुछ भी शक्ति न रखते हुये भी यह आशा रखता है या इच्छा करता है कि अलीबाबा और चालीस चोरों की कहानी की तरह "दरवाजा खुल" कहते ही कारखानेदारों के खजाने के दरवाजे उनके लिये खुल जायँ।

तब जहाँ एक ओर मैं कारखानेदारों से—सबल पक्ष से—यह कहता हूँ कि कानून के लिए ही प्रतीक्षा मत करो, कानून बनेगा तब तो देना ही होगा, तब कोई माँगने थोड़े ही आयेगा, तब तो कानून की शक्ति से वही सब चीजें, जो आज माँगकर प्राप्त की जा रही हैं—छीन ली जायँगी। तब उन्हें देकर किसी पर अहसान नहीं दिखाया जा सकेगा, जो आज हो सकता है कि दिखाया भी जाय और माना भी जाय, वहाँ दूसरे पक्ष से भी यह कहता हूँ कि जब माँगते हो तो जो मिले, वही ले लिया करो और जो नहीं मिलता, उस पर बिगड़ो मत। यह सोचो कि उसका भी क्या दोष है, जो तुम्हारी माँगें तुम्हारी ही इच्छानुसार पूरा नहीं कर देता। आखिर, जब तुमको उसकी इच्छा की परवाह नहीं, तो वह तुम्हारी इच्छा की परवाह क्यों करे? हो सकता है कि वह भी एक दिन तुम्हारी ही तरह 'मुसीबतजदा' रहा हो और अपने कठिन परिश्रम एवं धैर्य से आज उसने यह हैसियत हासिल की हो, जो तुमको उसके आगे यों झुकाती है। फिर तुम उससे यह आशा क्यों करो कि वह तुम्हें केवल तुम्हारे कहने से ही मखमल के गलीचे पर बैठा लेगा? अपने को इस योग्य बनाओ कि वह तुमसे स्वयं अपने पास आने का अनुरोध करे, अपने में वह हुनर पैदा करो, वह कला, वह शक्ति उपजाओ कि तुम्हारी योग्यता एवं शक्ति के आगे सिर झुका दे। योग्यता एवं हुनर की सब जगह कद्र होती है। कद्र करनेवालों की कमी नहीं है पर कद्र करने योग्य हुनर तो सीखो:

लगी चहकने जहाँ भी बुलबुल, हुआ वहीं जमाना पैदा,
कमी नहीं कद्रदां की अकबर, करे तो कोई कमाल पैदा।

किन्तु सबल पक्ष से मुझे एक बात और कहनी

(शेष पृष्ठ ५६ पर)

[प्रस्तुत लेख में सुरक्षा-समितियों की आवश्यकता और महत्व पर जानकारीपूर्ण प्रकाश डाला गया है। इसमें सन्देह नहीं कि उत्पादन में वृद्धि करने और दुर्घटनाओं से होने वाली भारी हानि को बचाने के लिए औद्योगिक प्रतिष्ठानों में सुरक्षा समिति का होना अत्यन्त आवश्यक है। आशा है, 'श्रमजीवी' के पाठक ध्यानपूर्वक इस लेख को पढ़ेंगे और इससे समुचित लाभ उठायेंगे।]

सुरक्षा समितियाँ

श्री गुरुदत्त विश्नोई

देश की आधुनिक औद्योगिक प्रगति से सम्बन्धित व्यक्तियों के लिए यह आवश्यक है कि वे सुरक्षा के महत्व को समझें। हर प्रकार के काम में कुछ-न-कुछ परेशानी होती है, और हर अनियन्त्रित परेशानी के फलस्वरूप उसके अनुपातानुसार मनुष्य को चोट पहुँचती है। परन्तु यदि सुरक्षा

की ओर समुचित ध्यान रखा जाय तो प्रायः सभी प्रकार की दुर्घटनाओं से बचाव हो सकता है। इसके लिये उद्योगालय के प्रबन्ध विभाग विशेष रूप से उत्तरदायी हैं, क्योंकि नीति और व्यवस्था-सम्बन्धी समस्त अधिकार उन्हींके हाथ में होते हैं और उन्हें ही सुरक्षा के सम्बन्ध में भी क्रियाशील होना आवश्यक है।

दुर्घटनाओं को रोकने लिए प्रबन्धकों को निम्नलिखित कुछ आवश्यक उपाय अवश्य काम में लाने चाहिये :

(क) औजारों तथा काम करने की अन्य सामग्रियों जैसे मशीनरी इत्यादि को सुरक्षित रूप में प्रस्तुत करना,

(ख) सभी मशीनों को उपयुक्त आड़बन्दों से सुरक्षित करना,

(ग) कोई भी नई मशीन या सामग्री तब तक व्यवहार में न लाई जाय, जब तक कि सुरक्षा के सम्बन्ध में पूरा विचार न कर लिया जाय,

(घ) सुरक्षा का ध्यान रखते हुए सभी क्रियाओं और कार्यों को संयोजित तथा व्यवस्थित करना,

(ङ) बचाई जाने योग्य दुर्घटनाओं का पता लगाने के लिए निरीक्षण-व्यवस्था रखना,

(च) पर्यवेक्षण-कार्य में सुरक्षा का ध्यान रखने वाले व्यक्तियों को नियोजित करना,

(छ) श्रमिकों को इस प्रकार का प्रशिक्षण और निर्देशन देना कि वे सुरक्षापूर्ण ढंग से काम करें और अपनी तथा अपने साथियों की सुरक्षा के लिए वास्तविक रूप से सचेष्ट रहें,

(ज) हर दुर्घटना की इस दृष्टि से जाँच करना कि वैसी दुर्घटना को पुनः होने से कैसे रोका जाय,

(झ) चोट-सम्बन्धी सभी घटनाओं की पूरी सूचना उचित अधिकारियों को तुरन्त देना।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि काम करने की जगहों में समुचित व्यवस्था करने की जिम्मेदारी प्रबन्धकों पर ही है और वे उन्हें सुरक्षा के नियमों के अनुकूल बनाये रखने में समर्थ भी हैं। दुर्घटनाओं का रोकना हर प्रकार से लाभदायक है, क्योंकि उन्हें रोकने में जो खर्च होता है, उससे कहीं अधिक खर्च दुर्घटना होने पर होता है। आधुनिक युग में अधिक उत्पादन-प्रणाली के सुरक्षा से सम्बन्धित नियमों का समझ लेना आवश्यक है। उत्पादन की वृद्धि सुरक्षा एवं सुव्यवस्थित योजना पर आश्रित है। दुर्घटना अव्यवस्थित योजना तथा काम के गलत तरीके के परिणामस्वरूप होती है। अतः यह स्पष्ट है कि पूर्ण सुरक्षा के नियमों के पालन से उत्पादन की अभिवृद्धि में अधिक सफलता मिलती है।

जहाँ तक सुरक्षा का सम्बन्ध है, प्रबन्धकों के एक बार भी अपने उत्तरदायित्व को समझ लेने पर वांछित फल प्राप्त करने के लिए श्रमिकों का सहयोग आवश्यक हो जाता है और इसलिए सुरक्षा समितियों का बनाना आवश्यक है, जो कि न केवल ऐसा साधन होगा जिसके द्वारा श्रमिकों के सुरक्षा-सम्बन्धी सुझाव प्रबन्धकों को प्राप्त होंगे, वरन श्रमिक यह भी प्रदर्शित करेंगे कि सुरक्षा का उत्तरदायित्व श्रमिकों तथा प्रबन्धकों दोनों पर ही है और दोनों ही के लिए महत्वपूर्ण है। यह दायित्व केवल दोनों के सहयोग से ही ठीक ढंग से पूरा किया जा सकता है। इसीसे समिति का पहला काम दुर्घटनाओं को रोकने में सहकारी प्रवृत्ति को जगाना है।

सुरक्षा समितियों में प्रबन्धकों, पर्यवेक्षक-कर्मचारियों और श्रमिकों के प्रतिनिधि होने चाहिये। औद्योगिक प्रतिष्ठानों की यदि कोई चिकित्सा-सेवा हो, तो यथासम्भव उसका भी एक प्रतिनिधि उसमें रखा जाय। प्रबन्धकों और श्रमिकों के प्रतिनिधियों के अनुपात के सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम तो नहीं निर्धारित किया जा सकता, किन्तु श्रमिकों के प्रतिनिधि प्रबन्धकों के प्रतिनिधियों से कम नहीं होने चाहिये। वास्तव में औद्योगिक विकास-सम्पन्न देशों से यह विदित होता है कि सुरक्षा समितियाँ वहीं सफल हुई हैं, जहाँ उन समितियों में श्रमिकों का बाहुल्य रहा है। समिति का आकार उद्योगालय तथा उसके विभिन्न विभागों के आकार पर निर्भर है। यदि औद्योगिक प्रतिष्ठान बड़ा है, तो उसके हर विभाग में, जिसमें कम से कम २५ श्रमिक नियमित रूप से काम करते हों, एक सुरक्षा समिति नियुक्त की जानी चाहिये और एक केन्द्रीय सुरक्षा समिति होनी चाहिये, जिसमें विभागीय सुरक्षा समितियों द्वारा उनके निर्वाचित सदस्य हों।

सभी सम्बन्धित श्रमिकों द्वारा श्रमिकों के प्रतिनिधियों का चुनाव एक वर्ष या अन्य सुविधाजनक अवधि के लिए होना चाहिये। यह चुनाव इस ढंग से हो कि सभी योग्य श्रमिक समिति में बारी-बारी से काम कर सकें।

प्रबंधकों के प्रतिनिधि या तो पदेन सदस्य हों या प्रबंधकों द्वारा निर्वाचित कर्मचारी हों। वर्क्स इञ्जीनियर, कर्मचारी-प्रबंधक (Personnel Manager) या चिकित्साधिकारी पदेन सदस्य के रूप में समिति का कार्य कर सकता है। पर्यवेक्षक-कर्मचारियों का प्रतिनिधि या तो विभाग का फोरमैन हो या वैसा ही अन्य कोई अधिकारी।

सुरक्षा समिति की बैठक प्रति मास कम से कम एक बार होनी चाहिए और सभी बैठकों की कार्यवाहियों का उचित अभिलेख रखा जाना चाहिए।

उपर्युक्त समितियों से निम्नलिखित कर्तव्यों के पालन की आशा की जाती है :

(क) प्रतिष्ठान में होने वाली सभी दुर्घटनाओं के कारणों और परिस्थितियों पर विचार करना,

(ख) एक ही प्रकार की दुर्घटनाओं को पुनः होने से रोकने के लिए मालिक के पास सुझाव भेजना,

(ग) सुरक्षा और स्वास्थ्य के निमित्त प्रतिष्ठान और उसके सभी उपकरणों का समय-समय पर निरीक्षण करना,

(घ) सुरक्षा और स्वास्थ्य के सुधार-हेतु मालिक को उपयुक्त सुझाव देना और स्वीकृत उपायों के कार्यान्वित किए जाने और उनकी उपयोगिताओं पर दृष्टि रखना,

(ङ) प्रतिष्ठान में सुरक्षा और स्वास्थ्य-सम्बन्धी अधिकृत नियमों, निर्देशों आदि के पालन पर दृष्टि रखना।

(च) सुरक्षा और स्वास्थ्य की उन्नति के लिए सभी श्रमिकों का सहयोग पाने का प्रयास करना,

(छ) प्रतिष्ठान के सुरक्षा-नियमों के बनाने में भाग लेना,

(ज) प्रतिष्ठान में होने वाली दुर्घटनाओं के आँकड़ों का अध्ययन करना,

(झ) यह देखना कि सब नए श्रमिकों को सुरक्षा-सम्बन्धी समुचित प्रशिक्षण दिया और मार्ग-प्रदर्शन किया जा रहा है या नहीं,

(ञ) यह देखना कि प्रतिष्ठान में सभी सुरक्षा तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी अधिकृत नियमों, निर्देशों, सूचनाओं और अन्य लिखित तथा सचित्र सामग्री के प्रति सभी श्रमिकों का ध्यान आकर्षित किया गया या नहीं,

(ट) औद्योगिक प्रतिष्ठान में यदि कोई चिकित्सा-सेवा है, तो उससे और वहाँ की प्राथमिक चिकित्सा सेवाओं से सहयोग करना, तथा

(ठ) सुरक्षा और स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी असंतोषजनक दशाओं की सूचना सरकारी निरीक्षक को देना, जिनका निराकरण उचित समय के अन्दर मालिक न कर सका हो।

प्रबन्धकों से आशा की जाती है कि वे सुरक्षा समिति को यथासंभव सुविधायें और प्रोत्साहन देने के साथ-साथ उसके सुझावों को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करेंगे और प्रतिष्ठान के सुरक्षा एवं स्वास्थ्य-सम्बन्धी सभी विषयों में समिति से परामर्श करते रहेंगे। यदि किन्हीं सुझावों को स्वीकार करने में वे असमर्थ हों, तो उचित समय के अन्दर उन्हें इसकी सूचना कारणों-सहित समिति को देनी चाहिये।

सुरक्षा समिति की सफलता केन्द्रीय समिति के सभापति पर निर्भर है। अतः प्रबन्ध विभाग के एक ऐसे प्रभावशाली व्यक्ति को सभापति चुना जाना चाहिये, जिसके बैठक में उपस्थित होने से यह सिद्ध हो कि दुर्घटनाओं के रोकने में प्रबन्धक वास्तविक और व्यावहारिक रूप से रुचि ले रहे हैं। यदि सभापति ऐसा हुआ, जो सुरक्षा समिति के कार्यों में रुचि न ले और वह बैठकों में कभी-कभी ही उपस्थित हो, तो समिति का काम सफलतापूर्वक नहीं चल सकेगा।

समिति का मंत्री पदेन होना चाहिये। प्रतिष्ठान के सुरक्षाधिकारी को सुरक्षा समिति का मंत्री बनाना प्रायः सुविधाजनक होता है। यदि प्रतिष्ठान में ऐसा अधिकारी न हो, तो किसी ऐसे व्यक्ति को मंत्री बनाना चाहिए, जो समिति के सुझावों को कार्यान्वित करवा सके और समिति को इस बात से सन्तुष्ट कर सके कि उसके सुझावों पर प्रबन्धकों ने समुचित ध्यान दिया है।

जो देश औद्योगिक क्षेत्र में हमसे कहीं आगे हैं, उनमें किए गए प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि एक ही प्रकार के अरक्षित कार्यों के ३३० बार पुनः-पुनः करने में एक असाधारण और २९ साधारण चोटों की दुर्घटनाएँ हुई और ३०० में कोई चोट नहीं आई। इससे स्पष्ट है कि श्रमिकों की सुरक्षा और उत्पादन में वृद्धि के लिए सुरक्षा समितियों का निर्माण बहुत आवश्यक है। पाश्चात्य देशों की भाँति भारत में भी 'सेफ्टी फर्स्ट' असोसियेशन आफ इण्डिया' नामक एक संस्था है, जो दुर्घटनाओं को रोकने के सम्बन्ध में उपयोगी कार्य कर रही है।

यहाँ यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि सुरक्षा का विषय इतना वृहत् है कि इतने सीमित स्थान में उसकी पूर्ण व्याख्या नहीं की जा सकती। संक्षेप में आशा यह है कि हमें किसी भी भयास्पद कार्य के करने के पूर्व 'पहले सुरक्षा' (सेफ्टी फर्स्ट) को ध्यान में रखना चाहिए।
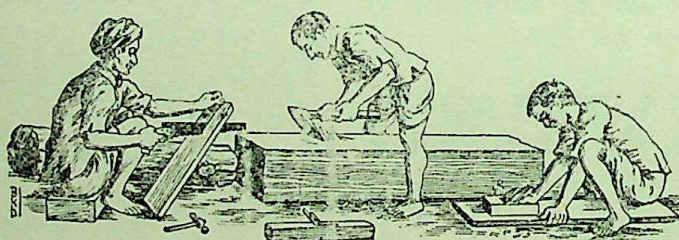
भारतीय श्रमिकों का उज्ज्वल भविष्य

श्री हरिनारायण वाजपेयी

विगत शताब्दियों में भारतीय श्रमिकों को अशिक्षा और गरीबी के कारण अत्यन्त निराशापूर्ण तथा निरुपाय परिस्थितियों में समय व्यतीत करना पड़ा, परन्तु उन्होंने भारत की सांस्कृतिक परम्परा के अनुरूप सदा धैर्य एवं सन्तोष से काम लिया, जिसके फलस्वरूप वे सदा आशावादी बने रहे। उनकी इस आशावादिता को राष्ट्रीय आन्दोलन से पर्याप्त प्रोत्साहन मिलता रहा और यद्यपि निकट भूतकाल में भारतीय श्रम-आन्दोलन कोई विशेष व्यापक एवं संगठित नहीं था, तथापि उसकी जड़ें देश के स्वातंत्र्य-संग्राम के साथ-साथ बराबर पुष्टि होती रही। यही कारण है कि आज स्वाधीन भारत में श्रम-आन्दोलन काफी व्यापक और संगठित दृष्टिगत होता है। राष्ट्रीय सरकार जब अस्तित्व में आई, तो उसने अपने कार्यकाल में श्रमिकों की प्रगति के लिये विशेष रूप से प्रयत्न किया और स्वतन्त्र भारत में तो इस प्रयत्न को इतना महत्व दिया गया है कि उसके सुपरिणाम आज सारे देश में देखे जा सकते हैं। कल का भारतीय श्रमिक भले अशिक्षित, गरीब और लाचार रहा हो, परन्तु आज सभी सुविधायें उसके लिए प्रस्तुत की जा रही हैं। उसके जीवन को आर्थिक दृष्टि से स्वतः पूर्ण बनाने के प्रयत्न जारी हैं और अधिकाधिक विकास के लिए उसके सम्मुख समुचित मार्ग प्रशस्त किया जा रहा है। इसमें संदेह नहीं कि आने वाले कल का भारतीय श्रमिक शिक्षित, सम्पन्न और कार्यकुशल होगा।

सामाजिक दृष्टि से भारतीय श्रमिकों का जीवन पिछले वर्षों में बराबर पतनोन्मुख ही रहा। इसका कारण यह था कि एक तो देश में व्यापक अशिक्षा होने से मेहनत-मजदूरी को जो गौरव प्राप्त होना चाहिये था, वह तो उसे मिला नहीं, उलटे उसे नीची दृष्टि से देखा जाने लगा। फलतः मेहनत-मजदूरी करने वाले श्रमिकों को भी भारतीय समाज में उनके अनुरूप महत्व प्राप्त नहीं था, जब कि उसके अस्तित्व को समाज के आधार के रूप में प्रतिष्ठित किया जाना चाहिये था। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि श्रमिकों का जीवन-स्तर निम्न से निम्न कोटि को पहुँचता गया। इसका प्रभाव देश के समूचे समाज पर पड़ा, क्योंकि सामाजिक जीवन की समस्याओं में उलझे हुए श्रमिकों के लिए व्यावसायिक कार्य-कुशलता में पारंगत होना एक कठिन ही बात थी और बिना वैसा हुये वे उत्पादन को वह गति कैसे दे सकते थे, जिससे देश के निवासियों का जीवन-स्तर उच्च से उच्चतर हो सकता। अतएव भारतीय श्रमिकों के सामाजिक जीवन की विडम्बनाओं को दूर करना पहली आवश्यकता मानी गई। इस संबन्ध में भारत की राष्ट्रीय सरकार ने अन्य अनेक विषम समस्याओं के होते हुए भी गत पाँच वर्ष के अल्पकाल में विशेष

रूप से प्रयत्न किया है।

आज श्रम का मूल्य सर्वसाधारण भी भी समझने लगा है। श्रमिकों के रहन-सहन की दशाओं में सुधार किये जा रहे हैं। उनके लिये हवादार घर सुलभ किये जा रहे हैं। प्रावीडेन्ट फण्ड, बीमार पड़ने पर मुफ्त दवा-दारू, मनोरंजन और स्वास्थ्य आदि की समुचित सुविधाएं प्रस्तुत की जा रही हैं। दूसरे शब्दों में उनके सामाजिक जीवन-स्तर को उन्नत करने की दिशा में राष्ट्रीय सरकार हर तरह से प्रयत्नशील है।

यह एक प्रकट बात है कि आर्थिक निश्चिन्तता से मनुष्य का न केवल सामाजिक जीवन उन्नत होता है, किन्तु उसे अपनी शक्तियों और प्रतिभा का विकास करने की उपयुक्त प्रेरणा भी मिलती है। इसके लिए भारतीय श्रमिकों को व्यावसायिक क्षेत्र में विशेष संरक्षण की आवश्यकता थी। अब तक काम करने की जिन दशाओं में उन्हें काम करना पड़ता था, वे न केवल उनके लिए अस्वास्थ्यकर एवं अहितकर थीं, किन्तु अन्यायपूर्ण और उत्पादन-शक्ति को हतोत्साहित करने वाली होने से सारे देश के लिए हानिकर थीं। इस स्थिति को दूर करने के लिए राष्ट्रीय सरकार ने अनेक कानून बनाए और मालिक-मजदूर के बीच सद्भावना उत्पन्न करने के लिये बराबर प्रयत्न किये जाते रहे। इन प्रयत्नों के फलस्वरूप आज के भारतीय श्रमिक को अधिक-से-अधिक सुरक्षापूर्ण दशाओं में काम करने का अवसर सुलभ हुआ है। इसके सिवा अपने कार्य में कुशलता प्राप्त करने के लिए उनके औद्योगिक प्रशिक्षण आदि की भी व्यवस्था की गई है। इसमें संदेह नहीं कि इन दोनों ही बातों—सुरक्षापूर्ण कार्य करने की दशाओं और कार्य-कुशलता—का सुफल प्रत्यक्ष दिखने में समय की अपेक्षा है, परन्तु यह निश्चित है कि भविष्य का भारतीय श्रमिक इनके फलस्वरूप अपनी आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त होकर जीवन व्यतीत करने सफल मनोरथ हो सकेगा।

पिछले वर्षों में भारतीय श्रमिकों ने समय-समय पर जिस प्रवृत्ति का परिचय दिया, उससे उन्होंने अपनी नैतिकता का एक सुन्दर उदाहरण उपस्थित किया। परिश्रम, सहनशीलता, संतोष, धैर्य और साहस के साथ उन्होंने बराबर उच्चकोटि की देशभक्ति को अपना लक्ष्य बनाए रखा। आज वे प्रतिकूल परिस्थितियाँ, जो स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पहले थीं, नहीं हैं, परन्तु उपर्युक्त नैतिक गुणों की आवश्यकता उससे भी अधिक बढ़ गई है, क्योंकि यह संघर्ष का समय न होकर निर्माण का युग है और निर्माण के लिए कहीं अधिक सात्विक शक्ति चाहिए।

यहाँ यह कहना उचित ही होगा कि भारतीय श्रमिक समाज के जीवनस्तर को ऊँचा उठाने में राष्ट्रीय सरकार को जो सफलता मिली है, वह मजदूर, मालिक और सर्वसाधारण जनता के सहयोग पर निर्भर रही है। तथापि स्वयं श्रमिक समाज का दायित्व सबसे बड़ा रहा है। जिस धैर्य और संतोष के साथ उन्होंने अब तक अपने पुनरुत्थान की प्रतीक्षा की है, उसका सुपरिणाम उनके सामने है। आज उनके कल्याण के लिए सर्वतोमुखी प्रयत्न किए जा रहे हैं और यह एक निर्विवाद बात है कि निकट भविष्य में ही वे अपने इन सद्गुणों से समाज में अपने अनुरूप स्थान प्राप्त कर लेंगे।

खेतिहर मजदूरों के हित के लिए उ० प्र० सरकार ने इस वर्ष पहली बार एक महत्वपूर्ण विज्ञप्ति १५ सितम्बर, १६५२ को प्रकाशित की, जिसके अन्तर्गत खेतिहर मजदूरों का निम्नांकित न्यूनतम वेतन निर्धारित कर दिया गया: —

(१) १८ वर्ष या अधिक आयु वालों के लिए—१) रु० प्रतिदिन या २६) रु० मासिक।

(२) १८ वर्ष से कम आयु वालों के लिये—१० आना प्रतिदिन या १६।) रु० प्रतिमास।

उपर्युक्त न्यूनतम वेतन नकद अथवा उपज दोनों में दिया जा सकता है, परन्तु उपज का मूल्य किसी भी दशा में निर्धारित वेतन से कम न होगा।

यह वेतन प्रदेश के केवल १२ जिलों-सुल्तानपुर,

राज्य भर के समस्त जिलाधीशों से प्रार्थना की गई है कि वे अपने-अपने जिलों में स्थित न्यूनतम वेतन अधिनियम, १६४८ के अंतर्गत होने वाले प्रतिष्ठानों की एक विस्तृत सूची भेजने की कृपा करें।

न्यूनतम मजदूरी कानून के अन्तर्गत निम्न उद्योगों के प्रौढ़ कर्मचारियों के लिये न्यूनतम वेतन २६) रु० मासिक (जहाँ वेतन माहवारी है) अन्यथा १ रु० प्रतिदिन निश्चित किया है। इसमें मूल वेतन, महँगाई तथा उन आवश्यक वस्तुओं की नकद कीमत शामिल होगी, जो सुविधाजनक दरों पर श्रमिकों को दी जाती हैं: —

१—पत्थर तोड़ाई एवं पिसाई के प्रतिष्ठान,
२—चावल, आटा या दाल की मिलें,

❋ १६५२ के कार्यों पर विहंगम दृष्टि

न्यूनतम मजदूरी कानून का प्रशासन

प्रतापगढ़, बाराबंकी, जौनपुर, रायबरेली, फैजाबाद, बलिया, गाजीपुर, बाँदा, हमीरपुर तथा जालौन —के ५० एकड़ अथवा अधिक क्षेत्रफल वाले सुव्यवस्थित फार्मों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए निर्धारित किया गया है। ऐसे कुल फार्मों की संख्या इस समय ६४ है।

राज्य सरकार की ओर से उठाये गए इस महत्वपूर्ण कदम ने समाज के इस निस्सहाय तथा दलित खेतिहर मजदूर वर्ग में एक जागृति तथा आत्म-निर्भरता की भावना उत्पन्न कर दी है, जिसकी ओर आज तक कोई ध्यान नहीं दिया गया था।

न्यूनतम मजदूरी विभाग में १५ वेतन निरीक्षक रक्खे गए हैं।

३—तम्बाकू (बीड़ी-सहित) के प्रतिष्ठान,
४—देहरादून के वे बाग, जिनमें सिनकोना, रबड़, चाय या कहवा उगाया जाता हो,
५—तेल मिलें,
६—सड़क और भवन-निर्माण,
७—लाख उद्योग,
८—सार्वजनिक मोटर-परिवहन,
६—टैनरी एवं चमड़ा उद्योग,

उक्त कानून के अन्तर्गत स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं में काम करने वाले १८ वर्ष की अवस्था से अधिक के प्रौढ़ कर्मचारियों के लिये निम्न न्यूनतम वेतन निश्चित किया गया है, जिसमें महँगाई आदि शामिल है:—

स्थानीय संस्थाएँ	नियोजन की श्रेणी	प्रति मास वेतन		
		रु०	आ०	पा०
(१) म्युनिसिपल बोर्ड, कानपुर	पूरे समय काम करने वाले कर्मचारी, जो दो पालियों में प्रतिदिन ६ घण्टे से अधिक काम करते हैं और सप्ताह में अधिक-से-अधिक ४८ घण्टे।	३४	४	०
(२) स्थानीय संस्थाएँ, श्रेणी १	,,	३१	४	०
(३) ,, ,, २	,,	२५	०	०
(४) ,, ,, ३	,,	२२	८	०
(५) ,, ,, ४	,,	२०	०	०
(६) ,, ,, ५	,,	१७	८	०
(७) म्युनिसिपल बोर्ड, कानपुर	तीन-चौथाई समय के कर्मचारी अर्थात् जो प्रतिदिन ४ घण्टे से अधिक और ६ घण्टे से कम तथा सप्ताह में अधिक से अधिक ३६ घण्टे काम करते हैं।	३०	०	०
(८) स्थानीय संस्थाएँ, श्रेणी १	,,	२५	०	०
(९) ,, ,, २	,,	२०	०	०
(१०) ,, ,, ३	,,	१७	८	०
(११) ,, ,, ४	,,	१५	०	०
(१२) ,, ,, ५	,,	१३	१२	०
(१३) म्युनिसिपल बोर्ड, कानपुर	आधे समय के कर्मचारी, अर्थात् जो केवल एक पाली में प्रतिदिन ४ घण्टे और सप्ताह में अधिक-से-अधिक २४ घण्टे काम करते हैं।	२२	८	०
(१४) स्थानीय संस्थाएँ, श्रेणी १	,,	१७	८	०
(१५) ,, ,, २	,,	१५	०	०
(१६) ,, ,, ३	,,	१२	८	०
(१७) ,, ,, ४	,,	११	४	०
(१८) ,, ,, ५	,,	१०	०	०
(१९) सभी जिला बोर्ड	वे कर्मचारी, जो ८ घण्टे के पूरे सामान्य काम के दिन काम करते हैं।	३०	०	०

३१ मार्च, १९५२ की सरकारी विज्ञप्ति के अनुसार निम्न कारखाने १ वर्ष के लिये उक्त कानून से मुक्त रखे गये हैं:—

(१) ऊनी दरी या ऊनी शाल बनाने वाले प्रतिष्ठान,

(२) अल्मोड़ा या गढ़वाल के वे बाग, जिनमें सिनकोना, चाय, रबड़ या कहवा उगाया जाता है,

(३) गाँव-पंचायतें।

उत्तर प्रदेश के श्रम-मंत्री
डा० सम्पूर्णानन्द
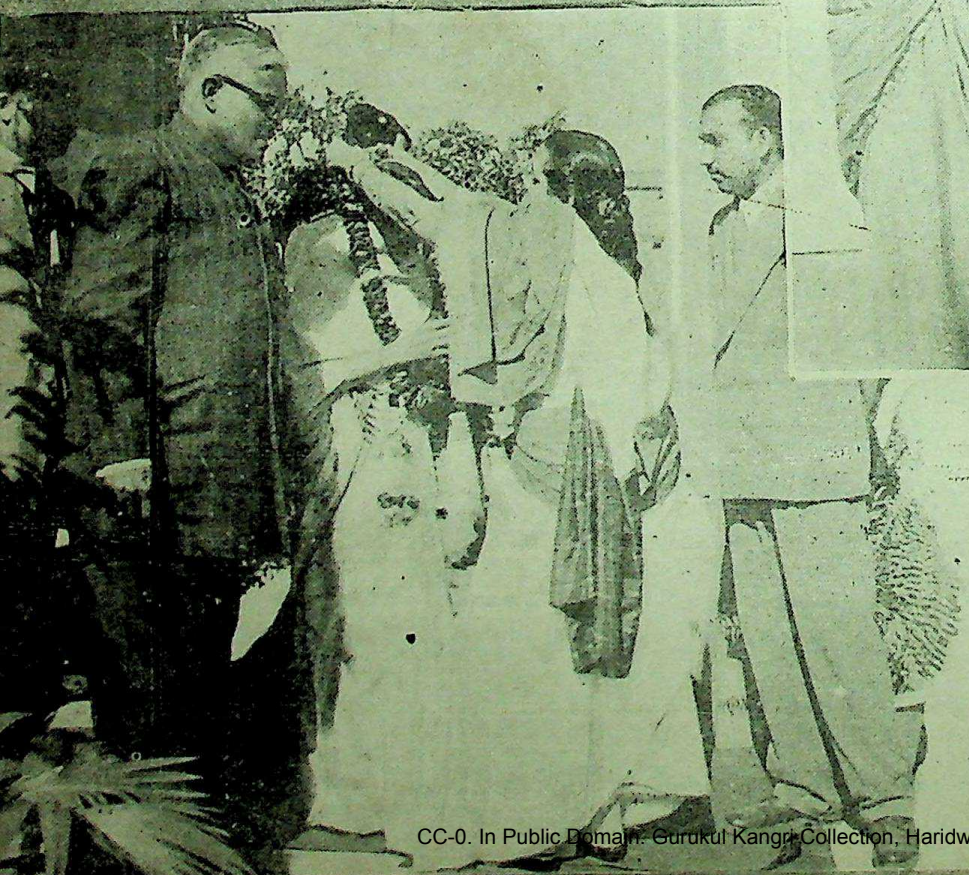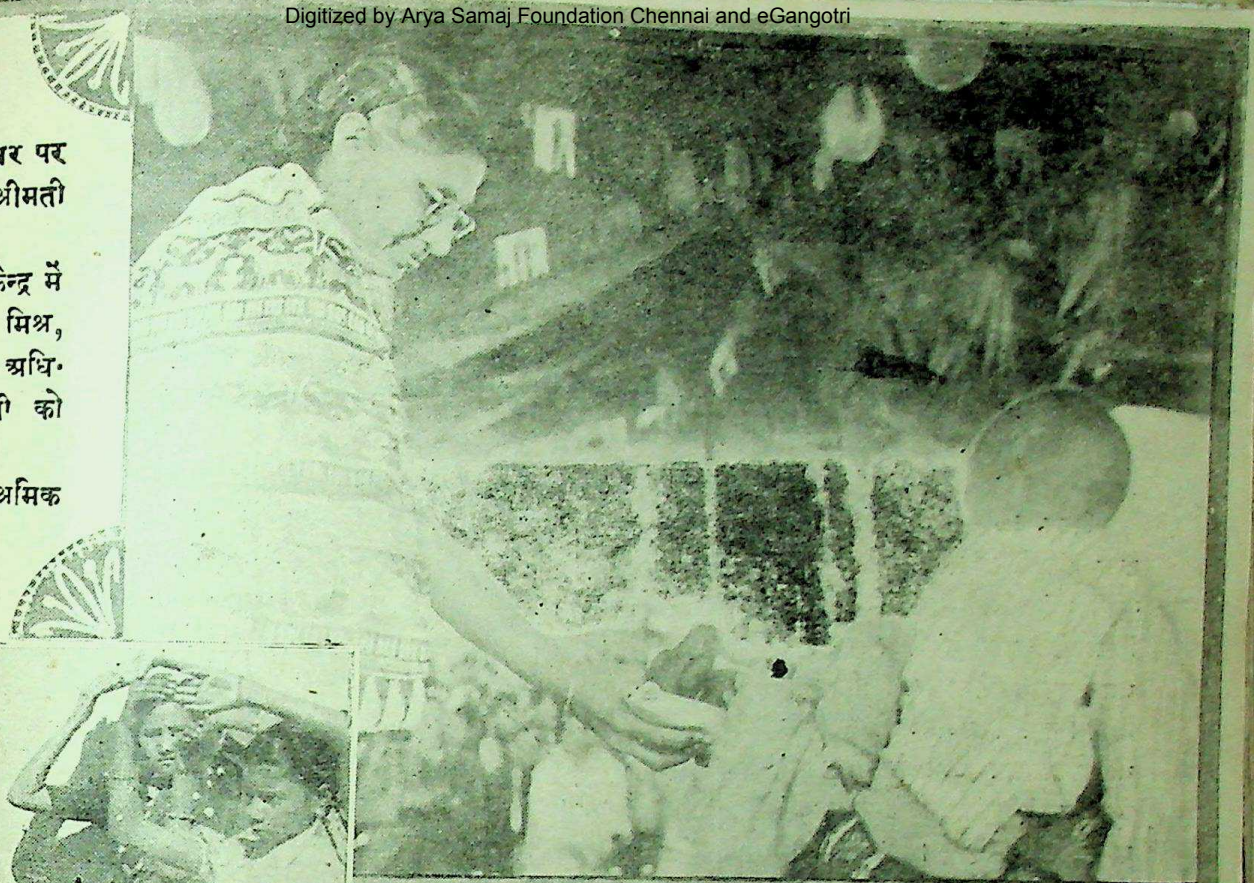
राज्यपाल द्वारा राजकीय श्रम-हितकारी केन्द्र का निरीक्षण

विगत ३० जनवरी, १६५३ को उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री के० एम० मुन्शी एवं श्रीमती मुन्शी ने स्थानीय डिप्टी के पड़ाव में स्थित राजकीय श्रम-हितकारी केन्द्र का निरीक्षण किया। यहाँ वे उ० प्र० के श्रमायुक्त श्री ओंकारनाथ मिश्र से केन्द्र में मिलनेवाली सुविधाओं के सम्बन्ध में वार्तालाप कर रहे हैं।
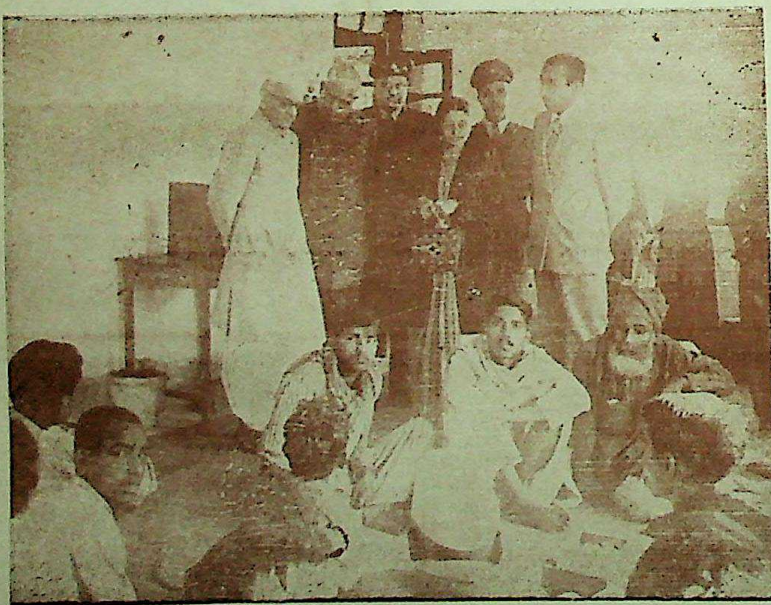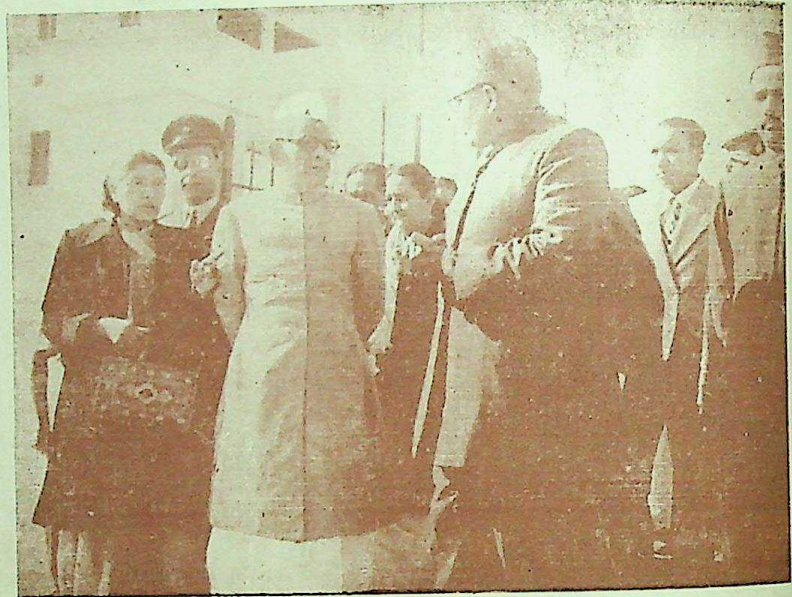
श्री के० एम० मुन्शी एवं श्रीमती मुन्शी केन्द्र में उपस्थित मजदूरों का निरीक्षण कर रही हैं। उनके साथ उ० प्र० के श्रमायुक्त श्री ओंकारनाथ मिश्र भी हैं।

१९५२ और औद्योगिक सम्बन्ध

औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ (केन्द्रीय) तथा उ० प्र० औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७-ये ही दो ऐसे मुख्य कानून हैं, जिनके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में सभी औद्योगिक झगड़ों का सन् १९४८ से निपटारा किया जाता रहा है। १९४८ में राज्य सरकार ने औद्योगिक झगड़ों की रोकथाम और निपटारे के लिये बनी व्यवस्था का पुनर्संगठन किया। पुनर्संगठित व्यवस्था के अन्तर्गत (क) सभी वैकुअम-पैन चीनी के कारखाने तथा २०० से अधिक मजदूरों का नियोजन करने वाले कारखानों में कर्म समितियाँ, (ख) सूती वस्त्र एवं होजरी, चीनी, चमड़ा और काँच, तथा विद्युत और इञ्जीनियरिंग के कारखानों के लिये प्रांतीय और प्रादेशिक समझौता बोर्ड, तथा (ग) प्रांतीय एवं प्रादेशिक समझौता बोर्डों के निर्णयों के विरुद्ध अपीलें सुनने के लिये औद्योगिक न्यायालय नियुक्त किये गये।

१५ मार्च, ५१ का राज्यादेश

उक्त व्यवस्था को १५ मार्च, १९५१ को पुनर्संगठित किया गया और कर्म समितियों, प्रादेशिक समझौता बोर्डों तथा औद्योगिक न्यायालयों के स्थान में समझौता बोर्डों तथा औद्योगिक ट्राइब्यूनल की स्थापना की गई। औद्योगिक न्यायालयों द्वारा सुनी जाने वाली अपीलें लेबर एपेलेट ट्राइब्यूनल द्वारा सुनी जाने लगीं, जिसका निर्माण औद्योगिक झगड़ा (एपेलेट ट्राइब्यूनल) कानून, १९५० के अन्तर्गत हुआ था। १९४८ में बनी कर्म समितियाँ १ नवम्बर, १९५० को समाप्त कर दी गईं। १५ मार्च, १९५१ के राज्यादेश के लागू होने के पूर्व जिन कारखानों में कर्म समितियाँ नहीं थीं अथवा जिन उद्योगों के लिये प्रादेशिक अथवा प्रांतीय समझौता बोर्ड नहीं बनाये गये थे, उनके झगड़े समझौता अधिकारियों द्वारा तय किये जाते थे। समझौता अधिकारियों के निर्णय सम्बन्धित पक्षों पर कानूनी तौर पर लागू नहीं होते थे, किन्तु सरकार को दिये गये आश्वासन के अनुसार उत्तरी भारत मिल मालिक संघ के सदस्य कारखाने इन निर्णयों को मानते थे। संघ के बाहर के कारखानों के झगड़ों को निर्णय के लिये तभी लिया जाता था, जब वे भी उक्त प्रकार का आश्वासन दे देते थे। समझौता अधिकारी के निर्णय के विरुद्ध अपील नहीं हो सकती थी। इस प्रकार की समझौता-प्रणाली की आवश्यकता न रह जाने से १५ मार्च, १९५१ के राज्यादेश द्वारा इसे समाप्त कर दिया गया।

१५ मार्च, ५१ के राज्यादेश के लागू होने के पूर्व जिन मामलों में समझौता अधिकारियों की सिफारिशें मालिकों द्वारा कार्यान्वित नहीं की जाती थीं अथवा जिन मामलों में समझौता अधिकारी समझौता कराने में असफल होते अथवा जिन अन्य मामलों में जनहित के लिये सरकारी हस्तक्षेप आवश्यक होता था, उन्हें उ० प्र० औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ के अन्तर्गत सरकार अभिनिर्णय के लिये भेज देती थी। नियुक्त अभिनिर्णायक को एक निर्धारित समय के भीतर अपना निर्णय सरकार के पास भेज देना होता था, जिसे सरकार द्वारा लागू कर दिये जाने पर दोनों पक्षों को मानना अनि-

वार्य होता था। अभिनिर्णायक के निर्णय के विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती थी।

परन्तु उपर्युक्त राज्यादेश के लागू होने के बाद अभिनिर्णय के लिये विवादों के भेजे जाने की स्थिति बदल गई। इस आदेश के अनुसार यदि राज्य सरकार को संतोष हो जाता है कि औद्योगिक झगड़ा उठ खड़ा हुआ है, तो वह अपनी ओर से अथवा समझौता बोर्ड की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद अथवा लिखित आवेदन-पत्र पर उसे इण्डस्ट्रियल ट्राइब्यूनल के पास भेज सकती है अथवा झगड़े के स्वरूप और पक्षों की सुविधा को ध्यान में रख कर अभिनिर्णय के लिये निर्दिष्ट किसी दूसरे व्यक्ति के पास भेज देती है। १५ मार्च, ५१ के राज्यादेश से सरकार को यह अधिकार प्राप्त है कि वह अभिनिर्णय में ऐसे दूसरे प्रतिष्ठानों को भी सम्मिलित कर ले, जहाँ झगड़ा इस ढंग का है कि कोई अन्य उसी प्रकार का प्रतिष्ठान अथवा प्रतिष्ठानों का वर्ग उसमें अभिरुचि रखता हो अथवा उससे प्रभावित होता हो। इस आदेश से सरकार को यह भी अधिकार है कि वह अतिरिक्त विषयों को झगड़े के विचाराधीन रहने पर किसी ट्राइब्यूनल अथवा अभिनिर्णायक के पास भेज दे। राज्य सरकार ट्राइब्यूनल अथवा अभिनिर्णायक के समक्ष झगड़े से सम्बन्धित अथवा न सम्बन्धित होने पर भी उपस्थित हो सकती है और उसकी सुनवाई एक सम्बन्धित पक्ष के समान हो सकती है। अभिनिर्णयों के विरुद्ध अब एपेलेट ट्राइब्यूनल में अपील की जा सकती है। आलोच्य वर्ष में पूर्ववर्त्ती वर्ष के अभिनिर्णय के विचाराधीन ७६ मामलों तथा सरकार द्वारा नये प्रेषित ५०४ मामलों पर सुनवाई की गई, जिनमें से कुल ४५४ मामलों पर निर्णय दिये गये। वर्ष के अन्त में १२६ मामले विचाराधीन रहे।

समझौता बोर्ड—१५ मार्च, ५१ के राज्यादेश से समझौता अधिकारियों को यह अधिकार मिल जाता है कि वे अपने क्षेत्रों में उठ खड़े होने वाले औद्योगिक झगड़ों के निपटारे के लिए समझौता बोर्ड बना सकते हैं। राज्य सरकार किसी भी समय स्वतः अथवा प्रार्थना-पत्र आने पर लिखित आदेश द्वारा किसी भी मामले को एक समझौता बोर्ड से दूसरे क्षेत्र के समझौता बोर्ड के पास भेज सकती हैं। बोर्ड यदि दोनों पक्षों में समझौता करा देता है, तो वह समझौते की शर्तों का एक स्मृतिपत्र तैयार करके उसकी प्रतियाँ ३० दिन के भीतर सम्बन्धित पक्षों, सरकार और श्रम कमिश्नर को भेज देता है। समझौता न करा पाने पर कार्यवाहियों की समाप्ति के ७ दिन के भीतर वह अपनी रिपोर्ट सरकार तथा श्रम कमिश्नर के पास भेज देता है। सरकार झगड़े के बने रहने पर स्वतः अथवा बोर्ड की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद अथवा प्रार्थना-पत्र आने पर उसे इण्डस्ट्रियल ट्राइब्यूनल या अभिनिर्णायक के पास भेज देती है।

औद्योगिक झगड़ों के जल्द निपटारे के लिये राज्यपाल महोदय ने राज्य के श्रम कमिश्नर एवं प्रति श्रम कमिश्नर को क्रमशः पदेन संयुक्त सचिव एवं प्रति सचिव नियुक्त कर दिया है। इन नियुक्तियों का अभिप्राय यह है कि यहीं से औद्योगिक झगड़ों को अभिनिर्णय के लिए भेजा जा सके तथा आवश्यक होने पर अभिनिर्णायकों एवं समझौता बोर्डों के निर्णय देने की अवधि बढ़ाई जा सके।

निम्न तालिका में १९५२ में समझौता बोर्डों के पास भेजे और उनके द्वारा तय किए गए मामलों की संख्या दी जा रही है :

प्रदेश	पूर्ववर्त्ती वर्ष के मामले	१९५२ में भेजे गए मामले	योग	निर्णीत मामले	विचाराधीन मामले
बरेली	२८	३८६	४१४	३८७	२७
गोरखपुर	१८	२१३	२३१	२११	२०

प्रदेश	पूर्ववर्ती वर्ष के मामले	१९५२ में भेजे गए मामले	योग	निर्णीत मामले	विचाराधीन म
मेरठ	१६	२००	२१६	१९०	२६
लखनऊ	२४	३३२	३५६	३०७	३५
आगरा	१३	२७९	२९२	२५७	३५
इलाहाबाद	३६	१६५	२०१	१७९	२२
कानपुर	२२९	१७२७	१९५६	१७८७	१६९
योग	३६४	३३०२	३६६५	३३१८	४४८

राज्य औद्योगिक ट्राइब्यूनल—औद्योगिक झगड़ा (एपेलेट ट्रिब्यूनल) कानून, १९५० के लागू होने के फलस्वरूप औद्योगिक न्यायालयों का अन्त कर दिया गया और १५ मार्च, ५१ के राज्यादेश के अन्तर्गत राज्य औद्योगिक ट्राइब्यूनल का निर्माण किया गया। ट्राइब्यूनल में ३ न्यायाधीश होते हैं, जिनमें से एक उसका अध्यक्ष होता है। इसका प्रधान कार्यालय इलाहाबाद में है। ट्राइब्यूनल अभिनिर्णायक की भाँति निर्णय देता है। सरकार द्वारा अभिनिर्णय के लिये भेजे गए किसी भी मामले की सुनवाई और उस पर निर्णय अध्यक्ष की इच्छानुसार ट्राइब्यूनल के किसी एक सदस्य द्वारा हो सकता है। ट्राइब्यूनल सुनवाई आदि के लिए 'बेंच' का भी निर्माण कर सकता है। ट्राइब्यूनल को ४० दिन के भीतर (छुट्टियां छोड़ कर) अपना निर्णय देना होता है। इसके निर्णयों के विरुद्ध अपील की जा सकती है।

सन् १९५२ में राज्य सरकार द्वारा राज्य औद्योगिक ट्राइब्यूनल के पास ७३ मामले भेजे गए। साथ ही पूर्ववर्ती वर्ष के ६ विचाराधीन मामले भी उसके पास थे। कुल ५८ मामलों का निर्णय किया गया और वर्ष की समाप्ति पर २१ मामले विचाराधीन रहे।

एपेलेट ट्राइब्यूनल—औद्योगिक झगड़ा (एपेलेट ट्राइब्यूनल) कानून, १९५० के अन्तर्गत बने एपेलेट ट्राइब्यूनल में राज्य औद्योगिक ट्राइब्यूनल तथा अभिनिर्णायकों के निर्णयों के विरुद्ध अपील सुनी जाती है।

अभियोग

आलोच्य वर्ष में उ० प्र० औद्योगिक झगड़ा कानून, १९४७ के अन्तर्गत निम्नांकित कारखानों पर अभियोग चलाए गए: (१) निरंजन सिनेमा, इलाहाबाद, (२) एल० डी० शुगर मिल्स लि०, छितौनी (देवरिया), (३) लार्ड कृष्ण शुगर मिल्स लि०, सहारनपुर, (४) बनारस आइस फैक्टरी, बनारस, तथा (५) मोती आयल मिल्स, बनारस। इनमें से पहले और पाँचवे कारखानों पर अभिनिर्णायक के फैसलों के न मानने तथा तीसरे पर औद्योगिक न्यायालय (चीनी), लखनऊ के निर्णय को न मानने के कारण अभियोग चलाए गए।

१९५२ में श्रम-स्थिति

आलोच्य वर्ष में श्रम-स्थिति प्राय: शांत रही। कोई बड़े पैमाने पर हड़ताल नहीं हुई। राज्य की तेल मिलों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं रही और व्यापारिक मंदी तथा कोयले की कमी के कारण बहुत-सी मिलें बहुत दिनों तक बन्द भी रहीं। इसके अतिरिक्त उचित मूल्य पर कच्चे माल की कमी, माल के

जमा हो जाने, आर्थिक कठिनाइयों, मशीनों के टूटने तथा सामान्यतः व्यापार में मंदी आ जाने के कारण कारखानों में बंदी, छँटनी और बैठकी समय-समय पर होती रही।

निम्न तालिका में आलोच्य वर्ष की हड़तालों व तालाबंदियों, बैठकी, छँटनी और बंदी के आँकड़े दिए जा रहे हैं :—

वर्ष	हड़ताल और तालाबंदी			बैठकी		छँटनी	बन्दी	
	संख्या	प्रभावित मजदूर	काम के दिनों की हानि	संख्या	प्रभावित मजदूर	छँटनी हुए मजदूरों की संख्या	संख्या	प्रभावित मजदूर
१९५०	६०	४६,४८९	२,२९,१४९	३२७	६८,५२६	१,७६४	१६५	२४,६४३
१९५१	१०५	७४,४९२	३,०५,७९२	७७१	१,३७,४५५	२,५७३	८१	८,५४९
१९५२	११९	३८,७०७	१,६६,६६१	१,७२१	७५,२२१	३,८४०*	५९	५,३७३

* आलोच्य वर्ष में ७६ मजदूरों को पुनः काम पर रख लिया गया।

उत्तर प्रदेश में मजदूरों की प्राविडेन्ट फण्ड योजना

श्री प्रभाकर तिवारी

देश के जागरण-काल में मजदूर जो राष्ट्र की रीढ़ हैं, उनका हित ही सर्वमान्य होता है। राष्ट्र की बागडोर हाथ में लेते ही हमारी सरकार ने मजदूरों की हालत सुधारने के लिए बहुत से कानून बनाए। सन् ४८ में इस बात की छानबीन की गयी कि देश में कितने ऐसे मजदूर हैं जिनको प्राविडेन्ट फण्ड की सहूलियतें प्राप्त हैं। गणना के आँकड़ों द्वारा इस समय देश भर में केवल ३ प्रतिशत ही ऐसे मजदूर थे, जिनको इस प्रकार की सहूलियतें प्राप्त थीं। दूसरे शब्दों में सौ में केवल ३ मजदूर ही ऐसे थे, जो प्राविडेन्ट फण्ड का लाभ उठा रहे थे, अवशेष ९७ मजदूर उससे वंचित थे। स्पष्ट है कि मालिकों में उस समय वांछनीय जागृति और मजदूरों की दशा सुधारने की चेतना न थी। अतः सन् ४८ के आरम्भ में ही राष्ट्र के योगक्षेम के बारे में विचार हुआ और एक त्रिदलीय सम्मेलन में यह निश्चय किया गया कि अधिकांश मजदूरों के हितार्थ एक प्राविडेन्ट फण्ड योजना प्रारम्भ की जाय। किन्तु इस कार्य में मालिक और मजदूरों के पारस्परिक सहयोग के बिना पूर्ण सफलता पाना दुर्लभ है।

मजदूर प्राविडेन्ट फंड अध्यादेश

उधर कोयला खान प्राविडेन्ट फण्ड योजना के अनुसार वहां के मजदूर अपनी असली आय का सोलहवाँ हिस्सा, तथा मालिक भी उतनी ही रकम इस निधि में जमा कर रहे थे और उसके अनुसार जो मजदूर खान में लगातार २५ वर्ष तक काम करते रहते थे, उनको अपना तथा मालिकों का जमा किया हुआ सारा रुपया प्राप्त करने का हक था। इसी प्रकार रेलवे के कर्मचारियों को प्राविडेन्ट फण्ड की सहूलियतें प्राप्त थीं। अतएव इन्हीं योजनाओं की सफलता से प्रेरणा प्राप्त कर एक ऐसी योजना सन् ५२ में बनाई गई, जिससे यावत् मजदूर वर्ग को लाभ मिले। बहुत दिनों से यह महसूस किया जा रहा था कि मजदूर अपनी नौकरी से निवृत्त होकर निरा निराश्रित ही रहता है और उसके गुजारे का सारा भार समाज पर पड़ता है। अतः उसके गुजारे का कुछ-न-कुछ प्रबन्ध जरूर होना चाहिये। अन्य उन्नत देशों में तो वृद्धावस्था तथा आश्रितों के लिए पेन्शनें चालू करके इसका प्रबन्ध हो गया था, परन्तु भारत में ऐसी कोई भी योजना न थी और उसको चालू करना वर्तमान परिस्थितियों में तनिक कठिन भी था। अतः सब कठिनाइयों को सामने रखकर यही उपयुक्त रास्ता नजर आया कि प्राविडेन्ट फण्ड की योजना चालू की जाय, जिसमें मजदूर-मालिक दोनों ही अपनी ओर से कुछ-न-कुछ रकम जमा करें। अन्य लाभों के अतिरिक्त मुख्य लाभ यह था कि इसके द्वारा मजदूरों में एक मितव्ययिता की भावना पैदा हो जाती है, और स्थायी मजदूर-शक्ति के निर्माण में काफी सहायता मिलती

है। अतः सन् ५१ के अन्तिम भाग में राष्ट्रपति के एक आदेश से मजदूर प्राविडेन्ट फन्ड अध्यादेश जारी किया गया और मार्च, सन् ५२ में यही कानून के रूप में परिणत कर दिया गया।

इस योजना के अन्तर्गत कपड़े, लोहे और इस्पात, सीमेंट, इञ्जीनियरिंग, कागज तथा सिगरेट के वे सभी कारखाने सम्मिलित हो जाते हैं, जिनमें ५० या ५० से अधिक मजदूर काम करते हैं तथा जो अपने स्थापन का कम से कम तीन साल पूरा कर चुके हैं। केन्द्रीय सरकार को यह भी अधिकार प्राप्त है कि इस योजना को वह उक्त उद्योगों के उन कारखानों में भी विस्तृत कर सके कि जहाँ ५० से भी कम मजदूर काम करते हों। जिन कारखानों में यह योजना लागू होगी, उनमें काम करनेवाले ऐसे सभी मजदूर उसके सदस्य होंगे, जिन्होंने गत बारह मास में कम से कम २४० दिनों तक और अटूट नौकरी पूरी कर ली हो। इस योजना के चालू होने के बाद कारखाने के नए मजदूर भी इसी शर्त पर सदस्य बन सकेंगे कि कम से कम वे काम के २४० दिन पूरे कर लें। अतः सारे प्रान्तों में इस योजना का श्रीगणेश ६ अक्टूबर, सन् ५२ से हुआ और जितने मजदूर उस तिथि को अथवा ३१अक्टूबर तक २४०दिन की अटूट नौकरी पूरी कर चुके थे, वे सभी इसके सदस्य बन गए। ध्यान रहे कि इसकी सदस्यता के लिए मजदूरों की श्रेणी का विचार नहीं रखा गया, बल्कि हर एक मजदूर २४०दिन की अटूट नौकरी यदि कर ले और इसमें भी यदि आपसकी मानी हुई बैठकी है,तो वह भी इसी अटूट नौकरी में शामिल मानी जायेगी। जो भी मजदूर ३०० या उससे कम वेतन-भोगी होंगे, वे सभी इस योजना के सदस्य बन सकते हैं। ३०० से अधिक वेतन पाने वाले मजदूर इस योजना से प्रारम्भिक अवस्था में अलग रखे गए हैं।

मजदूर-मालिक का समान चंदा

इस योजना के अनुसार मालिक प्रत्येक मजदूर की अर्जित मासिक मजदूरी, महँगाई भत्ता, खाद्य सामग्री-सम्बन्धी रियायतें एवं अर्जित छुट्टी के वेतन को मिलाकर, उसकी आय में से १ आना प्रति रुपये के हिसाब से इस फंड के लिए काटेगा और उतना ही धन अपने पास से मिलाकर फंड में जमा करेगा। कटौती का पूरीकरण (Rounding off) निकटतम चवन्नी तक जोड़ा जायगा अर्थात् यदि किसी मजदूर को ६५ रु० वेतन मिलता है, तो उसे केवल ४ रु० ही प्राविडेन्ट फंड में देना होगा, किन्तु यदि ६६ रु० मिलते हैं तो ४ रु० २ आने के स्थान पर ४ रु० ८ आने देने पड़ेंगे और इसी प्रकार कटौती का हिसाब चलेगा। पहली बार यह कटौती मालिक को अपने पास से ही जमा करनी पड़ेगी और मजदूर के हिस्से को वह बाद में मजदूरी से काट सकता है।

प्राविडेन्ट का यह सारा धन प्रादेशिक प्राविडेन्ट फंड कमिश्नर, कानपुर को चेक द्वारा प्रति मास भेजना होगा, जिसे वह रिजर्व बैंक अथवा इम्पीरियल बैंक में जमा कर देगा। अतः उनकी कटौती का सारा धन इस प्रकार बिल्कुल सुरक्षित रहेगा। फिर केन्द्रीय सरकार समय-समय पर जैसा उचित समझे अथवा केन्द्रीय बोर्ड की सलाह से इस रकम को इन्डियन ट्रस्ट ऐक्ट की धारा २० (ए) एवं (बी) के अनुच्छेदों के अनुसार निर्धारित सिक्योरिटी में जमा करेगी और इसका मूलधन तथा सूद भारत में ही देय होगा। जहाँ यह रकम सीधे केन्द्रीय सरकार के हाथमें नहीं,वहाँ वह आदेश दे सकेगी कि इस धन को किस प्रकार जमा किया जाय। फंड की रकम पर सूद उसी दर से मिलेगा, जिस दर से उस रकम को किसी व्यवसाय में लगाने पर लाभ होगा और इसका निर्णय केन्द्रीय बोर्ड की सलाह पर करेगी।

जीवन-बीमे की सुविधा

इस योजना के अन्तर्गत जमा किया हुआ धन अभी प्रारम्भिक अवस्था में केवल बीमा फंड के हेतु ६ मास में एक बार ही निकाला जा सकता है अर्थात् कोई भी सदस्य अपनी जिन्दगी का बीमा कराने के लिए रुपया इस फंड में से ले सकता है और इसमें सूद का भी लाभ उसे प्राप्त होगा। ध्यान रहे

कि इसका दुरुपयोग न हो सके, इसीलिए कमिश्नर को पूरा पूरा अधिकार दे दिया गया है कि रुपया निकालने से पूर्व प्रस्तावित बीमे के सभी पहलुओं का वह निरीक्षण करे कि कहीं लम्बे अर्से की 'पालिसी' तो नहीं खरीदी। इसके अतिरिक्त इस योजना के मुताबिक मजदूर फंड में जमा किए गए पूरे धन को (अपने तथा मालिक के हिस्से का) सेवा से निवृत्त होने के बाद किसी समय भी ले सकता है, किन्तु इसके लिए यह आवश्यक होगा कि वह लगातार ५ साल तक फंड का सदस्य रहा हो। यदि किसी शारीरिक या मानसिक असमर्थता के कारण कोई मजदूर सदा के लिए अशक्त होकर समय से पूर्व ही नौकरी से अलग हो जाय तो उसे भी सारी जमा पूंजी मिल सकेगी। इसी तरह यदि कोई भारत के बाहर बसने के लिए जा रहा हो, तो वह जाने से पहले अपने नाम पर फंड में जमा सारी रकम को प्राप्त कर सकता है। जो मजदूर कम-से-कम १ साल तक ऐसे कारखाने में काम नहीं करता, जहाँ यह योजना लागू होती है तो वह भी समय से पूर्व अपने नाम पर जमा किए हुए धन को प्राप्त कर सकता है, परन्तु शर्त यह रहेगी कि वह किसी प्रामाणिक अधिकारी का ऐसा प्रमाणपत्र दिखा दे कि उसने कहीं भी ऐसी जगह नौकरी नहीं की, जहाँ यह योजना लागू थी।

फंड की सदस्यता

इसके अतिरिक्त मालिकों का हिस्सा प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक सदस्य की सदस्यता ५ वर्ष के ऊपर ही हो। इससे कम सदस्यता होने पर मालिकों का पूरा हिस्सा तथा उस पर जमा हुआ सूद दोनों ही उसको न मिलेंगे। यदि ५ वर्ष या इससे अधिक किन्तु दस वर्ष तक उसकी सदस्यता रही है, तो वह मालिकों के आधे हिस्से तथा उस पर प्राप्त हुए सूद का अधिकारी होगा। इसी प्रकार दस वर्ष या उससे अधिक या १५ वर्ष से कम यदि उसकी सदस्यता रही हो, तो उसे मालिक द्वारा जमा किये हुये धन का ६० प्रतिशत तक मय सूद के मिलेगा और यदि वह १५ वर्ष या उससे अधिक या २० वर्ष से कम सदस्य रहा तो उसे मालिक द्वारा जमा किए हुए धन में से ७५ प्रतिशत मय सूद के मिलेगा।

अन्य सुविधाएँ एवं उत्तराधिकार

जैसा पहले कहा जा चुका है कि फंड के अन्तर्गत बीमा योजना का भी पूरा ध्यान रखा गया है, परन्तु अन्य सुविधाओं के लिए प्रारम्भिक अवस्था में रुपये निकालने का आयोजन नहीं है। यह आशा की जाती है कि कालान्तर में ऐसी सुविधाएं भी मिलेंगी। मानना होगा कि इस योजना के सूत्रपात से मजदूर-परिवार का यथेष्ट संरक्षण उसकी बेकारी के दिनों में होगा। इस योजना द्वारा उसे मितव्ययिता का पाठ भी पढ़ना होगा। फंड के सदस्य को अपने परिवार के किसी व्यक्ति को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करना होगा। यदि परिवार में कोई भी व्यक्ति न हो, तो वह बाहर के किसी भी व्यक्ति को अपना उत्तराधिकारी बना सकता है, किन्तु उसके अपना उत्तराधिकारी हो जाने पर ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति स्वयं रद्द हो जायगी। सदस्य की मृत्यु हो जाने पर उसके उत्तराधिकारी को, जिसे वह नियुक्त करेगा, फंड का रुपया मिलेगा। यदि मजदूर की अकस्मात् मृत्यु हो जाय और यदि उसने अपना कोई उत्तराधिकारी नामज़द न किया हो या उसने अपने नाम पर जमा की गई रकम के एक अंश के लिये ही उत्तराधिकारी नियुक्त किया हो, तो समस्त जमा रकम या उसका एक अंश, जैसी भी स्थिति हो, उसके परिवार के सदस्यों को बराबर बाँट दिया जायगा। किन्तु परिवार के उन सदस्यों को, जो बालिग हो गए हों, जैसे बालिग पुत्र, विवाहित लड़की जिसका पति जीवित हो, कुछ भी हिस्सा नहीं मिलेगा। यदि मजदूर की मृत्यु के बाद उसकी कोई भी संतान हो, तो उसे भी जमा धन प्राप्त करने का समान अधिकार होगा। सदस्य की जारज संतान को भी वही

अधिकार होगा, जो उसकी मृत्यु से पहले उत्पन्न हुए पुत्र को। यदि कोई सदस्य किसी अपराध-वश निकाल दिया गया हो; तो भी मालिकों के जमा किए हुए धन के अधिक से-अधिक दो वर्ष के हिस्से को बोर्ड अथवा कमिश्नर काट सकता है और वर्तमान वर्ष के हिस्से में से भी। किन्तु इन अधिकारों को प्रयोग में लाने से पूर्व सदस्य को पूर्ण अवसर दिया जायगा कि वह अपना बयान दे सके और उसके बाद ही कमिश्नर कोई निर्णय कर सकेगा।

उत्तर प्रदेश में

उत्तर प्रदेश में अन्य प्रदेशों के समान इस योजना का श्रीगणेश ६ अक्टूबर, ५२ से हो गया है। प्रदेश में इस समय ६६ कारखानों में यह योजना लागू है और लगभग ८५ हजार मजदूर इसके सदस्य बन चुके हैं। १ नवम्बर, ५२ से रुपये में एक आने के हिसाब से कटौती कटना शुरू हो गई है और मालिक लोग कटौती का धन प्रादेशिक प्राविडेन्ट फंड कमिश्नर, कानपुर के पास चेकों द्वारा भेज रहे हैं। इस कटौती का पूरा-पूरा हिसाब प्रत्येक मास कार्ड पर लिखा जाता है और कमिश्नर के यहाँ भी यह हिसाब फार्म नं० १२ में हर फैक्टरी के मालिक भेजते हैं। यों तो हर सदस्य को साल के अन्त में उसका मूलधन, मालिकों की रकम तथा इन दोनों पर प्राप्त किए गए सूद की रकम का पूरा-पूरा हिसाब मिलेगा, पर यदि कोई सदस्य अपना हिसाब देखना चाहे तो वह मालिकों के कार्यालय में अर्जी भेज कर दो घण्टे के बाद उसे प्रति मास देख सकता है।

अनेक वर्षों के अनवरत परिश्रम का ही परिणाम है कि मजदूर प्राविडेन्ट फंड योजना आज सामने आई है। मजदूरों के संरक्षण करने के चतुर्दिक् प्रयास का यह द्वितीय चरण है और आशा की जाती है कि मजदूर वर्ग इस योजना को पूर्ण सफल बनाने में अपना योगदान देगा। यदि योजना प्रारम्भिक अवस्था में सफल हो गई, तो सरकार अन्य सभी उद्योग-धंधों में भी इसे लागू करने का प्रयास करेगी, जिससे सभी मजदूर इससे लाभ उठा सकें। हाँ, जो कारखाने अपनी निजी फंड योजना चलाना चाहें, तो वे, यदि उनकी योजना सरकारी योजना के समान या उससे अच्छी हो, उसे चला सकते हैं। अभी तक कुल मिलाकर २० कारखाने ही इस प्रदेश में ऐसे हैं, जिन्होंने ऐसी योजनायें बनाकर भेजी हैं और उनके प्रार्थना-पत्रों पर विचार किया जा रहा है। इन पर मजदूर संघों से भी विचार-विमर्श किया जायगा। आशा है कि यावत् मजदूर वर्ग इस योजना को अपना कर अपना भविष्य उज्ज्वल बनायेगा।

श्रमिक संघों में बाहरी व्यक्ति

✦
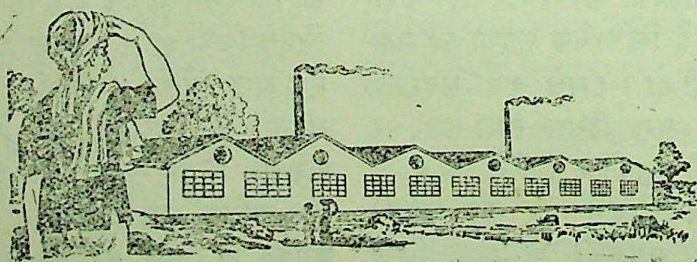
श्री पवनविहारी लाल

भारत के श्रमिक संघ आन्दोलन में ऐसे व्यक्तियों का, जो स्वयं श्रमिक नहीं हैं, एक विशेष स्थान एवं महत्व रहा है। इन व्यक्तियों को यहां बाहरी व्यक्तियों के नाम से सम्बोधित किया जायेगा। यदि यह कहें कि बाहरी व्यक्तियों की सहायता से ही यह आन्दोलन अपनी वर्तमान उन्नत अवस्था को प्राप्त हुआ है, तो अतिशयोक्ति न होगी। वास्तविकता यही है कि बाहरी व्यक्तियों, समाज-सेवियों, राजनीतिज्ञों एवं समाज के सुशिक्षित वर्ग के अन्य व्यक्तियों ने ही श्रमिक वर्ग में एकता का बीज अंकुरित किया और उनकी संघ-शक्ति को एक सक्रिय रूप प्रदान किया। उनकी सहायता के अभाव में भारत के औद्योगीकरण के प्रारम्भिक काल के श्रमिक अपनी संघ-शक्ति द्वारा व्यवस्थापकों से समुचित सुविधाएँ प्राप्त करने में असमर्थ रहते। तब से राष्ट्र के कितने ही महान् नेताओं के आशीर्वाद इस आन्दोलन को प्राप्त हो चुके हैं। दलित वर्ग के परम हितैषी, राष्ट्र के कर्णधार, युग-पुरुष महात्मा गांधी ने तो इस आन्दोलन में सत्य और अहिंसा के उच्च आदर्शों का समावेश कर इसे अजेय शक्ति प्रदान की है। परन्तु देश में समाज के विभिन्न वर्गों की असमानताओं के कारण अब भी ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं हुई है कि श्रमिक अपने पैरों पर ही खड़े होकर अपने संघों को सफलतापूर्वक चला सकें। इस परिस्थिति का कारण व्यवस्थापकों की शक्ति का बाहुल्य ही नहीं है, श्रमिकों के शिक्षा-स्तर की निम्नता इसका मूल कारण है।

श्रमिक संघ जैसी संस्थाएं जिनका मुख्य उद्देश्य दूसरों (व्यवस्थापकों) के व्यवसाय में रुकावट लगा कर अपने सदस्यों को जीवनयापन संबंधी अधिकतम सुविधा प्राप्त कराना है, साधारणतः कानून की दृष्टि में अवैधानिक समझी जाती थीं। उन्हें वैधानिक रूप देने के लिये भारतीय व्यावसायिक संघ कानून १९२६ ई० में बनाया गया। इस कानून के अन्तर्गत प्रमाणित व्यावसायिक संघ ही (जिनमें श्रमिकों के संघ भी सम्मिलित हैं) वैधानिक होते हैं अन्यथा उनकी कोई वैधानिक स्थिति नहीं होती। उक्त कानून में प्रमाणित व्यावसायिक संघों के व्यवस्थापन एवं संचालन-सम्बंधी कर्तव्यों एवं अधिकारों का उल्लेख है, और ऐसे संघों में बाहरी व्यक्तियों से सम्बन्धित व्यवस्था भी निर्धारित है।

भारतीय व्यावसायिक संघ कानून, १९२६ ई० की धारा ६ द्वारा यह प्रतिबन्ध लगाया गया है कि प्रत्येक व्यावसायिक संघ की कार्यकारिणी इस कानून के अनुसार बन ही जाय तथा संघ के विधान (नियमों) में उन समस्त विषयों से सम्बन्धित नियम हों, जो इस धारा में निर्धारित किये गये हैं, अन्यथा वह संघ प्रमाणित होने का अधिकारी नहीं होता। उक्त धारा में पांचवां विषय इस प्रकार है :—

"ऐसे साधारण सदस्यों की भर्ती जो वास्तव में उस उद्योग में संलग्न हैं अथवा नियुक्त होंगे जिससे संघ सम्बन्धित है, तथा विशिष्ट अथवा अस्थायी सदस्यों की भर्ती एवं उनकी संख्या कानून की धारा २२ के अनुसार संघ की कार्यकारिणी में सम्मिलित करने के लिये।"

धारा २२, जिसका उल्लेख उपर्युक्त धारा ६ के पंचम विषय में किया गया है, व्याव-

सायिक संघ की कार्यकारिणी में उन सदस्यों के अनुपात से संबंधित है जो कि उद्योग-विशेष से संबंधित होने चाहिये अर्थात् जो साधारण सदस्य हों। धारा २२ के अनुसार किसी भी व्यावसायिक संघ के अधिकारियों (कार्यकारिणी के सदस्यों) की कुल संख्या में कम से कम आधे व्यक्ति उनमें से होने चाहिये, जो उस उद्योग में संलग्न अथवा नियुक्त हों जिससे संघ संबंधित हो। अर्थात् कार्यकारिणी में आधे व्यक्ति वे होंगे जो संबंधित उद्योग में संलग्न अथवा नियुक्त हों तथा आधे व्यक्ति बाहरी हो सकते हैं। इस धारा के अन्तर्गत निर्धारित प्रतिबन्ध से किसी-किसी व्यावसायिक संघ को छूट देने का अधिकार भी प्रादेशिक सरकारों को दिया गया है।

भारतीय व्यावसायिक संघ कानून की धारा ६ (उ) तथा २२ से, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है, यह स्पष्ट है कि उक्त कानून के अन्तर्गत बने व्यावसायिक संघों में बाहरी व्यक्तियों की स्थिति निम्न प्रकार है—

(१) वे विशिष्ट (अस्थायी) सदस्य कहलाते हैं,

(२) वे केवल कार्यकारिणी के सदस्य (अधिकारी) की भांति ही किसी व्यावसायिक संघ में रह सकते हैं, तथा

(३) उनकी संख्या कार्यकारिणी के कुल सदस्यों की संख्या की आधी से अधिक नहीं हो सकती।

अन्यथा कानून में साधारण तथा विशिष्ट सदस्यों में कोई भेद नहीं रखा गया है, जिससे स्पष्ट है कि इस कानून के अन्तर्गत उनके अन्य अधिकार एवं कर्तव्य साधारण सदस्यों से लगभग समानता रखते हैं। साथ ही व्यावसायिक संघ अपने विधान के अन्तर्गत विशिष्ट सदस्यों के अधिकार एवं कर्तव्य निर्धारित करने के लिये स्वच्छंद हैं।

यह है श्रमिक संघों में वर्तमान व्यावसायिक संघ कानून के अन्तर्गत बाहरी व्यक्तियों की स्थिति। इसमें प्रस्तावित परिवर्तनों पर विचार करने के लिये अब हम भारतीय व्यावसायिक संघ कानून के उस प्रारूप पर एक दृष्टि डालें, जो भारत सरकार ने संसद् के सम्मुख १९५० में प्रस्तुत किया था। उक्त प्रारूप के अन्तर्गत व्यावसायिक संघों में बाहरी व्यक्तियों (विशिष्ट सदस्यों) के संबंध में निम्नलिखित प्रतिबन्ध थे:

(१) किसी प्रमाणित व्यावसायिक संघ में ऐसे व्यक्तियों की संख्या, जो किसी ऐसे प्रतिष्ठान अथवा ऐसे वर्ग के प्रतिष्ठानों के कर्मचारी नहीं हैं जिनसे कि संघ संबंधित है, तथा जो व्यावसायिक संघ के अधिकारी (कार्यकारिणी के सदस्य) हो सकते हैं, संघ की कार्यकारिणी के सदस्यों की कुल संख्या के एक-चौथाई अथवा ४ से, दोनों में जो भी कम हो, अधिक न होगी।

(२) व्यावसायिक संघों में रहने वाले बाहरी व्यक्ति भारत के नागरिक ही होंगे।

(३) उन व्यावसायिक संघों में जिनमें सब अथवा कुछ सदस्य सरकारी कर्मचारियों के वर्ग-विशेष (सिविल सर्वेन्ट्स) में से हों, कोई भी ऐसा व्यक्ति अधिकारी (कार्यकारिणी का सदस्य) न होगा, जो किसी ऐसे प्रतिष्ठान का कर्मचारी न हो, जिससे संघ-विशेष संबंधित हो। अर्थात् ऐसे संघों में बाहरी व्यक्ति न होंगे, जिनके सब अथवा कुछ सदस्य सिविल सर्वेन्ट्स हों।

(४) यदि कोई व्यावसायिक संघ, जिसको व्यवस्थापकों द्वारा मान्यता प्रदान की गई है, कानून में उल्लिखित 'अनुचित कार्य' करता है और इस कारण उस संघ की मान्यता किसी श्रम न्यायालय के आदेश द्वारा समाप्त कर दी जाय, तो उसकी कार्यकारिणी के वे सदस्य, जो बाहरी व्यक्ति हैं, किसी भी व्यावसायिक संघ के तीन वर्ष तक सदस्य न बन सकेंगे।

(५) चिकित्सालयों अथवा शिक्षा-संस्थाओं से संबंधित व्यावसायिक संघ तथा सिविल सर्वेन्ट्स के संघ यदि मान्यता प्राप्त करना चाहें, तो उनमें बाहरी व्यक्तियों का कोई स्थान न होगा।

कानून के उक्त प्रारूप पर विचार करने के लिये भारतीय संसद् ने एक प्रवर समिति नियुक्त की।

जिसने अपनी प्रस्तावनायें १ दिसम्बर, १९५० ई० को प्रस्तुत कीं। प्रवर समिति ने प्रारूप में बाहरी व्यक्तियों के संबंध में केवल एक संशोधन प्रस्तावित किया। समिति ने अपनी प्रस्तावनाओं में यह विचार प्रकट किया कि उन व्यावसायिक संघों की, जो बहुत से प्रतिष्ठानों से संबंधित हों और जिनकी सदस्यता का क्षेत्र विस्तृत हो, कार्यकारिणी में अधिक बाहरी व्यक्तियों के रक्खे जाने का प्रबन्ध होना आवश्यक है। इस विचार से समिति ने प्रारूप में इस आशय का संशोधन कर दिया कि सरकार व्यावसायिक संघों में बाहरी व्यक्तियों के भर्ती किये जाने के संबंध में नियम भी बना सकती है। परन्तु प्रवर समिति की प्रस्तावना के अनुसार भी बाहरी व्यक्तियों की संख्या साधारणतः प्रारूप के अनुरूप ४ अथवा कार्यकारिणी के कुल सदस्यों की एक-चौथाई रक्खी गई। प्रवर समिति के दो सदस्यों ने व्यावसायिक संघों में बाहरी व्यक्तियों-संबंधी प्रस्तावनाओं पर अपने कुछ मतभेद भी प्रकट किये। उनके विचार से प्रारूप में दिये गये बाहरी व्यक्तियों-सम्बन्धी प्रतिबंध उचित नहीं थे और उनके विचार से ऐसे प्रतिबंध लगाना व्यावसायिक संघ आन्दोलन की प्रगति में देश के साधारण नागरिकों के सहयोग का महत्व न समझने के तुल्य है। उनके विचार से श्रमिकों के लिये अपने दैनिक कार्य के पश्चात् अत्यन्त थके होने एवं शक्ति-क्षीण हो जाने से देश की गहन आर्थिक समस्याओं को समझना और उनके सुलझाने के लिये कोई कार्य कर सकना अत्यन्त कठिन है। दूसरी ओर व्यवस्थापक-वर्ग सुशिक्षित और साधारण श्रमिक से अधिक सूझ-बूझ रखते हुए भी अपनी विशेष प्रकार की शिक्षा और विचारधारा के कारण श्रमिक वर्ग के प्रति वास्तविक सहानुभूति रखने में सर्वथा असमर्थ है। अतः प्रवर समिति के इन दो सदस्यों के विचार से, यदि ऐसे बाहरी व्यक्ति, जो श्रमिकों को सुशिक्षित करने और उनका नेतृत्व करने के लिये उद्यत हैं, अपनी शिक्षा, ज्ञातव्य तथा अनुभव का पूर्ण लाभ श्रमिक वर्ग को देने से रोके जाते हैं, तो न केवल श्रमिकों को एक वर्ग-विशेष के रूप में और राष्ट्रीय सम्पत्ति के उत्पादक के रूप में ही क्षति पहुँचेगी, वरन् सामान्यतः समाज और राष्ट्र के आर्थिक हितों की हानि होगी। इन सदस्यों के विचार से यद्यपि यह उचित है कि श्रमिक अपनी मौलिक नीति निर्धारित करने में और अपने कार्य स्वयं सम्पादित करने में पूर्ण रूप से भाग लें, परन्तु साथ ही यह भी आवश्यक है कि बाहरी व्यक्तियों का ज्ञान, अनुभव और सहानुभूति भी श्रमिकों को प्राप्त हो।

इन दो सदस्यों में से एक ने अपने कुछ विचार अलग से भी प्रकट किये। उसने कहा कि प्रारूप में बाहरी व्यक्तियों पर लगाये गये इतने कठिन प्रतिबंध अवश्य हटा लिये जाने चाहिये थे, क्योंकि देश का श्रमिक वर्ग अभी अशिक्षित, पिछड़ा, अंग्रेजी भाषा से अनभिज्ञ और संगठन एवं व्यवस्थापन-कार्य में बहुधा अकुशल है और अभी उसे आवश्यकता है कि बाहरी व्यक्तियों की सहायता उसे प्राप्त होती रहे। हाँ, यह हो सकता है कि बाहरी व्यक्तियों की संख्या कार्यकारिणी की कुल सदस्य-संख्या के ५० प्रतिशत से घटाकर ३३ प्रतिशत ही रक्खी जाय।

प्रवर समिति की प्रस्तावनायें उपलब्ध होने के पश्चात् शीघ्र ही पिछली संसद् देश के नये संविधान के अनुसार निर्वाचन होने के लिए विघटित हो गई। अतः १९५० का प्रारूप संसद् के सम्मुख विचारार्थ न आ सका और पिछली संसद् के समाप्त होने के साथ ही वह प्रारूप भी समाप्त होगया।

वर्तमान संसद् की स्थापना के पश्चात् भारत के नये श्रम मंत्री ने आश्वासन दिया है कि भारतीय व्यावसायिक संघ कानून, १९२६ ई० के स्थान पर एक नया व्यावसायिक संघ कानून श्रमिक संघ आन्दोलन की वर्तमान परिस्थिति के अनुकूल ही शीघ्र बनाया जाएगा। इस आश्वासन को कार्यान्वित करने के सम्बन्ध में भारत सरकार के श्रम मंत्रालय ने एक प्रश्नावली भी १ जुलाई, १९५२ को सम्बन्धित संस्थाओं एवं व्यक्तियों के विचार ज्ञात करने के लिये प्रचारित

की। इस प्रश्नावली में बाहरी व्यक्तियों-सम्बन्धी कुछ प्रश्न भी थे, जो इस प्रकार हैं :

(१) क्या यह आवश्यक है कि व्यावसायिक संघों की कार्यकारिणियों से बाहरी व्यक्ति पूर्ण रूप से पृथक कर दिये जायँ अथवा यह पर्याप्त है कि उनकी संख्या पर प्रतिबंध लगा दिया जाय ? यदि मत संख्या पर प्रतिबंध लगाने के पक्ष में है, तो ऐसे बाहरी व्यक्तियों की अधिकतम संख्या क्या हो, जो पदाधिकारी बनाये जायँ ?

(२) क्या ऐसे व्यावसायिक संघों में जिनमें कुछ या सब विशेष वर्ग के सरकारी कर्मचारी (सिविल सर्वेन्ट्स) सदस्य हों, बाहरी व्यक्तियों को रहने दिया जाय ?

(३) क्या सरकारी कर्मचारियों के ऐसे व्यावसायिक संघों को मान्यता न प्रदान की जाय, जिनमें सभी सदस्य विशेष वर्ग के सरकारी कर्मचारी (सिविल सर्वेन्ट्स) ही न हों ?

(४) क्या ऐसा ही (प्रश्न ३ में उल्लिखित) प्रतिबंध चिकित्सालयों तथा शिक्षा-संस्थाओं के कर्मचारियों, पर्यवेक्षकों (सुपरवाइजरों) अथवा प्रहरियों के व्यावसायिक संघों पर लगाना उचित होगा ?

प्रश्नावली पर उत्तर आमंत्रित किये जा चुके हैं और सम्भवतः देश के नये व्यावसायिक संघ कानून का प्रारूप शीघ्र ही भारतीय संसद् के सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत होगा और जनता को उस पर अपने विचार प्रकट करने का समुचित अवसर भी प्राप्त होगा। उस समय व्यावसायिक संघों में बाहरी व्यक्तियों की परिस्थिति पर भी पुनः विचार प्रकट करने का अवसर आएगा। आशा है, उस समय जो भी प्रस्तावनाएँ की जाएँगी, वे भारत के व्यावसायिक संघ आन्दोलन के अनुरूप होंगी और आन्दोलन के हितों को ही प्रधानता दी जायगी। अनुभव और सम्भवतः बहुमत भी इस पक्ष में होगा कि यथासम्भव श्रमिक वर्ग स्वयं ही शनैः शनैः अपने संघों का संचालन अपने हाथ में ले। यह भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि श्रमिक संघों को वर्तमान परिस्थिति में बाहरी व्यक्तियों का सहयोग लाभप्रद ही नहीं, वरन् कुछ काल के लिये उसके जीवन की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। साथ ही, यह भी ध्यान में रखना होगा कि श्रमिक संघों में बाहरी व्यक्तियों की सहायता एवं मंत्रणा का एकमात्र उद्देश्य राष्ट्र के हितों को सर्वोपरि स्थान देते हुए श्रमिकों की दशा में सुधार करना ही होना चाहिये।

श्रम-संबंधी जाँच-पड़ताल और अनुसंधान

१९५२ का कार्य-विवरण

श्रम विभाग के संख्या और अन्वेषण विभाग का एक महत्वपूर्ण कार्य श्रमिकों के कार्य तथा रहन-सहन की दशाओं जैसे पारिवारिक आय-व्यय, आवास-व्यवस्था, मजदूरी, काम करने के समय और रहन-सहन के ढंग इत्यादि के संबंध में जाँच-पड़ताल और खोज करना भी है। इस विभाग ने १९५२ में निम्नलिखित जांच-पड़तालें की हैं :—

(१) देहरादून के चाय के बगीचों में काम करने वाले श्रमिकों की आवास-व्यवस्था और पारिवारिक आय-व्ययक की जांच।

(२) मुबारकपुर के सिल्क उद्योग और मऊ (आजमगढ़) के कर्घा उद्योग में काम करने वाले श्रमिकों की मजदूरी तथा रहन-सहन की दशाओं का आपरीक्षण (सर्वे)।

(३) मसूरी के रिक्शा चलाने वाले श्रमिकों के रहन-सहन तथा मजदूरी आदि के बारे में एक वेतन-निरीक्षक ने जांच की।

उद्योग में प्रशिक्षण

—श्री शोभाराम शर्मा

उद्योग-में-प्रशिक्षण की योजना कारखानों में निम्न स्तर पर काम करनेवाले पर्यवेक्षकों के लिए ही नहीं, उद्योग के उच्च अधिकारियों तथा सरकारी विभागों के लिए भी उपयोगी है। इस लेख में पर्यवेक्षक के लिए आवश्यक विभिन्न योग्यताओं, उद्योग-में-प्रशिक्षण के कार्यक्रमों और उनकी उपयोगिता के संबंध में विस्तृत प्रकाश डाला गया है। हमारे देश में उद्योग-में-प्रशिक्षण के पाठ्यक्रमों का श्रीगणेश बँगलौर में हो भी चुका है।

उद्योग के अन्दर प्रशिक्षण (ट्रेनिंग विदिन इण्डस्ट्री) की कल्पना तुलनात्मक दृष्टि से अभी हाल ही की है। उत्पादन में वृद्धि करने की आवश्यकता का अनुभव काफी समय से किया जा रहा था, परन्तु विशेषकर गत विश्वयुद्ध के बाद अनेक प्रमुख उद्योगपतियों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ और इन लोगों ने औद्योगिक प्रतिष्ठानों के सफलतापूर्वक संचालन में बाधा पहुँचानेवाले कारणों की छान-बीन प्रारंभ की। आज के उद्योग को दो काम करने हैं। पहला यह है कि और अधिक उत्पादन के द्वारा प्रचुरता का युग लाया जाय और दूसरा यह कि इस महत् उत्पादन-कार्य को मानवीय कार्य के रूप में प्रतिष्ठित किया जाय। अतएव आज की सबसे बड़ी आवश्यकता टेक्निकल समस्याओं का समाधान करना नहीं वरन् मनुष्य की उन समस्याओं को सुलझाना है, जो उत्पादन-कार्य के पर्यवेक्षण से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में अनेक प्रयोग करके व्यवस्थित पर्यवेक्षण के महत्व और परिणामों को जाना जा चुका है। ब्रिटेन के श्रम एवं राष्ट्रीय सेवा मंत्रालय ने १९४४ में अमेरिका की देखा-देखी उद्योग में प्रशिक्षण की योजना को अपने देश में कार्यान्वित करने का प्रयत्न किया। बाद में इस योजना को अन्ताराष्ट्रीय मजदूर संस्था ने अपने हाथ में लेकर संसार के सुदूरवर्ती कोनों तक पहुँचा दिया। आज यह लगभग सभी औद्योगिक देशों में लोकप्रिय होती जा रही है। हमारे देश में भी बंगलौर के एशियाई अ० म० सं० केन्द्र में उद्योग-में प्रशिक्षण के पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की गई है।

उद्योग-में-प्रशिक्षण के सम्बन्ध में यह भ्रांत धारणा थी कि यह केवल बड़े पैमाने पर उत्पादन करनेवाले कारखानों में ही लागू हो सकता है, परन्तु छोटे प्रतिष्ठानों में भी इसके सफल प्रयोग ने उक्त धारणा को असत्य प्रमाणित कर दिया है। इस प्रशिक्षण की योजना को दूकान के क्षेत्र से आगे कार्यालय, विक्रय, डिजाइन, विकास सेवा और अन्य सरकारी विभागों तक में लागू किया जा सकता है। इसे 'उद्योग-में-प्रशिक्षण' की अपेक्षा 'प्रतिष्ठान में प्रशिक्षण' कहना अधिक उपयुक्त होगा।

पर्यवेक्षण की आवश्यक योग्यताएँ

उद्योग-में-प्रशिक्षण योजना का सम्बन्ध पर्यवेक्षकों (सुपरवाइजर्स) से है। 'पर्यवेक्षक' की परिभाषा के अन्तर्गत मैनेजिंग डाइरेक्टर से लेकर निम्न स्तर के

'चार्जहैण्ड' तक सभी काम की देख-भाल और निर्देशन करनेवाले व्यक्ति आ जाते हैं। अच्छे पर्यवेक्षण के लिए निम्नलिखित ५ बातों का होना आवश्यक है

१—पर्यवेक्षक को विभिन्न क्रियाओं, पद्धतियों, मशीनों एवं सामग्रियों की भलीभाँति जानकारी हो और यदि आवश्यक हो तो वांछनीय टेक्निकल दक्षता भी उसमें हो।

२—जिनका पर्यवेक्षण किया जा रहा है, उनके प्रति प्रतिष्ठान की क्या नीति है, अपने पर्यवेक्षण का स्थान, किसी प्रतिष्ठान के भीतर के अन्तर्विभागीय सम्बन्ध और पर्यवेक्षण के कार्य से सम्बन्धित अन्य सभी उत्तरदायित्वों का ज्ञान उसमें होना आवश्यक है।

३—इसके पहले कि नए भर्ती हुए मजदूर वास्तव में काम करना प्रारंभ करें, उन्हें आवश्यक शिक्षा और मार्ग-प्रदर्शन की जरूरत होती है उसका काम को जल्दी ग्रहण करना इस बात पर ही निर्भर करेगा कि उसे किस ढग की शिक्षा दी जाती है।

४—जिन लोगों का पर्यवेक्षण किया जा रहा हो, उनसे पर्यवेक्षक को चतुरतापूर्वक व्यवहार करना चाहिए, जिससे वे शांतिपूर्वक अपनी शक्ति और योग्यता भर काम कर सकें।

५—पर्यवेक्षण के काम की पद्धतियों के सुधार में दक्ष होना चाहिए, जिससे अपने कर्मचारियों साधनों और सामग्रियों का अच्छे-से-अच्छा उपयोग कर सके।

प्रशिक्षण के तीन कार्यक्रम

प्रथम दो बातों के सम्बन्ध में प्रशिक्षण देने का कोई प्रयत्न उद्योग-में-प्रशिक्षण के पाठ्यक्रमों में नहीं किया जाता। इसका कारण यह है कि ये दोनों ही बातें या तो किन्हीं व्यक्तिगत प्रतिष्ठानों की अपनी विशेषतायें होती हैं या ये टेक्निकल विषय हैं, जिन्हें कालेजों और शिक्षण संस्थाओं जैसे टेक्निकल केन्द्रों में पढ़ाया जाता है। उद्योग-में-प्रशिक्षण द्वारा केवल शेष तीन योग्यताओं के विकास के लिये ही प्रयत्न किया जाता है ये योग्यताएँ सभी पर्यवेक्षकों के लिये, चाहे वे किसी भी उद्योग, व्यापार या सेवा में काम करते हों, सभी स्तरों पर सामान्य रूप से आवश्यक हैं। इन्हीं के अनुसार प्रशिक्षण के तीन कार्यक्रम रखे गये हैं:—

१. *कार्य-शिक्षण*—पर्यवेक्षकों को स्पष्ट और सुबोध निर्देश देने के कार्य में कुशलता प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। अभी तक नये कामकरों को प्रशिक्षण देने की सामान्य पद्धति यह रही है कि जैसा सामने आये वैसा करो और जो न हो उसे छोड़ दो। इससे काम तो सुचारु ढंग से हो ही नहीं सकता और आगे चलकर इससे असाध्य समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। प्रशिक्षण की पद्धति में ये विषय सम्मिलित हैं कि निर्देश देने से पूर्व अपने को किस प्रकार प्रस्तुत किया जाय; किस प्रकार इस ढँग से निर्देश दिये जायँ कि सीखनेवाला सरलता-पूर्वक उन्हें समझ सके; शिक्षा देने के उद्देश्य से किसी काम को सुविधाजनक विभागों में किस प्रकार विभाजित किया जाय और उन मुख्य बातों को कैसे बनाया जाय, जो शीघ्रता तथा सरलता से सीखने में सहायक सिद्ध हो सकें। निर्देश इतने स्पष्ट हों कि उनके समझने में किसी प्रकार का न तो संदेह हो और न उनके सम्बन्ध में पुनः पूछने की आवश्यकता ही हो।

२. *कार्य-सम्बन्ध*—हमारे पर्यवेक्षकों में इस दक्षता का अभाव है और सम्भवतः आज की हमारी औद्योगिक अशांति का सबसे महत्वपूर्ण कारण यही है। इसमें इस बात पर जोर दिया जाता है कि एक कुशल नेता बना जाय। यह पुरानी धारणा कि नेता जन्म से ही होता है, सर्वथा ठीक नहीं है। सतत अभ्यास और व्यवस्थित प्रशिक्षण के द्वारा 'नेता' बनाये जा सकते हैं। सभी व्यावहारिक बातों के लिये सुपरवाइजर को अपने आदमियों पर निर्भर रहना पड़ता है। यदि उनसे आवश्यक सहयोग प्राप्त नहीं होता तो काम

के सम्बन्धों में सुधार करने के उसके सारे प्रयत्नों का कोई फल न होगा। कार्य-सम्बन्ध की शिक्षा के कार्यक्रम में इस बात की शिक्षा दी जाती है कि पर्यवेक्षक अपने लक्ष्य को उन लोगों के मन में कैसे बैठाये, जिनका कि वह पर्यवेक्षण करता है और किस प्रकार ऐसा अनुकूल वातावरण बनाये, जिससे उत्पादन-कार्य मानवीय काम के रूप में सम्भव हो सके। इससे उसे एक ऐसा तरीका भी मालूम हो जाता है, जिसके प्रयोग से वह दिन-प्रतिदिन सामने आने-वाली समस्याओं को सुलझा सकता है। वह तरीका यह है कि समस्या के सभी तथ्यों को जानकर सावधानीपूर्वक उनकी समीक्षा करे, फिर उन पर जो-जो कार्यवाही सम्भव हो, उस पर विचार करे और सबसे उत्तम कार्यवाही का निश्चय कर उसके अनुसार कार्य करे तथा अन्त में यह जानने के लिये कि पूर्व-निश्चित लक्ष्य की पूर्ति हुई या नहीं, उस कार्यवाही के फल की वह जाँच करे।

३. *कार्य-प्रणाली*—इसका अर्थ है ऐसे उपायों का ढूँढ़ना, जिनकी सहायता से काम करने की प्रणालियों में सुधार किये जा सकें। किसी कामकर पर काम का तथाकथित भारी दबाव स्वतः उस काम के कारण नहीं होता, वरन् उसके करने की जटिल प्रणाली के कारण होता है। यदि कार्य-प्रणाली व्यवस्थित और योजनानुसार हो तो अनावश्यक काम को सरलता से कम किया जा सकता है। इससे पर्यवेक्षक और कामकर दोनों ही को सहायता मिलती है। कार्यक्रम की पहली बात यह है कि जिस समय कामकर काम पर लगा हो, उस कार्य की विभिन्न बातों को लिख लिया जाय। पर्यवेक्षक कार्य को विभाजित करके सभी त्रुटियों तथा कठिनाइयों को लिखने का प्रयत्न करे। इसके बाद कार्य-सम्बन्धी प्रत्येक क्रिया की ओर ध्यान दिया जाय और देखा जाय कि वह अनावश्यक तो नहीं है या उसे दूर करना कहाँ तक सम्भव है या उसके स्थान पर कौन-सा ढंग अधिक अच्छा होगा। फिर इन सब विचारों को एकत्र किया जाय, जिससे प्रणाली में सुधार करने के सम्बन्ध में व्यावहारिक सुझाव दिये जा सकें। नयी प्रणाली तैयार करते समय उसके लाभों का मूल्यांकन सदा कम किया जाता है। इससे वास्तव में लाभदायी और विकसित प्रणाली का आविष्कार करने में सहायता मिलती है कार्यक्रम की अन्तिम स्थिति वह है, जब उच्च अधिकारियों से आवश्यक स्वीकृति पाने के बाद नई प्रणाली कार्यान्वित की जाती है।

पर्यवेक्षकों की शिक्षा

उद्योग-में-प्रशिक्षण की शिक्षा सामूहिक विचार-विमर्श-द्वारा दी जाती है। इससे पर्यवेक्षकों को अपनी कठिनाइयाँ प्रकट करने में सहायता मिलती है। अपनी विश्लेषण और समीक्षात्मक शक्ति को विकसित करने के लिए वे प्रशिक्षण के समय वाद-विवाद करने को बराबर प्रोत्साहित किये जाते हैं। इससे बाद में जब कभी कोई समस्या उनके सम्मुख प्रस्तुत होती है, तब उसके सुलझाने में उन्हें कोई असुविधा नहीं होती। उद्योग-में-प्रशिक्षण के कार्यक्रम को और भी व्यावहारिक बनाने के लिए कुछ बातों पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है। सामूहिक वाद-विवादों में केवल उन्हीं समस्याओं पर विचार होना चाहिये, जिनका सामना वास्तविक रूप से पर्यवेक्षकों को करना पड़ा हो। पर्यवेक्षकों को प्रशिक्षण मालिकों के सामने अथवा कारखाने के भीतर देना चाहिये, जिससे वे इस प्रकार के कार्यक्रमों को मालिकों से संबंधित होने के कारण महत्व दें। कोई भी ऐसा कार्यक्रम थोड़े समय का हो, जिससे पर्यवेक्षक सिखाई गई बातों को आत्मसात् कर सकें। साथ ही, मालिकों को भी इन कार्यक्रमों में अभिरुचि रखनी चाहिए, तभी पर्यवेक्षक भी सीखी गई कार्य-विधि के प्रति अधिक सजग रहेगा।

योजना की उपयोगिता

आज देश में जो स्थिति है, उसे देखते हुए उद्योग-

में-प्रशिक्षण की योजना पर्यवेक्षकों के अतिरिक्त उद्योग के ऊँचे अधिकारियों तथा अन्य सरकारी विभागों में भी लागू किया जा सकता है। सरकारी विभागों में इस बात की आवश्यकता है कि सरकारी अधिकारियों को अपने रुख में परिवर्त्तन करना चाहिए और इस परिवर्त्तन में उद्योग-में-प्रशिक्षण की शिक्षा से काफी सहायता मिलेगी। इससे सरकारी कार्यालयों की अदक्षता, अनुशासनहीनता और असावधानी का अंत हो जायगा।

जहाँ तक उद्योग के ऊँचे अधिकारियों तथा निर्देशकों (डाइरेक्टर्स) के प्रशिक्षण का प्रश्न है, उन्हें पर्यवेक्षण-संबंधी मूल सिद्धांतों की शिक्षा दिए बिना केवल कामकरों को ही शिक्षा देने से काम नहीं चल सकता। परंतु बहुत से ऐसे प्रबंधक हैं, जो अपने को बदलना ही नहीं चाहते। बहुत से अपने को जन्मजात पर्यवेक्षक समझते हैं। औद्योगिक शांति-रक्षा के लिए उद्योग के ऊँचे अधिकारियों को प्रशिक्षण देना आवश्यक है। यदि प्रबंधक अधिकारी इस दिशा में अपना हार्दिक सहयोग दें, तो यह कार्य कोई कठिन नहीं। सरकार यह अनिवार्य कर सकती है कि प्रबंधकों को भी इस प्रकार का प्रशिक्षण लेना होगा। इसमें भय यह है कि प्रबंधक इसे सरकार का अनावश्यक हस्तक्षेप समझें। इससे उद्योग-में-प्रशिक्षण की वह वास्तविक भावना नष्ट हो जाती है, जिसे हम जगाना चाहते हैं। यदि प्रबंधकों को समझा-बुझाकर काम लिया जाय, तो उनका सहयोग सरलता से प्राप्त किया जा सकता है।

(पृष्ठ १२ से आगे)

की सरकार ने सर्वप्रथम स्थापना की थी। अप्रैल, १९४७ में एक जिला न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक विशेष चीनी उद्योग समझौता बोर्ड की स्थापना हुई। इंडिया शुगर सिंडीकेट और उ० प्र० एवं बिहार चीनी मिल मजदूर संघ के प्रतिनिधि उसके सदस्य नियुक्त किए गए। इस बोर्ड ने चीनी उद्योग के प्रतिनिधि संघों के बीच मजदूरों के नियोजन की शर्तों के संबन्ध में समझौता करके एक बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया। बाद में इन्हीं शर्तों को एक आदेश द्वारा स्थायी आदेश के रूप में लागू कर दिया गया। ये स्थायी आदेश थोड़े-बहुत परिवर्त्तनों के साथ इस उद्योग में अभी भी लागू हैं। मौसम के प्रारम्भ में मौसमी मजदूरों के नियोजन, एक काम से दूसरे पर मजदूरों के स्थानांतरण और अनिवार्य छुट्टी देने के प्रश्नों पर भी इसी बोर्ड ने मजदूरों और मालिकों के बीच समझौता कराया।

चीनी उद्योग के लिए स्थापित त्रिदल सम्मेलन का उल्लेख पहले हो चुका है। यह पहले-पहल १९४८ में बुलाया गया था। अभी हाल में नवम्बर (१९५२) में लखनऊ में त्रिदल सम्मेलन हुआ था, जिसमें १९५१-१९५२ के मौसम के लिए बोनस, त्योहारों की छुट्टी, न ली गई छुट्टियों की मजदूरी देने, सरूपीकरण समिति (चीनी) की सिफारिशों को लागू करने, रिटेनर तथा बैठकी के लिए क्षतिपूर्ति के निश्चय आदि पर विचार किया गया।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सरकार की नीति गत्यात्मक रही है और यह इसलिये भी आवश्यक है कि औद्योगिक संबधों की समस्या अनिवार्यतः एक मानवीय समस्या है, जो सामाजिक विचारधारा और आर्थिक दशा के बदलने के साथ-साथ बदलती रहती है। अतः औद्योगिक संबन्धों के नियमन की समस्या के समाधान के लिए समय-समय पर उचित समाहार की बराबर आवश्यकता बनी रहती है। उत्तर प्रदेश इस समस्या के संतोषजनक समाहार के लिए बराबर प्रयत्न करता रहा है।

सन् १९५२ के कार्यों का सिंहावलोकन

श्रमिक संघ एवं स्थायी आदेश

सन १९५२ में भी उत्तर प्रदेश के प्रति श्रमायुक्त श्री महेशचन्द्र पन्त ही इस राज्य के श्रमिक संघों के रजिस्ट्रार रहे। उन्हें श्रमिक संघ कानून, १९२६ के प्रशासन में सहायता देने तथा श्रमिक संघ विभाग के कार्य-संचालन का भार प्रदेश के श्रमिक संघों के सहायक रजिस्ट्रार श्री पवनविहारी लाल पर रहा।

श्रमिक संघ कानून, १९२६ के अन्तगत प्रमाणित संघों की संख्या वर्ष के प्रारम्भ में (१-१-५२ को) ५५८ थी। वर्ष के अन्तर्गत १०२ नये संघ प्रमाणित हुये और एक संघ अवध एण्ड तिरहुत रेलवे टिकट कलेक्टर्स असोसियेशन, गोरखपुर का प्रधान कार्यालय बिहार राज्य से उठकर उत्तर प्रदेश में आ गया। वर्ष के अन्तर्गत अप्रमाणित हुए संघों की संख्या १०० थी। इन संघों के अप्रमाणित होने का कारण इनके पदाधिकारियों द्वारा वार्षिक हिसाब का विवरण-पत्र न भेजना था। वर्ष के अन्त में (३१-१२-५२ को) प्रमाणित संघों की संख्या ५६१ थी। इसमें दो महासंघ (फेडरेशन) भी सम्मिलित हैं।

वर्ष के अन्त में राज्य के प्रमुख औद्योगिक नगरों में,श्रमिक संघों की संख्या इस प्रकार थी:—कानपुर ६५, लखनऊ ५७, आगरा ४६, गोरखपुर ३५, इलाहाबाद २७, देवरिया २१, बनारस १७, बरेली ११ वर्ष के अन्त में प्रदेश के विभिन्न उद्योगों में प्रमाणित संघों की संख्या निम्न प्रकार से थी :— (क) चीनी उद्योग १०१, (ख) सूती उद्योग ५३, (ग) नगरपालिकायें ४२, (घ) रेल तथा यातायात ४२, (ङ) इञ्जीनियरिंग ४०, (च) मुद्रण उद्योग २२, (छ) खेती १८, (ज) विविध २४३। इन संख्याओं से स्पष्ट है कि प्रदेश में चीनी उद्योग ही ऐसा उद्योग है, जिसमें सबसे अधिक श्रमिक संघ हैं। इस उद्योग के श्रमिक सबसे अधिक संगठित हैं।

उत्तर प्रदेश में श्रमिक संघों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। ३१ मार्च, १९४७ को प्रमाणित संघों की संख्या २११ थी, जो १९५१ और १९५२ के अन्त में बढ़कर क्रमशः ५५८ और ५६१ हो गई। इस स्थल पर उत्तर प्रदेश के प्रमाणित संघों की संख्या की तुलना अन्य राज्यों से करना भी उपयोगी होगा। ३० सितम्बर, १९५२ तक प्रमाणित संघों की संख्या बम्बई में ७२६, मद्रास में ७१३, उत्तर प्रदेश में ५३३, मध्य प्रदेश में ११८, और आसाम में ८५ रही।

जन-प्रिय सरकार के स्थापित होने के पश्चात् राज्य में संघों की उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है, जिसके कारण रजिस्ट्रार के कार्यालय का कार्य भी बहुत बढ़ गया है। बहुत से संघ राजनैतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिये स्थापित होते रहे हैं तथा बहुत से संघों की स्थापना नियन्त्रण-संबन्धी कठिनाइयों को हल करने के लिये हुई है।

उत्तर प्रदेश के श्रमिक संघों के निरीक्षक ने आलोच्य वर्ष में १२२ संघों का निरीक्षण किया तथा संघों से सम्बन्धित ३३ विवादग्रस्त मामलों में जाँच की। श्रमिक संघ निरीक्षक का समय अधिकतर संघों की इन शिकायतों की जाँच करने में लग जाता रहा है, जो दलबन्दी के कारण बहुधा उत्पन्न हो जाती हैं। संघों के निरीक्षणों से यह ज्ञात हुआ कि

कि संघों के पदाधिकारी साधारणतया निम्नांकित आवश्यक विषयों पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते :—

१—अधिकतर श्रमिक संघ अपना हिसाब-किताब ठीक से नहीं रखते, जिससे आगे चलकर आपस में अविश्वास उत्पन्न होता और फूट पड़ जाती है। हिसाब-किताब की जाँचों से मालूम हुआ है कि निम्न प्रकार की गलतियाँ साधारणत: होती हैं : (अ) सदस्यता एवं चन्दे से प्राप्त रुपया बहुत समय तक सदस्यों या पदाधिकारियों के पास बिना बहीखाते में दर्ज किये या रसीद दिये पड़ा रहता है; (आ) बहीखाता विधिपूर्वक नहीं बनाया जाता; (इ) हर माह का आय-व्यय बहीखाते में नहीं लिखा जाता; (ई) पदाधिकारियों द्वारा किये गये खर्चे की पुष्टि कार्यकारिणी या आम सभा द्वारा नहीं कराई जाती; (उ) वाउचर विधिपूर्वक नहीं रक्खे जाते। वाउचरों की जाँच से मालूम हुआ है कि किसी रकम के खर्च करने की प्रस्तावना पर सभापति एवं प्रधान मन्त्री के हस्ताक्षर कर देना ही पर्याप्त समझा जाता है और रुपया पाने वाले के हस्ताक्षर बहुधा जरूरी नहीं समझे जाते; तथा (ऊ) संघ का रुपया मन्त्री अथवा कोषाध्यक्ष के पास बहुधा संघ के विधान के विपरीत पड़ा रहता है। उसे विधानानुसार किसी बैंक अथवा डाकखाने में जमा करने की व्यवस्था समय से नहीं की जाती।

२—चुनाव विधान के अनुसार समय से नहीं होते और बहुधा चुनाव-सम्बन्धी नियमों का पूर्णरूप से पालन न होने के कारण दलबन्दी हो जाती है।

३—कार्यवाही-रजिस्टर एवं सूचना-पुस्तक ठीक से नहीं भरी जाती।

४—संघ के पदाधिकारी सदस्यों के शारीरिक एवं बौद्धिक विकास पर समुचित ध्यान नहीं देते। वे संघ का मुख्य उद्देश्य मालिकों से आर्थिक सुविधा प्राप्त करना एवं माँगों की पूर्ति करना ही समझते हैं।

५—वर्ष के अन्त में जब नई कार्यकारिणी का चुनाव होता है तो बहुधा देखा गया है कि यदि नई कार्यकारिणी में पुरानी कार्यकारिणी के मुख्य सदस्य न रहे, तो वे सदस्य जिनके पास पुराने कागज, खाते आदि रहते हैं, नवीन कार्यकारिणी को नहीं देते और इसमें समय एवं शक्ति का अनावश्यक अपव्यय होता है।

वर्ष की कतिपय उल्लेखनीय घटनायें इस प्रकार हैं :—

१—पैराशूट फैक्टरी यूनियन, कानपुर के दो विरोधी दलों के मध्य यूनियन की सन् १९५२-५३ की कार्यकारिणी के चुनाव के सम्बन्ध में विरोध काफी समय से चल रहा था। श्री मुहम्मद यूसुफ बिहारी के यूनियन के नवीन प्रधान मन्त्री होने के नाते कार्यकारिणी के दिनांक ४-१-५२ को चुने गये सदस्यों की एक सूची भेजने पर संघ-निरीक्षक ने विरोधी दलों से जाँच-पड़ताल की। जाँच-पड़ताल तथा यूनियन के कागजों को देखने से यह तय पाया गया कि दिनांक ४-१-५२ को होनेवाला चुनाव वैधानिक था। अतः रजिस्ट्रार ने इस चुनाव में निर्वाचित कार्यकारिणी को संघ के रजिस्टर में दर्ज करने तथा यूनियन के भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री टी० एस० तिवारी को यूनियन के समस्त कागज-पत्र नव-निर्वाचित प्रधान मन्त्री को देने का आदेश दिया।

२—हैण्ड प्रिण्टर्स यूनियन, कानपुर के सदस्यों द्वारा एक शिकायत मिली कि चन्दे का ७,००० रुपया सभापति, प्रधान मंत्री तथा कोषाध्यक्ष द्वारा बैंक में जमा नहीं किया गया, तथा यूनियन के प्रबन्ध में भी कुछ गड़बड़ी थी। श्रमिक संघ निरीक्षक ने जाँच करके अपनी रिपोर्ट में बतलाया कि संघ का धन बैंक में जमा कर दिया गया और शिकायत का कोई कारण नहीं रहा।

३—डिस्ट्रिक्ट सप्लाई आफिसर, कानपुर द्वारा सूचना प्राप्त हुई कि हैण्डलूम कर्घा असोसियेशन, कर्नलगंज, कानपुर एव बेकनगंज कर्घा असोसियेशन बेकनगंज, कानपुर ने सूत-वितरण के सम्बन्ध में कुछ अनियमित कार्य किया। वस्त्र-निरीक्षकों द्वारा पकड़े गये २ स्टाक रजिस्टर और २८ कैशमेमो की

किताबें रजिस्ट्रार के पास विभागीय जाँच के लिये प्राप्त हुई। डिस्ट्रिक्ट सप्लाई आफिसर ने अनुरोध किया कि यदि उक्त दोनों संघों के पदाधिकारियों के विरुद्ध कोई प्रमाण प्राप्त हो सके तो इन संघों के प्रमाणपत्र रद्द कर दिये जायँ। मामला विचाराधीन है।

४—पायनियर एण्ड स्वतंत्र भारत इम्प्लाईज़ यूनियन, लखनऊ की कार्यकारिणी के दो विभिन्न दलों में कार्यकारिणी के चुनाव के विषय में विवाद उठ खड़ा हुआ। श्रमिक संघ निरीक्षक ने विरोधी दलों से मिल कर रिपोर्ट दी कि श्री एम० बी० बनर्जी के पदत्याग के बाद २२ सितम्बर, १६५१ से श्री गोविन्दसिंह यूनियन के सेक्रेटरी रहे। इसके बाद ११ जनवरी, १६५२ को यूनियन की कार्यकारिणी का नया चुनाव हुआ। निरीक्षक की जाँच के फलस्वरूप श्रमिक संघों के रजिस्ट्रार ने ११-१-५२ को हुए चुनाव को श्रमिक संघ रजिस्टर में दर्ज करने की आज्ञा प्रदान की।

स्थायी आदेश कानून और नियमों का प्रशासन

इस वर्ष भी उत्तर प्रदेश में स्थायी आदेशों के प्रमाणपत्र-दाता अधिकारी राज्य के श्रमायुक्त श्री ओंकारनाथ मिश्र, आइ० ए० एस० ही रहे। श्रमिक संघों के सहायक रजिस्ट्रार श्री पवनबिहारी लाल की देख-रेख में यह कार्य होता रहा। प्रमाणपत्र-दाता अधिकारी के आदेशों पर अपील सुनने का अधिकार पूर्ववत् स्टेट इण्डस्ट्रियल ट्राइब्यूनल, इलाहाबाद को ही रहा।

औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) कानून के वैधानिक प्रसार में कोई नवीन अन्तर नहीं हुआ। यह कानून राज्य के उन समस्त औद्योगिक प्रतिष्ठानों पर लागू रहा, जिनमें २३-४-४५ से अब तक किसी भी दिन १०० या १०० से अधिक कामकर काम कर चुके हों या कर रहे हों। गत वर्ष की भाँति यह कानून निम्न औद्योगिक प्रतिष्ठानों पर भी लागू रहा :—

१—उत्तरी भारत मिल मालिक संघ, कानपुर के सदस्य कारखाने, २—उत्तर प्रदेशीय तेल मिल-मालिक संघ, कानपुर के सदस्य कारखाने, ३—विद्युत् कम्पनियाँ, ४—जलकल, ५—काँच के कारखाने, ६—वे प्रतिष्ठान, जिनके प्रबन्धक स्थायी आदेशों को स्वेच्छा से प्रमाणित कराना चाहें।

वर्ष के आरम्भ में जिन औद्योगिक प्रतिष्ठानों के स्थायी आदेश प्रमाणित हो चुके थे, उनकी संख्या ५०७ थी। वर्ष के अन्त में ऐसे प्रतिष्ठानों की संख्या ५३६ हो गई।

प्रमाणित स्थायी आदेशों पर प्रस्तावित संशोधनों में से निम्नांकित प्रतिष्ठानों के प्रस्तावित संशोधन इस वर्ष प्रमाणित हुए :—(१) पीलीभीत इलेक्ट्रिक कं०, पीलीभीत, (२) वाटर वर्क्स, कानपुर, तथा (३) अयोध्या डिस्टिलरी, राजा-का-सहसपुर (सहारनपुर)।

इस वर्ष प्रमाण-पत्र-दाता अधिकारी के आदेशों पर दो अपीलें की गई, जो शकर मजदूर संघ, कप्तानगंज तथा लक्ष्मी इलेक्ट्रिक सप्लाई कं०, हरदोई द्वारा कानून की धारा ६(१) के अन्तर्गत की गई थीं। इन अपीलों के निर्णय स्टेट इण्डस्ट्रियल ट्राइब्यूनल ने दे दिये हैं।

स्थायी आदेशों के श्रम-निरीक्षकों ने इस वर्ष उत्तर प्रदेशीय औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) नियम, १६४६ के अन्तर्गत १४ जाँचें कीं तथा नियम १० के अन्तर्गत १७ प्रतिष्ठानों के कामकरों के प्रतिनिधियों के चुनाव किए। उन्होंने औद्योगिक प्रतिष्ठानों के प्रमाणित स्थायी आदेशों की पालन-व्यवस्था-सम्बन्धी जाँच के लिए १८३ निरीक्षण किये। निरीक्षकों द्वारा ज्ञात हुआ कि अधिकतर प्रतिष्ठानों द्वारा अपने प्रमाणित स्थायी आदेशों का पूर्णत: पालन नहीं किया गया। ऐसे सभी प्रतिष्ठानों को पृथक्-पृथक् उल्लंघनों की पूर्ति की रिपोर्ट भेजने का आदेश दिया गया। फलस्वरूप प्रमाणित स्थायी

आदेशों के पालन में पर्याप्त सुधार हुआ। जिन प्रतिष्ठानों ने उल्लंघन-निवारण की रिपोर्ट नहीं भेजी, उन्हें धारा १३ के अन्तर्गत अभियोग चलाने के नोटिस भेजे गए। नोटिस भेजने पर भी असावधानी बरतने पर लक्ष्मण रोलिंग मिल्स, हरीशगंज, कानपुर पर अभियोग चलाया गया, फलस्वरूप प्रतिष्ठान के दो अभियुक्त मालिकों में से प्रत्येक पर ५०) रु० जुर्माना किया गया।

कानून की धारा १४ के अन्तर्गत इस वर्ष किसी भी प्रतिष्ठान को छूट नहीं दी गई। चीनी मिलों को दी गई छूट जारी रही और इन मिलों पर उत्तर प्रदेशीय औद्योगिक झगड़ा कानून के अन्तर्गत सरकार-द्वारा निर्धारित स्थायी आदेश लागू रहे।

भारत के अन्य राज्यों से प्राप्त औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) कानून की गत वर्ष की रिपोर्टों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त कानून के पालन में मद्रास को छोड़कर उत्तर प्रदेश अन्य राज्यों की तुलना में अग्रगामी रहा है। इतना ही नहीं, स्थायी आदेशों के आलेखों पर सुनवाई के समय यथासम्भव प्रबन्धकों एवं कामकरों दोनों की सम्मति से स्थायी आदेशों में ऐसे संशोधन किये गये, जिससे उन्हें कार्यरूप में परिणत करने में असुविधा न हो। कानून की वैधानिक सीमाओं को दृष्टि में रखते हुए इस ओर आशातीत सफलता मिली।

(पृष्ठ २० से आगे)

सभी कामकरों को कोई-न-कोई डिस्पेन्सरी और दफ्तर उनके रहने की जगह के पास ही मिल जाय।

रोगियों की सुविधा के लिये १३ डिस्पेन्सरियाँ और दो चलते-फिरते औषधालयों में ४१ डाक्टरों, जिनमें एक लेडी डाक्टर भी है, ३२ कम्पाउण्डरों और ११ मिडवाइफों को नियुक्त किया गया है। इन औषधालयों से प्रति सप्ताह ६००० से अधिक बीमा किये हुये श्रमिक दवाओं का लाभ उठाते हैं। इसके अतिरिक्त जो रोगी औषधालयों में आने से असमर्थ होते हैं, उनको देखने के लिये डाक्टर स्वयं उनके घर जाते हैं और वे अपने कार्य में निरन्तर क्रियाशील हैं। इस योजना के अनुसार अब लगभग एक लाख कर्मचारी लाभ उठाने के हकदार हैं।

नियुक्त दिवस (२४ फरवरी, १९५२) से ३० नवम्बर, सन् १९५२ तक कानपुर के स्थानीय कार्यालयों में ३,६३२ काम पर चोट लगने की घटनाओं की रिपोर्टें आई। उपर्युक्त दिवस से ४,५१७ अस्थायी असमर्थता की माँगें आई और उन बीमा-युक्त व्यक्तियों को हितलाभ दिया गया।

बीमारी के हितलाभ की माँगें ५१२ आई। उनमें से ३६२ को हितलाभ दिया गया है।

बीमा औषधालयों में ३,६७,२२७ बीमायुक्त व्यक्ति आये। अब तक ३,४६८ क्षय रोगी प्रविष्ट किये गये और उनका उपचार किया गया। ६५,९७० श्रमिकों को 'डाक्टरी' प्रमाण-पत्र प्रदान किये गये।

४,६२८ बार बीमा डाक्टरों द्वारा बीमायुक्त व्यक्तियों से उनके निवास-स्थान पर भेंटें की गई हैं।

५८ मामले मेडिकल बोर्ड को भेजे गये हैं, जिनमें से ३४ पर निर्णय दिया जा चुका है तथा स्थायी असमर्थता के हितलाभ 'पेन्शन' रूप में दिये जा रहे हैं।

२ व्यक्तियों को "आश्रित हितलाभ" प्राप्त हो रहा है।

रीजनल बोर्ड की तीन बैठकें हो चुकी हैं।

इस प्रकार हम देख रहे हैं कि इस योजना से काफी श्रमिक लाभ उठा रहे हैं। ज्यों-ज्यों इस योजना को श्रमिकों का सहयोग मिलता जायगा, यह देश के अन्य भागों में फैलती जायगी।

★ *१९५२ की कार्यवाहियों का संक्षिप्त विवरण*

दूकान, कारखाना एवं ब्वायलर कानूनों का प्रशासन

सन् १९५२ में उ० प्र० दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून, १९४७ के प्रशासन की व्यवस्था गत वर्ष जैसी ही रही। इस वर्ष दूकान कानून को गोंडा के नगरपालिका क्षेत्र में भी लागू कर दिया गया। यद्यपि बस्ती, बलिया, गाजियाबाद, बलरामपुर, देवरिया, कायमगंज, कोसीकलाँ बिजनौर आदि में भी इस कानून को लागू करने की माँग बराबर रही है, परन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण उसकी पूर्ति नहीं की जा सकी।

शरणार्थी दूकानदारों ने कानून की विभिन्न धाराओं के अनुरूप अपने को अत्यधिक नियंत्रित कर लिया है, परन्तु निर्धनता और लाभ के लोभ के कारण वे बन्दी दिवसों पर अपनी दूकान को बन्द रख कर भी सड़क के किनारे वस्तुएँ फैलाकर बेचा करते हैं। इस प्रवृत्ति से कानून के लागू होने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, अतएव निरीक्षकों द्वारा उन्हें समझाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं।

निरीक्षण—पूर्णकालीन १३ निरीक्षकों द्वारा किए गए निरीक्षणों की संख्या ३९,६८५ रही और राज्य के विभिन्न भागों में प्रति मुख्य दूकान निरीक्षक द्वारा ५९१ निरीक्षण किए गए। इस प्रकार इस वर्ष कुल ४०,२७६ निरीक्षण किए गए। पिछले वर्ष ३६,६१५ निरीक्षण किए गए थे। निम्न तालिका में १३ पूर्णकालीन निरीक्षकों द्वारा विभिन्न नगरों में किए गए निरीक्षणों की संख्या दी गई है—

नगर	निरीक्षकों की संख्या	निरीक्षणों की संख्या
कानपुर	२	६,४२४
आगरा	१	२,९२८
अलीगढ़	१	२,८५२
इलाहाबाद	१	३,२१६
बनारस	१	३,७७२
बरेली	१	३,२६८
फैजाबाद	१	२,५१४
गोरखपुर	१	२,७८७
झाँसी	१	३,०००
लखनऊ	१	३,०४०
मेरठ	१	२,७७२
मुरादाबाद	१	३,११२
योग	१३	३९,६८५

इन निरीक्षणों के अतिरिक्त फीरोजाबाद, हाथरस, सहारनपुर और गोंडा के निवासी श्रम निरीक्षकों और रामपुर के श्रम निरीक्षक ने क्रमशः ७१५, ५५६, ६६२, १२१ और ४८४ निरीक्षण किए। इस प्रकार निरीक्षणों की कुल संख्या ४२,८१७ रही।

निम्न तालिका में इस कानून के लागू होने के समय से कुल निरीक्षणों की संख्या तथा पूरे समय काम करने वाले निरीक्षकों द्वारा किए गए निरीक्षणों की औसत संख्या दी गई है—

वर्ष	निरीक्षणों की संख्या	प्रति निरीक्षक औसत
१९४८	२५,४३२	१९२५
१९४९	३२,३४८	२४८८
१९५०	३६,८७४	२८३६
१९५१	३९,५७१	३०४४
१९५२	५९,६८५	३०५३

उक्त विवरण से स्पष्ट है कि निरीक्षणों की संख्या में बराबर वृद्धि हो रही है।

अभियोग—विचाराधीन वर्ष में कानून के अन्तर्गत ६९३ अभियोग चलाये गये। गत वर्ष अभियोगों की संख्या ३८० थी। निरीक्षणों की संख्या में हुई वृद्धि से प्रकट है कि पूर्णकालीन निरीक्षकों ने कानून को पूर्णतया लागू करने के लिये कितना प्रयत्न किया, जिससे कामकरों के हितों की यथासम्भव सुरक्षा हो सके।

आलोच्य वर्ष में चलाये गये अभियोगों का विवरण इस प्रकार है:—

१. पिछले वर्ष की समाप्ति के समय विचाराधीन मामलों की संख्या .. ९६
२. आलोच्य वर्ष में चलाये गये मामलों की संख्या .. ६९३

योग ७८९

३. निर्णीत मामलों की संख्या .. ५७३
४. मामलों की संख्या जिनमें सजा दी गई .. ५६२
५. ,, ,, रिहाई की गई .. ८
६. वापस लिए गए मामलों की संख्या ..
७. कोर्ट द्वारा जमा किए गए ,, ,, .. ३
८. जुर्माना की गई कुल रकम ८५८९ रु०
९. वर्ष की समाप्ति के समय विचाराधीन मामलों की संख्या .. २१६

५६२ मामलों में कुल ८५८९ रु० जुर्माना किया गया। इस प्रकार प्रति मामले पीछे औसत १५) रु० जुर्माना किया गया। ऐसे छोटे जुर्मानों से कोई रोक नहीं होती और कानून का उल्लंघन करने के अभ्यस्त लोगों का नैतिक ह्रास होता है। वे ऐसे जुर्मानों की परवाह नहीं करते।

शिकायतें—विचाराधीन वर्ष में १७३८ शिकायतें प्राप्त हुईं जब कि पिछले वर्ष १६५७ शिकायतें प्राप्त हुई थीं। पिछले वर्ष ११८ शिकायतें शेष थीं। इस प्रकार इस वर्ष कुल १८५६ शिकायतें रहीं। इनमें से १७४६ शिकायतों पर अन्तिम रूप से विचार किया गया और ११० शिकायतों पर जाँच जारी रही। अधिकांश शिकायतें मजदूरों की अनुचित पदच्युति और वेतन न देने से सम्बन्धित थीं।

कानून के आरंभ होने से लेकर अब तक शिकायतों की संख्या इस प्रकार रही—

वर्ष	शिकायतें
१९४८	१४२०
१९४९	१८८६
१९५०	२१०९
१९५१	१६५७
१९५२	१७३८

शिकायतों की संख्या में हुई वृद्धि से यह प्रकट होता है कि कामकर भी कानून से मिलने वाले लाभों को जान गए हैं और वे उनसे अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न करते हैं।

कारखाना कानून

उ० प्र० कारखाना नियम, १९५० के अन्तर्गत राज्य के १३४२ कारखानों को लाइसेन्स दिए गए इनमें २६ कारखाने ऐसे थे, जो ३१-३-५१ तक रजिस्टर्ड हो गए थे, परन्तु १९५१ में इन्होंने लाइसेन्स के लिए प्रार्थना-पत्र नहीं भेजा था और ११८८ कारखानों ने अपने लाइसेन्स को पुनः नया करवाया तथा २० नए कारखानों को लाइसेंस दिए गए। इस प्रकार राज्य में लाइसेन्स-प्राप्त कारखानों

कुल संख्या इस वर्ष १२३४ रही। १६० कारखानों को लाइसेन्स दिए जाने का विषय विचाराधीन रहा, क्योंकि उन्होंने कुछ शर्तों को पूरा नहीं किया था।

निरीक्षण—आलोच्य वर्ष में कारखाना कानून, १६४८, वेतन भुगतान कानून, १६३६ और मातृका हितलाभ कानून, १६३८ के अन्तर्गत किए गए निरीक्षणों की कुल संख्या ६३२६ रही। इसके अतिरिक्त बालक नियोजन कानून, १६३८ के अन्तर्गत २७२ निरीक्षण किए गए।

नक्शे—इमारतों के कुल ४३६ नक्शे स्वीकृति-हेतु प्राप्त हुए, जिनमें से ६६ जलपान-गृहों, विश्राम-गृहों और शरणस्थानों के तथा शेष अन्य कारखानों की इमारतों से सम्बन्धित थे।

शिकायतें और अभियोग—आलोच्य अवधि में ४२५ शिकायतें प्राप्त हुईं। इनमें से १७८ कारखाना कानून के अन्तर्गत, २३१ वेतन वितरण कानून के अन्तर्गत, १ मातृका हितलाभ कानून के अन्तर्गत और १५ विभिन्न थीं।

कारखाना कानून, वेतन-वितरण कानून और उनके अन्तर्गत बनाए गए नियमों का उल्लंघन करनेवाले १००२ कारखानों पर अभियोग चलाए गए। वेतन-वितरण कानून और नियमों के अन्तर्गत ३५ मामले चलाए गए।

दुर्घटनाएँ—कुल ८,३८० दुर्घटनाएँ हुईं, जिनमें से ३१ सांघातिक थीं और ८,३४६ असांघातिक रहीं।

आलोच्य अवधि में ४ निरीक्षक नियुक्त किए गए।

ब्वायलर कानून

प्रधान ब्वायलर-निरीक्षक द्वारा उक्त कानन के अन्तर्गत लंकाशायर, कार्निस, वाटर ट्यूब एवं वर्टिकल क्रास ट्यूब आदि कुल २,४६६ ब्वायलरों का निरीक्षण किया गया। इनमें ६२५ जल-परीक्षण, १५१४ खुले परीक्षण और ६० वाष्प-परीक्षण थे। इसके अतिरिक्त ब्वायलरों की आकस्मिक जाँच भी की गई। इस वर्ष २० नए ब्वायलरों का प्रमाणीकरण हुआ।

अभियोग—यूनाइटेड कमर्शियल वर्क्स, कानपुर (मालिक ब्वायलर संख्या यू० पी०/१५८३), बसरमल मंगलमल, कानपुर (मालिक ब्वायलर संख्या यू० पी०/२७८२), तथा एच० आर० शुगर फैक्ट्री, बरेली (मालिक ब्वायलर संख्या यू० पी०/२०६४) के ऊपर कानून की धाराओं का उल्लंघन करने के अपराध में अभियोग चलाये गए।

छूट—धारा ३४ (२) के अन्तर्गत हरदुआगंज पावर स्टेशन, हरदुआगंज (अलीगढ़), आगरा इलेक्ट्रिक सप्लाई कं० लि०, आगरा, अवध शुगर मिल्स, हरगाँव (सीतापुर), अयोध्या शुगर मिल्स, राजा-का-सहसपुर (मुरादाबाद) और बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, बनारस के ब्वायलरों को कानून की धारा ८ (१) अ से राज्य-सरकार द्वारा छूट दी गई।

प्रार्थना-पत्र—विभिन्न प्रकार के ट्यूबों के प्रार्थना-पत्रों की, जो ब्वायलरों के मालिकों ने सिफारिश करने के लिए भेजे थे, जाँच की गई तथा उन पर उचित स्वीकृति दी गई।
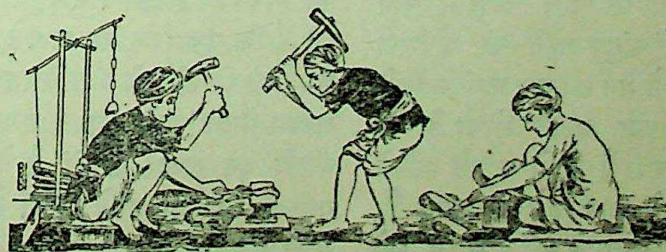
(पृष्ठ २४ से आगे)

है और वह यह कि समझौते की प्रगति में सहायता पहुँचाइये, बाधक मत बनिए। समझौता करने में आप दोनों का कल्याण है। यह न पूछिए कि किस कानून से आपसे एक चीज माँगी जा रही है। यह देखिये, औचित्य क्या कहता है, मानवता क्या तकाजा करती है और जमाने की रफ्तार आपको किस तरफ जाने का इशारा कर रही है। आप अपनी तबियत से, अपनी ओरसे सोचिए कि आपकी शक्ति, आपके साधन, आपके अधिकार क्या केवल आपको ही सुखी और सम्पन्न बनाने के लिए हैं या उनसे किसी और का भी उपकार हो सकता है। आखिर सब चीजें दुनिया में हैं किसलिये ? अगर दुनिया की न्यामतों को बटोर कर कुछ इने-गिने आदमियों के हाथों में सौंप दिया जाय तो क्या बाकी इन्सान चुप बैठे रहेंगे ? क्या वे भी असंतुष्ट होने के कारण ही संगठित न हो जायँगे और संगठन की शक्ति के आगे कौन ताकत ठहर सकी है ? पानी का एक-एक बूँद भी जब आपस में मिलकर संगठित होकर आगे बढ़ता है, तो बड़ी-बड़ी चट्टानों और पत्थरों को उखाड़ता-बहाता हुआ चला जाता है और मनुष्य के बनाए हुए बड़े-बड़े बाँध तोड़ देता है। फिर इन चन्द आदमियों की शक्ति उन- लाखों-करोड़ों इन्सानों की संगठित शक्ति के सम्मुख कब तक ठहर सकेगी, जो आज असंतोष के बीज खाकर और सब्र का पानी पीकर एक दूसरे के करीब आ रहे हैं..आप उनके असंतोष को घटाना चाहते हैं या बढ़ाना ? आप कहते हैं कि आदमी का स्वभाव ही है संतोष न करना और तृप्त न होना, पर सच बताइए, क्या आपने सचमुच कभी उन्हें संतुष्ट करने की कोशिश की है ? क्या आपने अपने मन का रुख कभी बदलने की बात भी सोची है ? क्या आपने सोचा है कि आखिर उनमें असंतोष क्यों है ? जो आपसे माँगने आता है, क्या आपने, जो आप उसे दे सकते हैं, उसे देने की कोशिश की है या जो नहीं दे सकते, उसे क्यों नहीं दे सकते, यही समझने का प्रयत्न किया है और देनेवाला क्या नहीं दे सकता ? अगर आप उस प्राचीन इतिहास में विश्वास नहीं करते, जिसके अनुसार कर्ण ने रणभूमि में अपनी पराजय और मृत्यु के समय भी अपने सोने का दाँत खोने के लिए अपनी सारी शक्ति लगाकर पृथ्वी में तीर मार कर पानी निकाला था, तो इस पर अवश्य ही गर्व करते होंगे कि आपके ही देश के एक महात्मा स्वामी दयानन्द ने एक शताब्दी पूर्व ही अपने को ही विष पिलानेवाले महराज को भी अपना ऊनी शाल और रुपये देकर कहा था, 'जाओ, तुम शीघ्र ही यहाँ से निकल जाओ वरना मेरे मरने पर पुलिस तुमको तुरन्त ही पकड़ लेगी।' जहाँ जिस देश में बिना मांगे ही मरते समय भी अपने को मारनेवाले के प्रति ऐसी उदारता दिखाने के उदाहरण मिलते हों, वहाँ चाँदी के कुछ सिक्कों पर, मान-अपमान की कुछ झूठी कसौटियों पर, जीवन-यापन के लिये कुछ साधारण सुविधाओं के प्रश्नों पर छोटी-छोटी बातों को लेकर झगड़े चलने देना और निर्बल पक्ष से जीतने की इच्छा लेकर ही किसी तीसरे व्यक्ति के पास समझौते के लिए जाना क्या आपको शोभा देता है !.. आप ही बताइए।

आप अपने साथ किसी चीज को ले नहीं जा सकते, यह आप भी जानते हैं। जब आपको यह सब यहीं छोड़ जाना है तो इसे मानवता के कल्याण के लिए आप स्वयं ही क्यों नहीं लगा देते ? माँगने-वाले को आप माँगने का मौका ही क्यों देते हैं ? और माँगने पर भी आप इन्कार और लड़ाई की चुनौती देकर उसके असंतोष को बढ़ाकर उसके संगठन को आप स्वयं ही इतना मजबूत बनाने का प्रोत्साहन देते हैं कि एक दिन वह आपसे आपकी सारी चीजें जबर्दस्ती ही छीन ले। शक्तिशाली सबल पक्ष के मेरे सम्पन्न मित्रो ! मुझे आपसे इतना ही कहना है कि यद्यपि इन लड़ाई-झगड़ों में ये सात सदियाँ बीत गयी हैं, फिर भी अपने इरादों में तबदीली की जरूरत महसूस करके, जमाने के साथ, समय की प्रगति के साथ बदलिए, अब भी समय है, अभी देर नहीं हुई।'

श्रम-हितकारी कार्यकलाप
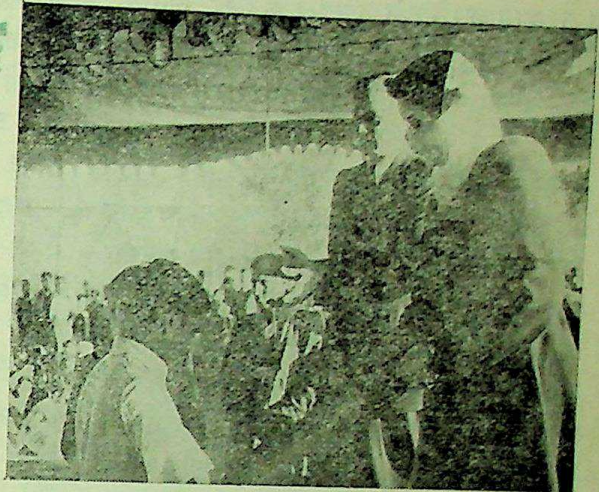
कानपुर के जिलाधीश श्री दलजीत सिंह राठौर, आई० ए० एस० की धर्मपत्नी वार्षिक खेल-कूद-प्रतियोगिता में विजयी खिलाड़ियों को दर्शनपुरवा केन्द्र में २५ जनवरी, ५३ को आयोजित समारोह में पुरस्कार-वितरण कर रही हैं।

मजदूरों के कल्याण के लिए उ० प्र० सरकार ने सन् १९३७ से श्रमिक क्षेत्रों में श्रम-हितकारी केन्द्र खोल रखे हैं। ये केन्द्र गत १५ वर्षों से मजदूरों की यथासम्भव सेवा करते रहे हैं। इनकी उपयोगिता इसी बात से प्रकट है कि इनकी लोकप्रियता उत्तरोत्तर बढ़ती गई है, जिसके फलस्वरूप सरकार ने भी इनकी संख्या में वृद्धि तो की ही, साथ ही इनके द्वारा मजदूरों को मिलनेवाली सुविधाएँ भी बढ़ा दीं। इस समय उत्तर प्रदेश में कुल ४० श्रम-हितकारी केन्द्र हैं, जिनमें ३६ स्थायी हैं और ४ अस्थायी। इन पर आलोच्य वर्ष में ७,०७,०६३ रु० व्यय किए गए, जब कि पूर्ववर्त्ती वर्ष में ६,६४,६३०) व्यय हुए थे। ये केन्द्र 'ए', 'बी' और 'सी' इन तीन श्रेणियों में विभक्त हैं। 'ए' श्रेणी के प्रत्येक केन्द्र में एलोपैथिक औषधालय, स्त्रियों और बच्चों के विभाग, सिलाई-कक्षा, कमरे के भीतर और बाहर के खेलों की व्यवस्था, अखाड़े, खेल-कूद के मैदान, वाचनालय, पुस्तकालय, मनोविनोद के लिए रेडियो, तबले और ढोलक की व्यवस्था है। 'बी' श्रेणी के केन्द्रों में एलोपैथिक औषधालय के स्थान में होम्योपैथिक औषधालय हैं। 'सी' श्रेणी के केन्द्र क्लबों की भाँति हैं। उनमें भीतरी-बाहरी खेल-कूद, वाचनालय, पुस्तकालय, रेडियो, हारमोनियम और तबले की व्यवस्था रहती है। कुछ ही समय हुए, 'सी' श्रेणी के ६ केन्द्रों में आयुर्वैदिक एवं यूनानी औषधालय खोलकर उन्हें 'बी' श्रेणी में परिवर्तित कर दिया गया है।

उक्त ४० श्रम-हितकारी केन्द्रों का विवरण इस प्रकार है—कानपुर में १३ (५ए+४बी+४सी), लखनऊ में ३ (१ए+२बी), बरेली में २ (१बी+१सी), मुरादाबाद में १ (ए), सहारनपुर में २ (१बी+१सी), गाजियाबाद में १(बी) बनारस में १ (ए), मिर्जापुर में १ (बी), आगरा में १ (ए), फीरोजा-

बाद में २ (१बी+१सी), अलीगढ़ में २(१बी+१सी), हाथरस में २(१बी+१सी), इलाहाबाद में १ (ए) तथा रुड़की में १(सी)। इन ३३ केन्द्रों के अतिरिक्त चीनी उद्योग में काम करनेवाले मजदूरों के लिए खतौली, रामकोला, बलरामपुर और राजा का साहसपुर में एक-एक मौसमी केन्द्र खोला गया है। इसी प्रकार देहरादून में चाय के बगीचों में काम करनेवाले मजदूरों के लिए हरवंशवाला टी स्टेट, ईस्ट होप टाउन टी स्टेट और उदियाबाग टी स्टेट में एक-एक केन्द्र है। इन केन्द्रों के संचालन के लिए केन्द्रीय सरकार १०,००० रु० देती है, शेष व्यय राज्य सरकार करती है। इस समय इनमें भीतरी-बाहरी खेल-कूद, मनोविनोद, वाचनालय, पुस्तकालय, सिलाई-विभाग और कुटीर-उद्योग कक्षा की व्यवस्था है। बीड़ी उद्योग में काम करनेवाले मजदूरों के लिए रामपुर और झाँसी में एक-एक केन्द्र खोले जाने की व्यवस्था इस वर्ष की गई है। आवश्यक कर्मचारी की नियुक्ति हो गई है और ये केन्द्र शीघ्र ही चालू हो जायँगे।

केन्द्रों का संचालन

इन श्रम-हितकारी केन्द्रों की कार्यवाहियों के संचालन के लिए प्रत्येक 'ए' और 'बी' श्रेणी के केन्द्र में पहले निम्न कर्मचारी नियुक्त थे :—

१—एक संगठक और एक सहायक—इनका काम केन्द्र के नियमित कार्य की देख-रेख करना और बाहरी-भीतरी कार्यों का संरक्षण तथा प्रचार करना है।

२—एक डाक्टर और दो कम्पाउण्डर—ये केन्द्र के औषधालय को सञ्चालित करते हैं।

३—एक परिचारिका और एक दाई—ये स्त्रियों और बच्चों के विभाग की देख-रेख करती हैं।

४—सिलाई-शिक्षिकाएँ—ये मजदूर महिलाओं को सिलाई, बुनाई, कताई आदि का काम सिखाती हैं।

५—दो चौकीदार और एक मेहतर।

प्रत्येक 'सी' श्रेणी के केन्द्र में एक संगठक और दो चपरासी नियुक्त थे।

बाद में इन केन्द्रों का और भी सफलतापूर्वक संचालन करने के लिए अधिक शिक्षित व्यक्तियों को नियुक्त करने का प्रबंध किया गया। फलतः १९४९-५० में एक तिहाई केन्द्रों का पुनः संगठन किया गया और ६ हितकारी अधीक्षकों तथा ५ सहायक हितकारी अधीक्षकों की नियुक्ति की गई। इनका वेतन क्रमशः १२०-३०० रु० और ७५-२०० रु० रखा गया। वेतन के अतिरिक्त इन्हें सवारी और महँगाई के भत्ते की सुविधाएँ भी दी गईं। यही नहीं, 'बी' श्रेणी के कुछ केन्द्रों को 'ए' और 'बी' श्रेणी में परिवर्तित करने की स्वीकृति सरकार से मिल चुकी है परन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण अभी ऐसा नहीं किया जा सका है।

केन्द्रों में मिलनेवाली चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधाएँ

विभिन्न राजकीय श्रम-हितकारी केन्द्रों में ६ एलोपैथिक, १४ होम्योपैथिक, ५ आयुर्वेदिक और १ यूनानी कुल २६ औषधालय हैं, जिनके द्वारा मजदूरों को चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधाएँ निःशुल्क दी जाती हैं। इस वर्ष इन औषधालयों में ४,२०,३३० नये रोगी आए। पुराने रोगियों को मिलाकर रोगियों की कुल संख्या १२,०३,२९७ रही। ३,५८२ आपरेशन किए गए, २,२२,१९६ लोगों की मरहम-पट्टी हुई और रोगियों की उपस्थिति-संख्या १४,२९,०७५ रही। १,२७० बार घरों में जाकर चिकित्सकों ने रोगी मजदूरों की देख-भाल की।

इसके अतिरिक्त सरकार ने फरवरी, १९५० में कानपुर में मजदूरों के लिए राजयक्ष्मा चिकित्सालय खोलने के निमित्त ४५,००० रु० की जो धनराशि स्वीकृत की थी, उससे पहले एक किराए की इमारत में उक्त चिकित्सालय का कार्य प्रारम्भ कर दिया गया था, परन्तु मई, १९५२ में उसके लिये रायपुरवा, कानपुर में एक लाख रुपये की लागत से एक भवन बनवा दिया गया। इस लागत में भूमि का

मूल्य सम्मिलित नहीं है, क्योंकि कानपुर के नगर सुधार बोर्ड ने एक एकड़ भूमि उक्त भ के लिए दान में दी थी। अब इसी भवन में राजयक्ष्मा चिकित्सालय का कार्य चल रहा है। गत वर्ष राजयक्ष्मा से पीड़ित १२,७२६ पुरुष मजदूरों और ८,८३२ महिला मजदूरों का उपचार किया गया। ५,०४५ रोगियों की स्क्रीनिंग हुई, ६८६ का एक्सरे किया गया, १,६०२ को ए० पी० और २,२६६ को पी० पी० दी गई।

स्त्रियों और बच्चों का विभाग

स्त्रियों और बच्चों के विभाग की देख-रेख केन्द्र में नियुक्त परिचारिकाएँ और दाइयाँ करती हैं। वे प्रातःकाल केन्द्र में आई हुई महिला रोगियों की परीक्षा करती हैं और उन्हें चिकित्सक को दिखाकर उनके उपचार की व्यवस्था करती हैं। केन्द्र में आए हुए मजदूर-बच्चों की वे तेल-मालिश करती हैं और उन्हें नहलाती हैं। साथ ही बीमार, कमजोर बच्चों, प्रसूताओं, सम्भावित माताओं और रोगियों को निःशुल्क दूध बाँटती हैं। इस वर्ष ७७२ रोगियों, ५६८ प्रसूताओं एवं सम्भावित माताओं और ४,७७३ बच्चों को दूध बाँटा गया। इनके अतिरिक्त २,६६२ अन्य व्यक्तियों को भी दूध बाँटा गया। कुल मिलाकर ५२,०७० सेर दूध वितरित किया गया।

इसके अतिरिक्त केन्द्र की परिचारिकाओं ने इस वर्ष ३,१६३ मजदूर स्त्रियों का प्रसूति के पूर्व निरीक्षण किया, १,८२० प्रजनन-कार्य किए, १,८२३ मजदूर स्त्रियों की प्रसव के बाद परिचर्या की और ६०,५०४ स्त्रियों को उनके घरों पर जाकर सलाह दी। केन्द्रों में १,६२,२२६ स्त्रियाँ सलाह के लिए आईं।

सिलाई और उद्योग कक्षाएँ

प्रशिक्षण-प्राप्त शिक्षिकाओं की देख-रेख में इस समय २२ सिलाई-कक्षाएँ चल रही हैं और रामपुर तथा झाँसी में एक-एक सिलाई-कक्षा शीघ्र ही प्रारंभ की जायगी। इन कक्षाओं में मजदूर महिलाओं के अवकाश का सदुपयोग करने और उनकी पारिवारिक आय में वृद्धि करने की दृष्टि से सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, फीता बनाने तथा जरी का काम सिखाया जाता है। प्रत्येक केन्द्र में एक सिलाई मशीन होती है और सिलाई-शिक्षिकाओं को समय-समय पर शिक्षण-कार्य के निमित्त कपड़ा, कढ़ाई का सूत, ऊन और तागा आदि दिया जाता है। सीखने-वाली मजदूर स्त्रियाँ जो कपड़े तैयार करती हैं, वे उन्हें या दूसरी मजदूर स्त्रियों को लागत मूल्य पर बेच दिए जाते हैं।

मजदूर महिलाएँ कढ़ाई-बुनाई का कार्य कर रही हैं।

इस वर्ष सीखनेवाली स्त्रियों की संख्या ४,६८१ थी और औसत उपस्थिति ३,१४७ तथा आकस्मिक शिक्षणार्थिनियों की संख्या ४,७२३ थी। उक्त कक्षाओं में कुल २१,७३७ वस्तुएँ तैयार हुईं और लगभग ८,२५५ रु० की आनुमानित लागत का सामान तैयार हुआ।

मनोरञ्जन की विविध सुविधाएँ

राजकीय श्रम-हितकारी केन्द्रों में मनोरंजन के विविध साधनों की व्यवस्था है। इन साधनों में चलचित्र बहुत लोकप्रिय सिद्ध हुए हैं। इस कार्य के

लिए श्रम-हितकारी विभाग के पास एक 'साउण्ड प्रोजेक्टर' और एक 'चलचित्र-वाहन' है। चलचित्रों का प्रदर्शन करने के लिए एक प्रशिक्षित ऑपरेटर भी नियुक्त है। इस वर्ष कानपुर और कानपुर के बाहर के केन्द्रों तथा समीपस्थ मजदूर बस्तियों में 'संगदिल,' 'डाक्टर रमेश', 'आइना', 'रामशास्त्री' आदि चलचित्रों का निःशुल्क प्रदर्शन किया गया।

मनोरंजन के अन्य साधनों में रेडियो का प्रमुख स्थान है। उ० प्र० के श्रम-हितकारी केन्द्रों में इस समय कुल ३४ रेडियो सेट हैं। रेडियो से समाचार सुनने के लिए प्रातः और सायंकाल केन्द्रों में मजदूर बहुत बड़ी संख्या में एकत्र होते हैं। इसके सिवा नित्य सायंकाल आल इण्डिया रेडियो लखनऊ से मजदूरों के मनोरंजनार्थ एक 'मजदूर मंडल कार्यक्रम' प्रसारित किया जाता है, उसे भी वे सुनते हैं। नवम्बर, १९५२ से प्रति मास के अन्तिम रविवार को कानपुर के श्रम-हितकारी केन्द्रों से चुने हुए मजदूरों का एक कार्यक्रम रेडियो द्वारा प्रसारित किया जाने लगा है। गत २७ जुलाई, १९५२ को नागपंचमी के अवसर पर कानपुर के मजदूरों का एक कार्यक्रम आल इण्डिया रेडियो द्वारा राजकीय श्रम हितकारी केन्द्र, दर्शन-पुरवा से प्रसारित किया गया।

रेडियो के अतिरिक्त प्रत्येक केन्द्र में संगीत के कार्यक्रम होते रहते हैं। इन्हें अधिक-से-अधिक मनोरंजक और सफल बनाने के लिए श्रम-हितकारी विभाग ने अनेक अल्पकालीन और पूर्णकालीन संगीतज्ञ नियुक्त कर रखे हैं।

अनेक केन्द्रों में नाटक मण्डलियाँ भी हैं। इस वर्ष इनके द्वारा विभिन्न केन्द्रों में ११ नाटक खेले गए। इस सम्बन्ध की सारी व्यवस्था श्रम-हितकारी विभाग ही करता है।

खेल-कूद

प्रत्येक केन्द्र में कमरे के भीतर और मैदान में
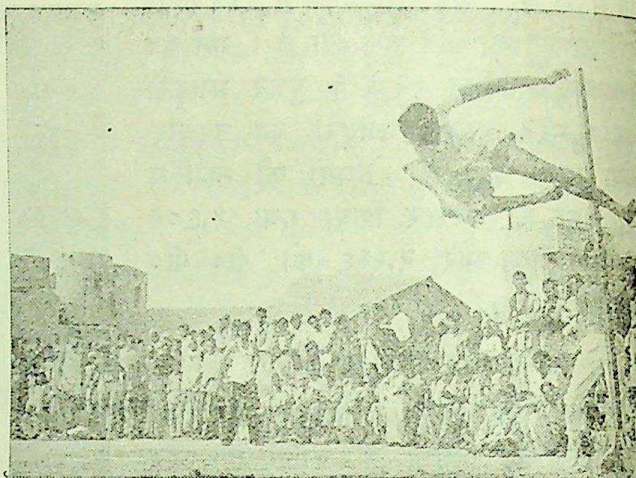
वार्षिक खेल-कूद-प्रतियोगिता—ऊँची कुदान का एक दृश्य।

खेले जानेवाले खेलों का सामान रहता है। कानपुर के प्रायः सभी १३ केन्द्रों में खेलों के आयोजन के लिए एक खेल-पर्यवेक्षक होता है। कानपुर के बाहर के केन्द्रों में यह कार्य केन्द्र-संगठक ही करते हैं।

शारीरिक व्यायाम के लिए विभिन्न केन्द्रों में कुल मिलाकर १० अखाड़े भी हैं। श्रम-हितकारी विभाग की ओर से मजदूर पहलवानों को मालिश के लिए कड़आ तेल और भीगे चने निःशुल्क दिए जाते हैं।

इस वर्ष मैदान के खेलों से ३,४६,३५८ मजदूरों ने और अंग्रेजी व्यायामों से १,२१,५७४ मजदूरों ने लाभ उठाया।

शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाएँ

प्रत्येक केन्द्र में पुस्तकालय और वाचनालय हैं, जिनमें पत्र-पत्रिकाएँ मँगाई जाती हैं। इस वर्ष पुस्तकालयों के मजदूर सदस्यों की संख्या २५,५३४ रही और २६,२६१ पुस्तकें पढ़ने को दी गईं। २५,६८४ पुस्तकें केन्द्रों में पढ़कर मजदूरों को सुनाई गईं और वाचनालयों में ५,३१,२१८ मजदूर पढ़ने आए।
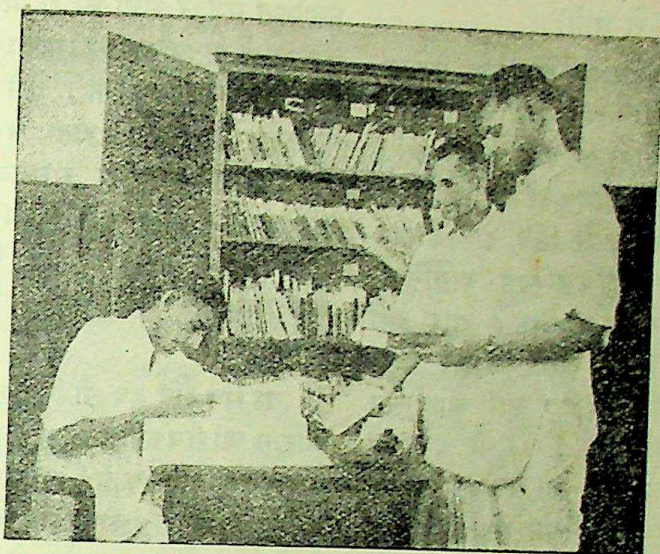
केन्द्र के पुस्तकालय से पुस्तकें दी जा रही हैं।

स्काउटिंग

इस वर्ष समय-समय पर स्काउट रैलियों, सामाजिक सेवा-शिविरों, पिकनिकों, कैंप फायर और रूट मार्च आदि आयोजित कर मजदूर स्काउटों में जागृति रखी गई। स्काउटों की संख्या ७१८ रही। इन्हें श्रम-हितकारी विभाग से खाकी वर्दी, जूते और टोपियाँ आदि प्रदान की गई हैं। एक स्काउट-संचालक की देख-रेख में इस सम्बन्ध का सारा कार्य सुचारु रूप से चलाया जा रहा है।

केन्द्रों के लिए अपनी इमारत

आर्थिक कठिनाइयों के कारण इस दिशा में विशेष कार्य नहीं हो सका, तथापि रायपुरवा में श्रम-हितकारी राजयक्ष्मा चिकित्सालय और डिप्टी-का-पड़ाव के राजकीय श्रम-हितकारी केन्द्र के भवन गत वर्ष सरकार की ओर से बनाए गए।

प्रतियोगिताएँ

प्रति वर्ष हाकी, फुटबाल, वालीबाल, कुश्ती, कबड्डी, रस्साकशी, बैडमिण्टन, कैरम, शतरंज आदि की प्रतियोगिताएँ केन्द्रों में मजदूरों के बीच आयोजित की जाती हैं और विजयी मजदूरों को पुरस्कार दिया जाता है। गत वर्ष से क्लर्कों और सुपरवाइजरों की टोलियों को भी उक्त प्रतियोगिताओं में सम्मिलित कर लिया गया है।

प्रतियोगिताओं और खेलकूद से सम्बन्धित सारा व्यय, जिसमें पुरस्कार-व्यय भी सम्मिलित है, उस कोष से होता है, जो टीमों के प्रवेश-शुल्क और विभिन्न कारखानों से प्राप्त चन्दे (नकदी और वस्तुएँ) द्वारा एकत्र होता है।

इस वर्ष कानपुर के अतिरिक्त आगरा, फीरोजाबाद, लखनऊ और सहारनपुर में भी उक्त प्रकार की प्रतियोगिताएँ की गईं।

मजदूर हातों में सुधार

इस वर्ष सरकार ने हातों के सुधार के लिए ५०,००० रु० की धनराशि स्वीकृत की थी और इससे मजदूर हातों में आवश्यक सुधार कराए गए।

(पृष्ठ ८ से आगे)

बनाना चाहते हैं। उनकी योजना का मूल उद्देश्य यही है कि भारतीय मजदूर सामूहिक वार्ता द्वारा अपने लिये संतोषजनक शर्तों पर काम पाने लगें। इसके लिए यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भारतीय मजदूरों को कहीं अधिक संगठित होना होगा। सामूहिक वार्ता या "कलेक्टिव बार्गेनिंग" पाश्चात्य देशों में सामान्यतया प्रचलित है और वहाँ की परिस्थितियों से परिचित लोगों को यह भली प्रकार मालूम है कि वहाँ का मजदूर संघ आन्दोलन कितना उन्नत और प्रगतिशील है। ऐसी दशा में श्री वी०वी० गिरि की योजना की सफलता बहुत-कुछ भारतीय मजदूर संघ आन्दोलन की शक्ति पर ही निर्भर है।

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि उक्त योजना के सफल होने पर देश में औद्योगिक शान्ति और सुव्यवस्था सुनिश्चित हो जायगी। यहाँ के औद्योगिक क्षेत्र में, क्या मिल मालिकों में और क्या मजदूरों में, एक न्यायपूर्ण लेन-देन की भावना जाग्रत हो उठेगी। कदाचित् यदि योजना को सफलता न मिली तो एक कठिन परिस्थिति का सामना करना होगा, क्योंकि तब शायद वर्तमान अनिवार्य अभिनिर्णय का अवलम्ब प्राप्य न होगा, न मजदूर संघ आन्दोलन पर इस योजना का विशेषतया प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि इससे सबसे अधिक महत्व प्रमाणित मजदूर संघों को ही प्राप्त होगा और सामूहिक वार्ता या आपसी समझौता करने में इन्हीं संघों का प्रमुख हाथ रहेगा। ऐसे संघ चुनाव द्वारा अस्तित्व में आएँगे, अतः उनमें प्रतिद्वन्दिता की प्रवृत्ति बढ़ने की पूरी सम्भावना है और इससे प्रतिक्रियावादी तत्व इसका दुरुपयोग करने का सहज ही अवसर पा सकेंगे। यदि ऐसा हुआ तो संघ आन्दोलन के रचनात्मक कार्य को गहरा धक्का पहुँचेगा।

यह सब होते हुए भी निराशा की न कोई बात है और न आवश्यकता। बिना संकट मोल लिए प्रगति भी नहीं की जा सकती। आवश्यकता केवल इस बात की है कि श्री वी० वी० गिरि की योजना कार्यान्वित करते समय विशेष सतर्कता से काम लिया जाय और हर समय परिस्थिति का सामना करने को प्रस्तुत रहा जाय। साथ ही इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा जाय कि उपर्युक्त विचार-विनिमय के फलस्वरूप औद्योगिक सम्बन्धों के सुधार के लिए जो नया कानून बने, उसके अन्तगत राज्य सरकारों को उचित और वास्तविक अधिकार दिए जाएँ, जिससे वे अपने-अपने क्षेत्र में अपनी विशेष परिस्थितियों के अनुसार औद्योगिक शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखने की अपने जिम्मेदारी को भली प्रकार पूरा कर सकें। इस प्रकार हम दृढ़ता और धैर्य के साथ उक्त योजना के सुफल की प्रतीक्षा कर सकेंगे।

(पृष्ठ ४ से आगे)

पी०डब्लू०डी० बाबूपुरवा में और कालपी रोड पर मकान बनवा रहा है।

लखनऊ में उक्त मकान वाटर वर्क्स के पास नगर के औद्योगिक क्षेत्र में बनवाये जायँगे, जिनमें से हर एक में ८ आवास होंगे।

उत्तर प्रदेश की जिन गृह-निर्माण योजनाओं का परिचय संक्षेप में यहाँ दिया गया है, उनसे इस बात का पता चलता है कि राष्ट्रीय सरकार मजदूरों के लिये अच्छे और सस्ते मकानों को जल्द से जल्द तैयार कराने के लिये काफी प्रयत्नशील है। जरूरत इस बात की है कि इस कार्य को सफल बनाने में सभी सम्बन्धित लोग अपना-अपना सहयोग प्रदान करें। इसमें सन्देह नहीं कि वह दिन निकट आ रहा है, जब हमारे मजदूरों के सामने मकानों की वर्तमान कठिनाई बहुत कम रह जायगी।

कानपुर के मजदूरों के रहन-सहन के व्यय-सूचनांक की वार्षिक समीक्षा

१९५२ में कानपुर के मजदूरों के रहन-सहन के व्यय-सूचनांक का वार्षिक औसत ४४१ रहा, जब कि गत वर्ष यह ४५१ था। इस प्रकार औसत में २.३% प्रतिशत की कमी हुई। सर्वोच्च व्यय-सूचनांक ४६६ था, जो अक्टूबर, १९५२ के महीने में रहा। वर्ष के प्रारम्भ में सूचनांक में बराबर कमी होती रही, यहाँ तक कि मार्च और मई, १९५२ में व्यय-सूचनांक निम्नतम अर्थात् ४१२ हो गया। व्यय-सूचनांक की इस कमी का कारण बाजार में चारों ओर मंदी का होना था, परन्तु जुलाई में सूचनांक में एकाएक वृद्धि होकर वह ४५६ हो गया। इस वृद्धि का कारण यह था कि पहली जुलाई, १९५२ से अन्न का नियंत्रण शिथिल कर दिया गया, जिससे व्यय-सूचनांक के तैयार करने में अन्न के खुले बाजार के भावों का उपयोग किया गया। मौसमी परिवर्तनों, व्यापारिक कारणों और अन्न के मूल्य में वृद्धि होने के कारण व्यय-सूचनांक अक्टूबर, १९५२ तक बढ़ता ही गया। बाद के महीनों में व्यय-सूचनांक में कुछ कमी हुई।

पाँच वर्गों में से वस्त्र, मकान किराया और विभिन्न वर्गों में क्रमशः ५.६%, ४.७% और २.८% की वृद्धि हुई, जब कि खाद्य और ईंधन एवं प्रकाश के वर्गों में क्रमशः ४.५% और ४.६% की कमी हुई।

खाद्य

खाद्य का वर्गाङ्क वर्ष में ४१९ से ५१४ तक घटता-बढ़ता रहा। नवम्बर में यह सर्वोच्च अर्थात् ५१४ था। मंदी का प्रभाव कड़ुए तेल पर उल्लेखनीय रूप से रहा और अरहर की दाल का मूल्य भी काफी कम रहा। इन दोनों के भावों में भारी कमी होने के कारण ही वर्ष के पूर्वार्ध में खाद्य के वर्गाङ्क में कमी होती गई। जुलाई, १९५२ में अन्न के विनियंत्रण से इस वर्गाङ्क में अचानक वृद्धि हुई और जुलाई में वह ४६७ होकर नवम्बर तक बराबर बढ़ता रहा, जब कि वह सर्वोच्च अंक ५१४ तक पहुँच गया। दिसम्बर में खाद्य के वर्गाङ्क में कमी हुई, जिसका कारण चावल, गोश्त, आलू, घी और कड़ुए तेल के भावों में मौसमी परिवर्तन होना था।

ईंधन और प्रकाश

मिट्टी के तेल का मूल्य वर्ष भर एक जैसा बना रहा परन्तु ईंधन का भाव ३ रु० ४ पाई से २ रु० ६ आने ७ पाई तक उतरता-चढ़ता रहा, जिससे ईंधन का वर्गांक ३६१ और ४१४ के बीच बना रहा, जब कि गत वर्ष यह ३६४ से ४३६ तक था।

वस्त्र

जून, १९५२ तक वस्त्र का वर्गाङ्क बराबर ६६४ बना रहा। फिर जुलाई में वह घटकर ५३७ और अगस्त में ५२५ रह गया। इसके बाद अक्टूबर तक ५२५ ही रहकर नवम्बर में वह और भी गिरकर ४५० तथा दिसम्बर में निम्नतम अर्थात् ४२६ रह गया। यह भारी कमी वस्त्र-विनियन्त्रण के कारण हुई।

मकान किराया

इस वर्ग का अङ्क वर्ष भर २१४ बना रहा।

विभिन्न

यह वर्गाङ्क १९५२ में ४२३ और ४५३ के बीच चढ़ता उतरता रहा। इस अस्थिरता का कारण साबुन और सुपाड़ी के भावों की घटा-बढ़ी थी।

व्यय-सूचनांक की संकलन-विधि में
महत्वपूर्ण परिवर्तन

१ जुलाई, १९५२ से अन्न-नियंत्रण के शिथिल होने से खुले बाजार में अन्न उपलब्ध होने लगा। इससे गेहूँ, बेर्रा, चना, और चावल की मूल महत्व अर्थात् क्रमशः २९,६,३ और १० को मान्यता देनी पड़ी परन्तु एक मजदूर को जितने गेहूँ, बेर्रा और चने की आवश्यकता थी, उसका एक भाग उसे राशन दूकानों से अभी उपलब्ध होता था, अतएव इन अन्नों के बाजार तथा राशन भावों के औसत का ५० : ५० के अनुपात से उपयोग किया गया। चावल का मूल्य बाजार के अनुसार लिया गया। बाद में गेहूँ को छोड़कर शेष अन्नों का राशन की दूकानों से मिलना बंद हो गया और गेहूँ की मात्रा भी साढ़े चार छटाँक प्रति यूनिट से घटाकर ४ छटाँक प्रति यूनिट कर दी गई। अतः तब से गेहूँ का मूल्य ४ : ५ के अनुपात से लगाया गया और शेष अन्नों के सम्बन्ध में केवल बाजार भावों की ही गणना की गई।

भूल-सुधार

पृष्ठ	स्तम्भ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३	प्रथम	११	१९४६	१९४५
५५	,,	२५	८,३८०	७,७६०
,,	,,	२६	३१	३०
,,	,,	,,	८,३४९	७,७३०

वार्षिकोत्सवांक-१९५५
श्रमजीवी

★ अनुक्रमणिका ★

★

इस विशेषांक के लेखों एवं अन्य रचनाओं में प्रकट किये गये विचार लेखकों के अपने विचार हैं, जो किसी भी प्रकार सरकारी नीति के द्योतक नहीं हैं।

मुखपृष्ठ का चित्र—उद्योग-चक्र का चालक श्रमिक
[इस अंक में छपे पृष्ठ ५, पृष्ठ १९ के बाद दो चित्र और पृष्ठ ६४ पर छपे छविचित्र उ० प्र० के ग्राम एवं नगर संयोजक के सौजन्य से।

मैं मज़दूरिन चली काम पर !

श्रीमती हीरादेवी चतुर्वेदी

मैं मज़दूरिन चली काम पर
लिये फावड़ा और कुदाली ।
मुझे देखकर विहँस उठी वह
प्राची में ऊषा की लाली ।

वर्षा, आतप, शीत—सभी में
मेरा रोम-रोम मुसकाता ।
कर्म—क्षेत्र में रक्त—पसीना
मेरा लौह शरीर बहाता ।

झमझम करतीं वर्षा—बूँदें,
तीर शीत के चलने वाले ।
आग उगलते लू के झोंके
जग को विचलित करने वाले ।

मुझे न विचलित कर सकते हैं
कभी स्वप्न में ये अनजाने ।
भ्रमित नहीं कर सकते मुझको
सुख के मादक मधुर तराने ।

मैं चलती, जग चलता सारा,
मैं सोती, जग भी सो जाता ।
किन्तु नहीं इस जग को मेरी
पीर-व्यथा से रंचक नाता ।

महल, हवेली, दुर्ग अनेकों
बना चुकी मैं कितने सारे ।
किन्तु दूर वे मुझसे उतने,
जितने नील गगन के तारे ।

तन सूखा, मन भूखा मेरा,
कब किसने जग में पहिचाना ?
किसने मेरे दुख-दर्दों पर
बुना कभी है ताना-बाना ?

टुकुर-टुकुर मैं खड़ी देखती
धनवानों की शान निराली ।
उनके कुत्ते-बिल्ली पीते
दूध-मलाई भर-भर थाली ।

किन्तु पसीना बहा रात-दिन
हम मज़दूरी करने वाले—
पाते कहाँ पेट-भर भोजन,
अन्न-वस्त्र के पड़ते लाले ।

इसीलिये तो मुझे एक-सी
फूलों की मतवाली लाली,
पतझड़ का सन्नाटा अथवा
सावन की मादक हरियाली ।

मैं हूँ दूर सभी से जग में,
मेरी दुनिया सदा निराली ।
दिन भर खपती रहती मैं तो
लिये फावड़ा और कुदाली ।

मुझे भली है भू की शय्या,
मैं मज़दूरी करने वाली ।
महलों से क्या नाता मेरा,
मैं कुटिया में पलने वाली ।

श्रमजीवी

उत्तर प्रदेशीय श्रम विभाग का
साप्ताहिक मुखपत्र

★

६ फरवरी, १९५५

वर्ष : ७ — संख्या : २३ — वार्षिक मूल्य ३) रु० — इस अंक का ।)

श्रमिकों से सम्बन्धित समाज-सेवा के किसी भी कार्यक्रम में श्रमिक को, व्यक्ति को समाज का केन्द्र मानकर चलना पड़ेगा, तभी उसके इस लक्ष्य की पूर्त्ति हो सकती है कि श्रमिक के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो। श्रम-कानूनों से पृथक सामाजिक कार्यकर्त्ताओं का जो दायित्व है, विद्वान लेखक ने उसी पर इस सारगर्भित लेख में प्रकाश डाला है।

श्रमिक और समाज-सेवा

श्री कुलदीपनारायण सिंह

आज के युग में यह धारणा बलवती होती जा रही है कि श्रमिक समाज का गत्यात्मक अंग है। यदि श्रमिक स्वस्थ, सुखी और सम्पन्न है, तो उसी अनुपात में समाज की समृद्धि की भी कल्पना की जा सकती है। कल-कारखानों के आविष्कार से होने वाले औद्योगिक विस्तार के साथ आज के श्रमिक-वर्ग का जन्म हुआ, परन्तु उसकी सामाजिक सुरक्षा और कल्याण की अनुकूल व्यवस्था न हो पाने के कारण दीर्घकाल तक समाज में उसका स्थान उपेक्षणीय ही बना रहा। यद्यपि कुछ मानवतावादियों एवं समाजसेवी कार्यकर्त्ताओं ने उनके जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने तथा श्रमिक संघों का संगठन कर उनके अधिकारों की रक्षा की ओर प्रवृत्ति दिखाई है, तथापि स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय तक भी इस देश में श्रमिक कल्याण की दिशा में विशेष प्रगति न हो सकी।

सामाजिक उन्नयन में श्रम-कानूनों का योगदान

श्रमिक समाज की रीढ़ हैं और राजनैतिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति के बाद उनकी सामाजिक और आर्थिक दशा के सुधार की ओर हमारी लोकप्रिय सरकार का ध्यान आकृष्ट होना स्वाभाविक था। फलस्वरूप भारत सरकार ने श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा, स्वास्थ्य और औद्योगिक सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा आदि के लिये अनेक प्रगतिशील श्रम-कानून बनाए, जैसे औद्योगिक विवाद कानून १९४७, कारखाना कानून, १९४८, कर्मचारी राज्य बीमा कानून, १९४८, न्यूनतम मज़दूरी कानून, १९४८ प्राविडेण्ट फंड कानून, १९५२ आदि। उत्तर प्रदेश में कल-कारखानों के श्रमिकों के अतिरिक्त दूकानों एवं वाणिज्य प्रतिष्ठानों के कर्मचारियों के लिये भी उत्तर प्रदेश दूकान

एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून सन् १९४७ में बनाया गया। राज्य के चीनी के कारखानों में काम करने वाले मज़दूरों के लिये पक्के हवादार मकान बनाने के निमित्त उत्तर प्रदेश चीनी एवं चालक मद्यसार उद्योग श्रम कल्याण तथा विकास निधि कानून सन् १९५१ में स्वीकृत हुआ, जिसके अन्तर्गत दिसम्बर, १९५४ तक ४४ चीनी के कारखानों में बनने वाले ९५७ मकानों में से अब तक ७२१ मकान बन कर तैयार हो चुके हैं। इसके

समाज-सेवा का लक्ष्य—व्यक्तित्व का पूर्ण विकास

उक्त कानूनों के अन्तर्गत श्रमिकों के रहने-सहने और काम करने की दशाओं में जो सुधार हुआ है, उससे उनके सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने में यद्यपि काफी सहायता मिली है, तथापि समाज-सेवा का जो लक्ष्य है, वह इतने से ही पूरा नहीं होता। २६ दिसम्बर, ५४ को

कल तक जो स्वप्न था, आज वह सत्य बन गया!
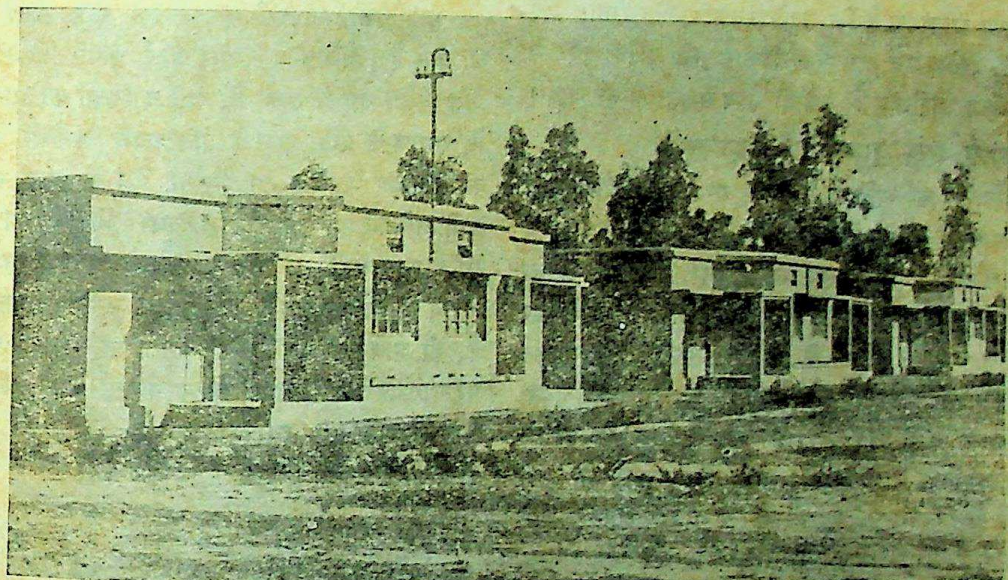
रामपुर के चीनी मज़दूरों के लिये बनी नई बस्ती का एक दृश्य

अतिरिक्त भारत सरकार की सहायता-प्राप्त औद्योगिक गृह-निर्माण योजना से लाभ उठा कर भी दूसरे उद्योगों के श्रमिकों के लिये कानपुर, लखनऊ तथा राज्य के दूसरे नगरों में गत पंचांगीय वर्ष के अन्त तक ४०७६ पक्के और आधुनिक ढंग के खुले और हवादार मकान बनाये जा चुके हैं तथा ५,८९४ मकान निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में हैं।

लखनऊ में भारतीय समाज-सेवा सम्मेलन के ७ वें अधिवेशन के अध्यक्ष-पद से बोलते हुये डा० जीवराज मेहता ने समाज सेवा का उद्देश्य यह बतलाया था कि 'मनुष्य की किसी भी कमज़ोरी को दूर करने में उसकी सहायता की जानी चाहिये। उसका लक्ष्य है कि प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्णतम विकास हो।' अधिकांश श्रम-कानूनों का स्वरूप सामाजिक होने और उनका लक्ष्य

समानता और सामाजिक न्याय की स्थापना होते हुये भी यह संभव नहीं है कि श्रमिक का व्यक्ति के रूप में, सामाजिक इकाई के रूप में उनके द्वारा विकास किया जा सके। कानूनों का सम्बन्ध समाज के किसी व्यक्ति-विशेष से नहीं, वरन् व्यक्तियों के सामाजिक हितों से ही होता है।

इस प्रकार जब हम समाज-सेवा के क्षेत्र में उतरते हैं, तो समाज का महत्वपूर्ण अंग होने के कारण हमें श्रमिक के व्यक्तित्व के विकास की ओर भी ध्यान देना आवश्यक हो जाता है। समाज-सेवा का कोई भी कार्यक्रम समाज में सदा से उपेक्षित रहते आये श्रमकों की ओर ध्यान दिये बिना पूरा नहीं हो सकता। व्यक्तित्व के विकास के लिये यह आवश्यक है कि उनके स्वास्थ्य, साक्षरता एवं शिक्षा, नैतिक एवं सांस्कृतिक विकास को सदैव दृष्टि में रखा जाय और यदि हो सके तो प्राथमिकता भी दी जाय।

स्वास्थ्य-एक सामाजिक समस्या

स्वास्थ्य का व्यक्तित्व से गहरा सम्बन्ध है और जहाँ तक भारतीय श्रमिक के स्वास्थ्य का प्रश्न है, वह दूसरे देशों के श्रमिकों के स्वास्थ्य की तुलना में बहुत अच्छा नहीं कहा जा सकता। उत्तर प्रदेश में और विशेषकर कानपुर में दूसरे रोगों के अलावा तपेदिक से पीड़ित श्रमिकों की संख्या बहुत अधिक है, जो अनिवार्यतः जीवनी-शक्ति के ह्रास और अपर्याप्त एवं अपुष्ट भोजन का स्वाभाविक परिणाम है। राज्य की सरकार ने राज्य भर में फैले अपने ४० स्थायी और ४ मौसमी श्रम हितकारी केन्द्रों में अस्वस्थ श्रमिकों के निःशुल्क इलाज की व्यवस्था कर रखी है और कानपुर में एक राजयक्ष्मा चिकित्सालय भी है, परन्तु प्रत्येक बीमारी का अपना एक सामाजिक एवं मानसिक पक्ष भी होता है, जिसका निदान कथित चिकित्सक नहीं कर सकते। यहीं पर सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के सहयोग की आवश्यकता होती है, जो मनोविज्ञान के वेत्ता हों और श्रमिकों की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों से भली-भांति अवगत हों।

शिक्षा-एक सामाजिक कार्य

साक्षरता और शिक्षा का जहाँ तक प्रश्न है, यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भारत के अधिकांश श्रमिक शिक्षा तो दूर, वर्णमाला का ज्ञान तक नहीं रखते। परिणाम यह होता है कि उन्हें शिक्षित वर्ग का परमुखापेक्षी तो रहना ही पड़ता है, समय-विशेष पर मज़दूरी आदि के विषय में उन्हें धोखा भी उठाना पड़ता है। शिक्षा मनुष्य का भूषण है और उसके बिना बुद्धि तथा आत्म-गौरव और स्वाभिमान की भावनायें नहीं विकसित हो सकतीं, जिनका व्यक्तित्व के विकास से नज़दीकी सम्बन्ध है। सच्चे सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के अभाव में श्रमिकों को साक्षर और शिक्षित बनाने का महत्वपूर्ण कार्य पूरा नहीं किया जा सकता।

नैतिकता का विकास-एक सामाजिक दायित्व

इसी प्रकार श्रमिकों का नैतिक स्तर ऊँचा उठाने की बात है। श्रमिक एक ओर जहाँ अपने अधिकारों के प्रति विशेष रूप से सजग है, वहीं दायित्यों का भार उठाने में, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करने में वह शिथिल-सा दीखता है। यह बात नहीं कि सभी श्रमिकों का नैतिक स्तर इतना गिरा हुआ है कि 'धीमे काम करो' या 'कम काम करो' की भावना उनमें व्याप्त हो, तो भी उनमें से कुछ ऐसे प्रतिक्रियावादी तत्व हैं, जो जाने-अनजाने राष्ट्रीय संपत्ति या उत्पादन को क्षति पहुँचाते रहते हैं। सामाजिक कार्यकर्त्ता को श्रमिकों में उच्च नैतिकता की स्थापना करनी होगी, जो राष्ट्र के लिये मंगलकारी हो, शुभ फलदायक हो।

सांस्कृतिक विकास

श्रमिक के सांस्कृतिक विकास के लिये संगीत, लोकनृत्य, नाटकाभिनय आदि के देश-व्यापी अथवा विस्तृत सांस्कृतिक आयोजनों की आवश्यकता होगी जिससे वे मद्यपान, जुआ आदि की बुराइयों से बच कर स्वस्थ मनोरंजन प्राप्त कर सकें। इस प्रकार के आयोजन बिना सुसंस्कृत सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के पथ-प्रदर्शन सम्भव नहीं हैं।

सामाजिक कार्यकर्त्ता क्या करें ?

उत्तर प्रदेशीय सरकार के श्रम विभाग ने कुछ सी ढंग पर श्रमिकों के शारीरिक, शैक्षणिक, नैतिक

(शेष पृष्ठ ६२ पर)
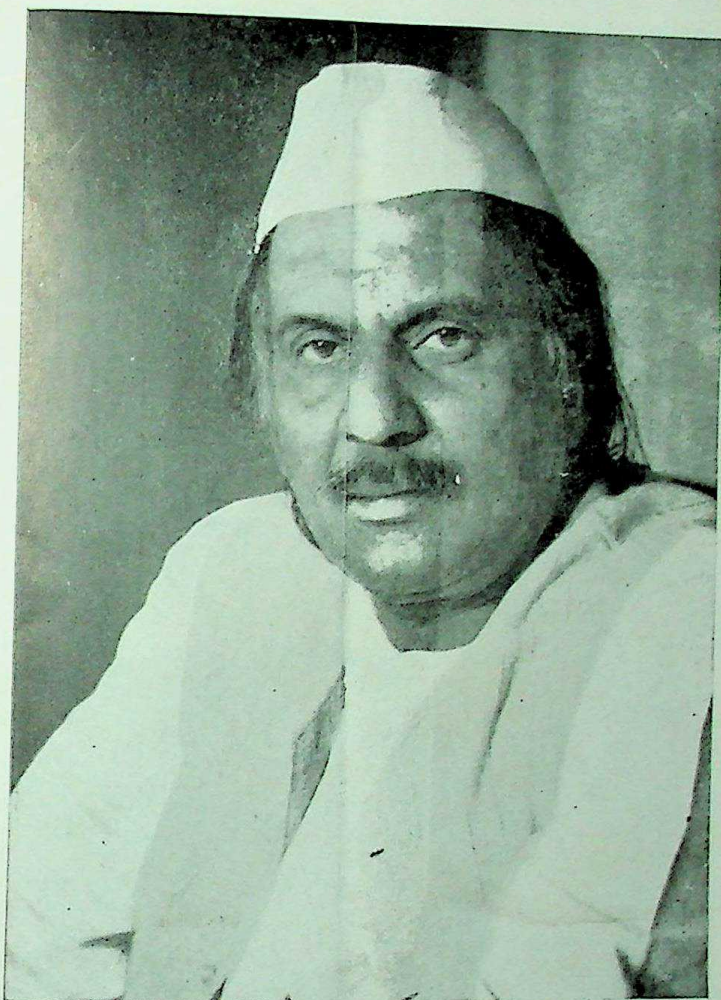
'श्रमजीवी' के लिये उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री

डा० सम्पूर्णानन्द जी का शुभाशीर्वाद

आज मज़दूर - समाज अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति पहले की अपेक्षा कहीं अधिक सजग है। परन्तु वह इस सतर्कता का फल यथार्थ रूप से तभी प्राप्त कर सकता है, जब उसको प्रासंगिक विषयों की यथावत् जानकारी हो। 'श्रमजीवी' निष्पक्ष रूप से ऐसी ज्ञान-सामग्री प्रस्तुत करता है, इसीलिये उसका मज़दूर और उद्योगपति समान रूप से आदर करते हैं। मैं आशा करता हूँ कि वह इसी प्रकार उपकारी सेवा करता रहेगा।
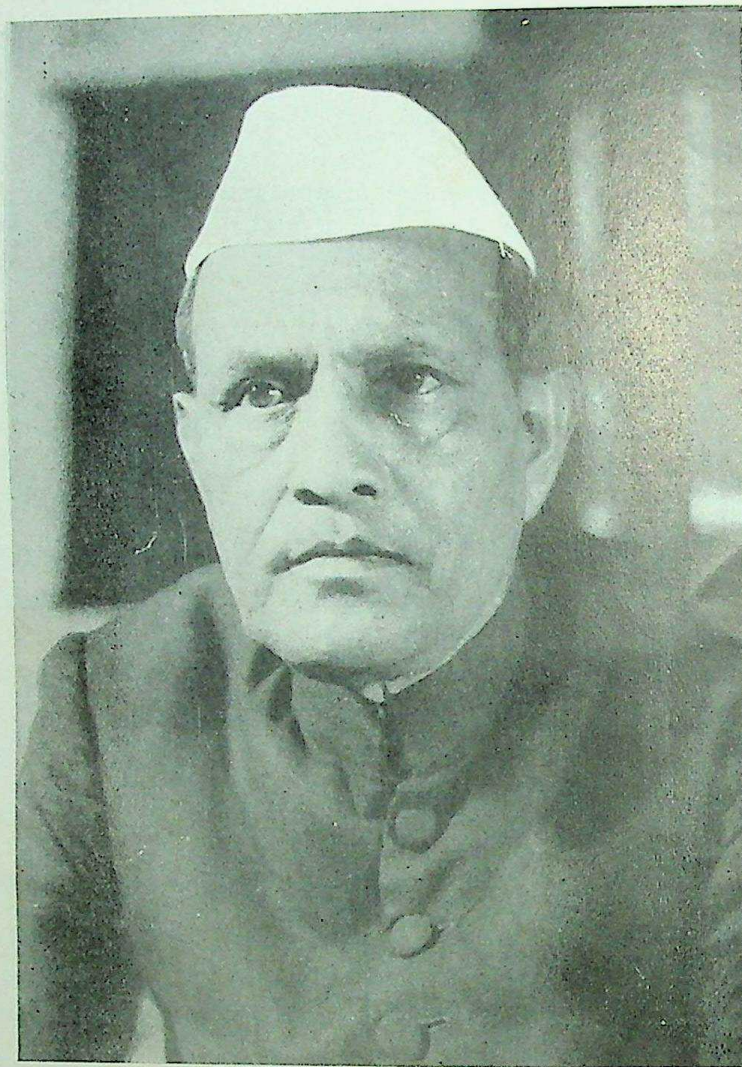
उत्तर प्रदेश के श्रम एवं समाज - कल्याण मन्त्री

आचार्य युगल किशोर जी का शुभाशीर्वाद

विगत ६॥ वर्षों से साप्ताहिक 'श्रमजीवी' श्रमिक-समाज की बहुमुखी सेवा करता आ रहा है। यह एक ऐसी पत्रिका है, जो इस राज्य में और इसके बाहर होने वाले श्रम-सम्बन्धी विविध कार्यों का अधिकृत एवं तथ्यपूर्ण विवरण प्रकाशित करती और मज़दूरों एवं मालिकों के सम्बन्धों को मधुर और मैत्रीपूर्ण बनाने की दिशा में सक्रिय योगदान दे रही है। इस वार्षिकोत्सवांक के अवसर पर मैं इसकी सफलता की कामना करते हुये यह आशा करता हूँ कि इसे श्रमिक और मालिक सदा की भाँति अपना संरक्षण प्रदान करते रहेंगे।

आज की समस्या है कि उपलब्ध साधनों से ही उत्पादन बढ़ाया जाय। उत्पादन-वृद्धि के लिये यह आवश्यक होगा कि श्रमिकों का कार्य-भार, प्रत्येक काम के लिये उनका संख्या-बल, मज़दूरी आदि का उचित निर्णय हो जाय। यह बिना रेशनलाइजेशन के संभव नहीं है। बिना विचारे रेशनलाइजेशन का विरोध करने वालों से विद्वान लेखक ने जो ठंडे दिल से सोचने का आग्रह किया है, वह आज की विषम परिस्थितियों में विशेष रूप से विचारणीय है।

हम आज एक स्वतंत्र देश के नागरिक हैं। हम में से प्रत्येक व्यक्ति को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारे आचरण हमारी मान-प्रतिष्ठा के अनुकूल हों। इसके लिये व्यक्तिगत अथवा किसी विशेष समुदाय की बातों को राष्ट्र की भलाई की कसौटी पर कस कर ही आगे बढ़ाया जा सकता है। कभी-कभी हम लोग इस बात को भूल कर एक संकुचित दृष्टिकोण सामने रखकर कोई ग़लत क़दम उठा जाते हैं और अपनी ग़लती समझने पर भी उसे मान लेने में अपने को असमर्थ पाते हैं। रेशनलाइजेशन का मज़दूरों द्वारा विरोध भी इसी प्रकार की एक मिसाल है।

उपलब्ध साधनों का सर्वोत्तम उपयोग किया जाय

एक ओर तो हम पंचवर्षीय योजनाओं का स्वागत करते हैं और यह कहते हैं कि ऐसी योजनायें देशवासियों को सुखी तथा समृद्ध बनाने के लिये आवश्यक हैं और दूसरी ओर हम यह कहते हैं कि रेशनलाइजेशन के प्रश्न पर हम विचार ही नहीं करना चाहते हैं। जहाँ हम देश की औद्योगिक प्रगति की बात करते हैं, वहाँ यह बात नहीं भूली जा सकती है कि औद्योगिक प्रगति तभी हो सकती है, जब हमारे देश के उद्योग-धंधे अन्य देशों के उसी तरह के उद्योगों से कन्धे से कन्धा मिला कर खड़े

होने की क्षमता रखेंगे। इस समय शक्कर तथा सूती वस्त्र उद्योग, जो कि हमारे प्रदेश तथा सारे भारतवर्ष के प्रमुख-उद्योगों में से हैं, न केवल पुरानी मशीनों इत्यादि के कारण, बल्कि मज़दूरों की कार्य-शैली तथा कार्य-कुशलता के कारण भी, आधुनिक संसार में बहुत पिछड़े हुए हैं। हमारे पास तुरन्त इतना धन नहीं है कि हम पुरानी मशीनों वाले कारखानों को बंद करके उनकी जगह नये कारखाने लगा दें। ऐसी सूरत में हमारे लिये रेशनलाइ-जेशन का अर्थ मज़दूरों की संख्या कम करने वाली आधुनिकतम मशीनों को लगाना नहीं, वरन् मौजूदा मशीनों पर अच्छे से अच्छे ढंग से काम करके अधिक उत्पादन करना है। इस ध्येय को हमारे भूतपूर्व श्रम मंत्री तथा वर्तमान मुख्य मंत्री डाक्टर सम्पूर्णानंद जी ने नैनीताल के त्रिदलीय सम्मेलन के समक्ष इस रूप में रक्खा था कि हमारा रेशनलाइजेशन उपलब्ध साधनों का अच्छे से अच्छा उपयोग करने तक ही सीमित है।

विरोध के पीछे भ्रमात्मक प्रचार

इस कथन को बिल्कुल भुला कर रेशनलाइजेशन के विरुद्ध हमारे प्रदेश में और विशेषकर कानपुर में तरह-तरह के भ्रमात्मक प्रचार किये गए। मज़दूरों के सामने नारा लगाया गया कि यह सब प्रयास श्रमिकों को नष्ट-भ्रष्ट करने के लिए, उनके संगठन को तोड़ने के लिए तथा उनका जीवन हमेशा के लिए अन्धकारमय बनाने के किया जा रहा है। हमारे कुछ श्रमिक भाई इस बहकावे में आ भी गए और 'रेशनलाइजेशन' शब्द के नाम से चौंकने लगे। इन्हीं भ्रमात्मक प्रचार करने वालों के प्रभाव में आकर कुछ कानपुर के तपे हुए मज़दूर-नेताओं ने भी अपनी खैरियत इसी में समझी कि वे रेशनलाइजेशन का विरोध करें।

रेशनलाइजेशन अनिवार्य क्यों ?

हमारा इरादा इस लेख में रेशनलाइजेशन की अनिवार्यता तथा उससे उत्पन्न परिस्थिति से अपने साथियों और विशेष करके श्रमिकों को अवगत कराने का है।

आज संसार के सारे देशों में एक दूसरे से आगे बढ़ने तथा अपने को समृद्धशाली बनाने की होड़ लगी हुई है। जो देश इस समय पिछड़ गया, वह हमेशा के लिए पीछे चलने वाला होकर रह जायगा। भारतवर्ष भी इसी ध्येय को सामने रखकर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हो रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना की सफलता ने हम में नया उत्साह भर दिया है और हम अपने उज्ज्वल भविष्य को अपनी आँखों के सामने देखने लगे हैं। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए हमको अपना उत्पादन और उसके द्वारा राष्ट्रीय धन बढ़ाने की आवश्यकता है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, पुराने कारखानों के स्थान पर अभी हम नए कारखाने नहीं लगा सकते हैं, इसलिए पुराने कारखानों में उत्पादन बढ़ाना होगा। उत्पादन बढ़ाने के लिए समचीनीकरण (रेशनलाइजेशन) बहुत आवश्यक है।

रेशनलाइजेशन के अभाव में

रेशनलाइजेशन होने से एक ओर तो श्रमिकों का कार्य-भार निर्धारित हो जाता है और दूसरी ओर हर एक कारखाने के किस विभाग में कितने श्रमिक चाहिए, उनको क्या मज़दूरी मिलेगी, आदि झगड़ालू विषयों पर एक पक्का निर्णय हो जाता है। बिना रेशनलाइजेशन के जहाँ कहीं मिल-मालिक मज़दूरों को दबा पाए, उनसे उनकी शक्ति से अधिक काम लिया जाता है और जहाँ मज़दूर मिल-मालिक को दबा पाये, वहाँ मज़दूरों का कार्य-भार बहुत कम रहता है। ये दोनों परिस्थितियाँ वांछनीय नहीं हैं। पहली स्थिति में धीरे-धीरे मज़दूर की कार्य-कुशलता और जीवन के दिन कम होते जाते हैं और दूसरी स्थिति में उसकी कार्यक्षमता पूरा काम न करने की वजह से घटती जाती है। व्यक्तिगत लाभ और हानि को अगर हम एक किनारे भी रक्खें, तो भी इन दोनों परिस्थितियों में राष्ट्र की हानि होती है। इसके अतिरिक्त आज तो आपसी प्रतियोगिता का समय है। अगर हमारे देश में अच्छा और सस्ता कपड़ा बनकर तैयार न हुआ, तो दूसरे देशों का बना कपड़ा यहाँ बिकने लगेगा और धीरे-धीरे हमारे कारखाने अपने माल की खपत के अभाव में बन्द हो जायँगे। यह

परिस्थिति बड़ी भयंकर होगी, क्योंकि इससे न केवल हम सर्वदा के लिए दूसरों के आश्रित हो जायँगे, वरन् हमारे देश में गरीबी और भुखमरी का साम्राज्य हो जायगा। ऐसी हालत में रेशनलाइज़ेशन हो जाना अनिवार्य हो जाता है। इसी बात को ध्यान में रख कर लोक-सभा ने इस बात का समर्थन किया था।

जो अनिवार्य है, वह हो कर ही रहेगा। अगर हम उसका भली भाँति संयोजन कर लेंगे, तो उससे जहाँ तक हो सकेगा, फायदा उठा लेंगे और अगर वह अपने आप अनियमित ढंग से आया, तो फिर उससे लाभ और हानि का समान बँटवारा हो सकना असम्भव होगा। रेशनलाइज़ेशन अनियमित ढंग से वहाँ ही लागू होगा, जहाँ के मज़दूर इस विषय पर कुछ भी सोचने और समझने के लिये तैयार नहीं हैं। ऐसे कारखानों में जहाँ-तहाँ यह कार्य और कम से कम कानपुर में आरम्भ भी हो चुका है और हमारे मज़दूरों के अग्रणी सज्जन बेबसी से उसे देख रहे हैं। इन जगहों में न तो कोई कार्य-भार पर रोक-टोक है, न कोई नियमित मज़दूरी बढ़ाने का ही सवाल तय हुआ है और न इसी का कोई उचित प्रबन्ध है कि काम करने की चीजों में क्या-क्या रद्दोबदल होना चाहिए था। यह सही है कि श्रम विभाग से जहाँ तक बन पड़ता है, इन कमियों को दूर कराने का पूरा प्रयत्न किया जाता है, परन्तु फिर भी बहुत सी कमियाँ रह जाती हैं।

संयोजित रेशनलाइज़ेशन से लाभ

इसके विपरीत यदि रेशनलाइज़ेशन संयोजित ढंग से लागू किया जाय, तो मज़दूरों की बेकारी बचाने के साथ ही साथ काम करने की हालत में उन्नति, वेतन-वृद्धि, कार्यभार, इत्यादि आवश्यक विषयों पर पहले से विचार-विमर्श करके एक सही नतीजे पर पहुँचा जा सकता है। इस प्रकार के संयोजन का फल यह होगा कि जो अधिक काम मज़दूरों को करना पड़ेगा, उसके बदले उनको उचित वेतन-वृद्धि तथा अन्य प्रकार की सहूलियतें मिलेंगी। इस लाभ को समझ कर और रेशनलाइज़ेशन की अनिवार्यता को जानकर ही हमारे देश के अनेक प्रमुख औद्योगिक केन्द्रों में मिल-मालिकों और मज़दूरों में रेशनलाइज़ेशन के सम्बन्ध में समझौते हो गये हैं। ऐसे केन्द्र अहमदाबाद, बम्बई, इन्दौर, हैदराबाद, मद्रास, इत्यादि हैं।

एक बार मज़दूरों का कार्य-भार, मिल के विभिन्न भागों में उनकी संख्या, उनके वेतन की दर तथा अन्य सहूलियतें, जिनको पाने का उनको हक़ है, निश्चय हो जाने पर, उनके और उनके मलिकों के बीच के औद्योगिक विवाद बहुत कम हो जायँगे। इससे आपसी कटुता भी कम हो जायगी। इस प्रकार रेशनलाइज़ेशन उद्योग तथा श्रम के लिये एक प्रकार से नवीन उज्ज्वल भविष्य के निर्माण का श्रीगणेश करेगा।

सात व्यक्तियों की समिति भंग

इन्हीं सब बातों को ध्यान में रख कर सरकार ने नैनीताल के त्रिदलीय सम्मेलन के बाद सात आदमियों की समिति बनाई थी, जिसका काम कानपुर में संयोजित ढंग से रेशनलाइज़ेशन लागू करने के विषय में अपनी सिफारिश देने का था। परन्तु दुर्भाग्यवश जैसा मैं ऊपर कह आया हूँ, हमारे कुछ तपे हुए श्रमिक-नेता भी मिथ्या प्रचार करने वालों के आन्दोलन के विरुद्ध खड़े न रह सके और श्रमिकों के एक वर्ग का सहयोग समिति को प्राप्त न हो सका। फलस्वरूप यह समिति तोड़ दी गई। अब हम कानपुर में असंयोजित रेशनलाइज़ेशन के लागू होने की प्रतीक्षा करते-से मालूम देते हैं।

रेशनलाइज़ेशन के लिये आपसी समझौते

रेशनलाइज़ेशन-संबंधी समिति के भंग हो जाने के बाद एक ही मार्ग बच गया और वह था कि व्यक्तिगत कारखाने और उसके श्रमिक व्यक्तिगत रूप से अथवा सामूहिक रूप से रेशनलाइज़ेशन को क्रियान्वित करने के लिये अपने-अपने समझौते कर लें। सरकार ने अपने मंतव्य में इस बात को स्पष्ट करते हुए यह भी कहा कि किसी भी रेशनलाइज़ेशन की योजना को लागू करने के पूर्व इन पंक्तियों के लेखक को यह संतोष दिलाना आवश्यक होगा कि श्रमिकों को उचित मज़दूरी दी जायगी और

श्रम-देवता

—श्री अरविन्द

ये श्रमजीवी,
ये शिल्पकार,
ये कलाकार,
युग–निर्माता ! युग के नायक !
इन खेतों के, उद्योगों के, लेखन के
ये मज़दूर
कि जिनकी मुट्ठी में
है निहित युगों का सृजन,
सभ्यताओं का स्वर्ण–विहान,
छिपा मानवता का इतिहास !
सभ्यता का प्रासाद उठाने में,
भूतल को स्वर्ग बनाने में,
जाने कितना-खून-पसीना बहा इन्होंने
एक किया होगा युग–युग से !
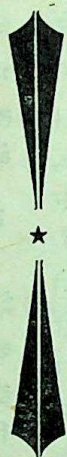
हे धरती के पुत्र !
और हे श्रम-मन्दिर के देव !
तुम्हारी वाणी को सुनकर ।
सफल है वसुन्धरा की गोद !
तुम्हारे चरणों को छू कर
सृजन का रथ चलता अविराम !
तुम्हीं से ही तो हारी मौत,
तुम्हीं ने जीती है भूगोल !
कौन कहता तुमको म्रियमाण ?
तुम्हें भूलकर
सप्त महाद्वीपी धरती यह
डूब चलेगी !
कहाँ टिकेगी महाप्रलय में !

काम की दशाएँ भी अनुकूल होंगी। कहना न होगा कि सरकार के इस निर्णय की भी, जैसा कि प्रायः होता है, आलोचनायें की गईं। दुःख की बात है कि आलोचकों ने कोई रचनात्मक सुझाव नहीं दिये, यद्यपि अधिकांश रेशनलाइजेशन की अनिवार्यता को अन्तर्मन से स्वीकार करते हैं।

अभी भी समय है कि...

रेशनलाइजेशन का संबंध श्रमिक के दैनिक काम और उसकी दशाओं से है, अतः यह एक ऐसा विषय है, जिसकी अब उपेक्षा नहीं की जा सकती। कोई भी समझदार मज़दूर-नेता यह नहीं चाहेगा कि यह स्वतः चल कर अपना कोई स्वतंत्र एवं पृथक रूप या मार्ग ग्रहण करे। 'स्वतः बहने देने' की नीति घातक हो सकती है। ऐसी स्थिति में यही आशा है कि समझदार मज़दूर-नेता ठंडे दिल से सोच कर यह विचार करें कि क्या बिना विचारे रेशनलाइजेशन का विरोध करके श्रमिकों का अन्ततः हित-साधन किया जा सकता है ? अभी भी समय है कि वे संयोजित रेशनलाइजेशन की ओर कोई सक्रिय कदम उठावें। फारसी में एक कहावत है : 'देर आयद दुरुस्त आयद'। यदि अब भी इस दिशा में कुछ किया जा सके, तो आगे और भी बहुत-कुछ किये जाने की संभावना बँध सकेगी।

उत्तर प्रदेश में न्यूनतम मज़दूरी कानून का प्रशासन

श्री शिव प्रताप सिंह

न्यूनतम मज़दूरी कानून, १९४८ उत्तर प्रदेश में २७ मार्च, १९५२ से लागू किया गया। यह अधिनियम उन्हीं उद्योगों में लागू होता है, जो अधिनियम के परिशिष्ट के दोनों भागों में अनुसूचित हैं। भाग-१ से संबंधित अनुसूचित उद्योग निम्नलिखित हैं :—

१—ऊनी कालीन तथा शाल बनाने वाले कारखाने, २—चावल, आटा या दाल मिलें, ३—तम्बाकू (बीड़ी बनाने का कार्य भी शामिल है) का काम, ४—वे बाग, जहाँ सिंकोना, रबड़, चाय या काफी पैदा की जाती है, ५—तेल मिलें, ६—सड़क-निर्माण या इमारत-निर्माण, ७—पत्थर तोड़ने या पत्थर पीसने के काम, ८—लाख बनाने के काम, ९—सार्वजनिक मोटर परिवहन, १०—स्थानीय स्वायत्त संस्थायें, ११—टैनरी एवं चमड़ा उद्योग, तथा १२—अभ्रक के कारखाने (जो उत्तर प्रदेश में नहीं हैं)।

प्रमुख सुविधाएँ

अनुसूचित व्यवसायों में काम करने वाले श्रमिकों के लिये उक्त कानून के अन्तर्गत प्रदान की गई सुविधाओं में से प्रमुख सुविधाओं का उल्लेख कर देना उचित होगा। इस अधिनियम के अन्तर्गत अनुसूचित व्यवसायों के लिये न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित की जाती है, जिसके लागू होने के बाद उन व्यवसायों में किसी भी श्रमिक को निर्धारित मज़दूरी से कम मज़दूरी नहीं दी जाकती। निर्धारित मज़दूरी से कम मज़दूरी देने पर सम्बन्धित नियोजक न केवल कमी की पूर्ति के लिये बाध्य किया जा सकता है, बल्कि अधिनियम के अन्तर्गत दण्डनीय भी होता है।

इस अधिनियम तथा उसके अन्तर्गत बनाए हुए नियमों के अनुसार प्रत्येक श्रमिक के लिए साप्ताहिक सवेतन अवकाश का भी विधान किया गया है। साप्ताहिक अवकाश का वेतन पूर्व सप्ताह में अर्जित औसत् प्रति दिन वेतन के बराबर होता है।

अनुसूचित व्यवसायों के श्रमिकों के काम करने की अवधि भी निर्धारित की गई है जो कि सविश्राम ९ घंटे से अधिक नहीं हो सकती। प्रत्येक श्रमिक को अधिक से अधिक ५ घंटे काम के बाद कम से कम आधे घंटे का अनिवार्य विश्राम देने की भी व्यवस्था है।

इसके अतिरिक्त अनुसूचित व्यवसायों का प्रत्येक नियोजक अपने श्रमिकों की हाज़िरी, वेतन भुगतान, कटौती, जुर्माना इत्यादि के सम्बन्ध में निर्धारित पंजियाँ भी रखता है। इन पंजियों से श्रमिकों के हितों की यथेष्ट रक्षा होती है। हर बार वेतन बँटने के पहले नियोजक अपने श्रमिकों को सूचनार्थ वेतन की पर्चियाँ बांट देता है, जिससे श्रमिक को मालूम हो सकता है कि सम्बन्धित वेतन की अवधि में वह कितने दिन गैर-हाज़िर था तथा क्या-क्या कटौती हुई है और उसे कितना वेतन मिलेगा। यदि उसे इसमें ग़लती मालूम पड़ती है तो उस ओर अपने नियोजक का ध्यान आकर्षित कर उसे ठीक करा सकता है।

(शेष पृष्ठ ५३ पर)

बेकारी का प्रश्न एक विश्व-समस्या है और अविकसित देशों के लिये तो यह समस्या बड़ी गंभीर है। युद्धोत्तर काल की व्यापारिक मंदी के कारण इसकी गंभीरता और भी बढ़ गई है। ऐसा कहा जाता है कि भारत में प्रत्येक वर्ष १८ लाख व्यक्ति नौकरी या काम-धन्धे के लिये तैयार हो जाते हैं। अधिकांश खेतिहर श्रमिक काम करने की क्षमता रखते हुए भी पूरा काम नहीं पाते, जिनकी संख्या लगभग ७ करोड़ है।

बेकारी की समस्या के दो रूप हैं—ग्राम्य बेकारी और शहरी क्षेत्रों की बेकारी।

ग्राम्य बेकारी

भारत की लगभग ८२·७ प्रतिशत आबादी गाँवों में रहती है। गाँवों की बेकारी के ठीक-ठीक आँकड़े नहीं बताये जा सकते, क्योंकि वहाँ नियोजन संस्थाएँ भी नहीं हैं। आबादी का बढ़ता हुआ भार, आधुनिक औज़ारों की कमी, अपुष्ट खाद एवं सिंचाई की कठिनाइयों के कारण खेतिहरों की दशा और भी चिन्तनीय हो गई है।

शहरी क्षेत्रों की बेकारी

गाँवों में काम की कमी ने गाँव के मज़दूरों को विवश होकर नगरों की ओर जाने के लिये विवश कर दिया

है। यही कारण है कि नगरों में कारखानों में अनिपुण कामों, घरेलू कामों और दूसरे छोटे व्यवसायों में प्रतियोगिता बढ़ गई है।

शहरी क्षेत्रों की बेकारी का वर्गीकरण तीन वर्गों में किया जा सकता है : (१) शिक्षितों की बेकारी, (२) औद्योगिक मज़दूरों की बेकारी, तथा (३) व्यापारिक कर्मचारियों की बेकारी।

शिक्षितों की बेकारी अपेक्षाकृत अधिक विपदाजनक है। उत्तर प्रदेश की बेकारी समिति ने १९३५ में तथा दूसरे राज्यों की इसी प्रकार की समितियों ने भी शिक्षितों की बेकारी की गम्भीरता की ओर संकेत किया है। पिछले ५ वर्षों के भीतर इन लोगों की संख्या बढ़ कर लगभग दूनी हो गई। भारत में १९४७–४८ में इस प्रकार के व्यक्तियों की संख्या प्रायः १,८७,६५० थी, जो १९५१-५२ में बढ़कर प्रायः ४,०२,५०० हो गई। यह इस वर्ग की बढ़ती हुई बेकारी का ही द्योतक है।

सन् १९४४ के बाद से, जब नियोजन अपने शिखर पर था, कारखानों के मज़दूरों में भी बेकारी बढ़ी है। उत्तर प्रदेश में १९४४ में जब २,७८,२३८ मज़दूर थे, सन् १९५२ में उनकी संख्या केवल २,०६,८३१ ही रह गई।

यद्यपि व्यावसायिक कार्यों में नियोजन के आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं, फिर भी व्यवसाय में आम मंदी के फलस्वरूप इस प्रकार के कामों में लगे कर्मचारियों को भी बेकारी का सामना करना पड़ रहा है।

(शेष पृष्ठ ५६ पर)

उत्तर प्रदेश के व्यावसायिक संघों की आर्थिक दशा बहुत ही अच्छी नहीं कहीं जा सकती, लेकिन फिर भी पिछले ११ वर्षों की आर्थिक दशा की तुलना करने पर यह प्रतीत होता है कि दिन-प्रति दिन इनकी दशा में सुधार होता आया है। आज हम देखते हैं कि उनकी आर्थिक दशा बहुत अच्छी न होने पर भी वे अपने सदस्यों के साथ ज़्यादती तथा अन्याय को रोकने में अपने संगठन तथा अपनी आर्थिक शक्ति में काफी सुदृढ़ है। यद्यपि व्यावसायिक संघों का धन अधिकतर औद्योगिक विवादों के सम्बन्ध में व्यय होता है, परन्तु फिर भी यह देखा गया है कि अपने सदस्यों के कल्याण-सम्बन्धी कार्यों में भी बहुत से संघ अपने कोष का कुछ न कुछ धन व्यय करते हैं। इस प्रदेश में प्रमाणित संघों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। यह इस बात का प्रतीक है कि श्रमिक-वर्ग में अपने अधिकारों के प्रति जागृति हुई है और वे अपनी संस्थाओं को पहले की अपेक्षा अब अधिक अच्छे ढंग से संगठित करते तथा चलाते हैं। इन प्रमाणित संस्थाओं का संगठन करने, उन्हें चलाने तथा उनका उपयोग करने में श्रम विभाग के 'ट्रेड यूनियन सेक्शन' द्वारा उन्हें सदैव उचित सलाह तथा सहायता पहुँचाई जाती है।

व्यावसायिक संघों को परामर्श

उनका अपना हिसाब-किताब रखना, प्राप्त हुये चन्दे को हिसाब खाते में चढ़ाना, आवश्यकतानुसार कार्यकारिणी तथा आम सभा द्वारा व्यय की स्वीकृति लेना, रसीदों और वाउचरों को नियमानुसार रखना, संघ का अतिरिक्त धन किसी बैंक में या पोस्ट आफिस में रखना, और संघ के प्रमाणित विधान में दिये गये कार्यों में ही विशेषकर संघ का धन खर्च करना तथा

विगत कुछ वर्षों में उत्तर प्रदेश में व्यावसायिक संघों, उनकी सदस्यता आदि की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई है। विद्वान लेखक ने उसका दिग्दर्शन कराते हुये संघों की उन व्यावहारिक त्रुटियों की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया है, जिनकी प्रायः उपेक्षा होती आई है। आशा है कि राज्य में स्वस्थ आधार पर व्यावसायिक संघों के विकास के लिये लेखक के सुझाव उपयोगी सिद्ध होंगे।

प्रमाणित विधान के अनुसार संघ के कार्यों को चलाने आदि की उचित सलाह समय-समय पर व्यावसायिक संघों के सहायक रजिस्ट्रार, व्यावसायिक संघों के निरीक्षक तथा सहायक निरीक्षकों द्वारा दी जाती है। इसके अतिरिक्त व्यावसायिक संघों के निरीक्षक तथा सहायक निरीक्षकों द्वारा प्रमाणित संघों के कागज-पत्रों का निरीक्षण किया जाता है और उनमें पाई गई त्रुटियों को ठीक करने की उचित सलाह दी जाती है। संघ के वार्षिक विवरण-पत्र को बनाने में यदि किसी संघ को कोई कठिनाई होती है, तो उसे पत्र द्वारा उचित सलाह दी जाती है। व्यावसायिक संघों के निरीक्षक इन संघों के निरक्षण के समय उनकी कठिनाइयाँ दूर करते हैं।

संघों और उनके सदस्यों की संख्या में वृद्धि

नीचे दी गई तालिका उनकी संख्या में वृद्धि तथा वार्षिक विवरण-पत्र भेजने की संख्या में वृद्धि का स्पष्ट प्रतीक है :—

वर्ष	नये प्रमाणित संघों की संख्या	वर्ष के अन्त में कुल प्रमाणित संघ	प्रमाणित संघों की संख्या, जिन्होंने अपने वार्षिक विवरण-पत्र भेजे	उन संघों की सदस्य-संख्या, जिन्होंने अपने वार्षिक विवरण-पत्र भेजे			प्रति संघ की औसत् सदस्य-संख्या	पिछले वर्ष की अपेक्षा सदस्य-संख्या में अधिकता + या कमी- का प्रतिशत
				पुरुष	स्त्रियाँ	योग		
१९४२-४३	७	४३	३३	२३३३३	२९५	२३६२८	७१६	(+) ३५.
१९४३-४४	२३	५६	३७	३५३३१	६९२	३६०२३	९७४	(+) ५२.
१९४४-४५	११	४९	४३	५५९७८	६७०	५६६४८	१३१७	(+) ५७.
१९४५-४६	३८	८१	५२	५८९६५	१०६६	६००३१	११५४	(+) ६.
१९४६-४७	१४७	२११	१२१	१३७४५५	१६६०	१३९११५	११५०	(+) १३१.
१९४७-४८	१७२	२९५	२१८	२२५९९६	१५५७	२२७५५३	१०४४	(+) ६३.
१९४८-४९	१८०	४५८	३१४	२३२५४२	२६१३	२३५१५५	७५३	(+) ३.
१९४९-५०	१४७	५३०	३४६	२२१३६५	२०४६	२२३४११	६४६	(-) ५.
१९५०-५१	१३२	५७२	३८१	१९३७९९	१८९७	१९५६९	५१८	(-) १२.
१९५१-५२	९१❀	५४२	४१८	२०५८२८	२१००	२०७९२८	५००	(+) ६.
१९५२-५३	१०८	५८१	४३६❀	२२९१४८	२२५०	२३१९९८	५३१	(+) ११.

❀दो फेडरेशनों को छोड़ कर।

उपरोक्त आँकड़ों को देखने से यह ज्ञात होता है कि १९४५—४६ के बाद से प्रमाणित संघों की संख्या विशेषकर बढ़ती ही जा रही है और वार्षिक विवरण-पत्र भेजने वाले संघों की संख्या में भी विशेष बढ़ती हुई है। १९४९ —५० तथा १९५०-५१ में सदस्य-संख्या की कमी का विशेष कारण यह है कि कई बड़े संघों ने समय पर वार्षिक विवरण-पत्र नहीं भेजे और उनकी संख्या इन आँकड़ों में सम्मिलित नहीं है। यह इस बात का भी प्रतीक है कि

यद्यपि स्त्रियों की संख्या पुरुषों की संख्या की अपेक्षा कम है, फिर भी स्त्रियों में भी व्यावसायिक संघ के रूप में अपना संगठन करने की दिशा में जागृति हुई है।

आर्थिक दशा में सुधार

व्यावसायिक संघों ने पिछले ११ वर्षों में अपनी आर्थिक दशा में भी सुधार किया है। नीचे के आंकड़ों से, जो प्राप्त हुए वार्षिक विवरण-पत्रों के आधार पर बनाये गये हैं, उनकी आर्थिक उन्नति का ज्ञान होगा :-

वर्ष	सामान्य कोष	रोकड़	संपत्ति (रोकड़ को छोड़कर)
	रु०	रु०	रु०
१९४२-४३	९,८८०	१०,३०५	७,७१०
१९४३-४४	११,७८७	१४,०४६	१४,३७९
१९४४-४५	२६,४४४	१९,७०६	१८,४२८
१९४५-४६	४२,३४१	१०५,७६६	३०,८६३
१९४६-४७	९२,६८५	१२९,३४०	९८,७०९
१९४७-४८	२१०,३३६	१८३,५९९	६१,१७०
१९४८-४९	२७४,३३२	२२७,८८६	७७,०९६
१९४९-५०	२९४,१६१	२२५,४२२	१०२,५६१
१९५०-५१	३५६,२११	२५४,५७५	१३०,०२२
१९५१-५२	४०५,१२९	२७९,३६६	१७६,२९९
१९५२-५३	३८३,७५९	२६२,०४०	१५९,७८९

उपरोक्त आंकड़ों को देखने से प्रतीत होता है कि १९५२-५३ को छोड़कर व्यावसायिक संघों की आर्थिक दशा में प्रति वर्ष उन्नति हुई है। १९५२-५३ में १९५१-५२ की अपेक्षा संघों की आर्थिक दशा कुछ खराब रही। इसके मुख्य कारण सदस्यों की बेकारी, बैठकी, वेतन में कमी तथा छँटनी आदि हैं।

निम्नलिखित आंकड़ों से भी १९५२-५३ में व्यावसायिक संघों की आर्थिक दशा का परिचय मिलता है :—

क्रम संख्या	सामान्य कोष (वर्ग के अनुसार रुपयों में)	संघों की संख्या	रोकड़ (वर्ग के अनुसार रुपयों में)	संघों की संख्या
१	० से १००	१८८	० से १००	२२०
२	१०० से ५००	११३	१०० से ५००	१०९
३	५०० से १०००	४६	५०० से १०००	३९
४	१००० से २५००	५१	१००० से २५००	४१
५	२५०० से ५०००	२५	२५०० से ५०००	१८
६	५००० से १००००	१०	५००० से १००००	८
७	१०,००० से ऊपर	४	१०,००० से ऊपर	२
		४३७		४३७

उक्त तालिका को देखने से ज्ञात होता है कि १७९ संघों की, जिन्होंने अपना सामान्य कोष १०० रुपये से १,००० रुपये तक सूचित किया है, आर्थिक दशा संतोषजनक कही जा सकती है। १,००० रूपये से अधिक रोकड़ वाले संघ ९० थे, जिनकी आर्थिक दशा को अच्छा तथा सुरक्षित कहा जा सकता है।

संघों द्वारा कल्याण-कार्य

वर्ष १९५२-५३ के प्राप्त हुए वार्षिक विवरण-पत्रों की जांच करने पर पता चला कि प्रमाणित संघों का धन अधिकतर उनके पदाधिकारियों के वेतन तथा भत्तों में व्यय किया गया। इसके अतिरिक्त बहुत से संघों ने अपने सदस्यों की दशा सुधारने में भी धन से उनकी सहायता की। वार्षिक विवरण-पत्रों के साथ प्राप्त सूचनाओं की

जाँच करने पर ज्ञात हुआ कि १२ संघों ने अपने सदस्यों को १० रु० से २०८ रु० तक 'मृतक हितलाभ' (Death Benefit) दिया। इस प्रकार दी गई धनराशि का योग ६५४ रुपया था। ११ संघों ने हड़ताल से पीड़ित सदस्यों को १५ रु० से २२६ रु० तक धन देकर उनकी सहायता की। इस प्रकार दिए गए धन का योग ७०७ रुपया था। ४२ संघों ने बेरोज़गारी से परेशान सदस्यों को १ रुपया से लेकर ७,७६६ रुपये तक दिए और इस मद में कुल १२,५६३ रुपये दिये गये। २१ संघों ने बीमारी तथा दुर्घटना से पीड़ित सदस्यों की सहायता में ५ रुपये से ३२८ रुपये तक दिए और इस प्रकार दिए गए धन का योग १,६७५ रुपया था। ३ संघों ने वृद्धावस्था वाले सदस्यों की सहायता में ३० रुपये से ५७३ रुपये तक दिये और इस मद में कुल ६६३ रुपये दिए गए। ३० संघों ने अपने सदस्यों की आर्थिक सहायता में अन्य तरीकों से २ रुपये से लेकर ६०० रुपये तक दिए और इस मद में उन्होंने २,७०१ रुपये व्यय किए।

वार्षिक विवरण-पत्र

३१ मार्च, १६५४ को उत्तर प्रदेश में प्रमाणित संघों की कुल संख्या ६३६ थी। उनमें से ८४ संघों के प्रमाणपत्र १६५२–५३ के वार्षिक विवरण-पत्र दिनांक ३१ दिसम्बर, १६५४ तक न भेजने के कारण रद्द कर दिए गए, ५ संघों का अस्तित्व समाप्त हो गया, २ संघ भंग हो गए और ४ संघों के प्रमाणपत्र १६५३–५४ के वार्षिक विवरण–पत्र न आने के कारण रद्द कर दिए गए। अतः ५४१ संघों के वार्षिक विवरण–पत्र इस कार्यालय में आने चाहिए थे। उनमें से केवल ३६५ संघों के (जिनमें एक फेडरेशन भी शामिल है) वार्षिक विवरण-पत्र ३१ दिसम्बर, १६५४ तक प्राप्त हुए। शेष १४६ संघों में से १२८ को २ माह की नोटिसें वार्षिक विवरण-पत्र न भेजने के कारण उनके प्रमाणपत्रों को रद्द करने के लिए भेजी जा चुकी हैं और शेष १८ संघों को भी नोटिसें भेजी जा रही हैं। व्यावसायिक संघों को इस ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

व्यावसायिक संघों की त्रुटियाँ

प्रमाणित संघों के रजिस्टरों और हिसाब-किताब का निरीक्षण करने पर उनमें बहुत-सी त्रुटियाँ पाई जाती हैं। उन्हें सुधारने तथा अपना हिसाब-किताब विधिवत् रखने के लिए व्यावसायिक संघों के निरीक्षण तथा सहायक निरीक्षकों द्वारा समय-समय पर संघों को उचित सलाह दी जाती है। प्रायः निम्नलिखित त्रुटियाँ व्यावसायिक संघों के रजिस्टरों में पाई जाती हैं :—

१–सदस्यता तथा चन्दे से आया हुआ धन बहुत समय तक सदस्यों और पदाधिकारियों के पास पड़ा रहता है और बहीखाते में नहीं लिखा जाता तथा रसीद भी नहीं दी जाती।

२–हिसाब खाता नियमानुसार नहीं बनाया जाता।

३–मासिक आय-व्यय का हिसाब खाते में नहीं लिखा जाता।

४–कभी-कभी पदाधिकारियों द्वारा कोई धन व्यय करने के पूर्व कार्यकारिणी तथा आम सभा की स्वीकृति नहीं ली जाती।

५–कभी-कभी प्रधान तथा मन्त्री उनको दिए गए अधिकार से अधिक धन का व्यय कर देते हैं।

६–वाउचर और रसीदें नियमानुसार नहीं रखी जातीं। वाउचरों की जाँच करने पर ज्ञात हुआ है कि किसी धन के खर्च की प्रस्तावना पर सभापति और मन्त्री के हस्ताक्षर पर्याप्त समझे जाते हैं। रुपया पाने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर बहुधा वाउचरों पर नहीं प्राप्त किए जाते।

७–बहुधा संघ का धन संघ के विधान के विपरीत मंत्री अथवा कोषाध्यक्ष के पास पड़ा रहता है। यह धन किसी बैंक अथवा पोस्ट आफ़िस सेविंग्स बैंक में जमा किया जाना चाहिए।

८–नए चुनाव में न चुने जाने के पश्चात् पुराने पदाधिकारी कभी-कभी रुपये-पैसे का हिसाब तथा हिसाब के खाते आदि नये पदाधिकारियों को नहीं

(शेष पृष्ठ ६२ पर)

बाबू पुरवा (कानपुर) की नव - निर्मित श्रमिक-बस्ती में पं० नेहरू एवं पं० पंत

श्रमिक-बस्ती का निरीक्षण करके लौटते हुए नेहरू जी एवं पन्त जी। दाहिने कोने पर आगे-पीछे हैं प्रति श्रम कमिश्नर श्री शिव प्रसाद पाण्डे और श्रम कमिश्नर श्री ओंकारनाथ मिश्र।

एक दुमंजिले मकान को देखने के लिए ऊपर चढ़ते हुए पंत जी। पीछे हैं ग्राम एवं नगर संयोजक श्री केदार नाथ मिश्र एवं अन्य।
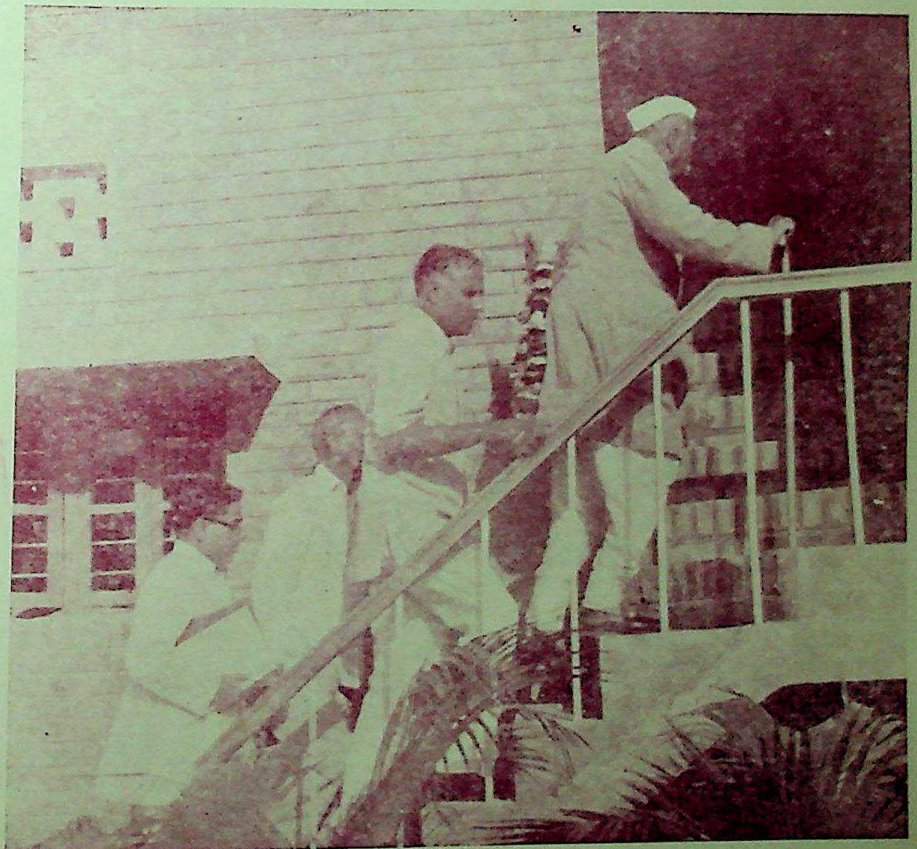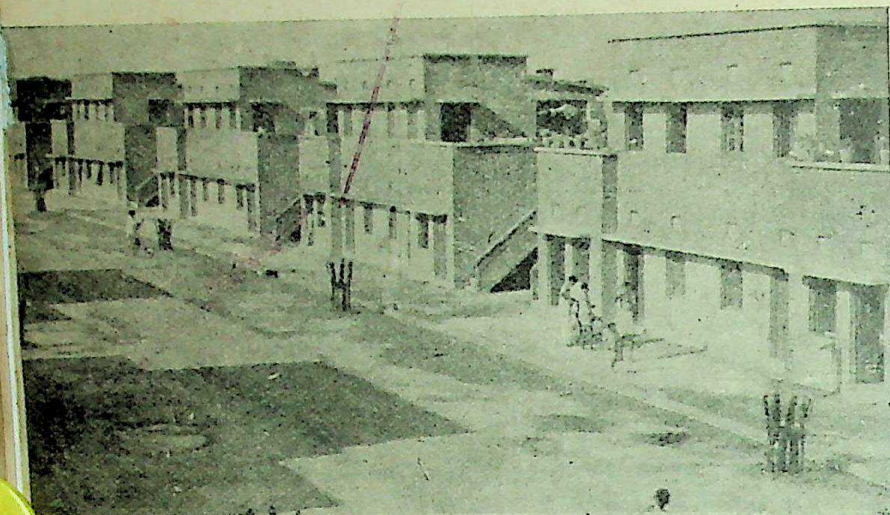
हरिहरनाथ शास्त्री नगर (कानपुर) की श्रमिक-बस्ती : इसके प्रत्येक समूह में नीचे-ऊपर ६ मकान हैं।
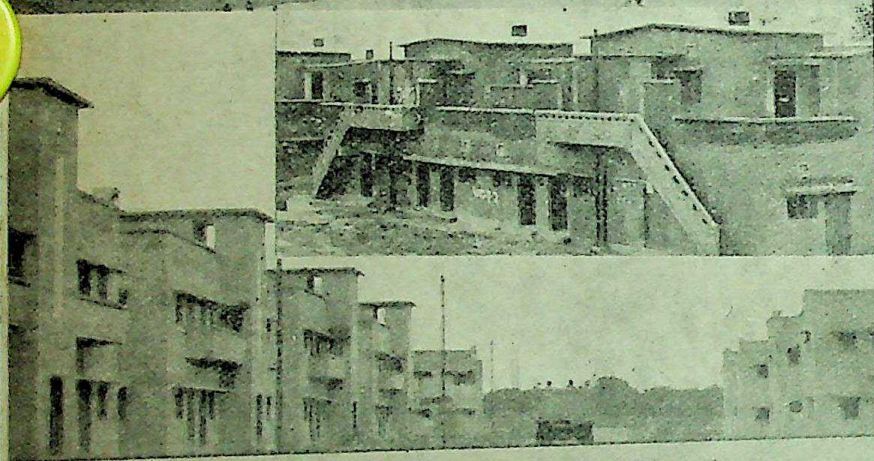
शास्त्री नगर की श्रमिक बस्ती : इसके प्रत्येक समूह में ऊपर-नीचे १२ मकान हैं।
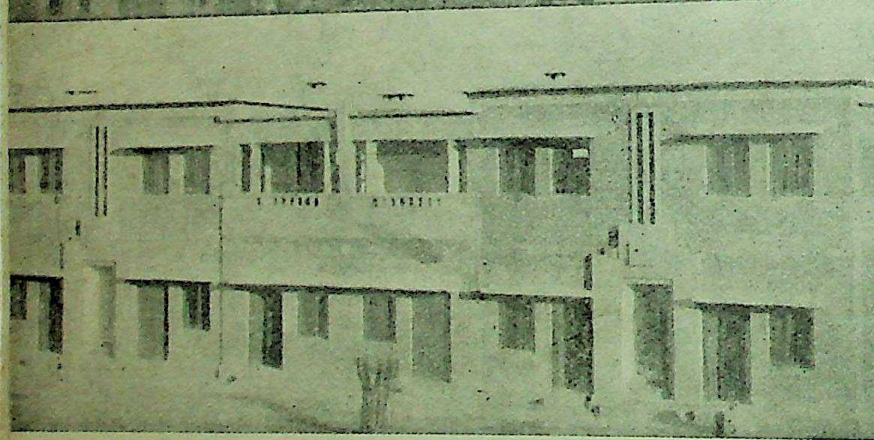
ऐशबाग (लखनऊ) की श्रमिक-बस्ती : इसके प्रत्येक समूह में ८ मकान हैं।

बाबू पुरवा (कानपुर) की श्रमिक बस्ती : इसके प्रत्येक समूह में १२ मकान हैं।
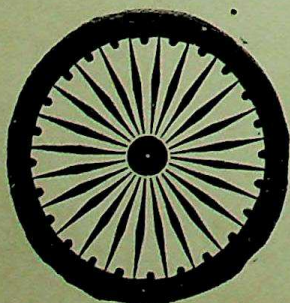
कानपुर और लखनऊ में औद्योगिक श्रमिकों के लिये बनी नई श्रमिक-बस्तियाँ

बिदेस तोहें जाये न देब

श्री अज्ञात, एम० ए०

सीज़न अभी खत्म भी नहीं हुआ कि गन्ने की कमी से तीस-तीस के 'बैच' में मज़दूरों की बैठकी शुरू हो गई। रामहरख भी इस बार के 'बैच' में बैठा दिया गया और एक पन्द्रहिया के लिये। मिल-मालिकों ने व्यापारिक मंदी और गन्ने की कमी के कारण सरकार को इस बैठकी की सूचना देकर जैसे अपने इस कार्य पर स्वीकृति की मोहर लगा दी।

रामहरख अपने समाज के दूसरे अधिकांश भाइयों की भाँति यद्यपि ककहरा भी नहीं जानता, लेकिन फिर भी ज़िन्दगी के ककहरे को तो व्यावहारिक रूप से उसने पढ़ा है। वह बैठकी की अवधि का सदुपयोग कर कस्बे की संकीर्ण और सीलन-भरी कोठरी में चारपाई तोड़ने की जगह गाँव चल दिया, जो वहाँ से लगभग सात मील दूर था। जिस मिल में वह काम करता था, उसके मालिकों ने राज्य सरकार की चीनी उद्योग गृह-निर्माण योजना से लाभ उठा कर यद्यपि पक्के, खुले और हवादार मकान बनाने शुरू कर दिये थे, लेकिन उन मकानों में से अधिकांश के बन कर तैयार हो जाने के बाद भी रहने को सिर्फ उन्हीं को वे मिले थे, जो या तो मालिकों के मुँह-लगे थे या जिनको मिल के निकट ही रखना अत्यन्त आवश्यक था। रामहरख उन सौभाग्यशालियों में न था, जिनको इन आधुनिक साज-सज्जा-युक्त मकानों में रहने का सुख प्राप्त था। उसे संतोष था तो यही कि मिल के बाहर वह किसी का क़ैदी न था।

रामहरख का गाँव उत्तर प्रदेश के गन्ना-उत्पादक एक पूर्वी जिले का छोटा-सा अंग है, जहाँ गन्ना बहुतायत से होता है। यद्यपि उसके दूसरे साथी कस्बे में ही पड़े हुए थे, परन्तु वह न रुका। यहाँ वह गन्ने के गढ़ में ही रहता है, परन्तु जैसे बन्दी कोयल को वसंत की आम्र-मंजरी की याद आती है, उसे भी गन्ने के फेनिल शीतल रस और गाँव में बड़े-बड़े कड़ाहों में पकने वाले राव की मिठाई-भरी महँक याद आने लगी। परंतु सबसे ऊपर जब उसे अपनी पत्नी गुलाबो का ध्यान आया, तो एक लम्बी साँस निकल कर रह गई। वह अकेली फार्म पर

गन्ना-कटाई करने जाती होगी या फिर घास काट कर या ऐसी ही कोई मेहनत-मजूरी करके अपना गुज़ारा कर रही होगी। स्वयं उसको मजूरी यद्यपि काफी मिलती है, और उसने पिछले दो-ढाई महीनों के भीतर लगभग सत्तर-अस्सी रुपये बचाए भी हैं, लेकिन इसी छोटी-सी पूँजी पर तो उसे और उसकी गुलाबो को वर्ष की शेष अवधि काटनी पड़ेगी। खाना, कपड़ा और झोपड़ी की वार्षिक मरम्मत की साधारण-सी गुंजाइश के बावजूद वह मज़दूर ही रहता है—कस्बे में भी और गाँव में भी।

गाँव में वह भी गुलाबो के काम में हाथ बँटाता है और जब काम नहीं रहता, तो गुलाबो घास काट लाती है और वह सिर पर घास का गट्ठर लाद कर सेठ-साहूकारों या हाथ से काम करने में अप्रतिष्ठा का अनुभव करने वाले ज़मींदारों के यहाँ बेच आता है। यही कठोर श्रम उनकी दिनचर्या का प्रमुख अंग है।

'मैं ऐसा समझ रहा हूँ कि मज़दूरों की बेकारी की समस्या का हल ज़मीन की लाभकर जोतों के समान बँटवारे के साथ गुँथा हुआ है।'

आज भोर होने के पूर्व गाँव चलते समय यद्यपि उसकी आय का स्रोत बंद हो जाने से जी कुछ उदास था, तथापि जब वह एक झोले में कल शाम को गुलाबो के लिये खरीद कर लाई हुई नई साड़ी, नया सिला हुआ एक 'ब्लाउज', माथे के लिये लाल टिकुली और हाथों के लिये नई चूड़ियाँ लेकर चला, तो गुलाबो की याद और उसके साथ ही लगभग ढाई महीने बाद गाँव पुनः पहुँचने की उत्कण्ठा से वह उदासी कुछ दब-सी गई! कस्बे से गाँव जाने वाले रास्ते पर ज्योंही वह पहुँचा कि झोले को उसने दाहिने कंधे पर रखी लाठी के सिरे पर लटका कर बाएँ हाथ को अपने कान पर रखा और बिदेसिया की अलाप शुरू कर दी—'बिदेस तोहें जाने न देब'।'

रामहरख इतना विभोर हो गया कि उसे यह भी पता न रहा कि वह कितनी दूर निकल आया और बाल-रवि की प्रथम किरणें प्राची के क्षितिज से पंख खोल कर उड़ने लगीं। उसे जब कुछ बैलों की घंटियों की आवाज़ और पहियों के चलने की चरमराहट सुनाई पड़ी, तो उसने देखा कि गन्ने से लदी हुई बैलगाड़ियों का कारवाँ रात्रिकालीन डेरा उठा कर, कच्ची सड़क पर धूल उड़ाता हुआ, उसकी मिल की ओर अग्रसर हो चला है। राह में इस प्रकार की बैलगाड़ियाँ उसे कस्बे से बाहर निकलते ही सड़क के किनारे खड़ी मिली थीं, परन्तु अब जब वे गतिशील हो चलीं, तो रामहरख भी जैसे मोह-निद्रा से जाग उठा।

उसे याद आया कि उसे तो बैठकी पर भेजा गया है। कहा गया है कि माल की कमी के कारण बैठकी की जा रही है। गन्ने से लदी गाड़ियों का माल की कमी से कैसा संबंध! यह उसकी समझ में नहीं आया, दिमाग पर

आए दिन कारखानों में बैठकी, छँटनी, बंदी आदि हुआ करती हैं। अज्ञात जी की यह कहानी ऐसी ही एक बैठकी के कथित कारणों और वस्तुस्थिति में वैषम्य का निदर्शन करती हुई कुछ सोचने और इस समस्या का हल खोज निकालने की ओर प्रवृत्त करती है। आप हिन्दी के एक सुलझे हुए कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार और कवि हैं। 'अमृतकन्या', 'मरघट' एवं 'घर की ओर' आपके प्रकाशित उपन्यास हैं। 'अमृतकन्या' पर आपको उत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा सन् १९५२ में ६०० रु० का पुरस्कार प्राप्त हो चुका है।

बहुत ज़ोर देने पर भी नहीं। उसे यह भी समझ में न आया कि यदि चीनी के भाव में विदेशों की शक्कर के आयात से कुछ गिरावट आ गई है, तो भी तो आज लगभग डेढ़ दशाब्दी पूर्व जो उसका भाव था, उस तक यह नहीं पहुँच पाई है। फिर भाव में थोड़ी-सी गिरावट आ जाने से यह व्यापारिक मंदी भला कैसी! व्यापार की बात तो वह समझता नहीं, पर इतना वह भी समझता है कि जब जौ और बेझर का भाव गिर रहा है, गन्ना और दूसरी खेती की उपज की क़ीमतें कम करके तय की जा रही हैं, तब अगर चीनी का थोड़ा-सा भाव गिर ही गया, तो उसे रोकने के लिये उसकी और उसके कुछ थोड़े-से दूसरे साथियों की यह बैठकी क्यों!

बिदेसिया की सरस तान ने उसके मन-मस्तिष्क पर आत्म-विस्मृति का, बेखुदी का जो ताना-बाना बुन दिया था, उसे तूफान की भाँति इस विचार ने झकझोर-सा दिया। वह कुछ गंभीर हो चला और इसी प्रकार सोचता-विचारता जब वह गाँव के निकट पहुँचा, तब तक धूप काफी खिल आई थी। गाँव की मंजरित अमराई ऐसी लग रही थी मानो कोई नव ग्राम-वधू सिकुड़ी-सँकुचाई हलकी-फुलकी केसरिया चूनर ओढ़े खड़ी हो।

रामहरख के मन ने प्रकृति का, गाँव का सान्निध्य पाकर पुनः हलकेपन का अनुभव किया और उसके अंग-अंग चपल हो उठे।

गाँव के भीतर पैर रखते ही पड़ोसी दुखहरन की विधवा पुत्र-वधू गोमती पानी भरने के लिये खाली गगरी कमर पर रख कर पनघट की ओर जाती हुई मिली। और कोई अवसर होता, तो रामहरख बिना कुछ छेड़छाड़ किये आगे न बढ़ता, लेकिन इतने अरसे बाद जब वह गाँव लौट रहा है, गोमती उसके लिये अपशकुन की भाँति अदृष्टव्य हो गई थी। लेकिन उसे आता देख कर जब गोमती ही राह में ठिठक कर खड़ी हो गई, तो उसे पूछना ही पड़ा—'कहो, अच्छी तरह तो हो गोमती?'

जागो नवयुग के निर्माता!

श्रीमती शकुन्तला श्रीवास्तव

आज जागरण की बेला में
जागो, नवयुग के निर्माता!
करो राष्ट्र-निर्माण, तुम्हीं हो
अब भारत के भाग्य-विधाता!

शोषण-हीन समाज बनाकर
ऊँच-नीच का भेद मिटाओ।
बापू के साकार स्वप्न हो,
शान्ति-पुञ्ज बन आगे आओ।

किससे आज शिकायत, बोलो,
यह तो राष्ट्र तुम्हारा ही है!
हो कटिबद्ध बढ़ो दृढ़ता से,
अब अवलम्ब तुम्हारा ही है!
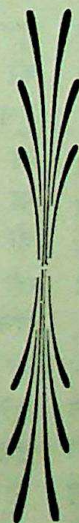
तुम भारत के कर्णधार हो,
उसकी नौका पार लगाओ।
ले कर में पतवार श्रमिक, अब
नाविक का कर्त्तव्य निभाओ।

बाधाओं-विपदाओं के तूफानों
के संग हँस कर खेलो।
मृत्यु खड़ी साक्षात्, भीत मत
होओ, उसको भी संग ले लो।

मर कर पुनः जन्म लेकर भी
तुम्हें कार्य पूरा करना है।
शोषित पीड़ित जन-समाज में,
तुमको नव जीवन भरना है।

'बड़े भाग, जो तुमने पूछा तो। जिसे कोई पूछने वाला ही न हो, उसके लिये अच्छा और बुरा क्या! मेरा क्या बनता-बिगड़ता है। मैं कभी बीमार भी तो नहीं पड़ती। गाँव में देवी मैया का ज़ोर है। अच्छे-अच्छे उठे जा रहे हैं। कल से दिदिया भी बुखार में पड़ी हैं। न हुआ, उनकी जगह मैया मुझे ही भख लेतीं।'

रामहरख ने मन को संतुलित रख कहा तो कि 'राम, राम! यह क्या कहती हो गोमती!' लेकिन उसकी आत्मा काँप उठी। गोमती जिसे 'दिदिया' कहती है, वही तो उसकी गुलाबो है। तो क्या उसकी गुलाबो भी बीमार है और उसे अभी पता तक नहीं! अच्छी हुई यह बैठकी कि वह वक्त से घर आ पहुँचा, नहीं तो कब चिट्ठी पहुँचती और कब वह गाँव पहुँचा होता!

उसका मन वायु-वेग से पंखा लगा कर उड़ चला लेकिन उसके पैर मन-मन के हो चले।

तभी गोमती ने कहा—'चलो, मैं पानी लेकर अभी आई। बैद जी को नब्ज दिखला दो। कहो, तो बुलाए लाऊँ।'

'तो क्या तबियत कुछ ज़्यादा खराब है?' रुकते हुए, व्याकुल भाव से, रामहरख ने पूछा।

रामहरख की घबड़ाहट को कम करने के लिये गोमती ने बात बदल कर कहा—'नहीं, मैंने तो यों ही कह दिया था। दिदिया आज-कल में ही ठीक हो जायँगी।' और उसने मुस्कराने का नाट्य किया, यद्यपि उसकी हँसी का फीकापन रामहरख से छिपा न रह सका।

'देखो' कह कर रामहरख ने अपनी झोपड़ी की ओर पैर बढ़ाए। गोमती पनघट पर जा पहुँची। लपक कर पानी भरा और गगरी कमर पर रख कर चल दी। जब से गलाबों को बुखार चढ़ा है, यह गोमती ही उसकी परिचर्या में लगी हुई है। वस्तुतः गुलाबो कल से नहीं, दो-तीन दिन से बुखार में पड़ी है, परन्तु वह बाहर-भीतर निकलती और बीमारी के इन दिनों में सभी पास-पड़ोस वालों के दुःख-दर्द में काम आती रही है। गुलाबो से कल जब उठा-बैठा नहीं गया, तो वह चारपाई पर पड़ रही। बड़ी देर से 'दिदिया' के दिखाई न पड़ने पर गोमती जब उसे ढूढ़ती हुई उसके पास आई, तो वह दंग रह गई। उसकी दिदिया का शरीर भट्ठी की तरह तप रहा था। वह उसकी परिचर्या में लग गई।

× × ×

कई दिनों तक रामहरख ने यह बात गुलाबो से छिपाए रखी कि उसे उसके मालिकों ने बैठा दिया है। सिर्फ गोमती ने यह भेद जान लिया था और बातों ही बातों में उससे यह बात गुलाबो ने भी जान ली। रामहरख के आने के बाद से गुलाबो के स्वास्थ्य में कुछ सुधार हुआ था और चेचक के दाने फूल कर मुरझा चले थे। ज्वर भी कुछ हलका पड़ने लगा था। अपनी पत्नी की तबियत ठीक होते देख रामहरख भी निश्चिन्त हो चला। तभी एकान्त पाकर गुलाबो ने एक दिन कहा—'बड़े वह हो तुम। मुझसे कहते हो कि तेरी कसम, छुट्टी लेकर आया हूँ, लेकिन बात ऐसी लगती नहीं।'

'सच मान, गुलाबो! मैं छुट्टी लेकर आया हूँ। तुझसे झूट क्यों बोलूँगा। दो-तीन दिन की छुट्टी और है। फिर काम पर चला जाऊँगा।'

पति के वाक्यों पर सहज विश्वास करने वाली नारी गुलाबो—आश्वस्त होकर चुप हो रही। रामहरख नहीं चाहता था कि उसकी बैठकी की बात सुन कर अस्वस्थ गुलाबो के हृदय पर कोई आघात लगे। बात बदल कर बोला—'गुलाबो, आज तुम कपड़े बदल डालो।' गुलाबो अपने पति का अभिप्राय समझ गई कि जो वह नए कपड़े लाये हैं, उन्हीं को पहनने का आग्रह है यह! लेकिन पति के बैठकी पर आने की बात से उसका जी इतना खिन्न था कि वह इस आग्रह को टालती जा रही थी। बोली—'जिस दिन देवी मैया पूजूँगी, उसी दिन नए कपड़े पहनूँगी।'

भारतीय घरों में चेचक के दौरान में नए कपड़े और विशेषकर कोरे कपड़े पहनना निषिद्ध माना जाता है। इसी अंध विश्वास पर चोट करते हुए रामहरख बोला—'गुलाबो, अंधविश्वास नहीं रखना चाहिए। फिर मैं

(शेष पृष्ठ ५१ पर)

आर्थिक असुरक्षा की समस्या

श्री एस० के० वाधवान

औद्योगिक विकास के साथ समाज में आर्थिक सुरक्षा की भावना टूटती चली जा रही है, जिसकी ओर समाजशास्त्रियों, अर्थविदों तथा अन्य विद्वानों के साथ सभी देशों की सरकारों का ध्यान जाना स्वाभाविक है। भारत सरकार ने इस समस्या के समाधान के लिये कर्मचारी राज्य बीमा कानून सन् १९४८ में स्वीकृत करके सामाजिक बीमा योजना का श्रीगणेश इस देश में कर दिया है, जो भारत की ही नहीं, दक्षिणी-पूर्वी एशिया की अपने ढंग की सर्वप्रथम योजना है। विद्वान लेखक ने उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए उसके अन्तर्गत प्राप्त हितलाभों का संक्षिप्त विवेचन किया है।

साधारणतः प्रत्येक व्यक्ति को अपने और अपने कुटुम्ब के भरण-पोषण के लिये कोई न कोई काम करना पड़ता है। परन्तु आज की विषम सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था में काम करने की अक्षमता अथवा बीमारी, अशक्तता, बेकारी और बुढ़ापा आदि जीवन की विभिन्न आपदाओं के कारण आमदनी के मार्ग में बाधा उत्पन्न होने की सम्भावना और तज्जन्य आर्थिक असुरक्षा के भय से मुक्ति नहीं मिलती। श्रमिक–स्त्रियों को इसके अतिरिक्त प्रसव-काल की चिन्ता भी लगी रहती है।

प्रागैतिहासिक काल और अब

मानव-जाति का इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस प्रकार की सामाजिक आपदाओं के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष चलता रहा है। प्रागैतिहासिक काल में आर्थिक असुरक्षा के समय संयुक्त परिवार और संयुक्त परिवार के अशक्त होने पर पूरा ग्राम सहायता के लिये तैयार रहा करता था। परन्तु क्रमशः बड़े पैमाने पर औद्योगिक विस्तार और विश्व-व्यापी हाट-व्यवस्था के विकास के साथ इस प्रकार की आर्थिक सुरक्षा दो कारणों से समाप्तप्राय हो

चली : एक तो श्रम और पूँजी के स्वामित्व में अन्तर आ जाने और भारी आर्थिक उथल-पुथल के कारण काम-धन्धे की सुरक्षा नहीं रही और दूसरे संयुक्त परिवार—जैसी सामाजिक संस्था विश्रृंखलित हो गई। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपने तथा अपने परिवार के भरण-पोषण के लिये उत्तरदायी हो गया, जिसका परिणाम यह हुआ है कि कमाने वाले की आमदनी बन्द हो जाने की स्थिति में उसे गरीबी और निराश्रय का सामना करना पड़ता है। आर्थिक असुरक्षा की समस्या ने समाज के लिये एक चुनौती प्रस्तुत कर दी, जिससे आमूल सामाजिक परिवर्तन आवश्यक हो गया।

पारस्परिक सहायता एवं व्यावसायिक संघ

पश्चिमी देशों में पारस्परिक सहायता के आधार पर वर्ग बना कर इस समस्या को सुलझाने का प्रयत्न किया गया। इस वर्ग के सदस्य पारिवारिक सम्बन्धों के कारण नहीं, व्यावसायिक एकता अथवा एक स्थान पर रहने के कारण आपस में बंधे होते थे। उद्देश्य के प्रशंसनीय होने पर भी इस प्रकार की परस्पर-सहायता संस्थायें और व्यावसायिक संघ इस समस्या को सन्तोषजनक रीति से नहीं सुलझा सके। अधिकांश श्रमिक-वर्ग उनके अन्तर्गत नहीं लाये जा सके और स्वयं अनेक श्रमिक भी गरीबी के कारण चन्दा देकर सदस्य न हो पाने के कारण पारस्परिक सहायता समस्याओं से लाभ नहीं उठा सके। फलस्वरूप समाज को और उसके साथ सरकार को आगे आना पड़ा और 'सामाजिक बीमे' की व्यवस्था की गई।

सामाजिक बीमा का प्रादुर्भाव

सामाजिक बीमे के इस मार्ग को सर्वप्रथम जर्मनी के बिस्मार्क द्वारा अपनाया गया। उसने जर्मनी के औद्योगिक मज़दूरों के लिये प्रथम बार बीमारी बीमा योजना लागू की थी। तब से सामाजिक बीमा योजनायें प्रायः विश्व के सभी देशों में बनाई जा चुकी हैं। चिली, ब्राज़ील, मिस्र, इजराइल, यूनान आदि जैसे अल्पविकसित देशों में भी इस प्रकार की योजनायें प्रचलित हैं। यद्यपि प्रारम्भ में प्रायः सभी जगह आबादी के कुछ चुने हुये वर्गों को इन योजनाओं में लिया गया और जीवन की कुछ थोड़ी-सी विपदाओं के लिये ही बीमा किया गया, परन्तु क्रमशः इनका क्षेत्र विस्तृत हुआ और अब तो यह प्रवृत्ति बढ़ रही है कि सारी आबादी का जीवन की समस्त आपदाओं के विरुद्ध बीमा किया जाय। इस प्रकार की सर्वव्यापी बीमा योजनायें ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, फ्रांस और न्यूज़ीलैण्ड में तो लागू हो चुकी हैं।

बीमारी बीमा योजना

सामाजिक बीमा का जो सर्वप्रथम स्वरूप अधिकांश देशों में विकसित हुआ, वह था—बीमारी बीमा। बीमारी बीमा की ओर विशेष रूप से ध्यान जाने का कारण यह था कि (१) बीमारी की विपदा सर्वजन-सामान्य है; (२) बिना विशेष भूल के बीमारी के विरुद्ध सुरक्षा में व्यय का हिसाब निकाला जा सकता है; (३) आमदनी की हानि और दवा-दारू के खर्च के कारण गरीबी और पराश्रय बढ़ता है, जो आर्थिक सुरक्षा के लिये सदा आसन्न विपदा है; तथा (४) यह काम से अनुपस्थिति और श्रमिकों के बदलते रहने का प्राथमिक कारण है, जिससे उत्पादन घटता है। स्वास्थ्य बीमा योजना से औद्योगिक मज़दूरों और उद्योग की कठिनाइयाँ ही नहीं हल होतीं, इससे श्रमिक-वर्ग की कार्य-कुशलता बढ़ती, उत्पादन की लागत घटती और कुल मिला कर राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है।

भारत में

भारत—जैसे देश में अभी तक सीमित परिमाण में राज्य की ओर से स्वास्थ्य-सेवा तथा मज़दूरों को हरजाना एवं मातृका हितलाभ दिलाने की बहुत ही अविकसित-सी व्यवस्था रही है। यहाँ १०,००० व्यक्तियों के पीछे एक डाक्टर तथा ४३,००० व्यक्तियों के पीछे एक नर्स है, जबकि ब्रिटेन में १००० व्यक्तियों के पीछे एक डाक्टर तथा ३०० व्यक्तियों पीछे एक नर्स है। इसी प्रकार मज़दूर हरजाना कानून के अन्तर्गत श्रमिकों को काम के समय चोट लगने पर हरजाना दिलाने की व्यवस्था है, परन्तु एक तो अज्ञानतावश श्रमिक उससे कोई लाभ नहीं उठा पाते और दूसरे जो दावे दायर भी करते हैं, उन्हें बहुत उलझनों

और खर्च के बाद ही हरजाना मिल पाता है। ऐसी दशा में यही संभावना अधिक रहती है कि उन्हें जो कुछ थोड़ा-बहुत हरजाना मिले, उसे स्वीकार कर लें। साथ ही उक्त कानून के अन्तर्गत उनकी दवा-दारू की भी कोई व्यवस्था नहीं है। एकमुश्त रकम मिलने से प्रायः अपव्यय हो जाता है और आय की कोई स्थायी साधन नहीं प्राप्त होता।

मातृका हितलाभ कानून भी पूर्णतः सन्तोषजनक नहीं है। उसमें न तो एकरूपता है और न सार्वभौमिकता। प्रसव के पूर्व, मध्य और बाद में उपचार कराने में सहायता पाने की भी व्यवस्था नहीं है। देश के कुछ बड़े प्रतिष्ठानों में प्रसूतिका चिकित्सालयों में प्रसव के बाद उपचार की सुविधा अवश्य दी जाती है। अन्यत्र यह सुविधा नहीं के बराबर है। चूंकि इस हितलाभ को देने का दायित्व मालिकों पर है, अतः प्रवृत्ति इस दायित्व से बचने की उनमें रही है। वस्तुतः वर्तमान मातृका हितलाभ कानून विवाहित स्त्रियों के, विशेषकर सन्तान होने योग्य अवस्था की स्त्रियों के नियोजन के लिये प्रतिकूल रहा है और प्राथमिकता उन्हें मिली है जो अविवाहिता हैं, विधवा हैं या जिनकी अवस्था सन्तान होने योग्य नहीं रही।

उक्त कानूनों की इन त्रुटियों को यत्र-तत्र सुधार कर दूर नहीं किया जा सकता और मालिक के दायित्वों के अनिवार्य बीमे से भी काम नहीं चल सकता। सुधार का एक ही मार्ग है कि मज़दूर हरजाना से संबंधित व्यवस्था को सामाजिक बीमा का अंग बना दिया जाय। इसी प्रकार बीमारी और प्रसव के समय भी श्रमिकों को अधिकांश में स्वयं ही सारा व्यय का भार उठाना पड़ता था। कभी-कभी व्यय की पूर्त्ति के लिये ऊंची-ऊंची ब्याज की दरों पर उन्हें कर्ज़ तक लेना पड़ जाता था, जिसके फलस्वरूप उन्हें आजीवन अर्थ-संकट का शिकार बन कर निराश्रय और भुखमरी का सामना करना पड़ता था।

कर्मचारी राज्य बीमा कानून

इस समस्या को संतोषजनक रीति से हल करने के लिये सरकार का ध्यान सामाजिक बीमा की ओर १९२७ से ही आकृष्ट रहा है, परन्तु लम्बे विवादों और श्रमिक-प्रतिनिधियों के दबाव के कारण कर्मचारी राज्य बीमा कानून अप्रैल, १९४८ में जाकर स्वीकृत हो सका। इस कानून में सन् १९५१ में आवश्यक संशोधन भी किये गये।

कर्मचारी राज्य बीमा योजना केवल भारत में ही नहीं, समूचे दक्षिणी-पूर्वी एशिया में अपने ढंग की प्रथम योजना है। यह मौसमी कारखानों को छोड़ कर २० या अधिक श्रमिकों को काम देने वाले शेष सभी विद्युत्-चालित कारखानों पर लागू होती है। इसके अन्तर्गत ४०० रु० प्रतिमाह से अधिक न पाने वाले सभी कर्मचारियों को ले लिया गया है, चाहे वे स्थायी हों या अस्थायी अथवा आकस्मिक और कारखाने के किसी काम में प्रत्यक्ष रूप से लगे हों अथवा अप्रत्यक्ष रूप से। बाबू - वर्ग के लोग भी इसके अन्तर्गत आ जाते हैं, जिन्हें कि देश के दूसरे श्रम - कानूनों में शामिल नहीं किया गया।

पाँच प्रकार के हितलाभ

कानून से पाँच प्रकार के हितलाभ श्रमिकों को मिलते हैं :—

१. चिकित्सा हितलाभ

बीमार श्रमिकों को राज्य बीमा चिकित्सालयों में भर्ती करके अथवा बाहर उनका निःशुल्क उपचार किया जाता है तथा बाहर से आने वालों को निःशुल्क दवा दी जाती है, छोटे - मोटे आपरेशन भी किये जाते हैं और प्रसवकाल में आवश्यक परिचर्या भी की जाती है। यह हितलाभ इस समय केवल बीमा हुए व्यक्तियों को ही मिलता है। परन्तु उनके कुटुम्बियों को भी भविष्य में यह हितलाभ दिया जा सकता है।

२. बीमारी हितलाभ

इस हितलाभ के अन्तर्गत ३६५ दिनों की किसी अटूट अवधि में ५६ दिनों के लिये औसत् दैनिक आय के सात-बारहवें भाग के बराबर मज़दूरी दी जाती है।

३. मातृका हितलाभ

प्रसूतिकाओं को १२ आना प्रतिदिन या औसत् आय का सात–बारहवाँ भाग, जो भी अधिक हो, १२ सप्ताह

तक के लिये दिया जाता है, जिसमें से प्रसव के पूर्व अधिक से अधिक ६ सप्ताह तक की सुविधा मिल सकती है।

४. अपाहिजपन हितलाभ

अस्थायी तौर पर अपाहिज होने पर अपाहिज रहने के समय तक औसत् दैनिक मज़दूरी के ७/१२ वें भाग के बराबर हितलाभ और स्थायी तौर पर पूर्णतः अपाहिज होने पर उपर्युक्त दर से आजीवन पेंशन तथा अंशतः अपाहिज होने पर आनुपातिक दर से हितलाभ दिया जाता है।

५. आश्रित हितलाभ

बीमायुक्त श्रमिक की मृत्यु होने पर उसकी विधवा पत्नी को उसके जीवन काल में या पुनर्विवाह तक तथा मृतक के बच्चों को १५ वर्ष तक और शिक्षा जारी रखने पर १८ वर्ष की आयु तक पेंशनें दी जाती हैं।

राज्य बीमा कोष

राज्य बीमा कारपोरेशन को वित्त के लिये श्रमिकों और मालिकों के चन्दों पर निर्भर रहना पड़ता है। श्रमिकों को ८ मज़दूरी-वर्गों में विभाजित किया गया है। सबसे नीचे का मज़दूरी-वर्ग वह है, जिसके श्रमिकों को एक रुपया प्रतिदिन मिलता है और जिसे कुछ भी चन्दा नहीं देना पड़ता। १ रु० से १ रु० ८ आ० तक पाने वालों को २ आ० प्रति सप्ताह और १ रु० ८ आ० से २ रु० तक पाने वालों को ४ आ० प्रति सप्ताह देना पड़ता है। और ऊंचे मज़दूरी-वर्गों में अनुपात से कुछ अधिक देना पड़ता है। इस प्रकार श्रमिकों का चन्दा अनुमानतः उनकी मज़दूरी के ढाई प्रतिशत के बराबर पड़ता है अर्थात् एक रुपया पीछे डेढ़ पैसा। मालिकों को श्रमिकों की अपेक्षा दुगुना चन्दा देना पड़ता है, परन्तु इस योजना के व्यय-भार को देश के सभी नियोजकों के बीच बाँट दिया गया है।

चंदों के अलावा केन्द्रीय सरकार भी कारपोरेशन के प्रशासकीय व्ययों का दो-तिहाई भाग तथा राज्य सरकारें अपने-अपने राज्यों में दिये जाने वाले चिकित्सा हितलाभों के व्यय का एक-चौथाई भाग देती हैं।

बीमा योजना की प्रगति

कर्मचारी राज्य बीमा कानून को कानपुर और दिल्ली में अग्रिम योजना के रूप में २४ फरवरी, १९५२ से लागू किया गया था। योजना के हितलाभों को पंजाब के औद्योगिक नगरों में १७ मई, १९५३ से और नागपुर में ११ मई, १९५४ से लागू किया गया। बृहत् बम्बई में इस कानून को २ अक्टूबर, १९५४ को लागू किया गया। ऐसा अनुमान है कि इस योजना के अधीन देश के प्रायः २५ लाख श्रमिकों का बीमा किया जायगा, जिसमें से ६ लाख श्रमिकों का उक्त स्थानों में बीमा किया जा चुका है। कारपोरेशन द्वारा कानून के अन्तर्गत देय हितलाभों को चालू वर्ष में देश के उन सभी स्थानों में लागू करने के लिये सक्रिय कदम उठाये जा रहे हैं, जहाँ कानून के अन्तर्गत आने वाले कारखानों में ५००० या अधिक श्रमिक काम करते हैं।

हड़तालें और तालाबंदियाँ गलत हैं!

"शुरू में मज़दूरों को बड़ी कठनाइयाँ उठानी पड़ीं और उन्होंने अपने संघों और हड़ताल के अस्त्र के माध्यम से अपनी शक्ति का अनुमान लगाना सीखा। आज के युग में हड़तालों (की उपादेयता) के संबंध में उनसे बातचीत करते समय इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि विगत सौ वर्षों के इतिहास में उन्होंने कितने कष्ट उठाए हैं। लेकिन युद्ध से समस्याओं का अन्त नहीं हुआ, उसी प्रकार आपसी संघर्ष से भी आन्तरिक समस्याओं को नहीं सुलझाया जा सकता। मज़दूरों और पूँजीपतियों दोनों को यह समझ लेना चाहिये कि आज के भारत में हड़तालें और तालाबन्दियाँ ग़लत हैं और उनका सहारा नहीं लिया जाना चाहिये। उन्हें अपनी समस्याओं का समाधान करने के लिये नए अस्त्रों का निर्माण करना चाहिये। तभी प्रगति संभव हो सकेगी।"

—पं० जवाहरलाल नेहरू—

उत्तर प्रदेशीय सरकार की श्रम-संबंधी द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत कानपुर में एक [illegible]ोगिक संग्रहालय खोलने की योजना विचाराधीन है। इस लेख में प्रस्तावित 'सेफ्टी, हेल्थ एण्ड वेलफेयर म्यूज़ियम' के तीन विभिन्न, किन्तु परस्पर--संबंधित विभागों – औद्योगिक सुरक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण की संक्षिप्त रूप-रेखा प्रस्तुत की गई है।

सेफ्टी, हेल्थ एण्ड वेलफेयर म्यूज़ियम

श्री गुरुदत्त विश्नोई

आजकल प्रायः कारखानों को भी सामाजिक प्रगति का एक अंग माना जाने लगा है। उद्योगों में वैज्ञानिक उन्नति तो काफी हुई है, किन्तु उद्योग के सामाजिक पहलुओं का विकास नहीं हुआ है। उद्योग – प्रधान उन्नतिशील देशों में श्रमिक और व्यावसायिक संघों ने मनुष्य तथा समाज के सम्बन्धों के क्षेत्र में काफी कार्य किया है। हमारे देश में एक तो ऐसी संस्थायें कम हैं, जो केवल श्रमिकों की समस्याओं पर ध्यान दें और जो कुछ हैं भी, वे ठोस कार्य नहीं कर रही हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि एक ऐसी संस्था की ज़रूरत लगातार बढ़ती जा रही है, जो उद्योगों की उन्नति का अध्ययन श्रमिक के हितों को ध्यान में रख कर वैज्ञानिक ढंग से करे।

बम्बई में केन्द्रीय श्रम संस्थान

सन् १९४६ में विभिन्न राज्यों के मुख्य कारखाना निरीक्षकों ने अपने छठे सम्मेलन में, जो नई दिल्ली में हुआ था, 'सेफ्टी, हेल्थ एण्ड वेलफेयर म्यूज़ियम' की स्थापना करने पर विचार किया। प्लानिंग कमीशन ने प्रथम पंचवर्षीय योजना में इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये यह सिफारिश की कि एक राष्ट्रीय म्यूज़ियम औद्योगिक सुरक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण के लिये खोला जाय। तदनुसार – बम्बई में एक केन्द्रीय श्रम संस्थान (इंस्टीट्यूट) की स्थापना की जा रही है।★

★ केन्द्रीय श्रम संस्थान का शिलान्यास प्रधानमन्त्री पं० नेहरू ने अभी हाल में ७ अक्टूबर, १९५४ को कुर्ला (बम्बई) में किया था। सम्पादक

कानपुर के लिये प्रस्तावित म्यूज़ियम

उत्तर प्रदेश के श्रम-मन्त्री ने राज्य श्रम कल्याण परामर्शदात्री समिति की दूसरी बैठक में, जो जून १६५२, में हुई थी, यह सुझाव रखा था कि राज्य के श्रम विभाग में इस प्रकार का म्यूज़ियम बनाना उपयोगी होगा। इस सुझाव का समिति के सदस्यों ने संभवतः इसलिये स्वागत किया, क्योंकि ऐसा समझा जाता है कि प्लानिंग कमीशन द्वारा प्रस्तावित म्यूज़ियम बम्बई में ही खुलेगा और शायद उससे राज्य के श्रमिक पूरा लाभ न उठा सकेंगे। ऐसी परिस्थिति में यह ज़रूरी जान पड़ा कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बम्बई में स्थापित किये जाने वाले म्यूज़ियम के ढंग पर कानपुर में भी एक म्यूज़ियम बनाया जाय।

म्यूज़ियम के तीन विभाग

२ जून, १६५४ को नैनीताल में हुये राज्य त्रिदल श्रम सम्मेलन (वस्त्र) में राज्य सरकार ने उद्योग और श्रमिक प्रतिनिधियों के परामर्श से एक समिति की स्थापना का निश्चय किया और योजना पर विस्तारपूर्वक विचार करने और रिपोर्ट देने के लिये सरकार ने उद्योग और श्रमिकों के प्रतिनिधियों की एक समिति भी बनाई। जैसा कि नाम से पता चलता है, इस म्यूज़ियम में तीन विभाग होंगे—सुरक्षा (सेफ्टी), स्वास्थ्य (हेल्थ) तथा कल्याण (वेलफेयर)।

सुरक्षा विभाग-ऐसा समझा जाता है कि सुरक्षा विभाग में ट्रांसमिशन (संप्रेषक) यंत्रों से सम्बन्धित प्रदर्शन-योग्य वस्तुएँ प्रधानतः रक्खी जायेंगी, क्योंकि अधिकतर दुर्घटनायें श्रमिकों के ट्रांसमिशन यन्त्रों के चलते हुये शैफ्टों या दूसरे चलते हुये अंगों के सम्पर्क में आने से होती हैं, जबकि वे पहिये में तेल देते हैं पट्टे ठीक करते या छत की पुताई या मरम्मत करते अथवा यन्त्रों के आस-पास अन्य दूसरे कार्य करते हैं। इन प्रदर्शन-योग्य वस्तुओं को इस ढंग से रक्खा जायगा कि जिससे श्रमिकों को अच्छी और बुरी आदतों का ज्ञान हो जाय और वे उन बुरी आदतों से बचने के उपाय भी जान जायें। दृष्टांत के तौर पर यह बताना काफी होगा कि तेल देने, खूँटियों या बैठने की जगहों, यंत्रों के औज़ारों, विद्युत् द्वारा [illegible]ने के यंत्रों, सूती वस्त्र से सम्बन्धित यन्त्रों, छापने के यन्त्रों, दफ्ती के डिब्बे बनाने वाले यन्त्रों, सिलाई की मशीनों, वाष्प-चलित ब्वायलरों, या अन्य वाष्प यन्त्रों, ह्वायस्ट्स, लकड़ी काटने की मशीनों, गतिपालक यन्त्रों, सीढ़ियों, न फिसलने वाली सीढ़ियों, औज़ार उठाने वाले चक्रों, पट्टे बाँधने या जोड़ने, चश्मे और नेत्र ढँकने आदि से सम्बन्धित प्रदर्शन योग्य वस्तुओं को दिखलाया जायेगा। इसके अतिरिक्त राज्य के विभिन्न उद्योगों की मशीनों के फोटो भी संग्रहीत किये जायेंगे, जिनके द्वारा सुरक्षात्मक तरीकों और औज़ारों, काम से सम्बन्धित संकेतों और उनसे बचने के आवश्यक उपायों का भी प्रदर्शन किया जायेगा। अधिकतर प्रदर्शित वस्तुओं को इस प्रकार से रक्खा जायेगा कि दर्शकों को उनके बारे में व्यावहारिकरूप से समझाया जा सके।

स्वास्थ्य विभाग-स्वाभावक है कि म्यूज़ियम के स्वास्थ्य विभाग में इससे अलग ढंग की वस्तुएँ दिखाई जायेंगी। प्रदर्शित वस्तुओं में ऐसे फोटो होंगे, जिनमें विभिन्न उद्योगों में होनेवाली—सीसा-विष-प्रवेश, सिलोकोसिस, डर्माटिटिस आदि औद्योगिक बीमारियों से बचने के उपायों पर प्रकाश डाला जायेगा। ऐसे चार्ट भी रखे जायेंगे, जिनमें विभिन्न उद्योगों में कई वर्षों के भीतर औद्योगिक बीमारियों से पीड़ितों की संख्या दिखाई जायेगी। कुछ माडेल भी इस विभाग में होंगे, जिनमें रोगों के कारण होने वाले घावों आदि का प्रदर्शन होगा। इसके अलावा फेफड़े के सूक्ष्म भागों के चित्र, गर्द-कण के विस्तारित चित्र आदि भी दिखलाये जायेंगे।

कल्याण विभाग-कल्याण विभाग में रोशनदान और प्रकाश के सिद्धान्तों तथा ऐम्बुलेन्स रूम, विश्राम-गृह, जलपान-गृह, शिशु-शाला, बन्दकमरे तथा सफाई कक्ष की साज-सज्जा पर प्रकाश डाला जायेगा।

म्यूज़ियम की उपयोगिता

म्यूज़ियम स्थापित हो जाने के बाद यह न केवल श्रमिक कल्याण की दिशा में एक ठोस कदम होगा, वरन् राज्य के उद्योगों की कार्य-क्षमता में भी इससे वृद्धि होगी। कारखानों के नक्शे बनाने वालों, विद्यु त्-महायन्त्रों, आड़बन्दों, वायुशोधक यन्त्रों तथा अन्य सुरक्षात्मक औज़ारों के निर्माताओं को भी इससे आवश्यक सहायता प्राप्त होगी। कारखाने के मज़दूरों का इलाज करने वाले चिकित्सकों के लिये भी यह उपयोगी होगा। सामाजिक कार्य-कर्त्ताओं और मज़दूर संघों के लिये भी यह लाभ-दायक रहेगा, क्योंकि उन्हें अपने-अपने क्षेत्र में कल्याण-कार्य के सर्वोत्तम उपायों का ज्ञान हो सकेगा। इसके अलावा इंजीनियरिंग इंस्टीट्यूट्स (संस्थानों) के छात्रों के लिये सुसज्जित प्रशिक्षण-केन्द्र का कार्य भी यह देगा, क्योंकि वर्तमान प्राविधिक (टेकनिकल) संस्थानों में इस प्रकार का प्रशिक्षण शायद ही कहीं दिया जाता है।

म्यूज़ियम से इस राज्य में होने वाले कार्यों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने का अवसर तो मिलेगा ही, साथ ही यह भी जाना जा सकेगा कि दूसरे राज्यों और उद्योग-प्रधान देशों में इस दिशा में क्या प्रगति हुई है।

म्यूज़ियम में श्रमिकों की सुरक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण के उत्तमोत्तम उपायों का दिग्दर्शन कराया जाय, जिससे राज्य के विभिन्न उद्योगों में उत्तरोत्तर आविष्कार करने और विभिन्न कारखानों में सुधार करने की प्रेरणा प्राप्त होती रहेगी।

म्यूज़ियम को अद्यतन बनाये रखना आवश्यक

यहाँ इस बात पर ज़ोर देने की आवश्यकता नहीं कि इस प्रकार के म्यूज़ियम के चलाने तथा उसके उद्देश्य की सफलता के लिये यह आवश्यक होगा कि वह केवल प्राचीन वस्तुओं का संग्रहालय मात्र न रह जाय। इसलिये लगातार प्रयत्न करते रहना होगा कि उसे अद्यतन बनाये रखा जाय, जिससे वह उद्योग के उच्चतम कार्यों का प्रतीक हर समय बना रहे। इस उद्देश्य-पूर्ति के लिये मालिकों और श्रमिकों का सहयोग आवश्यक है, जो आशा है कि सदैव मिलता रहेगा।

ये भारतीय मज़दूर !

"भारत के कारखानों में काम करने वाले मज़दूरों और कारीगरों में अपनी क्षमता के प्रति मैंने जो आत्म-विश्वास देखा है, उससे मुझे यह विश्वास हो गया कि भारत अपने महान् भविष्य की ओर लगातार बढ़ रहा है।"

— मार्शल जोसफ़ ब्राज़ टीटो —

श्रमिक की अर्थी

श्री रमाकान्त श्रीवास्तव

कोई नहीं है भूल से भी पूछता-
यह कौन है ?
अर्थी कि जिसकी जा रही ।
देश के निर्माण में इसका अथक श्रम
देवता के अर्घ्य-सा चढ़ता रहा,
पूर्णत्व के पथ के प्रगति-पद पर स्वयं
वह अर्चना के फूल-सा चढ़ता रहा ।
अभिलाष की जलती शिखा से नित्य ही
वह मातृ-भू की आरती करता रहा,
साधना-तप में निरत हो रात-दिन
कृशकाय पल-छिन वह सदा बनता रहा ।
अंत में उत्सर्ग प्राणों का किया है,
देश-हित के ही लिए हरदम जिया है,
कोई पलक आँसू नहीं ढुलका रही-
यह कौन है ?
अर्थी कि जिसकी जा रही !

श्रम-बालिका की माँग को अपने लहू
से भर, वरण इसने किया था प्यार से,
चिर-साध क्वाँरी देश की सधवा हुई
नित-नित सजी नव-नव सुभग श्रृंगार से ।
समृद्धि-शिशु से गोद फिर उसकी भरी
सौभाग्य था सार्थक हुआ मातृत्व से,
शिशु के लिए अपने अहं को भूल कर
था माँगता आशिष सदा अमरत्व से ।
अब दूसरों के ही सहारे छोड़ कर,
चल पड़ा संसार से मुख मोड़ कर,
कोई नज़र छूने न इसको जा रही -
यह कौन है ?
अर्थी कि जिसकी जा रही !

हर एक अनजाने हुआ उपकृत सदा
इसके अथक श्रम से, नहीं इसने कहा,
इसके समष्टि-विधान में गौरव, कहीं
व्यष्टि का कुछ भी नहीं कोई रहा ।
जब तक जिया अनभिज्ञ इससे जग रहा,
बस इसलिए अर्थी अकेले जा रही,
दो फ़ूल श्रद्धा के नहीं इस पर चढ़े,
बस दो सिरों के ही सहारे जा रही ।
दो बूँद स्याही कब मिली अख़बार को,
छापे कि यह भी चल बसा रविवार को,
कोई सभा होने न इस पर जा रही-
यह कौन है ?
अर्थी कि जिसकी जा रही !

श्रम है अमर, कृत्रिम उपायों से उसे
अमरत्व पाने की नहीं है लालसा,
विश्व का मस्तक सदा ऊँचा रहा,
क्योंकि श्रम के बंधनों से वह कसा ।
अन्यथा श्रम के क्रयी के भार से,
झुक गई होती कमर उसकी कभी,
जीवित नहीं स्मारक कभी कोई रहा,
गूँजती श्रम की सदा ही दुंदुभी ।
ये पिरामिड, ताज यह, यह चीन की दीवार,
ये अजन्ता की गुफाएँ या कि जितने हैं मज़ार,
इनसे निकल श्रम की प्रभा है छा रही-
यह कौन है ?
अर्थी कि जिसकी जा रही !

उत्तर प्रदेश की नियोजन सेवा

— श्री राधाकांत —

भारत ने यद्यपि सन् १६२१ में ही अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ के बेकारी-संबंधी समझौते को संपुष्ट कर दिया था, परन्तु दो दशाब्दियों से अधिक काल तक नियोजन संस्थाओं की स्थापना नहीं की जा सकी। इसी के दो कारण थे—पहले तो जनशक्ति की पूर्ति से अधिक श्रमिकों की माँग उपस्थित हुई और फिर बाद में माँग से अधिक श्रमिकों की पूर्त्ति! ऐसी परिस्थितियों में यह अनुभव किया गया कि नियोजन संस्थाओं से कोई विशेष लाभ न होगा। सन् १६३५ में बेकारी से संबंधित दायित्व को केन्द्र ने तत्कालीन प्रान्तों के ऊपर डाल दिया और सन् १६३८ में प्रान्तों की श्रम जाँच समितियों ने यह मत प्रकट किया कि सार्वजनिक नियोजन संस्थाएँ श्रमिकों की माँग को पूरा करने के काम का अच्छा संगठन कर सकती हैं, जिससे मज़दूरों की भर्ती की वर्तमान प्रणाली में प्रचलित घूसखोरी और भ्रष्टाचार को भी रोका जा सकेगा।

द्वितीय महायुद्ध में कुशल कारीगरों की कमी को दूर करने के लिये सन् १६४३-४४ में प्रथम बार भारत सरकार ने नौ नियोजन संस्थाओं की स्थापना की। इनमें से एक उत्तर प्रदेश में थी और वह भी कानपुर में। ये नियोजन संस्थायें 'राष्ट्रीय सेवा श्रमिक न्यायाधिकरणों' की देखरेख और नियंत्रण में थीं। युद्धकालीन व्यवस्था के रूप में उदित हो कर संस्थाओं ने जो काम किया, वह बड़ा सीमित-सा रहा। सन् १६४५ में भूतपूर्व सैनिकों के पुनर्वास और १६४७ में भारत-विभाजन के फलस्वरूप विस्थापितों के भी पुनर्वास का प्रश्न इन संस्थाओं ने अपने हाथ में लिया। इसके कुछ ही काल बाद इनके कार्य-क्षेत्र के अन्तर्गत सभी प्रकार के बेकारों को ले लिया गया।

कार्य-विभाजन

सन् १६४५ में प्रधान केन्द्र में पुनर्वास एवं नियोजन के महानिर्देशक के कार्यालय की स्थापना हुई। प्रशासकीय सुविधा के लिये देश में नौ प्रादेशिक पुनर्वास एवं नियोजन निर्देशक के कार्यालय और उनमें से प्रत्येक के साथ एक प्रादेशिक नियोजन संस्था और कई उप-प्रादेशिक नियोजन संस्थायें हैं। उत्तर प्रदेश के प्रादेशिक निर्देशक का कार्यालय लखनऊ में है और प्रादेशिक नियोजन संस्था कानपुर में। उप-प्रादेशिक नियोजन संस्थायें आगरा, इलाहाबाद, अल्मोड़ा, बरेली, गोरखपुर, झाँसी, लैंसडाउन, लखनऊ और मेरठ में हैं। सन् १६४६ में उत्तर प्रदेशीय सरकार ने राज्य के सभी श्रमिकों और नियोजकों की आवश्यकता-पूर्त्ति के लिये २० जिला नियोजन संस्थाएँ और ५ तहसील नियोजन संस्थाएँ और खोलीं। तहसील नियोजन संस्थाएँ अल्मोड़ा और गढ़वाल के भीतरी प्रार्वत्य प्रदेशों में खोली गई थीं। इस प्रकार इन संस्थाओं की कुल संख्या उत्तर प्रदेश में ३५ हो गई। परतु मितव्यय की नीति के अन्तर्गत राज्य सरकार ने सन् १६५३ में ६ जिला नियोजन संस्थाएँ और पाँचों तहसील नियोजन संस्थाएँ बंद कर दीं।

प्रादेशिक और उप-प्रादेशिक नियोजन संस्थाओं पर होने वाले व्यय का भार केन्द्र और राज्य की सरकारों पर ६० और ४० के अनुपात में और ११ जिला संस्थाओं का भार पूर्णतः राज्य सरकार पर है। प्रादेशिक निर्देशक के कार्यालय का व्यय-भार पूर्णतः केन्द्र पर है।

पुनर्वास एवं नियोजन के निर्देशक की सहायता एक प्रति निर्देशक करता है। निर्देशकालय के दो उपविभाग

(शेष पृष्ठ ३५ पर)

ब्रिटेन में मालिकों और मज़दूरों के सम्बन्धों के विकास में संयुक्त वार्त्ता को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। विद्वान लेखक अभी कुछ काल पूर्व ब्रिटेन गये थे। वहाँ के औद्योगिक सम्बन्धों के विषय में जो अध्ययन किया है, उसका निचोड़ उन्होंने इस लेख में प्रस्तुत किया है। आशा है, भारत के औद्योगिक सम्बन्धों के सुधार में इससे यथेष्ट सहायता मिलेगी।

ब्रिटेन में औद्योगिक संबंधों में संयुक्त वार्त्ता का स्थान

श्री जे० प्रसाद

औद्योगिक संबंधों में सुधार का लक्ष्य लेकर चलने वाली किसी भी व्यवस्था को अनिवार्यतः उन तत्वों पर आश्रित रहना पड़ता है, जो न केवल प्रबंधकों और मज़दूरों में सामञ्जस्य के विकास के लिये हितकर हों, वरन् दैनिक संपर्कों के विधान के अलावा दोनों पक्षों में स्थायी संपर्क की भी व्यवस्था करें। इस प्रकार उन मूल तत्वों से पृथक करके औद्योगिक संबंधों के विषय में विचार नहीं किया जा सकता, जिनके बिना उनकी नींव ही अस्थिर हो जाय। समय की प्रगति और जागृति के साथ १६ वीं सदी की 'जैसा है, वैसा रहने दो' की नीति का स्वयं अन्त हो गया। यह भावना अब सुदृढ़ हो चली है कि श्रमिक उद्योग और उत्पादन का अभिन्न अंग है और इस भावना को अधिकांश और विशेषकर प्रगतिशील मालिक स्वीकार भी करने लगे हैं। किसी भी औद्योगिक दृष्टि से विकसित देश के योग्य औद्योगिक संबंधों के विकास के लिये 'दो और लो' की भावना का होना अत्यंत आवश्यक है।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि औद्योगिक संबंधों का विकास धीरे-धीरे हुआ है और वह भी सुधार के लिये श्रमिक-समाज द्वारा किये गये निरन्तर प्रयत्नों के फलस्वरूप हो सका है। कालक्रम से संघर्ष समाप्त हुआ और श्रमिकों की अपनी शिकायतें प्रस्तुत करने की बात मालिकों ने स्वीकार कर ली। धीरे-धीरे श्रमिक उत्पादन बढ़ाने तथा सामान्य कल्याण से सम्बन्धित विषयों पर होने वाले विचार-विनिमयों में भी भाग लेने लगे। यद्यपि दोनों पक्षों में सामान्य उद्देश्य के प्रति सजगता दिखाई

पड़ी, परन्तु व्यवहार में वह उभयपक्षों के हित की वार्तों पर विचार-विनिमय से आगे नहीं बढ़ सकी।

ब्रिटेन में श्रमिक-वर्ग में बढ़ती हुई जागृति और मालिकों में औद्योगिक सामंजस्य और उत्पादन-वृद्धि के लिये श्रमिकों के प्रति अनुकूल बर्ताव की भावना के फलस्वरूप संयुक्त वार्त्ता–व्यवस्था का उदय हुआ। विगत महायुद्ध भी श्रमिक-वर्ग को ऊँचा उठाने में अंशतः सहायक हुआ। युद्ध–काल में किए गए कठिन श्रम ने उन्हें मालिकों का विश्वास-भाजन बना दिया।

संयुक्त वार्त्ता के विभिन्न स्तर

संयुक्त वार्त्ता–व्यवस्था के विभिन्न स्तर हैं। सबसे नीचे स्तर पर उसके रूप श्रमिक और उसके फोरमैन की सीधी वार्त्ता से आगे बढ़ कर वह ट्रेड्यूनियन्स कांग्रेस तथा कान्फेडरेशन ऑफ इम्प्लायर्स के बीच कर्त्ता का स्वरूप ले लेती है। यदि किसी विषय को सबसे नीचे के स्तर पर ही नहीं सुलझाया जाता, तो सामूहिक सौदा-वार्त्ता का स्वस्थ और सुदृढ़ विकास नहीं हो सकता।

ऐच्छिक समझौते के लिये आपसी सहमति का होना अनिवार्य है। ब्रिटेन में सामूहिक सौदा-वार्त्ता का उपयोग विस्तृत क्षेत्र में होता है। इसका उद्देश्य केवल मज़दूरी में वृद्धि या मज़दूरी के स्वरूप में सुधार ही नहीं, वरन् श्रमिकों की काम की दशाओं और नौकरी की शर्तों में भी सुधार करना है। सामूहिक सौदा-वार्त्ता अभिप्राय केवल श्रमिक-समूह के लिये ही वार्त्ता करना नहीं, वरन् उसके माध्यम से किसी भी श्रमिक और उसके मालिक के बीच समझौते की बात की जा सकती है।

ऐच्छिक आधार पर विवादों के निपटारे की व्यवस्था

विवाद के दोनों पक्षों द्वारा ऐच्छिक समझौते के मूल सिद्धान्त के मान लिये जाने के बाद से संयुक्त वार्त्ता की अनेक व्यवस्थाएँ उदित हुई। इनका स्वरूप औद्योगिक एवं भौगोलिक स्थितियों के अनुसार भिन्न–भिन्न था। इन में से कुछ संयुक्त वार्त्ता-व्यवस्थाओं ने राष्ट्रीय रूप भी ग्रहण किया, परन्तु इसके यह मानी नहीं की देश भर में काम की दशाओं और मज़दूरी में समानता रही है। राष्ट्रीय स्तर पर जो मज़दूरी तय होती है, उनमें स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार पुनः वार्त्ता करके परिवर्तन कर लिये जाते हैं।

संयुक्त औद्योगिक परिषद्

संयुक्त औद्योगिक परिषद् इसी प्रकार की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्था है। इस प्रकार की परिषदें किन्हीं बंधे हुए नियमों के अन्तर्गत न चल कर विवाद के निपटारे के लिये अपनी आवश्यकतानुसार अपनी योजना बना लेती हैं। यद्यपि उनकी कार्यप्रणाली प्रत्येक इकाइ और उद्योग में भिन्न-भिन्न है, फिर भी उनके पथ-निर्देशन के कुछ सर्वसामान्य सिद्धान्त भी हैं, यथा—

(१) समस्या के सभी संभाव्य पहलुओं पर उन्मुक्त वातावरण में वार्त्ता की जाय।

(२) सीधी कार्यवाही या हड़ताल अथवा तालाबंदी के द्वारा दबाव डाल कर समस्या के समाधान का प्रयत्न न किया जाय।

(३) परस्पर समझौते के लिये दोनों पक्ष तैयार हों।

उपर्युक्त सिद्धान्तों को दृष्टि में रख कर संयुक्त औद्योगिक परिषद् सबसे पहले यह प्रयत्न करती है कि कर्मचारी की, विवाद के निपटारे के लिये, प्रबंधकों के उस प्रतिनिधि से बातचीत हो, जो उस व्यक्ति से पद में ऊँचा हो, जिससे वह इस विषय में पहले वार्त्ता कर चुका है। यदि इससे भी मसला नहीं हल होता, तो कर्म सम्मेलन (वर्क्स कान्फ्रेन्स) में उस पर विचार होता है। कर्म सम्मेलन में दोनों पक्षों के प्रतिनिधि होते हैं। समझौता यदि फिर भी न हो, तो उस पर स्थानीय सम्मेलन में विचार होता है, जिसमें उस स्थान के श्रमिक संघ और मालिकों के संघ के प्रतिनिधि होते हैं। ये प्रतिनिधि बिल्कुल निष्पक्ष होते हैं। इसके बाद राष्ट्रीय सम्मेलन में विचार किया जाता है और उसमें उद्योग-विशेष के श्रमिकों और मालिकों के संघों के प्रतिनिधि होते हैं।

सभी स्तर पर संयुक्त वार्त्ता के असफल होने पर, दूसरे पक्ष की सहमति से प्रायः मामला मध्यस्थ-निर्णय

(शेष पृष्ठ ५२ पर)

अटपटी जाड़े की रात। सप्तमी का चन्द्रमा बादलों की चुनरी ओढ़ धरती से आँखमिचौनी का खेल रचाए था। बादलों से छनकर पतली बारीक बर्फ-सी बूंदें बीच-बीच में बरस जातीं। आस-पास के प्रायः सभी क्वार्टरों में अन्धकार हो चुका था, केवल थोड़ी-थोड़ी दूर पर प्रकाश के ठेकेदार-से खड़े सड़क की बत्तियों के खम्भे अपना धुँधला प्रकाश फेंक कर भूले-भटकों को राह दिखाने में सहायता दे रहे थे।

यही कोई साढ़े ग्यारह बजे होंगे। गौरी चादर ओढ़े अपने कमरे की खिड़की पर बैठी बाहर की ओर ताक रही थी। अपने विचारों में डूबती-उतराती अस्पष्ट शब्दों में वह कभी-कभी कुछ बुड़बुड़ाती और चुप हो जाती। यह सब था, परन्तु फिर भी चारों ओर ऐसा सन्नाटा और शान्ति थी, जिसे देखकर कभी-कभी हृदय भी काँप उठता है।

इस सन्नाटे को चीरते हुये अचानक मुन्नू के रोने की आवाज़ सुनाई पड़ी। बालक को चुप करने के लिये गौरी खिड़की पर से कूद कर लपकी। उसे यह भी भय था कि मुन्नू के रोने से पास के क्वार्टरों में लोगों की नींद खुल जायगी। माँ की गोद पाकर मुन्नू दो ही क्षण में सो गया, परन्तु हर समय प्रयत्न के बाद भी गौरी के मन में चैन न था और न आँखों में नींद। खाट पर पड़े-पड़े उसने बारह का घण्टा भी सुना और इसके बाद ही द्वार पर खट-खट का शब्द हुआ। गौरी ने उठकर द्वार खोले। उसके पति रामसरन ने गले में 'दो-तीन गजरे डाले मुस्कराते हुए भीतर प्रवेश किया। गौरी अपने पति का ढंग देख कर भीतर से आग-बबूला हो गई, परन्तु फिर भी अपने क्रोध को दबाते हुए बोली—'इतनी रात गए तक कहाँ रहे?' रामसरन ने गले की पुष्प-मालाएँ उतार कर हँसते हुये कहा—'देखती नहीं यह सब?'

धरती की प्यास नेतागिरी से नहीं, श्रम के पसीने से ही बुझ सकती है। श्रमिक जिस दिन इस सत्य को समझ लेंगे, उसी दिन उनका कर्तृत्व सही मार्ग पकड़ लेगा। 'धरती की प्यास' की लेखिका ने इसी मंतव्य को अपनी इस कहानी में सामने रखा है।

गौरी बोली—'देखती तो हूँ, परन्तु समझ नहीं पा रही हूँ।'

'अरी, पगली, नेतागिरी करने गया था,' रामसरन बोला।

'कौन-सी नेतागिरी?' गौरी ने अपना असन्तोष व्यक्त करते हुए कहा।

रामसरन—'अच्छा कुछ खाने को तो दे, तो सब बताऊँगा।'

गौरी ने भीतर से रोटी-साग लाकर रामसरन के सामने रख दिया। वास्तव में वह भूखों की नाईं खाने पर टूट पड़ा।

पति के खाने का ढंग देखकर गौरी बोली—'यह नेतागिरी कैसी है, जिसमें गले में तो बड़े-बड़े गजरे पड़ जाते हैं, परन्तु पेट की आग बुझाने को कुछ भी नहीं मिलता।'

रामसरन हँसकर बोला—'गौरी, तू गाँव की गँवारिन ही रहेगी क्या जनम भर? अरी, नेतागिरी और खाने-पीने से क्या सम्बन्ध! मैं तो आज व्याख्यान देने गया था। हमारी मिल के हज़ारों मज़दूर तो थे ही, दूसरी मिलों के भी अनेकों मज़दूर मेरा व्याख्यान सुनने आये थे। और सुन गौरी, मेरी

'ठहरो, यह क्या करते हो' पुकार सु...
नेतागिरी नहीं माँगती, ...

...पुकार सुनो। वह तुम्हारी ...का पसीना माँगती है।
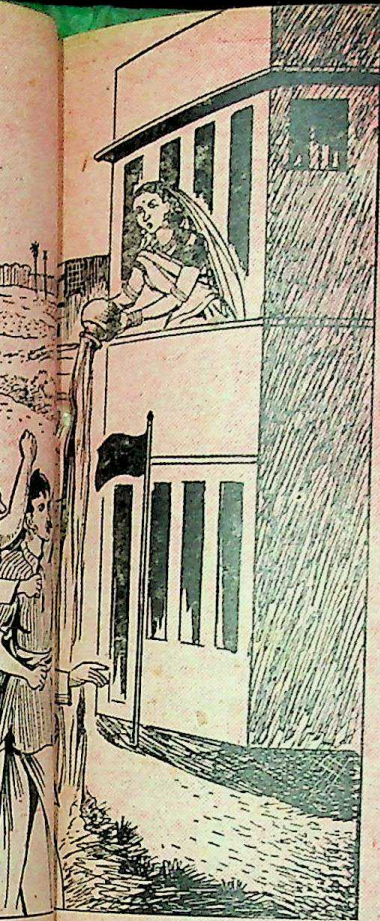
बातें सुनकर मेरे भाइयों ने व्याख्यान के बीच-बीच बार-बार तालियाँ बजाईं। तू होती, तो तेरा मस्तक गर्व से ऊँचा हो जाता कि तेरा पति इतना बड़ा नेता है।'

गौरी मुँह बनाकर बोली — 'जानती हूँ तुम्हारा व्याख्यान क्या होगा।' रामसरन जोश में आकर बोला– 'अरी तू क्या जानेगी! इतनी पढ़ी-लिखी थोड़े ही है। दरजा चार तक पढ़ गई तो क्या। हमने अपनी आठ माँगें मिल के मालिकों के सम्मुख रक्खी थीं और उन्हें दो सप्ताह का समय दिया था कि हमारी मांगें पूरी करें, परन्तु आज दो सप्ताह पूरे हो गये, उन्होंने ऐसा नहीं किया। अब अगला क़दम 'काम रोको', 'हड़ताल करो', अपने साथियों को काम पर आने से रोको, आदि, आदि होगा।'

गौरी ने सिर हिलाते हुये कहा—'समझी! तो यही नेतागिरी करने गये थे! अपना घर बिगाड़ो और दूसरों के घर भी उजाड़ो।'

रामसरन ने ज़रा गरम होकर कहा-'चुप रह तू! भैंस के आगे बीन बजाई, भैंस खड़ी पगुराय। इतना दिमाग तेरे होता तो घर में बैठी रोटी-पानी और बच्चे पालने का काम ही केवल न करती! तू भी नेता बन जाती।

गौरी मौन हो रही। सोचने लगी—इस समय वे किसी और ही हवा में हैं और यदि अधिक उल्टी-सीधी उसने कही, तो बात बढ़ने का भय है। बोली—'रात बहुत गई, अब सो जाओ। मैं भी धरती को पानी चढ़ाकर आती हूँ।'

रामसरन मन में सोचने लगा—यह गौरी ने नई चाल प्रारम्भ की है। जब-जब वह नेतागिरी करके लौटता है, वह तुरन्त ही लोटा लेकर धरती को पानी अर्पण करने चल देती है। उसके मन की कौन-सी प्रेरणा उसे ऐसा करने के लिये कहती है, यह भी पूछने का साहस उसको नहीं होता।

बात इतने पर ही समाप्त हो गई। रामसरन हाथ-मुँह धोकर खाट पर जैसे ही लेटा कि निद्रा देवी ने उसे अपनी गोद में ले लिया और गौरी भी उसे मालूम नहीं, कब पानी चढ़ा कर लौटी।

× × × ×

समय से अठखेलियाँ करते चार दिन और निकल गये। इन चार दिनों में रामसरन प्रायः पूरे-पूरे दिन घर से बाहर रहता। उसे इतना अवकाश कहाँ था कि गौरी से पूछे कि घर में खाने को तो है? उसे खरचे के लिये पैसे तो नहीं चाहिये? उसके तीन बच्चों को भरपेट रोटी तो मिलती है? गौरी का स्वास्थ्य कैसा है, क्योंकि वह एक और बच्चे की माता होने वाली है, इत्यादि, इत्यादि।

श्रीम...गं...जू

और यही तूफान गौरी के मस्तिष्क में चलता रहा। रामसरन जिस प्रवाह में बहा जा रहा था, उसमें से उसे खींच निकालना भी एक टेढ़ी खीर थी। गौरी चूल्हे के पास बैठी आटा माड़ रही थी और सामने बैठा मुन्नू

अपने काठ के लट्टू को भूमि पर पटक-पटक कर किलकारियाँ भर रहा था। मुन्नी और बचा दोनों बड़े बच्चे नीचे पड़ोस के बच्चों में खेल रहे थे।

गौरी सोचने लगी—कहीं उसका मन तो पापी नहीं है कि वह अपने तथा बच्चों के स्वार्थ के कारण अपने पति की ख्याति तथा उन्नति के मार्ग में रोड़ा बन रही हो! उसके मन ने उससे कहा—'नहीं, नहीं तू भूल नहीं कर रही है।' उसे अचानक याद आई अपनी पड़ोसिन मोहनलाल की बहू की बात। वह भी तो अपनी मिल का नेता था। चार महीने हुये, मिल में हड़ताल करवाने तथा दंगा कराने के कारण वह जेल गया और उसकी पत्नी कौन दिन नहीं देख रही है! गौरी का हृदय सिहर उठा, जब उसे याद आया कि उधर तो मोहनलाल की पत्नी तथा बच्चों पर भूख की मार पड़ी और दूसरी ओर उसका पाँच बरस का गोपाल जब खेल के मैदान में फिसलने वाली सीढ़ी पर से गिर कर बेहोश हो गया था और सिर पर चोट आने के कारण १५ दिन अस्पताल में पड़ा रहा था, तो मोहनलाल की पत्नी कितनी बेहाल हुई थी। उसके पास पैसे नहीं थे कि गोपाल को बाज़ार से दूध लाकर पिला सके। जैसे-तैसे गौरी ने रामसरन से माँग कर दो रुपये मोहनलाल की बहू को दिये और अब भी तो कैसी मुसीबत में है वह परिवार! गौरी और भी सोचने लगी—मोहनलाल ने नेतागिरी करके कौन-सा धरती का भार अपने कंधों पर उठा लिया! अपना घर बिगाड़ा, दस औरों के घर बिगाड़े और अब सबके सब अकर्मण्य से बैठे अपने भाग्य को कोसते हैं। तंग आकर गौरी ने 'ऊँह' करके अपने इन विचारों को मस्तिष्क से झाड़ने का प्रयत्न किया, किन्तु फिर भी मुक्ति कहाँ थी! आज का दिन तो उसके लिये क़तल की रात है। पिछली पन्द्रहियाँ का वेतन रामसरन को नहीं मिला था! आज ठीक १२ बजे दिन में श्रमिक-बस्ती से हड़ताली श्रमिकों का जुलूस निकलेगा और रामसरन उस जुलूस का नेतृत्व करेगा। वह सुबह छः बजे से किटकिटाते जाड़े में घर से बाहर हो गया। गौरी ने अनुरोध किया—'एक गिलास चाय तो पी लो।' उसने कुछ न सुनी और 'बाहर ही पी लूँगा' कहता हुआ वह जल्दी-जल्दी गौरी की आँखों से ओझल हो गया।

गौरी ने भारी मन से रोटियाँ सेंक कर रख लीं और खिड़की के बाहर झाँका। उसने अनुमान लगाया कि अब पौने बारह का समय होगा। सूर्य एकदम सिर के ऊपर आ गया था। जुलूस की तैयारी हो रही थी। वह भी देखने लगी। श्रमिक-साथी कह रहे थे—'रामसरन भैया के मुहारे से जुलूस चलेगा। रामसरन हमारे नेता हैं। नेता की ड्योढ़ी पर झंडा गाड़ दो।' ठीक बारह के घण्टे पर रामसरन झण्डा उखाड़ेंगे और फिर 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' का नारा लगेगा।

गौरी ने देखा--रामसरन के गले में पुष्प-मालाएँ पड़ने लगीं और उनके कोई साथी तो उन्हें हृदय से लगाते और कोई पैरों पड़ते। रामसरन गर्व से छाती ताने था। सम्भवतः उसके मन की भावनाएँ वही थीं, जैसी कि वीर शिवा जी की युद्ध में जाने से पूर्व रहती थीं। गौरी ने देखा कि उसका रामसरन जैसे इस लोक में ही न हो। वह दूसरे संसार में विचरण कर रहा है। उसने एक बार सामने खड़े अपने बच्चों की ओर नहीं देखा। उसने एक बार भी अपने मुहारे पर नज़र नहीं डाली! उसने नहीं देखा कि गौरी उसकी ओर निहार रही है। यह वही गौरी है, जिसे वह बहुधा प्रेम से 'रनिया' कह कर सम्बोधित किया करता है। बारह बजने को हुए, जुलूस तैयार हो गया। श्रमिकों में दो-एक पंडित भी थे। वह रविवार के दिन इसके-उसके घर सत्यनारायण की कथा सुनाते। आज वही घंटा और शंख लेकर आ पहुँचे। शुभ-मुहूर्त से जुलूस उठेगा।

गौरी ने सुना, लोग कह रहे हैं—'अभी नहीं, ठहरो। जब रामसरन भैया झण्डा उखाड़ें, तब शंखनाद करना।' रामसरन अपने ठीहे पर आकर खड़ा हो गया। गौरी को आवेश आया। वह दौड़ कर भीतर गई और अपनी पानी की छोटी कलसिया उठाकर क्वार्टर के छज्जे पर जाकर खड़ी हो गई। रामसरन झण्डा उखाड़ने को बढ़ा, तभी कलसिया से पानी गिराते हुए गौरी ने कहा—'ठहरो, यह

(शेष पृष्ठ ५२ पर)

(पृष्ठ २६ से आगे)

हैं—नियोजन संस्था और प्रशिक्षण, जो एक-एक सहायक निर्देशक की देख-रेख में हैं।

प्रादेशिक, उप-प्रादेशिक और जिला—इन तीन प्रकार की निओजन-संस्थाओं में प्रथम दो प्रकार की संस्थाओं में भेद यह है कि प्रादेशिक संस्था प्रदेश की किसी भी उप-प्रादेशिक संस्था के रिक्त स्थानों की पूर्ति के लिये पूरे प्रदेश में और उसके बाहर से भी, दिल्ली के केन्द्रीय कार्यालय द्वारा, विस्तृत प्रचार का प्रयत्न करती है। जिला नियोजन संस्था अपेक्षाकृत एक छोटी इकाई है और उसकी देख-रेख केवल एक अधिकारी करता है।

मुख्य कार्य

नियोजन संस्थाओं का मुख्य कार्य बेकारों और काम के अवसरों का पूरा ध्यान रखना और बेकारों को काम में लगाना है। नियोजन संस्थाएँ स्वयं काम के अवसर नहीं प्रस्तुत करतीं, वरन् वे बेकारी की समस्या को हल करने के लिये काम के अवसरों की सूचना बेरोज़गारों को देती हैं।

इसी से लगा और महत्वपूर्ण कार्य है—रिक्त स्थानों और काम चाहने वालों के आँकड़ों का संकलन। यदि किसी व्यवसाय-विशेष में उपयुक्त प्रार्थियों की कमी होती है, तो बहुतायत वाले क्षेत्रों से उनके नाम भेजे जाते हैं। इसी प्रकार जिन व्यवसायों में कारीगरों की बहुतायत होती है, उनके कारीगरों को कमी वाले दूसरे उसी से मिले-जुले व्यवसायों में जाने का परामर्श दिया जाता है। नीचे की तालिका में दिये आँकड़ों से उत्तर प्रदेश में नियोजन संस्थाओं की बढ़ती हुई लोकप्रियता विदित हो सकेगी:—

वर्ष	काम चाहने वालों की संख्या	सूचित रिक्त स्थान	काम में लगाए गए प्रार्थी
१६४५	५,४६२	६,१०२	१,२८३
१६५०	३,२१,१२८	१,५७,३६१	१,४३,१८८
१६५१	४,५६,२४०	१,६६,२४०	१,५४,२७६
१६५२	३,६६,५६२	१,३७,२६२	१,१८,८८७
१६५३	३,१०,१६७	६१,४३६	४५,८२६
१६५४	३,१६,२२८	४६,६५२	३५,४८१

बेकारी की विराटरूपता और उसके स्वरूप को समझाने के लिये राज्य की चालू पंजियों (लाइव रजिस्टर्स) के प्रार्थियों की वर्गीकृत संख्या की जानकारी उपयोगी होगी:—

१.	औद्योगिक पर्यवेक्षक	३७६
२.	निपुण और अर्ध-निपुण	११,०७२
३.	क्लर्क	२६,७३२
४.	शिक्षक	२,०६३
५.	चिकित्सा-क्षेत्र	२०५
६.	यातायात	१,५४२
७.	घरेलू नौकर	४,६६१
८.	अनिपुण	४८,२०३
९.	अन्य	४,०३८
	योग	१,०१,६५५

प्रशिक्षण योजनाएँ

यद्यपि कारीगरों के प्रशिक्षण की योजनाएँ युद्धकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ही चालू की गई थीं, परन्तु उनका उपयोग अब नागरिक उद्योगों की आवश्यकता-पूर्ति एवं विस्थापितों के प्रशिक्षण के लिये हो रहा है। ये योजनाएँ तीन प्रकार की हैं:—

१. भारत सरकार के श्रम मंत्रालय, राज्य सरकार अथवा वैयक्तिक संस्थाओं द्वारा विशेष रूप से संस्थापित औद्योगिक प्रशिक्षण-केन्द्र, जो मेरठ, अलीगढ़, रामपुर, अल्मोड़ा, लखनऊ, इलाहाबाद तथा देहरादून में हैं। अन्तिम केन्द्र का राज्य सरकार संचालन करती है।

२. केन्द्रीय श्रम मंत्रालय के निजी या राज्य सरकार के संस्थानों अथवा विश्वविद्यालयों से संलग्न औद्योगिक प्रशिक्षण-केन्द्र, जिनकी संख्या इस समय दो है। एक है—बापू व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान, देहरादून, जो राज्य सरकार से संलग्न है और दूसरा है प्राविधिक प्रशिक्षण केन्द्र, जो बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से संलग्न है।

३. शिशुक्षुओं के लिये औद्योगिक प्रतिष्ठानों में प्रशिक्षण की व्यवस्था। इस प्रकार की व्यवस्था भारत सरकार के अनेक मंत्रालयों, यथा प्रतिरक्षा और रेलवे, तथा राज्य सरकार के परिवहन विभाग के अन्तर्गत है।

इसके अतिरिक्त राज्य सरकार के उद्योग और हरिजन सहायक विभागों द्वारा भी अनेक प्रशिक्षण केन्द्र चलाये जाते हैं।

प्रशिक्षण की क्षमता

उत्तर प्रदेश में श्रम मंत्रालय द्वारा संचालित प्रशिक्षण केन्द्रों में इंजीनियरिंग एवं भवन–निर्माण के व्यवसायों के लिये १,१२८ जगहें और हस्त-शिल्प के लिये ६५६ जगहें हैं। इसके अतिरिक्त २५० महिलाओं के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था है। श्रम मंत्रालय के अलावा राज्य सरकार अथवा वैयक्तिक संस्थाओं में इंजीनियरिंग एवं भवन-निर्माण कार्यों के लिये ५८०, हस्तशिल्प के लिये ११३०, ग्राम्य शिल्पों में अर्ध-निपुणता वाले व्यवसायों के लिये ११२०, तथा रेलवे के कारखानों में १४५ और गोला-बारूद के कारखानों में १२५ व्यक्तियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था है। साथ ही, विभिन्न औद्योगिक प्रतिष्ठानों में ४०० विस्थापितों को एक वर्ष का प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

इंजीनियरिंग एवं भवन-निर्माण के कामों में १८ माह का प्रशिक्षण लेना होता है। और ६ माह का उद्योग में शिशिक्षु का काम (एप्रेन्टिसशिप) करना पड़ता है। हस्तशिल्प का प्रशिक्षण १२ माह का होता है। प्रशिक्षण केवल उन्हीं व्यवसायों में दिया जाता है, जिनमें काम के अवसर सुनिश्चित हों।

पूर्ण नियोजन में योगदान

पुनर्वास और नियोजन के दोनों उपविभाग-नियोजन संस्थाएँ और प्रशिक्षण केन्द्र एक दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्त्ति करते हैं। नियोजन संस्थाएँ उन व्यवसायों का पता बताती हैं, जहाँ जनशक्ति का अभाव है और प्रशिक्षण केन्द्र बेरोज़गार नए व्यक्तियों को प्रशिक्षण देकर उस कमी की पूर्त्ति करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि नियोजन सेवा हमारे लोक-कल्याणकारी राज्य के पूर्ण नियोजन के लक्ष्य को पूरा करने में बहुमूल्य योगदान दे रही है।

नियोजन सेवा संगठन को स्थायी बनाने की सिफ़ारिश

सन् १९५३ में योजना आयोग की सिफारिश पर भारत सरकार ने नियोजन सेवा संगठन की कार्य-प्रणाली की परीक्षा करने तथा उसके भविष्य में पुनर्संगठन के प्रश्न पर अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करने के लिये एक उच्च अधिकार–युक्त समिति बैठाई थी, जिसने यह सिफारिश की है कि इस सेवा संगठन को विकेन्द्रित कर दिया जाय और केन्द्रीय एवं राज्य की सरकारों के आर्थिक दायित्वों को बनाए रखते हुए उसे राज्यों के नियंत्रण में छोड़ दिया जाय। राष्ट्र-सेवा में उसकी उपयोगिता को दृष्टि में रख कर उसे स्थायी बनाने की भी सिफारिश की गई है।
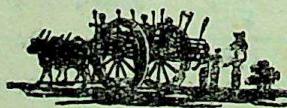
एक रेखाचित्र

ग़लती किसकी है ?

श्री महेशप्रसाद विद्यार्थी

एक दिन जाड़े में सवेर तड़के बिस्तर से निकला भी नहीं था कि टेलीफ़ोन की घंटी ने घड़ी के एलार्म का काम किया—घड़ी के एलार्म का काम कहना ग़लत होगा, क्योंकि घड़ी का एलार्म होता, तो उसे बजने देता और जब वह बन्द हो जाता, तो फिर आराम से सो जाता, क्योंकि पिछली रात भी काम अधिक होने के कारण देर से सोया था। पर टेलीफ़ोन की घंटी बजने देना उचित नहीं जान पड़ता। न मालूम कौन किस ज़रूरत से फ़ोन कर रहा हो ? हो सकता है कि कोई मित्र या रिश्तेदार ही मुसीबत में फँसा हो, वरना इतने सवेरे ठंडक में कोई टेलीफ़ोन करने क्यों जाता या हो सकता है कि कोई कर्मचारी काम पर गया हो और उसे काम न दिया गया हो, जिसकी सूचना वह स्वयं आकर देने के बदले टेलीफ़ोन से दे रहा हो। वह जानता है कि उसके काम के घंटे भले ही बँधे हों, पर हमें तो भी बीस घंटे की नौकरी में हर समय उसकी बात सुनने को तैयार रहना ही है। शायद वह इसी बात की परीक्षा ले रहा हो। यही सब सोचता हुआ मैं बिस्तर से कूद कर टेलीफ़ोन के पास पहुँच गया, पर बात जो सोची थी, सो उसके विपरीत निकली, जैसाकि बहुधा होता ही है। यह सुनाई पड़ने के बदले कि 'मैं काम करने आया हूँ पर मालिकान काम नहीं दे रहे हैं', सुनाई यह पड़ा—'आप कौन हैं ?'

'ग़लती किसकी है ?' एक सच्ची घटना पर आश्रित एक समस्यामूलक रेखाचित्र है, जो मालिक, मज़दूर और मज़दूर संघ के त्रिकोणात्मक गतिरोध के मूल कारण पर विचार करने को बाध्य कर देता है। यदि प्रत्येक पक्ष समझदारी, सूझ-बूझ और थोड़ी-सी उदारहृदयता से काम ले, तो इस गतिरोध को बहुत हद तक बिना विवाद के ही दूर किया जा सकता है। इस तथ्य की ओर संकेत करते हुए लेखक की रोचक शैली ने इसमें चार चाँद लगा दिये हैं।

'सबेरे–सबेरे जिससे बात करने के लिये आपने फ़ोन मिलाया है, वही हूँ' —मैंने कहा।

'कौन, विद्यार्थी जी ?'

'जी हाँ। कहिये, क्या काम है ?'

'क्या आप पाँच मिनट के लिये मेरे कारखाने में तशरीफ़ ला सकते हैं ?'

'आप कौन साहब हैं और कहाँ से बोल रहे हैं ?' मैंने पूछा। उत्तर में उन्होंने अपना नाम और पता बताया।

मैंने पूछा—'कहिये ऐसे समय में मुझे वहाँ बुलाने की क्या आवश्यकता आ पड़ी है।'

उन्होंने कहा—'बात यह है कि एक आदमी काम करने से इन्कार कर रहा है।'

'काम करने से इन्कार कर रहा है ? क्यों ?'

'यह तो वही बतायेगा। आप आकर पूछ लीजिये।'

'वाह, यह भी कोई बात है। आप उसको ऐसा काम दे रहे होंगे, जो उसने पहले कभी नहीं किया होगा या ऐसी ही कोई बात होगी।'

'नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। यही काम वह करता रहा है, पर अब करने से इन्कार कर रहा है। पूछने से कारण भी नहीं बताता। अब आप ही बताइये कि हम उसे 'आरोप–पत्र' दें या क्या करें। जैसी आप राय दें, वैसा ही किया जाये।'

अजीब परिस्थिति थी। बिना देखे ऐसे मामले में राय भी क्या दे सकता था, अतः मैंने कहा—'यह तो बड़ी विचित्र बात है कि आप काम दे रहे हैं और वह काम करने से इन्कार करता है। आखिर वह चाहता क्या है। मैं बिना उससे पूछे राय भी क्या दे सकता हूँ। साधारणतः तो यह आज्ञा-उल्लंघन ही माना जायेगा, पर बिना कारण तो कोई बात नहीं होती। कुछ कारण भी तो मालूम हो कि वह क्यों काम नहीं करना चाहता ? क्या कहता है ?' उन्होंने कहा—'इसीलिये तो आपको यह तकलीफ़ दे रहा हूँ। ज़रा देर के लिये आ ही जाइये।'

बात बड़ी अटपटी–सी लगी। किसी कारखाने का एक आदमी काम करने से इन्कार करे, तो सबेरे–सबेरे मैं उससे पूछने जाऊँ कि 'आप काम क्यों नहीं कर रहे हैं ?' तबियत हुई कि कह दूँ कि काम नहीं करता तो 'चार्जशीट' दीजिये। फिर सोचा कि यह कहूँगा तो थोड़ी देर बाद फिर फ़ोन आयेगा कि 'चार्जशीट' तो वह लेता ही नहीं। अब आपकी क्या राय है ?

अतः सोचा–चलो, देख ही आऊँ कि क्या माजरा है। कौन टेलीफ़ोन पर बहस करे और बात भी तो कुछ अजीब–सी है, अतः कह दिया—'अच्छा, थोड़ी देर में आ जाऊँगा, तब तक इन्तज़ार कीजिये। अभी 'चार्जशीट' मत दीजिये।'

स्नान इत्यादि से निवृत्त होकर थोड़ी देर बाद जब मैं कारखाने पहुँचा, तो मालिक बाहर ही मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। अपने कमरे में ले जाकर उन्होंने कहा कि 'बताइये, अब कैसे काम चलेगा ? क्या अब एक कर्मचारी से काम कराने के लिये हमें कनसीलियेशन अफ़सर को बुलाना पड़ेगा ?' मैंने कहा—'हाँ, है तो ज़रूर ताज्जुब की बात, पर कहाँ है वह कर्मचारी ? क्यों काम नहीं करता ?'

'यह आप ही पूछ लीजियेगा, बुलाऊँ उसे ?'

'हाँ, बुलाइये,' मैंने कहा, पर फिर सोचा कि जो आदमी काम नहीं करना चाहता, हो सकता है, वह आफिस तक आने की तकलीफ़ भी न गवारा करे और जब वह आने से इन्कार करेगा तो जब मैं इतनी दूर आया ही हूँ, तो उससे पूछने के लिये ही कि आखिर बात क्या है —मुझे वहाँ तक जाना पड़ेगा, सो जो काम मजबूरी में करना पड़े, उसे पहले ही करना क्या बुरा है, अतः मैंने कहा—'रहने दीजिये, जहाँ वह है, वहीं मुझे पहुँचा दीजिये। मैं उसी स्थान पर उससे बात करूँगा।' उन्होंने अपने एक अफ़सर को मेरे साथ कर दिया।

मैंने वहाँ जाकर देखा कि एक अच्छे ख़ासे वस्त्र पहने हुये एक सुशिक्षित और देखने में समझदार व्यक्ति कारखाने के एक विभाग के गेट के पास टहल रहा है, अतः मैंने ही उसके पास जाकर कहा--'कहिये, आपकी क्या शिकायत है ?'

'मुझे कोई शिकायत नहीं,' उसने शान्त लहजे में कहा। मैंने सोचा, आदमी तो समझदार जान पड़ता है। भला इसे शिकायत होती तो यह मेरे पास न दौड़ा आता! शिकायत तो किसी और को ही मालूम पड़ती थी, अतः मैंने फिर पूछा--'तो आपको कोई शिकायत नहीं?'

'नहीं'।

'तो क्या मालिकों की यह शिकायत सच है कि वह आपसे काम करने को कहते हैं और आप इन्कार करते हैं?'

'जी हाँ।'

मैं सोचता था कि वह इस बात से इन्कार करेगा, पर आदमी समझदार होने के साथ-साथ सच्चा भी दिखाई पड़ा, जो कह रहा था--'जी हाँ'

'आख़िर क्यों?' मैंने पूछा।

'यों ही। मैं काम नहीं करूँगा।'

'काम नहीं करूँगा। इसके क्या मानी? आख़िर काम नहीं करेंगे, तो क्या करेंगे? क्या यों ही टहलेंगे आप?'--मैंने कुछ झल्ला कर पूछा।

'जी हाँ, यों ही टहलूँगा।'

शायद आज किसी अप्रत्याशित अप्रिय घटना से इस आदमी का दिमाग़ ठिकाने नहीं होगा, यह सोचते हुये मैंने कहा--'क्यों? आप काम करने से क्यों इन्कार कर रहे हैं?'

'बात यह है कि मैं काम करता ही नहीं।'

'तो क्या करते हैं?'

'यों ही टहला करता हूँ।'

अब मेरे आश्चर्य-चकित होने की बारी थी। मैंने कहा--'तो आपको बिना काम कराये ही अभी तक पैसा दिया जा रहा है? कितने दिनों से आप आराम कर रहे हैं?'

'महीनों हो गये। यों ही पैसा मिलता है।'

अजीब उलझन थी। कोई पूरी बात ही नहीं बताता नज़र आता। सब यही चाहते हैं कि मैं ही पूरी बात का पता लगाऊँ। अपने आप कोई कुछ नहीं बताना चाहता, पर मैं भी हार मानने वाला नहीं। मैंने कहा--'अच्छा अगर अभी तक आराम करने पर भी पैसा मिलता रहा, तो अब काम कीजिये। आराम का पैसा अच्छा नहीं होता। पैसा काम करके ही पैदा करना चाहिये।'

'मैं अपनी यूनियन से राय ले लूँ। फिर काम करूँगा।'

मैंने फिर कुछ झल्ला कर कहा--'यूनियन से राय लेकर काम करना है तो मैं चला। फिर मैं जिम्मेदार नहीं कि मालिकान आप पर काम से इन्कार करने का आरोप लगायें। भला ऐसी कौन सी यूनियन है, जो काम न करने की राय देगी। मैं तो समझता था कि आपको ऐसा काम दिया जा रहा है, जो आप कर नहीं सकते! मैं नहीं समझता था कि आप आराम-पसन्द होने के कारण काम नहीं करना चाहते। इतने दिनों से आप बिना काम किये पैसा पाते आ रहे हैं, इसलिये अब आप काम नहीं करेंगे, यह भी कोई बात है? अजब दलील है यह!' मैंने कुछ अप्रसन्नता से कहा।

उसने उत्तर दिया--'अच्छा, आप कहते हैं, तो करूँगा काम।'

मैंने कहा—'मैं क्या कहता हूँ। हमारे देश के मनोनीत महानेता तथा प्रधान मंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू कहते हैं कि "काम करो, आराम हराम है।" और तुम कहते हो कि चूँकि महीनों से तुम्हारी आदत टहलने और आराम करने की पड़ गई है, अतः अब तुम यूनियन से पूछ कर काम करोगे। जाओ, जो काम बताया जाता है, करो। तभी कुछ उन्नति होगी।'

इस पर वह काम करने चला गया, पर मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि वह यह कहाँ तक ठीक कहता था कि बिना काम किये ही उसे पैसा मिलता है! उसे यह पैसा क्यों दिया जाता था?

अतः उससे विदा होकर मैंने मालिकान से जाकर पूछा कि क्या यह सच था कि 'उसे महीनों से बिना काम कराये पैसा देना पड़ता था?' उत्तर में उन्होंने जो कहा, उससे भी मुझे आश्चर्य हुआ—'हाँ, यह तो ठीक है। इधर कई महीनों से काम नहीं करता था वह।'

'क्यों ?' मैंने पूछा।

'काम था ही नहीं, करता क्या ?' उत्तर मिला।

'तो आपने उसे निकाला नहीं ?'

'निकालते कैसे ? आप लोग कहाँ निकालने देते हैं किसी को ! निकालने पर भी तो एक साथ नये कानूनों के अन्तर्गत कितना-कितना पैसा देना पड़ता और ऊपर से यह साबित करना पड़ता कि काम नहीं है और फिर काम होने पर उसी को बुलाना ही होता ! अतः सोचा कि एक साथ इतनी झंझटों में पड़ने से अच्छा है कि पड़ा रहने दें। जब काम होगा, दे दिया जायगा। सो आज काम निकलने पर आपने देख लिया कि उसने क्या जवाब दिया था ! यह तो कहिये आप आ गये, तो आपकी मान भी ली, वरना हमारी बात तो वह नहीं ही मानता और हम आपसे बताते, तो आप भी हमारी बात सही नहीं मानते। अब तो आपने अपनी आँखों देख लिया। अब आप बताइये, हमारी बात तो उसने नहीं ही मानी। हम इसके लिये इसे 'चार्जशीट' दें अब ?

मैंने कहा—'अब जाने दीजिये आज, वरना मेरे आने का फायदा ही क्या हुआ। मेरे आने से दोनों का फायदा हो, तभी मैं उसे सफल मानूँगा और अगर आने पर भी झगड़ा बना ही रहा, तो फिर मैं क्यों दौड़ा करूँ इस तरह ? फिर तो मैं भी दोनों पक्षों को अपने यहाँ ही बुलाना ठीक समझूँगा।'

मालिक भी उदार थे। मान गये मेरी बात और इस प्रकार यह झगड़ा खत्म हुआ। पर दूसरे दिन यूनियन वाले मुझे मिले, तो मैंने उनसे भी पूछा—'क्या आप अपने मज़दूरों को आराम करने की शिक्षा देते हैं, जो आपके सदस्य बना आपसे पूछे काम करने को तैयार नहीं होते ?'

'नहीं, ऐसी बात नहीं।' उन्होंने कहा—'बात यह है कि जब काम नहीं था, तब उसने कई बार ज़बर्दस्ती कुछ न कुछ काम करने की कोशिश की, तो उसे 'चार्जशीट' दी गई, इसीसे वह काम करने से डरता था कि कहीं उसे 'चार्जशीट' न दी जाय। आख़िर वह इतना शिक्षित और समझदार तो है नहीं कि सब बातें समझ पाये। इतने दिनों बेकाम रहने के कारण उसको अब यह डर लगने लगा कि काम करने से उसे सज़ा दी जायेगी।'

मैंने कहा—'वाह, यह भी खूब है ! जब काम नहीं था, तब उसने काम करने की कोशिश की और जब इस पर डाँट मिली, तो काम निकलने पर भी उसने कहा—'अब मैं काम नहीं करूँगा'। उन्होंने कहा—'हाँ, बात तो ऐसी ही है, पर आप ही सोचिये, इसमें गलती किसकी है ? और मेरा ख्याल है कि आप भी मेरे साथ यही सोच रहे होंगे कि इसमें गलती किसकी है ?'

बेकारी की समस्या का हल !

"यदि हम छोटे और घरेलू उद्योग-धन्धों के विकास में अपने संगठन की और दूसरे साधनों की सारी शक्ति लगा दें, तो हम दस साल के भीतर न केवल बेकारी दूर कर सकते हैं, बल्कि देश के कोने-कोने में नव-निर्माण की भावना जगा सकते हैं। जब तक देश में छोटे तथा घरेलू उद्योग-धन्धों का पूर्ण रीति से विकास नहीं हो जाता, तब तक हमें देश की जन-शक्ति का उपयोग भूमि-संरक्षण, वन-रोपण, छोटी-बड़ी सिंचाई योजनाओं तथा सड़क-निर्माण की योजनाओं में करना चाहिये।"

—श्री उच्छ्रंगराय नवलशंकर ढेबर—

भारतीय मज़दूर-आंदोलन एक दृष्टि में

श्री लक्ष्मी नारायण सिंह

मज़दूर आन्दोलन प्रधानतया एक मानवीय आन्दोलन है। प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत में धार्मिक और राजनैतिक आन्दोलन तो बहुत हुये, किन्तु इन युगों में न तो आज की भाँति मज़दूर ही थे और न उनका कोई देशव्यापी संगठन ही था। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारतवर्ष में पश्चिमी कल-कारखानों के ढंग पर उद्योग-धन्धों का विकास प्रारम्भ हुआ, और उसी के साथ औद्योगिक श्रमिकों के एक वर्ग की भी सृष्टि हुई।

१९वीं शताब्दी में

शुरू-शुरू में इन मज़दूरों का अत्यधिक शोषण हुआ। काम के घंटे काफी लम्बे थे। अधिकतर इनसे सोलह-सोलह घंटे तक काम लिया जाता था और वह भी लगातार। साप्ताहिक या सामयिक छुट्टियाँ भी नहीं दी जाती थीं। वेतन की कोई निश्चित दर नहीं थी और मज़दूरी मनमाने ढंग से दी जाती थी। वेतन-अदायगी के कोई नियम-कायदे भी न थे। बच्चों की उम्र की कोई पाबन्दी नहीं थी। सात-सात साल के बच्चों से सोलह-सोलह घंटे तक काम लिया जाता था। मशीनों से श्रमिकों की रक्षा के लिये कारखानेदारों पर कोई प्रतिबन्ध न था। आये दिन अनभिज्ञ श्रमिक यन्त्रों में उलझकर प्राणों से हाथ धो बैठते। उन्हें क्षतिपूर्ति देने के लिये कोई व्यवस्था न थी।

श्रमिक-स्त्रियों की दशा और भी दयनीय थी। आसन्न प्रसव का भार उठाकर भी नौकरी छूट जाने के भय से वे अपने काम पर लगी रहतीं। अपने दुधमुँहे बच्चों

भारतीय मज़दूर आंदोलन की नींव लगभग पाँच दशक पूर्व कुछ मानवतावादी समाजसेवियों एवं राष्ट्र-नायकों के सद्प्रयत्नों से पड़ी थी, जिस पर देश में राजनैतिक जागृति के फैलने के साथ राजनैतिक रंग चढ़ता चला गया और आज अधिकांश अखिल भारतीय मज़दूर संघ प्रायः किसी न किसी राजनैतिक दल के साथ संबद्ध हो गये हैं। लेखक ने, जो स्वयं एक मज़दूर-कार्यकर्त्ता हैं, भारतीय मज़दूर आन्दोलन की प्रगति पर प्रकाश डालते हुये सभी मज़दूर संघों को यह सामयिक चेतावनी दी है कि वे राजनैतिक दलबंदी से दूर रह कर अपनी आंतरिक शक्ति को बढ़ाएँ और अपने सदस्यों के हित को सामने रखें।
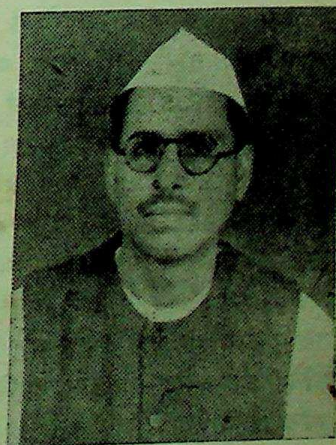
को अफीम की घूंटी पिलाकर भाग्य के भरोसे घर पर छोड़ उन्हें काम पर जाना पड़ता। मज़दूरों के रहने के स्थानों की तो नारकीय दशा थी। उन दिनों उनकी कोई यूनियन न थी और यूनियन के अभाव में मज़दूर आन्दोलन की बात कोरी मृग-मरीचिका थी। यह दशा ठीक उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक रही।

आन्दोलन की पृष्ठभूमि

किन्तु समय ने पलटा खाया। मानव और मशीन के इस संघर्ष से क्षुब्ध कुछ मानवतावादी समाजसेवियों का ध्यान मज़दूरों की इस बेबसी की ओर गया। उन्होंने अपनी सभा और स्मृति-पत्रों द्वारा श्रमिकों की इस अमानुषिक अवस्था की ओर तत्कालीन सरकार का ध्यान आकर्षित किया। बम्बई का 'मिल हैन्ड्स एसोसियेशन' एक ऐसी ही संस्था थी। इन आरम्भकालीन जन-सेवियों में बम्बई के श्री सोहराब जी सपुरजी बंगाली और श्रीनारायण जी मेघाजी लोखण्डे का नाम स्मरणीय है। श्री लोखण्डे उपर्युक्त संस्था के सभापति चुने गये और 'दीनबन्धु' नामक मज़दूर-पत्र निकाला। इस पत्र ने अपने लेखों तथा समाचारों द्वारा मज़दूरों में जागृति फैलाई। इसी प्रकार इन दोनों महानुभावों ने सन् १८८१ में बने प्रथम कारखाना कानून की कई अनिष्टकर धाराओं का सक्रिय विरोध किया। इस विरोध के फलस्वरूप उक्त कानून में कुछ सुधार हुआ।

अभी तक भारतीय मज़दूरों के संगठन का कोई निखरा स्वरूप सामने नहीं आया था, किन्तु धीरे-धीरे श्रमिक-वर्ग अपनी दीनता और बेबसी का अनुभव करता हुआ अपने संगठन की ओर झुक रहा था। इसी बीच सन् १६०५ में 'कलकत्ता प्रेस कर्मचारी यूनियन' की स्थापना हुई और सन् १६११ में बम्बई में 'कामगार हित-वर्द्धक सभा' बनी। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर सन् १६१४ तक देश भर में कई यूनियनें स्थापित हुईं। उस समय तक यूनियनों का काम सरकार और मिल-मालिकों के पास अर्जियाँ और स्मरण-पत्र देना, सभायें करके प्रस्ताव पास करना आदि ऐसे ही अन्य कार्य थे। कभी-कभी आवेशवश या राजनैतिक कारणों से मज़दूरों की आम हड़तालें भी हो जाती थीं, किन्तु हड़ताल के पश्चात् मज़दूर पुनः अपने संगठन को भूल काम में जुट जाते। उस समय तक यूनियनों की न कोई नियमित सदस्य-संख्या थी और न सदस्यता-शुल्क देने के मज़दूर ही अभ्यस्त थे।

किन्तु प्रथम महायुद्ध के अनन्तर यह दशा बदल गई। वस्तुतः भारतीय मज़दूर आन्दोलन का सूत्रपात महायुद्ध के उपरान्त ही हुआ। ऐतिहासिक दृष्टि से यदि हम भारतीय मज़दूर आन्दोलन का काल-विभाजन करें, तो पिछले चार-पाँच दशकों के समय को हम तीन निम्नलिखित स्पष्ट कालों में बाँट सकते हैं, यथा—

प्रारम्भिक काल—आदि से लेकर प्रथम महायुद्ध के अन्त तक।

मध्यकाल—दोनों महायुद्धों के बीच की अवधि।

आधुनिक काल—द्वितीय महायुद्ध से लेकर अब तक।

प्रारम्भिक काल

प्रथम महायुद्ध ने भारतीय उद्योग-धन्धों को उत्तरोत्तर पनपने, फूलने और फलने का अवसर दिया। युद्धग्रस्त देशों के कल-कारखाने अधिकाधिक अस्त्र-शस्त्र एवं अन्य युद्धोपयोगी सामग्रियों के निर्माण में व्यस्त रहे। उद्योग-धन्धों की बढ़ती आय से मज़दूरों के पारिश्रमिक में भी कुछ वृद्धि हुई और उनके काम की दशा में कुछ सुधार हुआ। इसी बीच एक और महत्वपूर्ण घटना घटी, जिससे सारे मज़दूर-जगत को नवजीवन प्राप्त हुआ। सुप्रसिद्ध देश-सेविका श्रीमती एनी बेसेन्ट के उत्साही सहयोगी पत्रकार श्री वी० पी० वाडिया ने सन् १६१८ में 'मद्रास लेबर यूनियन' की स्थापना की और पूर्णतः मज़दूरों के कल्याण में लग गये। सम्भवतः हमारे देश की यही सर्वप्रथम यूनियन थी, जिसके नियमित सदस्य थे और जिसमें सदस्यता-शुल्क देने की परिपाटी चली थी। इस यूनियन ने मद्रास के मज़दूरों में अभूतपूर्व जागृति पैदा की और लगन के साथ उनकी कठिनाइयों को हल करना प्रारम्भ किया। किन्तु मद्रास के कारखानेदारों ने १६२१ में कानूनी आश्रय लेकर यूनियन के ऊपर लाखों की क्षति-

पूर्ति का दावा दायर कर दिया और मद्रास हाईकोर्ट से यह निषेधाज्ञा प्रचारित कराई कि कोई मज़दूर यूनियन की साधारण कार्यवाही में भी भाग न ले। श्री वी० पी० वाडिया को मद्रास छोड़ने के लिये बाध्य किया गया। फल यह हुआ कि यूनियन भंग हो गई।

मध्य काल

यद्यपि देश के विभिन्न भागों में प्रारंभिक काल में कई मज़दूर संघों की स्थापना हुई, परंतु प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के बाद इस बात की आवश्यकता अनुभव की गई कि अखिल भारतीय स्तर पर मज़दूरों का संगठन बनाया जाय, जिससे मज़दूरों की समस्याओं के निराकरण में एकरूपता लाई जाए और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ के लिए प्रतिनिधि का चुनाव भी एक स्वर से किया जा सके। फलस्वरूप ३१ अक्टूबर, सन् १९२० में 'ट्रेड यूनियन कांग्रेस' का प्रथम अधिवेशन बम्बई में पंजाब-केशरी स्वर्गीय लाला लाजपतराय की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। सारे देश के मज़दूरों में जागृति की नई लहर दौड़ गई। इस जागृति में तीन विशेष परिस्थितियों ने योग दान दिया: १९१९ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ की स्थापना, महात्मा गांधी द्वारा संचालित देश-व्यापी असहयोग आन्दोलन और महायुद्ध के फलस्वरूप चीज़ों की बेहद बढ़ी हुई क़ीमतें। इस अवधि में हड़तालों की धूम-सी मच गई। इन हड़तालों में सब से भयंकर १९२८ की बम्बई की सूती मिलों के मज़दूरों की हड़ताल थी, जो अप्रैल से अक्टूबर तक प्राय: ६ माह चली और जिसके फलस्वरूप २ करोड़ २५ लाख काम के दिनों की हानि हुई और उद्योग को ३ करोड़ १५ लाख का घाटा लगा। इस हड़ताल का तात्कालिक कारण था—सूती मिलों के मालिकों की समीचीनीकरण योजना और मज़दूरों में छँटनी और बेकारी के भय की उपस्थिति।

सन् १९२९ और मज़दूर आंदोलन

सन् १९२९ का वर्ष भारतीय मज़दूर आन्दोलन के लिए बड़ा ही महत्वपूर्ण रहा। इसी वर्ष सर्वदेशीय स्तर पर श्रमिकों की दशाओं की सांगोपांग जाँच के लिए शाही श्रम-कमीशन की नियुक्ति हुई, जिसने पहली बार भारतीय मज़दूरों की समस्याओं पर एकत्र प्रकाश डाला। इसी वर्ष तत्कालीन विदेशी सरकार द्वारा देश के अग्रणी मज़दूर नेताओं पर षड्यन्त्र करने और सरकार को उलटने के आरोप लगाए गए, जिसके फलस्वरूप मेरठ षड्यन्त्र कांड चला और प्रायः सभी प्रमुख मज़दूर - नेता जेल के सीखचों में डाल दिए गये। उन पर वर्षों मुक़दमा चला, किन्तु अन्ततोगत्वा वे सभी निर्दोष पाए जाकर छोड़ दिये गये।

इसी वर्ष नागपुर में पं० जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में 'अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस' का दसवाँ अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन में मज़दूर-संगठन दो दलों में विभक्त हो गया। एक दल में प्रधानता वामपन्थी और विशेषतया साम्यवादी नेताओं की रही और दूसरे दल में सुधारवादी नेताओं की। श्री एन० एम० जोशी, श्री वी० वी० गिरि, श्री वी० शिवराव, श्री बाखले और दीवान चमन लाल आदि सुधारवादी श्रमिक नेता केन्द्रीय संगठन से पृथक हो गए और 'इण्डियन ट्रेड यूनियन फेडरेशन' नामक नई केन्द्रीय संस्था को जन्म दिया। उसी समय 'अखिल भारतीय रेलवेमेन्स फेडरेशन' भी, जो रेल कर्मचारियों की केन्द्रीय संस्था है, ट्रेड यूनियन कांग्रेस से पृथक हो गई।

यह फूट की परम्परा सन् १९३५ और उसके बाद तक चली। १९३१ के कलकत्ता अधिवेशन में उग्रपंथी वामपन्थी मज़दूर नेताओं ने श्री रणदिवे और देशपांडे आदि के नेतृत्व में केन्द्रीय संगठन से नाता तोड़ लिया और 'अखिल भारतीय रेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस' की स्थापना की। इस प्रकार केन्द्रीय संगठन तीन दलों में विभाजित हो गया।

पुनः एकता की ओर

सन् १९३३ से मज़दूर-नेता पुनः एकता की ओर मुड़े। इस वर्ष का अधिवेशन कानपुर में हुआ और आगामी वर्ष के लिए स्वर्गीय हरिहर नाथ शास्त्री अ० भा० ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित

हुए। श्री शास्त्री जी सदैव मज़दूर आन्दोलन में एकता के हामी थे। उन्होंने विभिन्न केन्द्रीय संगठनों के पृथक अस्तित्व का विरोध और विलयन का दृढ़तापूर्वक समर्थन किया। परिणामस्वरूप १९३५ में साम्यवादी और १९३८ में सुधारवादी नेताओं का आपसी मेल हुआ और ट्रेड यूनियन कांग्रेस में शेष दोनों केन्द्रीय संगठनों का विलयन हो गया। नई कार्यकारिणी में सदस्य-संख्या के अनुपात से लोग ले लिए गए और भारतीय मज़दूर आन्दोलन में एक बार पुनः नवजीवन आया।

इसी बीच सन् १९३९ में द्वितीय महायुद्ध का श्रीगणेश हुआ। साम्यवादी मज़दूर नेताओं ने महायुद्ध की अवधि में 'कम्यूनिस्ट इन्टरनेशनल' की रीति-नीति का अनुकरण कर और सन् १९४२ के स्वातंत्र्य-आन्दोलन में देश के साथ असहयोग करके भारतीय मज़दूरों पर से अपना प्रभाव खो दिया। अ० भा० ट्रेड यूनियन काँग्रेस की युद्ध-नीति से असंतुष्ट होकर स्वर्गीय मानवेन्द्र नाथ राय ने रेडिकल डेमोक्रेटिक दल के नेतृत्व में एक नई केन्द्रीय संस्था 'इण्डियन लेवर फेडरेशन' के नाम से कायम की। किसी मूल-भूत सिद्धान्त पर आधारित न होने और सरकारी सहायता पर टिके रहने के कारण यह संस्था अधिक दिन तक जीवित नहीं रह सकी।

आधुनिक काल

देश की आज़ादी के बाद भारतीय मज़दूर आन्दोलन में एक नया मोड़ आया। राष्ट्रवादी नेताओं ने मई, सन् १९४७ में 'भारतीय राष्ट्रीय मज़दूर कांग्रेस' (आई० एन० टी० यू० सी०) नाम की केन्द्रीय संस्था कायम की। राष्ट्रीय मज़दूर कांग्रेस को प्रारम्भ से ही महात्मा गांधी, सरदार पटेल, पं० नेहरू और डा० राजेन्द्र प्रसाद का आशीर्वाद तो प्राप्त था ही, किन्तु इसे सबसे प्रबल शक्ति मिली अहमदाबाद की सूती मज़दूर एसोसियेशन द्वारा। इस संस्था का निर्माण सन् १९२० में ही पूज्य बापू के निर्देश से हुआ था और अब तक उसकी सदस्य-संख्या लाखों तक पहुँच चुकी थी। यह संस्था अभी तक किसी भी केन्द्रीय संस्था से सम्बद्ध नहीं रही है। पिछले सात वर्षों में इस संस्था की सदस्य-संख्या प्रायः १५ लाख तक पहुंच गई है और अपने ठोस संगठनात्मक तथा रचनात्मक कार्यों द्वारा भारतीय मज़दूरों का विश्वास-भाजन बन चुकी है।

भारत की समाजवादी पार्टी ने भी दिसम्बर, सन् १९४८ में अखिल भारतीय पैमाने पर 'हिन्द मज़दूर सभा' नाम की एक नई केन्द्रीय संस्था का गठन किया। इस संस्था की सदस्य-संख्या प्रायः ६ लाख है। श्री एम० एन० राय की 'इन्डियन लेवर फेडरेशन' नामक केन्द्रीय संस्था भी इसी में सम्मिलित हो गई है।

उपर्युक्त तीन केन्द्रीय संस्थाओं--आई० एन० टी० यू० सी०, ए० आई० टी० यू० सी० और हिन्द मज़दूर सभा के अतिरिक्त भारतीय मज़दूरों का अन्य संगठन 'यूनाइटेड ट्रेड यूनियन काँग्रेस' भी है, जिसकी सदस्य-संख्या प्रायः ४ लाख के समीप है। इसकी शाखाएं अधिकतर बंगाल में हैं।

मज़दूर आन्दोलन की शक्ति

कोई भी आन्दोलन केवल कानूनों से ही प्रगति नहीं कर सकता। आन्दोलन की आभ्यंतरिक शक्ति ही उसकी वृद्धि और विकास का कारण बन सकती है। आज आन्दोलनों में केवल कानूनी आश्रय का साम्राज्य है। आवश्यकता यह है कि हमारे संगठन में इतनी शक्ति हो कि अपनी समस्याओं को श्रमजीवी और उद्योगपति एक स्थान पर बैठकर बिना किसी मध्यस्थ की सहायता के सुलझा सकें। वह दिन भारतीय मज़दूर आन्दोलन का स्वर्ण–विहान होगा।

राजनैतिक दलबन्दी से बचने की सलाह

भारतीय मज़दूर आन्दोलन की एक खेदजनक त्रुटि है—राजनीतिक दलों का अनुचित प्रभाव एवं हस्तक्षेप। यह सही है कि बीसवीं शताब्दी का जागरूक श्रमिक राजनीति से बिल्कुल तटस्थ तो नहीं रह सकता, किन्तु मज़दूर आन्दोलन को राजनैतिक दलबन्दी का अखाड़ा बनाने का अर्थ होगा—आन्दोलन की रीढ़ तोड़ देना, अतः राजनैतिक दलबंदी से बचा कर ही आन्दोलन को गतिमान करने में मज़दूरों का हित है।

उत्तर प्रदेश की श्रम-संबंधी पंचवर्षीय योजना

भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत श्रमिकों के चतुर्दिक कल्याण और देश की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने का जो कार्य-क्रम स्थिर किया गया था, उसकी पूर्त्ति के लिये उत्तर प्रदेश सबल पगों से आगे बढ़ रहा है। इस दृष्टि से १९५४ का वर्ष अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। इस राज्य में श्रम-संबंधी पंचवर्षीय योजना के विविध कार्य-क्षेत्रों में जो प्रगति हुई है, उससे कल्याणकारी राज्य की स्थापना की ओर बढ़ने में काफ़ी सहायता मिली है।

मज़दूरों और मालिकों के संबंध

यद्यपि देश का झुकाव पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था से हट कर अब समाजवादी अर्थ-व्यवस्था की ओर हो चला है, फिर भी आर्थिक समृद्धि के लिये यह आवश्यक है कि परिवर्त्तन के प्रत्येक स्तर पर मज़दूर और नियोजक का संबंध परस्पर-विरोधी न होकर एक-दूसरे के प्रति मैत्रीपूर्ण, सहयोगपूर्ण और संवेदनात्मक हो। संभवतः इसीसे पंचवर्षीय योजना में इसके महत्व को स्वीकार करते हुए यह कहा गया है कि मज़दूर और नियोजक का संबंध 'वास्तव में

उत्तर प्रदेश का श्रम-विभाग अपनी प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत जो महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है, उसके निदर्शन के लिये एक पूरी पोथी की आवश्यकता होगी। इस लेख में सन् १९५४ में किए गए कार्यों का एक सिंहावलोकन-मात्र प्रस्तुत किया गया है।

समाज की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिये साझीदारी का संबंध है।' उत्तर प्रदेश में औद्योगिक संबंधों के नियमन के लिये इस भावना को उत्तरोत्तर महत्व दिया जाने लगा है। दोनों पक्षों में विवाद उठने पर पहले ज़ोर इसी बात पर दिया जाता है कि दोनों पक्ष अपने मतभेदों को क्रमशः कम कर आपस में समझौता कर लें। समझौते में सफलता न मिलने पर राज्य के समझौता अधिकारी अपनी रिपोर्ट सरकार के पास भेज देते हैं, जो उसके गुण-दोषों पर विचार करने के बाद किसी अभिनिर्णायक अथवा इलाहाबाद-स्थित राज्य औद्योगिक न्यायाधिकरण के पास फैसले के लिये भेज देती है। इनके फैसलों से असन्तुष्ट होने पर कोई भी पक्ष लेबर एपेलेट ट्रिब्युनल में अपील कर सकता है।

सन् १९५४ में समझौता बोर्डों में ३,७९६ विवादों पर सुनवाई हुई, जिनमें से ५७२ विवादों में आपसी समझौते हो गये। वर्षांत में २६० विवाद विचाराधीन रहे। अभिनिर्णय के लिए अभिनिर्णायकों और औद्योगिक न्यायाधिकरण के पास ७१८ विवाद भेजे गये। इसके अतिरिक्त २६२ विवाद गत वर्ष के विचाराधीन थे, जिन्हें लेकर कुल विवादों की संख्या ९८० हो गई। औद्योगिक न्यायाधिकरण ने इस वर्ष कुल ८५ विवादों को निपटाया।

इस राज्य में विवादों में समझौते और निपटारे की जो व्यवस्था प्रचलित थी, उसे १४ जुलाई, १९५४ को पुनः संगठित किया गया। संशोधित व्यवस्था के अनुसार ऐसे विवादों पर विचार नहीं किया जा सकता, जो प्रार्थनापत्र देने के ६ माह पूर्व उठे हों। समझौता बोर्डों में मज़दूरों और मालिकों के नामज़द प्रतिनिधियों को अब यह अधिकार मिल गया है कि वे बोर्ड के अध्यक्ष द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट या स्मृति-पत्र पर अपने हस्ताक्षर भी करें।

प्रयत्न इस बात के भी किये जाते हैं कि राज्य औद्योगिक न्यायाधिकरण तथा अभिनिर्णायकों द्वारा दिए निर्णयों का पालन कराया जाय। निर्णयों के प्रतिपालन की देख-भाल के लिए सरकार ने एक अधिकारी की नियुक्ति की है। जो कारखानेदार निर्णयों का पालन नहीं करते, उनके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जाती है। औद्योगिक विवाद (एपेलेट ट्रिब्युनल) अधिनियम, १९५० की धारा २० के अंतर्गत इस बात की व्यवस्था है कि न्यायाधिकरणों अथवा अभिनिर्णायकों के निर्णयों के अंतर्गत श्रमिकों को दिलाए गए धन को कारखानेदारों से बकाया मालगुज़ारी के रूप में वसूल कर लिया जाय।

श्रम-कानूनों का प्रशासन

मज़दूरों और मालिकों के बीच परस्पर सौहार्द पैदा करने के लिये जहाँ यह आवश्यक है कि उनके विवादों को यथासंभव मैत्रीपूर्ण ढंग से निपटाया जाय और उनमें हुए समझौतों या अभिनिर्णयों का पूर्णतः पालन कराया जाय, वहीं उनके अधिकारों और दायित्व का ज्ञान करा कर विवादों को कम से कम करने के लिये विविध श्रम-कानूनों का सुचारु रीति से प्रशासन भी कम महत्वपूर्ण नहीं। इसी दृष्टि से पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत उ० प्र० दूकान और वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून, १९४७, कारखाना कानून, १९४८, भारतीय ब्वायलर कानून, १९२३, न्यूनतम मज़दूरी कानून, १९४८, भारतीय व्यावसायिक संघ कानून, १९२६, आदि श्रम-कानूनों के प्रशासन-कार्य का भी समावेश किया गया है।

उत्तर प्रदेश दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून

दिसम्बर, १९४७ के पूर्व उत्तर प्रदेश में दूकानों एवं वाणिज्य प्रतिष्ठानों के कर्मचारियों को छुट्टी आदि की व्यवस्था के अभाव में बिना विश्राम के कई घंटे काम करना पड़ता था। उ० प्र० दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून, १९४७ के लागू होने से अब इस वर्ग के कर्मचारियों को अति अपेक्षित कानूनी सुविधाएँ प्राप्त हो गई हैं। कानून के द्वारा काम के घंटों, छुट्टी तथा वेतन के नियमित भुगतान की व्यवस्था की गई है।

यह कानून १ दिसम्बर, १९४७ को सबसे पहले राज्य के २४ नगरों में लागू किया गया था। ये नगर हैं—

आगरा, इलाहाबाद, बरेली, बनारस, कानपुर, देहरादून, फतेहगढ़, झाँसी, लखनऊ, मेरठ, मसूरी, मथुरा, नैनीताल, अलीगढ़, फर्रूखाबाद, फिरोज़ाबाद, गोरखपुर, फैज़ाबाद, हापुड़, हाथरस, कन्नौज़, मुरादाबाद, मुज़फ्फ़रनगर तथा सहारनपुर। इसके बाद से उसे गोंडा, रामपुर, गाज़ियाबाद तथा कायमगंज में भी लागू कर दिया गया है। ६ चुने हुये म्युनिसिपल नगरों—मिर्ज़ापुर, बुलंदशहर, दायूँ, सीतापुर, उन्नाव तथा बाराबंकी में भी कानून की धारा १० तथा १२ के अन्तर्गत कर्मचारियों के लिये बन्दी के दिन तथा साप्ताहिक छुट्टियों से सम्बन्धित व्यवस्थाएँ अंशतः लागू कर दी गई हैं।

इसके अतिरिक्त इस अधिनियम को उत्तर प्रदेश के सभी वैकुअमपैन चीनी के कारखानों के जिन कर्मचारियों पर कारखाना अधिनियम, १६४८ की व्यवस्थाएँ लागू नहीं होतीं, उन पर भी लागू कर दिया गया है। इस अधिनियम की लोकप्रियता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि जिन नगरों में अभी तक इसे लागू नहीं किया गया, वहाँ की दूकानों एवं वाणिज्य प्रतिष्ठानों के मालिक एवं कर्मचारी दोनों ही इसे प्रति वर्ष अपने-अपने नगरों में लागू किये जाने की मांगें प्रस्तुत करते हैं।

आलोच्य वर्ष में ५०,६७५ निरीक्षण किये गये, १७४२ शिकायतें प्राप्त हुईं और कुल १७६० शिकायतों पर निर्णय दिये गये। इस वर्ष ६३३ नए अभियोग चलाये गये और कुल ६८१ अभियोगों में निर्णय दिये गये। कुल २१,६३५ रु० जुर्माना किया गया।

कारखाना कानून तथा अन्य

उत्तर प्रदेश के श्रम विभाग के कारखाना निरीक्षक कारखाना अधिनियम, १६४८, वेतन-वितरण अधिनियम, १६३६, मातृका हितलाभ अधिनियम, १६३८ एवं बाल-नियोजन अधिनियम, १६३८ की व्यवस्थाओं को कार्यान्वित करने के लिये उत्तरदायी हैं।

आलोच्य वर्ष में कारखाना अधिनियम, सन् १६४८ में संशोधन किया गया और संशोधित कारखाना अधिनियम, १६५४ को राज्य में दिनांक ७-५-५४ से लागू किया गया।

इस वर्ष १२४० कारखानों के लाइसेंसों का नवीनीकरण किया गया। ३३ नए कारखानों को इस साल लाइसेंस दिये गये, अर्थात् १२७३ कारखानों ने इस साल लाइसेंस प्राप्त किये, जबकि सन् १६५३ में १२५७ कारखानों ने लाइसेंस प्राप्त किये थे। ४५६ अन्य कारखानों ने भी लाइसेंस प्राप्त करने के लिये आवेदन-पत्र दिये, किन्तु उनको लाइसेंस नहीं दिये जा सके, क्योंकि उनके द्वारा कुछ प्रारम्भिक वैधानिक कार्यवाहियाँ पूर्ण होना शेष थीं। इसके अतिरिक्त राजकीय और स्थानीय संस्थाओं द्वारा संचालित ८२ ऐसे कारखाने हैं, जो कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत प्रयोज्य हैं, परन्तु इन्होंने लाइसेंस प्राप्त करने के लिये आवेदन-पत्र नहीं भेजे थे। इसके लिये सरकार को लिखा गया है तथा इस पर उचित कार्यवाही भी हो रही है।

आलोच्य वर्ष में कारखाना अधिनियम, १६४८, वेतन-वितरण अधिनियम, १६३६ एवं मातृका हितलाभ अधिनियम के अन्तर्गत ८१३३ निरीक्षण किये गये। इसके अतिरिक्त ४६२ निरीक्षण बाल-नियोजन अधिनियम के अन्तर्गत किये गये।

इस कार्यालय में ८८४ मानचित्र कारखानों के भवनों के तथा उनमें परिवर्त्तनों एवं परिवर्धनों की स्वीकृति-हेतु प्राप्त हुये, जिनमें ४४ मानचित्र जलपान-गृह, विश्राम-गृह एवं शिशुपालन-गृह आदि के थे तथा अन्य भवनों के थे।

आलोच्य वर्ष में प्राप्त समस्त शिकायतों की संख्या ७६० थी, जिनमें ४३१ शिकायतें कारखाना अधिनियम तथा २८६ वेतन-वितरण अधिनियम के अन्तर्गत थीं। ७० शिकायतें विविध विषयों की थीं।

५६६ अभियोग कारखाना अधिनियम एवं वेतन-वितरण अधिनियम की विभिन्न धाराओं तथा उनके अन्तर्गत बने नियमों का उल्लंघन करने के अपराध में चलाये गये।

कारखाना प्रबन्धकों के समय पर वेतन न देने के कारण आवश्यक निर्देश देने के लिये विभिन्न जिलाधीशों को ६६ निर्देशन-पत्र इस कार्यालय से भेजे गये।

इस कार्यालय में कुल ७८६१ दुर्घटनाओं की सूचनाएँ प्राप्त हुईं, जिनमें १४ सांघातिक तथा शेष ७८७७ साधारण थीं।

कारखाना अधिनियम, १६४८, की धारा ४६ के अनुसार १८४ कारखाने श्रम हितकारी अधिकारियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में प्रयोज्य पाये गये, जिनमें से ११२ कारखानों में योग्यता-प्राप्त कारखाना श्रम हितकारी अधिकारियों की नियुक्ति की गई थी। इनमें से एक प्रकरण उच्च न्यायालय, इलाहाबाद तथा दूसरा नगर न्यायाधीश, बिजनौर के न्यायालय में निर्णयार्थ पड़ा है। ५ प्रकरण उपरोक्त धारा से मुक्ति के लिये सरकार के विचाराधीन हैं तथा शेष पर उचित कार्यवाही हो रही है।

ब्वायलर कानून

आलोच्य वर्ष में विविध प्रकार के ब्वायलरों के १५६३ निरीक्षण किये गये। इस वर्ष अन्य राज्यों से इस राज्य में १७ ब्वायलर आये और १४ ब्वायलर यहाँ से बाहर गये। २१ ब्वायलरों का रजिस्ट्रेशन किया गया और निरीक्षण-शुल्क के तौर पर १,२५,४११ रु० प्राप्त हुआ।

ब्वायलर सं० यू० पी० ५२८ और यू० पी० २५३३ के मालिकों पर भारतीय ब्वायलर कानून, १६२३ के अन्तर्गत अभियोग चलाये गए।

श्रम विभाग का ब्वायलर उपविभाग ब्वायलर कानून के प्रशासन की देख-भाल करता है।

न्यूनतम वेतन कानून

न्यूनतम वेतन कानून, १६४८ उत्तर-प्रदेश में २७ जून, १६५२ को लागू किया गया था। यह राज्य के निम्नांकित उद्योगों में लागू है :—

(१) चावल, आटा तथा दाल मिलें, (२) तम्बाकू बनाने (बीड़ी को शामिल करते हुए) के कारखाने, (३) केवल देहरादून जिले के सिनकोना, रबड़, चाय तथा कहवा के बाग, (४) तेल की मिलें, (५) सड़क तथा भवन-निर्माण, (६) पत्थर तोड़ने तथा पत्थर पीसने के काम, (७) लाख बनाने के कारखाने (८) सार्वजनिक मोटर परिवहन, (९) चमड़ा कमाने तथा उसके सामान बनाने के कारखाने. (१०) स्वायत्त संस्थाओं के अन्तर्गत काम तथा (११) उत्तर प्रदेश की खानों में पत्थर तोड़ने तथा पीसने के संस्थान।

उक्त कामों के अतिरिक्त २७ दिसम्बर, १६५४ के सरकारी आदेशानुसार सरकार ने न्यूनतम वेतन गाँव-पंचायतों के लिए भी निर्धारित कर दिया है।

राज्य की स्वायत्त संस्थाओं के अतिरिक्त अन्य अनुसूचित नियोजनों में प्रौढ़ श्रमिकों के लिए २६ दिनों के महीने के लिये न्यूनतम वेतन २६) रु० या १) रु० प्रति दिन निश्चित किया गया है। इसी प्रकार स्वायत्त संस्थाओं में काम करने वाले श्रमिकों के विभिन्न वर्गों के लिये भी न्यूनतम वेतन निश्चित कर दिया गया है। अभी हाल में ग्राम-पंचायतों को भी अधिनियम के क्षेत्र के अन्दर लाया गया है और उसके लिये भी न्यूनतम वेतन की वही दरें लागू की गई हैं। दरियाँ तथा शाल बनाने वाले प्रतिष्ठानों तथा अल्मोड़ा एवं गढ़वाल जिले के बागों में न्यूनतम वेतन लागू करने का प्रश्न सरकार के विचाराधीन है। यद्यपि इस अधिनियम को समूचे उत्तर प्रदेश में लागू किया गया है, फिर भी प्रशासन के जिम्मेदार वर्तमान कर्मचारियों द्वारा केवल २८ जिलों की ही देख-भाल की जाती है। चालू वर्ष में शेष जिलों को भी प्रशासन के अन्तर्गत लाने का विचार है। वेतन निरीक्षकों ने १६५४ के वर्ष में १५,२६५ अनुसूचित नियोजनों का निरीक्षण किया और अधिनियम की विभिन्न व्यवस्थाओं के उल्लंघनों का पता लगाया और अधिकांश मामलों में उनका उचित प्रतिपालन कराया।

कृषि-क्षेत्र में २८ दिसम्बर, १६५४ के राजकीय आदेश द्वारा न्यूनतम वेतन अधिनियम वाले क्षेत्र को और विस्तृत किया गया है। इस आदेश के अनुसार कम वेतन वाले जिलों के सभी फार्म तथा खेतों के लिये न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित कर दी गई है। ये जिले हैं—बाँदा, हमीरपुर, जालौन, बाराबंकी, फैज़ाबाद, आज़मगढ़, बलिया, गाज़ीपुर, जौनपुर, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़ तथा रायबरेली। अल्मोड़ा, नैनीताल, गढ़वाल और टेहरी-गढ़वाल के जिलों को छोड़कर राज्य के शेष जिलों के ५० एकड़ या अधिक के फार्मों पर भी न्यूनतम मज़दूरी
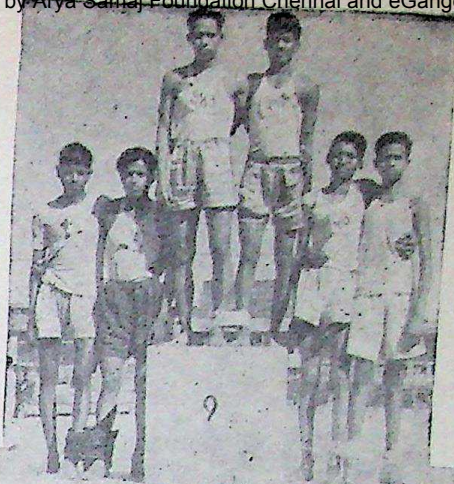
श्रम - हितकारी खेल - कूद प्रतियोगिताएं - १९५५

(ऊपर) शास्त्री नगर की नई श्रमिक-बस्ती का निरीक्षण: श्रम मंत्री के दाहिनी ओर हैं श्रमायुक्त श्री ओंकारनाथ मिश्र और जन-निर्माण विभाग के इंजीनियर श्री महावीर प्रसाद, जो उन्हें श्रमिक-बस्ती दिखला रहे हैं। (मध्य में) प्रादेशिक प्राविडेण्ट फंड कमिश्नर के कार्यालय में: बाएँ से दाहिनी ओर हैं श्रमायुक्त, श्रम मंत्री एवं प्राविडेण्ड फंड निरीक्षक श्री प्रभाकर तिवारी।
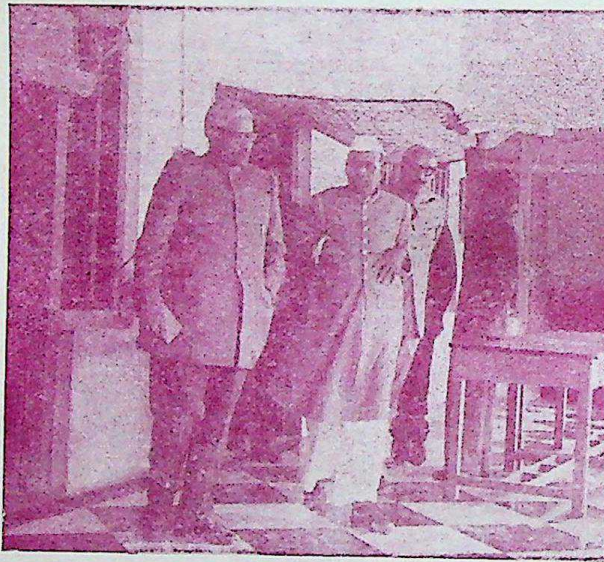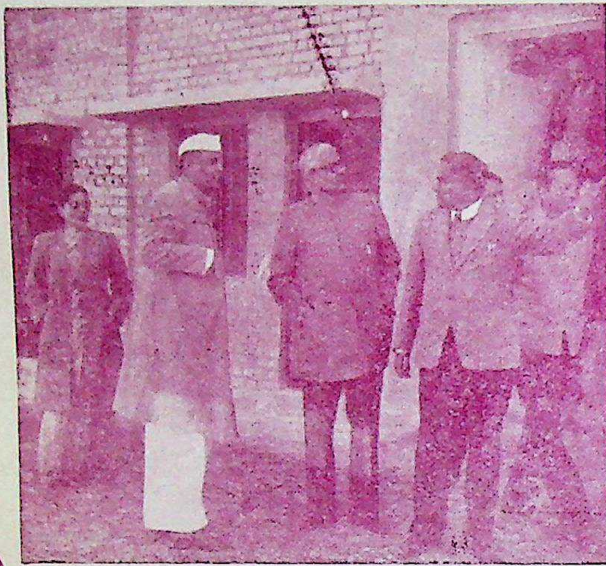
उत्तर प्रदेश के श्रम मंत्री आचार्य युगल किशोर कानपुर में

शास्त्रीनगर में हुए पुरस्कार – वितरणोत्सव में श्रम विभाग के सचिव श्री कुलदीप नारायण सिंह एक विजेता को पुरस्कार दे रहे हैं

लागू कर दी गई है। उन कृषि-मज़दूरों के लिये निर्धारित न्यूनतम वेतन २६) रु० प्रतिमाह या १) रु० प्रतिदिन है, जिनकी आयु १८ वर्ष से ऊपर है। इससे कम आयु वालों के लिए न्यूनतम वेतन १६) रु० ४ आना प्रति माह या १० आना प्रतिदिन निर्धारित किया गया है।

व्यावसायिक संघ एवं स्थायी आदेश क़ानून

१९५४ के वर्ष के अन्त में उत्तर प्रदेश में प्रमाणित व्यावसायिक संघों की संख्या ६६३ हो गई, जबकि १९५३ के वर्ष के अन्त में यह संख्या ६१५ थी। इस वर्ष १५० नये संघों को, जिनमें २ महासंघ भी थे, प्रमाणित किया गया, जबकि १०२ संघों को अप्रमाणित कर दिया गया।

उत्तर-प्रदेश में प्रमाणित संघों का उद्योगवार वितरण इस प्रकार रहा :—

(१) चीनी उद्योग - १०२, (२) वस्त्र उद्योग – ४६, (३) यातायात - ६०, (४) नगरपालिकाएँ – ५२, (५) इंजीनियरिंग – ४५, (६) मुद्रण उद्योग- २३, (७) कृषि - १८ तथा (८) विविध – ३१४।

आलोच्य वर्ष में व्यावसायिक संघ निरीक्षक ने तथा दो सहायक संघ निरीक्षकों ने २३८ संघों का निरीक्षण किया और ७५ जाँचें भी कीं, जो प्रमाणित संघों के सदस्यों के झगड़ों से सम्बन्धित थीं। निरीक्षकों द्वारा किये गये निरीक्षणों से पता चलता है कि अधिकांश संघ अपने अभिलेख तथा हिसाब-किताब ठीक प्रकार से नहीं रखते। नियमों के अनुसार चुनाव नहीं होते और वित्तीय मामलों में प्रमाणित विधान की व्यवस्थाओं का उल्लंघन किया जाता है। निरीक्षक संघों के अधिकारियों को उचित सलाह देते रहते हैं। प्रयत्न इस बात का किया जाता है कि राज्य में स्वस्थ एवं ईमानदारी के आधार पर संघों का विकास हो।

आज के व्यापक औद्योगीकरण के युग में औद्योगिक प्रतिष्ठानों के शान्तिपूर्ण ढंग से चलते रहने के लिये यह आवश्यक है कि कर्मचारियों की काम की शर्तों तथा दशाओं को ठीक प्रकार से निर्धारित कर दिया जाय। इस उद्देश्य की पूर्ति स्थायी आदेशों के माध्यम से की जाती है। भारत सरकार ने औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, १९४६ लागू किया है, जिसके अनुसार १०० या १०० से अधिक कर्मचारियों को नियोजित करने वाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों को स्थायी आदेश बनाने पड़ते हैं, जिनके अनुसार नियोजन की शर्तों को निश्चित किया जाता है और उन्हें अधिनियम के अन्तर्गत प्रमाणकर्त्ता अधिकारी अर्थात् श्रम आयुक्त से प्रमाणित कराना पड़ता है। स्थायी आदेशों को जहाँ तक संभव हो, आदर्श स्थायी आदेशों के अनुसार बनाना पड़ता है, ये आदर्श स्थायी आदेश सरकार द्वारा निर्धारित किए जा चुके हैं। स्थायी, अस्थायी, एवजी आदि वर्गों में कर्मचारियों का वर्गीकरण पालियों में काम, दुर्व्यवहार के कार्य और तत्सम्बन्धी दंड, शिकायतों को निपटाने के तरीकों, चेतावनी के नोटिस आदि के मामले स्थायी आदेशों के अन्तर्गत आते हैं। इनके द्वारा औद्योगिक विवादों को हल करने की दिशा में काफी सहायता मिली है।

१९५४ के प्रारम्भ में ५८० औद्योगिक प्रतिष्ठानों के लिए स्थायी आदेश प्रमाणित किए जा चुके थे। वर्ष के अन्त में संख्या बढ़कर ६०४ हो गई।

आलोच्य वर्ष में उत्तर-प्रदेश सरकार ने उत्तर-प्रदेश के श्रम कमिश्नर की अध्यक्षता में एक समिति की स्थापना की, जिसमें चीनी उद्योग और उसके श्रमिकों के तीन-तीन प्रतिनिधि सदस्य थे। इस समिति को यह काम सौंपा गया कि वह राज्य के चीनी के कारखानों में लागू स्थायी आदेशों की जाँच करे और आवश्यक परिवर्त्तन के सुझाव दे। समिति ने ६ बैठकें करके स्थायी आदेशों के सम्बन्ध में अपना विचार-विनिमय पूरा करके अपनी सर्वसम्मत रिपोर्ट सरकार के पास स्वीकृत करने के लिए भेजी है।

जाँचें और अनुसंधान

उपर्युक्त श्रम-कानूनों के माध्यम से उत्तर प्रदेश के मज़दूरों के काम करने की दशाओं में पर्याप्त सुधार हुआ है, उनकी मज़दूरी के सरूपीकरण में सहायता मिली है, उनके स्वास्थ्य और सुरक्षा की उत्तरोत्तर वृद्धि

हुई है, परन्तु उन्हें समाज में अपेक्षित गौरवपूर्ण स्थान दिलाने के लिये यह आवश्यक है कि उनके जीवन का और विस्तृत अध्ययन किया जाय। इसी दृष्टि से श्रम विभाग के संख्या और अनुसंधान उपविभाग द्वारा समय-समय पर अनेक जाँचें और अनुसंधान किए जाते रहे हैं। इन जाँचों और अनुसंधान के द्वारा प्राप्त आँकड़ों और तथ्यों से श्रम-विषयक नीति-निर्धारण में भी काफी सहायता मिली है।

१६५४ के वर्ष में इस उपविभाग द्वारा निम्नांकित जाँचें की गईं :—

(१) १६५४ में कानपुर के श्रमिकों द्वारा दिये जाने वाले मकान किराए तथा उनके निवास-स्थानों की भीड़-भाड़ की जाँच प्रारम्भ की गई थी, जो अब भी जारी है। इस जाँच का उद्देश्य मकान-किराए की विभिन्नताओं का पता लगाना था। इस जाँच के फलस्वरूप कानपुर में मकान-किराया का वर्गांक १६५४ में २१ बढ़ कर २३५ हो गया।

(२) निजी एवं सार्वजनिक उद्योगों में वेतन-स्तर की जाँच की गई, जिससे यह पता चल सके कि सार्वजनिक उद्योगों और निजी उद्योगों में दी जाने वाली मज़दूरियों में कहाँ तक समानता है।

(३) समय-समय पर विभिन्न किस्मों की धोतियों और साड़ियों की भी जाँच की गइ। इसके द्वारा स्थानीय मिलों की सभी प्रकार की किस्मों की लम्बाई, चौड़ाई तथा अन्य बातों का विस्तृत विवरण एकत्र किया गया।

मज़दूरों के लिये पक्के मकान

मज़दूरों के रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठाने के लिए वे अब तक जिन गन्दी, सीलन-भरी और संकीर्ण मज़दूर-बस्तियों में रहते आये हैं, उनसे निकाल कर उन्हें साफ-सुथरे और खुले हुए पक्के मकानों में बसाना अनिवार्य था। उत्तर प्रदेशीय सरकार अपनी औद्योगिक आवास-योजना के अन्तर्गत एक ओर चीनी मज़दूरों के लिए नए मकान बनाने के लिए राज्य के अधिकांश चीनी के कारखानों को आर्थिक सहायता दे रही है, वहीं दूसरे उद्योगों के श्रमिकों के लिए राज्य के प्रायः सभी औद्योगिक केन्द्रों में मकान बनवाने का कार्य भी प्रारम्भ कर चुकी है।

राज्य के चीनी के कारखानों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए मकान बनाने की योजना का उद्देश्य राज्य के ६६ चीनी के कारखानों में एक-कमरे वाले तथा दो-कमरे वाले १५०० मकान बनाने का है। ये मकान 'उत्तर प्रदेश चीनी एवं चालक मद्यसार उद्योग श्रम कल्याण तथा विकास निधि अधिनियम, १६५१' के अन्तर्गत स्थापित एक कोष के द्वारा बनाये जा रहे हैं। यह कोष शीरे की बिक्री पर लगाये गए उपकर से निर्मित हुआ है।

इस कोष में ४६,३७,६००) रु० जमा हुआ है, जिसमें से ४५,४४,८४८) रु० मकान-निर्माण के खाते में रखा गया है।

३१ दिसम्बर, १६५४ तक ४४ कारखानों द्वारा ६५७ मकानों का निर्माण-कार्य प्रारम्भ किया गया। इनमें से २३ कारखानों में ७२१ मकान पूरी तरह से बनकर तैयार हो चुके हैं, जबकि शेष कारखानों में मकान निर्माण की विभिन्न स्थितियों में हैं। दिसम्बर, १६५४ तक उक्त मकानों को बनवाने के लिये राज्य सरकार ने सम्बन्धित चीनी के कारखानों को प्रायः १५,३५,२४३) रु० दिया।

अन्य उद्योगों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए मकान सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास योजना के अन्तर्गत बनाये जा रहे हैं। राज्य सरकार ने बहुत से मकानों के बनाने का कार्य अपने हाथ में ले लिया है और कानपुर, लखनऊ तथा राज्य के अन्य औद्योगिक नगरों में इन मकानों के निर्माण की दिशा में तीव्र प्रगति हुई है। ये मकान छः, आठ और बारह के समूहों में बनाए जा रहे हैं। इन मकानों की डिज़ाइन उत्तर प्रदेश के ग्राम एवं नगर नियोजक द्वारा बनाई गई है। प्रत्येक मकान में एक कमरा, एक बरामदा, एक आँगन, एक अंग्रेजी टट्टी और एक स्नानागार है। निर्माण के सम्पूर्ण कार्यक्रम को ४ सोपानों में विभक्त किया गया है। पहले सोपान में लगभग ७५ लाख रुपये की लागत से कानपुर में २२१६ और लखनऊ में ५६० मकान बनाए गये हैं।

कानपुर के इन सभी मकानों को किराए पर उठा दिया गया है और उनमें श्रमिक रहने भी लगे हैं। दूसरे सोपान में कानपुर में बनाए जाने वाले ३७५० मकानों में से १३०० मकान बन कर तैयार हो गए हैं तथा २२२० मकान छत की सतह तक और १८२ नींव की सतह तक बने हैं। तीसरे सोपान के अन्तर्गत १,६६,८०,०००) रु० की लागत से ७४०० मकान बनाए जायँगे। इनमें से ३४०० मकान कानपुर में, १२६६ आगरा में, १००० फिरोज़ाबाद में, ६०४ सहारनपुर में, ५०४ इलाहाबाद में, ५०० बनारस में और ६६ मिर्ज़ापुर में बनाए जायँगे। कानपुर, आगरा और फिरोज़ाबाद में निर्माण-कार्य आरम्भ हो गया है। इस सोपान में कानपुर में बनने वाले ३४०० मकानों में से १२६६ छत की तथा ७५० नींव की सतह तक पहुँचे हैं। आगरा में ३३० मकान छत की और ५७६ नींव की सतह तक पहुँचे हैं। इसी प्रकार फिरोज़ाबाद में २४६ मकान छत की और २६४ नींव की सतह तक बने हैं। इनमें से अधिकांश

(शेष पृष्ठ ५२ पर)

(पृष्ठ २० से आगे)

जब चला जाऊँगा, तब इन्हें पहना, न पहना, सब बराबर है।'

गुलाबो अपने पति को प्रसन्न करने के लिये उठती हुई बोली—'लो, तुम कहते हो, तो पहनती हूँ। लेकिन अब तुम्हें काम पर जाने देने को जी नहीं करता।'

रामहरख ने अपनी पत्नी को उठने और नए कपड़े बदलने में सहायता दी।

गुलाबो को पलंग पर लेटने में सहायता देने के बाद बोला—'गुलाबो, मैं तो बहुतेरा न जाऊँ, लेकिन गाँव में जब कोई मजूरी ही नहीं मिलती, तो यहाँ कैसे रहूँ। ठाले बैठे गुज़ारा भी तो चलने का नहीं।'

गुलाबो को सहसा गोमती की सुनाई बात याद आ गई। बोली—'गोमती कह रही थी कि भूदान में मिली ज़मीन गाँव के सभी भूमिहीन किसानों को बाँटी जायगी। तुम भी कोशिश कर देखो।'

रामहरख की कृषक बनने और अन्नपूर्णा का पुत्र बन कर देश को अन्न और व्यापारिक उपजों से भर देने की लालसा पुनः जाग उठी। काश वह मज़दूर से कृषक बन सकता, तो कच्चे माल की कमी किसी भी प्रकार न होने देता! उसे अपने दूसरे मज़दूर बन्धुओं का भी ध्यान आया। जब कच्चे माल की कमी न होगी, तो शायद किसी को उसकी भाँति बैठकी पर भेजने की नौबत भी नहीं आएगी।

बोला—'भला अंधा क्या चाहेगा, गुलाबो—दो आँखें! अगर तुम जो कहती हो, वह ठीक है, तो इस गरीब देश के दिन फिर जायेंगे। जिनकी ज़मीनें गरीबी, कर्ज़, बँटवारे और बेदखलियों की वजह से छिन गई हैं, उन्हें उनकी ज़मीनें तो कभी की मिल जानी चाहिये थीं। लेकिन जब तक ऐसा नहीं होता तब तक कारखाने में जाकर काम तो करना ही होगा, गुलाबो! मैं ऐसा समझ रहा हूँ कि मज़दूरों की बेकारी की समस्या का हल ज़मीन की लाभकर जोतों के समान बँटवारे के साथ गुँथा हुआ है।'

गुलाबो इन सब बातों को नहीं समझती। वह चुपचाप विस्मय के साथ अपने पति की बातें सुनती रही।

इतनी ही देर में गोमती आ गई। विगत दो दिनों से वह इधर नहीं आई थी। उसके आते ही बातों का प्रसंग बदल गया।

× × ×

अब जब रामहरख के जाने की तिथि आ गई थी, गुलाबो भी गाँव छोड़ कर, काल के पंखों पर बैठकर, उड़ने की सोच रही थी। गोमती के उस दिन सहसा आने के बाद से ही उसकी तबियत एकाएक फिर बिगड़ चली थी और गाँव का कोई भी उपचार काम नहीं दे रहा था।

कल शाम होते-होते जिला अस्पताल के डाक्टर को रामहरख ऊँची फीस देकर अपने घर बुला लाया था, परन्तु उसके इलाज से भी कोई लाभ नहीं था।

दिन के लगभग सात बजते-बजते उसकी आँखें फट गईं और उसके प्राण-पखेरू उड़ चले। उसकी फटी आँखें जैसे कह रही थीं—'बिदेस तो हें जाये न देब!'

रामहरख फूट-फूट कर रो पड़ा।

(पृष्ठ ५१ से आगे)

मकान मार्च, १९५५ तक बन कर पूरे हो जायँगे।

चौथे सोपान के अन्तर्गत कानपुर में गिराए जाने वाले वर्तमान गंदे अहातों के स्थान पर ६००० नए मकान बनाए जायँगे। योजना के अन्तर्गत लखनऊ, बनारस, अलीगढ़, बदायूँ, मुरादाबाद और रामपुर में १४०० मकानों का निर्माण किया जायगा। इस सोपान में बनाए जाने वाले मकानों की लागत अनुमानतः २ करोड़ रुपये होगी।

इस प्रकार राज्य सरकार ने ३८५ लाख रुपये की लागत से औद्योगिक श्रमिकों के लिए १३,९२६ मकान बनाने का कार्य अपने हाथ में लिया है और अब १,९९,८०,०००) रु० की लागत से ७५०० मकान और बनाने की एक अन्य योजना भारत सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने जा रही है। ऐसी आशा की जाती है कि मार्च, १९५५ तक लगभग १३ हजार मकान बन कर तैयार हो जायँगे।

कानपुर एवं लखनऊ में सुन्दर श्रमिक-बस्तियाँ बन कर तैयार हो गई हैं, जहाँ हजारों श्रमिक स्वच्छ एवं स्वास्थ्यकर मकानों में बसाये जा चुके हैं।

श्रम हितकारी कार्य

श्रमिकों की सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि के साथ उनके व्यक्तित्व के विकास की ओर भी ध्यान दिया जाना स्वाभाविक है। पंचवर्षीय योजना में इसी उद्देश्य से श्रमिकों के कल्याण के प्रश्न पर विशेष ध्यान दिया गया है। उत्तर प्रदेशीय सरकार ने इस दिशा में जो कुछ गत वर्ष किया है, उसके दिग्दर्शन के लिए एक पृथक और स्वतन्त्र लेख की आवश्यकता होगी, जिसे इसी अङ्क में अन्यत्र दिया जा रहा है।

श्रमिकों के सामाजिक और वैयक्तिक विकास एवं हित-रक्षा की दिशा में यद्यपि बहुत कुछ किया जा चुका है, परन्तु यह आगामी कुछ वर्षों में प्रस्तावित कार्यों की एक भूमिका-मात्र है। आशा है कि कल्याणकारी राज्य और समाजवादी समाज-रचना के लक्ष्य की प्राप्ति तक यह अभियान इसी प्रकार अविराम गति से चलता रहेगा।

(पृष्ठ ३४ से आगे)

क्या करते हो ! धरती की पुकार सुनो। वह भूखी है, वह प्यासी है। वह तुम्हारी नेतागिरी नहीं माँगती, वह तुम्हारे श्रम का पसीना माँगती है। ताल ठोक कर तो हम किसी से भी कुछ नहीं ले सकते। यह पागलपन छोड़ो, यह पागलपन छोड़ो !' कहते-कहते गौरी भीतर भाग गई।

सारा जुलूस अवाक् रह गया। किसे यह आशा थी कि रामसरन नेता की स्त्री इतना साहस करेगी। जुलूस में सन्नाटा छा गया, जैसे सबको सांप सूँघ गया हो। रामसरन भी अवाक्-सा कुछ समय खड़ा रहा। कुछ क्रोध और कुछ विस्मय में भरा वह ऊपर पहुँचा। उसने बाहर से ही पुकारा-- 'गौरी यह तूने क्या किया !'

उसने भीतर आकर देखा—गौरी धरती पर शिथिल-सी निर्जीव-सी, आँखें बन्द किये पड़ी थी और पास में अबोध मुन्नू बैठा मां के आंचल से अठखेलियाँ कर रहा था। रामसरन का स्वप्न टूटा। गौरी के मस्तक पर हाथ फेरते हुये बोला - 'गौरी, आँखें खोल। देख, मैंने यह सब मालाएँ उतार कर तेरे चरणों पर डाल दी हैं।'

उसकी आँखों में दो आँसू थे, जो सम्भवतः अब धरती की प्यास बुझाएँगे। जुलूस नहीं उठा।

(पृष्ठ ३१ से आगे)

के लिये भेज दिया जाता है। उदाहरणार्थ कोयला खान उद्योग में संयुक्त वार्ता के असफल होने पर मध्यस्थ-निर्णय के लिये विवाद को भेजने की व्यवस्था है। यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि जनोपयोगी प्रतिष्ठानों को छोड़ कर अन्यत्र हड़ताल का नोटिस देना अनिवार्य नहीं है। इस प्रकार मज़दूर चाहें, तो सीधी कार्यवाही कर सकते हैं ! परन्तु ऐसा कम होता है।

संयुक्त वार्त्ता की सफलता का आधार

संयुक्त वार्त्ता की सफलता किन तत्वों पर निर्भर है, उन पर विचार कर लेना चाहिये। सफलता पाने के लिये यह आवश्यक है कि मज़दूरों और मालिकों के संघ सुदृढ़ हों। सफलता का श्रेय दोनों को ही मिलना चाहिये।

(शेष पृष्ठ ६२ पर)

(पृष्ठ ११ से आगे)

ग्राम पंचायतों के लिये भी न्यूनतम मज़दूरी

अनुसूचित व्यवसायों में न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित करने के लिये तत्कालीन विशिष्टाधिकारी एवं अत्र सहायक श्रम कमिश्नर श्री जे० प्रसाद की देख-रेख में विस्तृत छान-बीन की गई और उनके वृत्तलेख तथा सिफारिशों को ध्यान में रखते हुये राज्य सरकार ने ऊनी कालीन तथा शाल बनाने वाले नियोजनों, अल्मोड़ा एवं टेहरी-गढ़वाल के चाय बागों तथा ग्राम पंचायतों को छोड़ कर सभी अनुसूचित नियोजनों के लिए न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित कर दी। गत वर्ष ग्राम पंचायतों के लिए भी न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित कर दी गई है।

न्यूनतम मज़दूरी की दर

स्थानीय संस्थाओं के अतिरिक्त सभी नियोजनों में १८ वर्ष से अधिक उम्र के श्रमिकों के लिए २६ रु० प्रति माह अथवा १ रु० प्रति दिन संघनीत (Consolidated) न्यूनतम वेतन निर्धारित किया गया। छोटी-बड़ी स्थानीय संस्थाओं के अनुसार उनमें पूरे समय, तीन चौथाई समय तथा आधा समय काम करने वाले श्रमिकों के लिए विभिन्न न्यूनतम वेतन निर्धारित किया गया। १८ वर्ष से कम उम्र वाले श्रमिकों के लिए कोई न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित नहीं की गई है।

कानून का प्रशासन

इस कानून के प्रशासन के लिये राज्य के विभिन्न शहरों में १५ निरीक्षक और उनकी सहायता के लिए ७ वेतन सहायक नियुक्त किए गए हैं। इसके अतिरिक्त एक प्रति श्रमायुक्त, दो सहायक श्रमायुक्त, एक विशिष्टाधिकारी तथा सभी प्रादेशिक संराधन अधिकारी भी उक्त अधिनियम के अन्तर्गत निरीक्षक घोषित किए गए हैं।

इस कानून का प्रशासन एक सहायक श्रमायुक्त की देख-रेख में होता है। वेतन निरीक्षक जब अनुसूचित नियोजनों में निरीक्षण के लिए जाते हैं, तो सबसे पहले नियोजकों को न्यूनतम वेतन कानून की आवश्यक तथा प्रमुख बातों से अवगत कराते हैं और उन्हें उन बातों का यथेष्ट रूप से पालन करने के लिए समझाते-बुझाते हैं। कानून का पालन कराने में यह नीति अधिक अंशों में सफल रही है।

३१ दिसम्बर, १९५४ तक विभिन्न अनुसूचित व्यवसायों में ८,५४० नियोजन देखे गए हैं, जिनमें १,१६,३९७ व्यक्ति काम करते हैं।

निरीक्षण, चेतावनी एवं अभियोग

अधिनियम के प्रशासन के निमित्त वेतन निरीक्षकों ने २५,३९० निरीक्षण किए और वेतन सहायकों ने निरीक्षकों के सहायतार्थ आवश्यक सूचनायें प्राप्त करने के लिए ४,४६० निरीक्षण किए। इन निरीक्षणों के फलस्वरूप २,१५२ चेतावनियां दी गई और १० अभियोग चलाये गए, जिनमें से ४ में फैसला हो चुका है। इनसे सम्बन्धित नियोजकों पर ५५०) रु० जुर्माना हुआ है।

कृषि उद्योग और न्यूनतम मज़दूरी

अनुसूचित उद्योग, भाग–२ खेती-बारी से संबंध रखता है। इस व्यवसाय में भी १८ वर्ष से अधिक उम्र के श्रमिकों के लिये २६) रु० प्रतिमाह या १) रु० प्रति दिन संघनीत न्यूनतम वेतन निर्धारित किया गया है। श्रमिक लड़कों के लिए १६) रु० ४ आने प्रति माह या १० आने प्रति रोज़ निर्धारित किया गया है।

प्रशासन की कठिनाइयाँ

साधारणतया इस अधिनियम का प्रशासन सन्तोषजनक रहा है। इस दिशा में सबसे बड़ी कठिनाई इस बात की रही है कि अनुसूचित व्यवसायों में श्रमिकों का संगठन एक- आध अपवादों को छोड़ कर नहीं के बराबर है और साथ ही अधिकतर श्रमिक अशिक्षित हैं, जिसके फलस्वरूप श्रमिक कानून-प्रदत्त अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं हैं और नियोजकों की मनमानी तथा अवैध व्यवहारों के प्रति मूक से रहते हैं। सार्वजनिक मोटर परिवहन में ड्राइवरों और कन्डक्टरों के काम करने के समय का नियन्त्रण उस प्रकार नहीं हो सकता, जिस

(शेष पृष्ठ ५६ पर)

श्री पवन बिहारी लाल

नीति का मूल मन्त्र है—"जहाँ सुमति, तहँ सम्पति नाना, जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना।" उद्योग एवं व्यवसाय की सफलता का तो इसे आधार-स्तम्भ कहना अत्यन्त युक्ति-युक्त है। पश्चिमी देशों में उद्योग और व्यवसाय के क्षेत्र में अग्रणी राष्ट्र ब्रिटेन इसका जाज्वल्यमान उदाहरण है।

औद्योगिक संबंध एवं व्यावसायिक संघ

हमारा तात्पर्य यहाँ औद्योगिक सम्बन्धों में सद्भावना की आवश्यकता पर ज़ोर डालना है। इस मशीन-युग में कारखानों के व्यवस्थापक, तथा उत्पादन के मुख्य अंग श्रमिक समाज के दो अलग-अलग वर्ग माने जाते रहे हैं! इसका मुख्य कारण निकट सम्पर्क का अभाव रहा है। परन्तु इस स्थिति में निरन्तर परिवर्तन हो रहा है। विशाल श्रमिक-समूह को संगठित करने वाले व्यावसायिक संघ आन्दोलन के प्रादुर्भाव से व्यवस्थापक-वर्ग को अपने प्रत्येक कर्मचारी से अलग-अलग संबंध एवं व्यवहार की आवश्यकता नहीं रह गई है। वे अब समान नीति के आधार पर श्रम-संबंधी मामले श्रमिक संघों के सहयोग से सुविधापूर्वक सुलझा सकते हैं। समाज के उत्तरोत्तर जटिल हो रहे आर्थिक जीवन में व्यावसायिक संघ एक अत्यावश्यक अंग बन गये हैं।

एक महान परिवर्तन हो चुका है। एक समय था, जब श्रमिक संघ एक गैर-कानूनी संस्था माने जाते थे। ब्रिटेन में जब श्रमिक संघ आन्दोलन प्रारंभ हुआ, तो श्रमिकों की इन संस्थाओं को इस कारण अवैधानिक घोषित कर दिया गया, क्योंकि वे दूसरे के व्यवसाय में रुकावट पैदा कर अपने सदस्यों के हितों के लिये प्रयत्न करती थीं। परन्तु उत्तरोत्तर सरकार तथा व्यवस्थापक इनके अस्तित्व को मान्यता देने लगे और अब उस प्रमुख औद्योगिक देश में व्यवस्थापकों द्वारा श्रमिक संघों से परामर्श करना औद्योगिक संबन्धों को शान्तिपूर्ण बनाये रखने का एक वैज्ञानिक ढंग माना जाता है। जिस सद्भावना से ब्रिटेन के कारखानेदारों तथा श्रमिकों के संघों में पारस्परिक विचार-विमर्श द्वारा उद्योगों का सफल संचालन आज हो रहा है, वह अनुकरणीय है।

ब्रिटेन में

ब्रिटेन की आर्थिक विचार-धारा में १८९१ से ही उद्योगपतियों तथा श्रमिकों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंधों की आवश्यकता पर ज़ोर दिया जाने लगा और अगले पचास वर्षों में उद्योगपतियों तथा श्रमिक संघों के बीच पारस्परिक समझौते एक राष्ट्रीय अन्दोलन के आधार पर किये जाने लगे। उस देश में अब सद्भावना के आधार पर उद्योगपति और श्रमिक संघ पारस्परिक समझौते स्वयं कर लेते हैं और उनके बीच सरकार के हस्तक्षेप की अधिक आवश्यकता नहीं होती। इस पारस्परिक सद्भावना के वातावरण में स्वाभाविक है कि हड़ताल और तालाबन्दी द्वारा संतुलन प्राप्त करना अब हेय दृष्टि से देखा जाने लगा है। सितम्बर, १९५४ में ब्रिटेन के श्रमिक संघों की एकमात्र केन्द्रीय संस्था—ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पास किया कि "हड़ताल और तालाबन्दी द्वारा औद्योगिक विवाद सुलझाये जाने के ढंग का प्रतिकार करने के लिये पूर्ण प्रयत्न किया जाना चाहिये।" इस प्रकार का प्रस्ताव इस बात का उदाहरण है कि किसी भी राष्ट्र के औद्योगिक संबंध सद्भावना पर ही आधारित हैं।

दूसरे देशों में

औद्योगिक संबंधों को सद्भावना के आधार पर सुलझाने का ढंग यूरोप के अन्य उन्नतशील देशों तथा

अमेरिका में भी व्यापक रूप से अपनाया गया है। इन देशों के अधिकांश औद्योगिक प्रतिष्ठानों में श्रमिकों के काम की शर्तें पारस्परिक समझौतों पर ही आधारित हैं। विभिन्न स्तरों पर, जैसे स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय तथा उद्योग-विशेष के लिये, उद्योगपतियों तथा श्रमिकों के संघों में इस प्रकार के समझौते हो चुके हैं और दोनों पक्ष उनका समुचित प्रकार से पालन भी करते हैं।

हम भी शिक्षा ग्रहण करें

इतनी भूमिका बाँधने का तात्पर्य केवल इतना है कि औद्योगिक दृष्टि से उन्नत देशों के बहुमूल्य अनुभव से हम भी अपनी राष्ट्रीय उन्नति के लिये शिक्षा-ग्रहण करें। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के उपरान्त हमारा कर्त्तव्य है कि हम प्रत्येक सम्भव उपाय द्वारा देश की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिये प्रयत्नशील हों। समय की पुकार है कि हमारे देश का उत्पादन अधिकतम हो और उसमें आने वाली प्रत्येक रुकावट को हम रोक सकने में समर्थ हों। ऐसी स्थिति प्राप्त करने के लिये देश के उद्योगपति और श्रमिक संघ दोनों ही सद्भावना के आधार पर संतुलन बनाये रखने का प्रयत्न करें, इसकी नितान्त आवश्यकता है।

हिन्दुस्तान मज़दूर सेवक संघ

भारत में भी कुछ उत्पादन-इकाइयों में औद्योगिक संबंध सद्भावना के आधार पर, श्रमिक संघों से पारस्परिक समझौतों द्वारा, संचालित होते हैं और उनमें स्वभावतः उत्पादन का स्तर संतोषपूर्ण ही नहीं, वरन् उच्चकोटि का पाया जाता है। राष्ट्र-पिता महात्मा गाँधी के संरक्षण में अहमदाबाद-स्थित हिन्दुस्तान मज़दूर सेवक संघ द्वारा १६३८ में स्वस्थ आधार पर औद्योगिक संबंध नियमित करने का कदम उठाया गया और अब भी अहमदाबाद में ही नहीं, वरन् बम्बई प्रदेश के व्यवस्थापकों तथा उन के श्रमिकों के संघों में अच्छे संबंध हैं।

सद्भावना और सहयोग आवश्यक

भारतवर्ष में इस समय अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे हैं। अभी कुछ समय पूर्व राष्ट्रीय सरकार ने निश्चय किया है कि हमारा सामाजिक ढांचा समाजवादी व्यवस्था पर आधारित होगा। साथ ही हम आर्थिक उन्नति के लिये पंचवर्षीय योजनाओं की सफल पूर्त्ति के प्रयास में संलग्न हैं। देश की आर्थिक कठिनाइयों को दूर करने के लिये अधिकतम उत्पादन करने की इस समय नितान्त आवश्यकता है। ऐसी परिस्थितियों में यह आवश्यक है कि देश में उत्पादन के दोनों प्रमुख वर्ग-उद्योगपति तथा श्रमिक—अधिकाधिक समीप आवें और उनमें एक दूसरे के प्रति अविश्वास के स्थान पर पारस्परिक सद्भावना स्थापित हो। भारतीय राष्ट्रीय मज़दूर कांग्रेस के पिछले वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर भेजे गये संदेश में हमारे प्रधान मंत्री पं० नेहरू ने कहा था कि "जब तक एक वर्ग दूसरे के हितों की उपेक्षा कर प्रगति करना चाहेगा, कोई वास्तविक उन्नति संभव न होगी।" यह संदेश अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

समय की पुकार है कि औद्योगिक शान्ति और उन्नति के लिए उद्योगपतियों और श्रमिक संघों में सद्भावना स्थापित हो, जो आज के युग की बहुत बड़ी आवश्यकता है। प्रगतिशील देशों के अनुभव के आधार पर भारत में भी स्वतः इस वैज्ञानिक आवश्यकता की पूर्त्ति का समुचित प्रयत्न निश्चय ही देश के लिये कल्याणकारी होगा।
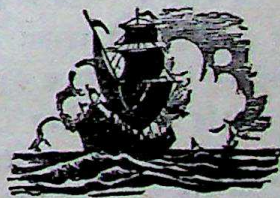
(पृष्ठ १२ से आगे)

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि देश की आर्थिक स्थिति में कुछ सुधार होने के बावजूद नियोजन की दशा बराबर चिन्ताजनक बनी हुई है। जुलाई, १९५४ के अन्त में देश की नियोजन संस्थाओं में लिखित बेकारों की संख्या ५,९०,००० थी, जो गत वर्ष के इसी माह की संख्या से ९०,००० और जून, १९५४ की संख्या से ४०,००० अधिक थी। भारत के वित्त मंत्री श्री सी० डी० देशमुख के अनुसार इस समय देश में बेकारों की संख्या लगभग २ करोड़ है।

नियोजन के साधन

बेकारी की समस्या को हल करने के लिए योजना आयोग ने राज्य सरकारों के समक्ष एक ११-सूत्रीय अल्प-कालीन कार्यक्रम रखा। इसका उद्देश्य शिक्षितों की बेकारी को कम करना था। इसके लिए योजना के अन्तर्गत १७५ करोड़ रु० का व्यय बढ़ा दिया गया। इसमें से १२·२४ करोड़ रुपये गाँवों के स्कूलों के लिये ८०,००० शिक्षकों की नियुक्ति तथा शहरों के सामाजिक शिक्षा केन्द्रों के लिए ८,००० कार्यकर्त्ताओं की नियुक्ति पर खर्च करने की व्यवस्था की गई। मार्च, १९५४ के अन्त तक २८,८८० शिक्षकों और १,८०८ सामाजिक शिक्षा कार्य-कर्त्ताओं की नियुक्ति की जा चुकी है। इसके अतिरिक्त छोटे और कुटीर उद्योगों के पुनर्निर्माण एवं विकास की ओर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। निजी क्षेत्र के उद्योगों की सहायता के लिए राज्य वित्तीय निगमों और औद्योगिक विकास निगमों की स्थापना भी की जा रही है।

नए और अधिक कामों की व्यवस्था के लिए बड़े पैमाने पर औद्योगिक विकास आवश्यक है। मैं तो इस बात पर ज़ोर दूँगा कि बड़े उद्योग केवल उत्पादक उद्योग तक ही सीमित रहने चाहिये। उपभोग की वस्तुओं को बनाने वाले उद्योग छोटे उद्योगों के लिये सुरक्षित कर दिये जाने चाहिये।

छोटे उद्योगों का विकास इस दृष्टि से होना चाहिये कि देश में बड़े पैमाने पर लोगों को काम मिले, क्योंकि यहाँ श्रमिक-शक्ति का बाहुल्य है। इसके लिये यह आवश्यक है कि उत्पादन के साधनों का छोटे उद्योगों के आधार पर विकेन्द्रीकरण कर दिया जाय।

बेकारी के प्रभाव को कम करने के लिये देश की बढ़ती हुई आबादी को भी रोकने की आवश्यकता है। आबादी में प्रत्येक वर्ष ४२ लाख की वृद्धि होती है, जिसमें से १८ लाख की वृद्धि श्रमिक-समाज में होती है। इस वृद्धि की गति को रोकने के लिए परिवार-संयोजन और जन्म-नियंत्रण (बर्थ कंट्रोल) के तरीके बड़े सहायक हो सकते हैं।

इस समस्या के हल के लिये व्यावसायिक प्रशिक्षण देने वाली शिक्षा, कृषि-शिक्षा आदि की बहुत आवश्यकता है। इसी प्रकार सड़कों एवं मकानों के निर्माण और बड़ी विद्युत्-योजनाओं को प्रारंभ करके भी आज की बेकारी की समस्या को बहुत-कुछ सुलझाया जा सकता है। सरकार ने इस दिशा में कुछ कदम भी उठाए हैं, जो प्रशंसनीय हैं। यदि नियोजन संस्थाएँ गाँवों में भी खोल दी जायँ, तो प्रशिक्षण के द्वारा नियोजन के नए अवसर उपलब्ध हो सकेंगे और इस प्रकार सही व्यक्ति को सही काम भी दिलाया जा सकेगा।

(पृष्ठ ५३ से आगे)

प्रकार किसी मिल या दफ्तर में काम करने वाले कर्म-चारियों के काम करने के समय पर हो सकता है। जितने समय तक मोटर चलती रहती है, उतना ही समय काम करने के समय में जोड़ा जाता है। यह कठिनाई इस व्यवसाय की प्रकृति के साथ आबद्ध है। स्थानीय संस्थाओं के अन्तर्गत कुछ काम इस प्रकार के हैं, जहाँ एक आदमी २४ घंटे ड्यूटी पर रहता है, जैसे चुँगी। इन जगहों पर काम करने के समय का नियमित रूप से पालन करने के लिए एक के स्थान पर ३ आदमियों की आवश्यकता पड़ेगी, जिसमें अधिक व्यय होगा। स्थानीय संस्थाओं के सामने इस अधिनियम का ठीक प्रकार से पालन करने में यह बड़ी कठिनाई है। उन्हें इस अधिनियम को अपनाने में समय लगेगा।

१९५४
और
उत्तर प्रदेश में श्रम हितकारी कार्य

श्रमिकों के कल्याण के लिये तथा उनके सामाजिक और नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने के अभिप्राय से उत्तर प्रदेशीय सरकार ने सत्तारूढ़ होते ही सन् १९३७ में श्रम हितकारी कार्यों का श्रीगणेश किया और दस हजार रुपये की छोटी-सी पूँजी से कानपुर की कुछ श्रमिक बस्तियों में चार श्रम हितकारी केन्द्र खोले। इन केन्द्रों में श्रमिकों और उनके परिवारों के लिए दवादारू, पुस्तकालय, वाचनालय, रेडियो तथा घर के भीतर और मैदान के खेलों की सुविधाओं की व्यवस्था की गई। श्रमिकों में इन केन्द्रों के अत्यन्त लोकप्रिय होने के कारण इनकी वृद्धि होती गई। चालू वित्तीय वर्ष में तीन नए केन्द्रों के खुलने के साथ अब केन्द्रों की कुल संख्या ४४ हो गई है और इन पर लगभग ८,१८,६०० रु० व्यय किया जा रहा है। ये समस्त केन्द्र राज्य के विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों में हैं। नए तीन केन्द्रों में से दो कानपुर की नयी श्रमिक-बस्तियों—हरिहरनाथ शास्त्री नगर और गोविन्दनगर—में खोले गए हैं और एक लखनऊ के नव-स्थापित राजकीय प्रेस, ऐशबाग में।

चार मौसमी और चालीस स्थायी केन्द्र

इन ४४ केन्द्रों में ४ शक्कर के कारखानों के मौसमी केन्द्र भी सम्मिलित हैं, जो प्रतिवर्ष नवम्बर से मार्च तक शक्कर के उत्पादन में लगे हुए श्रमिकों की सुविधा के लिए खोले जाते हैं। ये केन्द्र रामकोला (देवरिया), बलरामपुर (गोंडा), खतौली (मुज़फ्फरनगर) तथा राजा का सहसपुर (मुरादाबाद) में खोले गए हैं। इन केन्द्रों में केवल घर के भीतर और मैदान के खेलकूद, रेडियो, हारमोनियम, तबला इत्यादि मनोविनोद के साधन तथा वाचनालय की सुविधायें हैं।

शेष ४० केन्द्रों में दो केन्द्र देहरादून के चाय के बगीचों में चालू हैं। इनमें मनोविनोद के साधन, पुस्तकालय तथा वाचनालय और खेल-कूद के साधन उपलब्ध हैं। स्त्रियों और लड़कियों की सुविधा के लिए इनमें सिलाई, बुनाई, कढ़ाई का कार्य भी सिखाया जाता है।

केन्द्रों को उनके कार्यक्रमों के अनुसार 'ए', 'बी' तथा 'सी' श्रेणियों में विभक्त किया गया है।

राजयक्ष्मा चिकित्सालय

इन श्रम हितकारी केन्द्रों के अतिरिक्त कानपुर में एक राजकीय श्रम हितकारी राजयक्ष्मा चिकित्सालय खोला गया है। इसमें १००) रु० तक मासिक वेतन पाने वाले क्षय-रोग से पीड़ित श्रमिकों तथा उनके परिवार वालों के उपचार की निःशुल्क व्यवस्था है और १०० रुपये से ऊपर वेतन पाने वालों से 'एक्सरे' तथा 'स्क्रीनिंग' के लिये थोड़ा शुल्क लिया जाता है। इस चिकित्सालय में आधुनिक ढंग से क्षय-रोग-चिकित्सा के साधन उपलब्ध हैं और एक्सरे मशीन, स्क्रीनिंग, ए० पी०, पी० पी० आदि का उचित प्रबन्ध है। इस चिकित्सालय में दो योग्य अनुभवी चिकित्सक और आवश्यक कर्मचारी नियुक्त

हैं और तात्कालिक आवश्यकता के लिये दो पलंगों की व्यवस्था भी है।

इस राजयक्ष्मा चिकित्सालय द्वारा सन् १९५४ में किये गये उपचार, एक्सरे आदि का विवरण इस प्रकार है:–

१. एक्सरे—१,०४६
२. स्क्रीनिंग—६,२६४
३. रोगियों की संख्या—२,४१६
४. बीमा योजना द्वारा प्रेषित रोगी—१,५०७
५. नैदानिक जाँच—७,२५२

चिकित्सा-सहायता

प्रत्येक 'ए' और 'बी' श्रेणी के केन्द्र में क्रमशः स्थित प्रत्येक एलोपैथिक और होमियोपैथिक औषधालय में एक डाक्टर और दो कम्पाउन्डर नियुक्त हैं। 'सी' श्रेणी के केन्द्रों के प्रत्येक औषधालय में एक वैद्य या हकीम और एक कम्पाउन्डर नियुक्त है। इस प्रकार ३३ केन्द्रों में ११ एलोपैथिक, १६ होमियोपैथिक, ५ आयुर्वैदिक और १ यूनानी औषधालय है।

सन् १९५४ में कुल १४,२२,७२६ रोगी इन औषधालयों में आये। इनमें चीर-फाड़ एवं मरहम-पट्टी कराने वालों की संख्या क्रमशः ३,३०६ और ३,३१,८०५ रही। केन्द्रों के चिकित्सकों ने १७२८ बार रोगियों को उनके घरों पर जाकर देखा।

स्त्रियों तथा बच्चों का विभाग

यह विभाग श्रम हितकारी केन्द्रों का एक महत्वपूर्ण अंग है। प्रत्येक 'ए' और 'बी' श्रेणी के केन्द्र में दो मिडवाइफें और १ दाई नियुक्त है। ये मिडवाइफें प्रातः काल केन्द्र में आने वाली स्त्रियों की दवादारू की व्यवस्था करती हैं और केन्द्र में आये हुये बच्चों की तेल-मालिश करके स्नान कराती हैं। सायंकाल के समय ये केन्द्रों में बच्चों के खेल-कूद का आयोजन करती हैं और श्रमिक-बस्तियों में जाकर स्त्रियों को रहन-सहन, खान-पान इत्यादि के सम्बन्ध में उचित सलाह देती हैं। इसके साथ-साथ वे गर्भवती स्त्रियों तथा प्रसूतिकाओं को समय-समय पर उनके घरों पर जाकर सलाह देती हैं और यथासमय प्रसव-काल में उनकी निःशुल्क सेवा करती हैं। जच्चा-बच्चा की सेवा-कार्य के सम्बन्ध में आवश्यक सामग्री प्रत्येक मिडवाइफ़ को केन्द्र से आवश्यकतानुसार दी जाती है।

केन्द्रों की मिडवाइफ़ों ने इस वर्ष ३,११६ गर्भवती श्रमिक-स्त्रियों को देखा, २५९५ प्रसव कराए, २६०५ स्त्रियों की प्रसव के बाद परिचर्या की और ६६,०९७ स्त्रियों को उनके घरों पर जाकर सलाह दी। केन्द्रों में २,११,२१५ स्त्रियाँ सलाह लेने के लिये आईं।

इसके अतिरिक्त ये मिडवाइफें केन्द्र में आने वाले रोगियों, गर्भवती स्त्रियों और कमज़ोर बच्चों को दूध बाँटती हैं। प्रत्येक केन्द्र में लगभग १० सेर दूध बांटा जाता है। इस वर्ष उत्तर प्रदेश के 'मेडिकल एड एण्ड हेल्थ सर्विस' के डाइरेक्टर के सहयोग से बहुत-सा सुखाया हुआ दूध (मिल्क पाउडर) इन केन्द्रों में बांटने के लिए प्राप्त हुआ है और कुछ केन्द्रों में दुग्ध-चूर्ण से बनाया हुआ दूध भी बांटा जाता है! कानपुर के केन्द्रों में सहकारी पय परिषद्, कानपुर से अच्छा दूध बांटने के लिये मंगाया जाता है।

इस वर्ष १०६६ रोगियों, ११३४ प्रसूतिकाओं तथा गर्भवती स्त्रियों, ८४६६ बच्चों तथा ४६५३ दूसरे लोगों को ६६,५८५ सेर दूध बाँटा गया।

सिलाई, कढ़ाई और बुनाई विभाग

श्रमिक-स्त्रियों तथा लड़कियों को सिलाई, बुनाई तथा कढ़ाई सिखाने के लिए प्रत्येक 'ए' और 'बी' केन्द्र में सिलाई-शिक्षिकाएँ नियुक्त हैं और दो-दो सिलाई की मशीनों के अतिरिक्त इन विभागों के लिए सरकार की ओर से कपड़ा, डोरा, ऊन आदि सामान दिया जाता है। इन विभागों में सिलाई, बुनाई इत्यादि सीखने के अतिरिक्त स्त्रियों और लड़कियों को अपने घरेलू कपड़े काटने-सीने की भी सुविधा प्रदान की जाती है। जो स्त्रियाँ अपना काम नहीं करतीं और सरकारी सामान से कपड़े आदि तैयार करती हैं, उनको ये कपड़े लागत मूल्य पर बेच दिए जाते हैं और उनके न लेने पर वे कपड़े अन्य श्रमिकों को इसी प्रकार बेचे जाते हैं। सिलाई, बुनाई आदि करने के

←
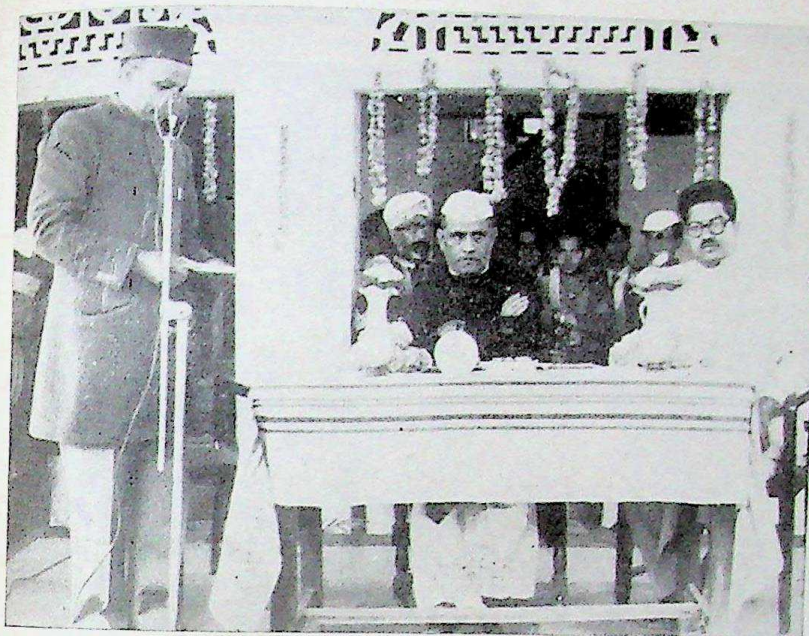
श्रम मंत्री आचार्य युगल किशोर द्वारा हाथरस केन्द्र का निरीक्षण : प्रति श्रम-कमिश्नर श्री उदयवीर सिंह द्वारा स्वागत एवं धन्यवाद।

फिरोज़ाबाद में वार्षिक पुरस्कार – वितरणोत्सव : (नीचे बाईं ओर) प्रादेशिक समझौता अधिकारी श्री कमला कान्त पांडेय वार्षिक रिपोर्ट पढ़ रहे हैं, तथा (नीचे दाहिनी ओर) श्रम कमिश्नर श्री ओंकार नाथ मिश्र द्वारा अध्यक्षीय भाषण।

※ श्रमिकों के द्वारा श्रमिकों का मनोरञ्जन ※

● आगरा प्रदेश के वार्षिकोत्सव में प्रदर्शित श्रमिक बालिकाओं का राधाकृष्ण नृत्य

● डिप्टी का पड़ाव केन्द्र के श्रमिकों द्वारा लखनऊ रेडियो से प्रसारित लोक-संगीत का एक कार्यक्रम
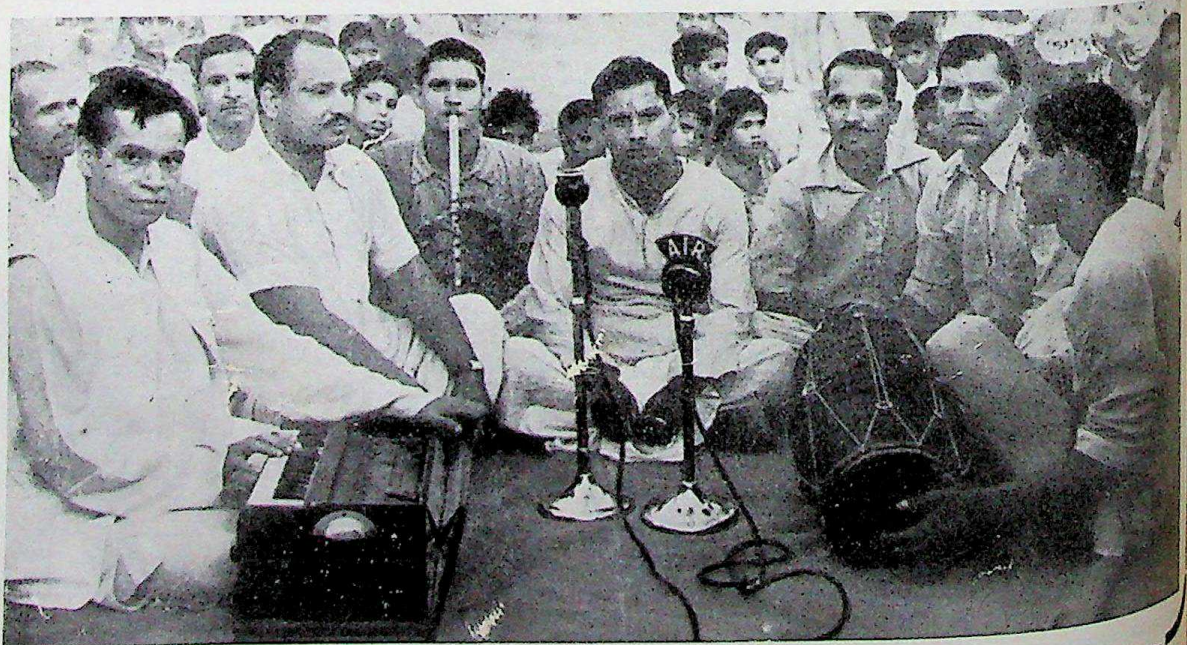
लिए स्त्रियों को पारिश्रमिक भी दिया जाता है, जो तैयार किए गए कपड़ों के मूल्य में जोड़ दिया जाता है। इस प्रकार इस व्यवस्था से श्रमिकों की पारिवारिक आय में कुछ वृद्धि हो जाती है।

इस वर्ष कुल सीखने वालियों की संख्या ५०९६ थी और औसत् उपस्थिति ३४२८ थी। आकस्मिक शिक्षार्थिनियों की संख्या १०,५५६ थी। कुल २५,६५६ कपड़े तैयार हुए, जिनका पारिश्रमिक अनुमानतः ६,३२२ रु० था।

मनोविनोद

श्रमिकों तथा उनकी स्त्रियों और बच्चों के मनोविनोद के लिए श्रम हितकारी केन्द्रों में नाना प्रकार की सुविधायें तथा साधन उपलब्ध हैं। उनमें चलचित्र-प्रदर्शन, रेडियो, गाना-बजाना, कीर्त्तन, लोकगीत और नृत्य के कार्यक्रम तथा नाटकाभिनय विशेष हैं।

श्रमिक-वर्ग में चल-चित्रों को देखने की विशेष अभिरूचि है। इस कार्य के लिए विभाग के पास एक ३५ मिलिमीटर की और एक १६ मिलीमीटर की मशीन है। इन मशीनों से श्रमिकों को मनोविनोद-सम्बन्धी सामाजिक, धार्मिक ऐतिहासिक तथा सूचना-सम्बन्धी शिक्षाप्रद चित्र समय-समय पर दिखाये जाते हैं।

केन्द्रों में श्रमिकों के मनोरंजन के लिए रेडियो एक बहुत महत्त्वपूर्ण साधन है। प्रत्येक केन्द्र में रेडियो लगे हैं। श्रमिक सुबह और शाम दोनों समय रेडियो द्वारा संगीत तथा समाचार सुनते हैं,। आल इंडिया रेडियो, लखनऊ द्वारा प्रतिदिन सायंकाल श्रमिकों के लिए एक विशेष कार्यक्रम और प्रति सोमवार को श्रम हितकारी केन्द्रों से सम्बन्धित समाचार प्रसारित किए जाते हैं। प्रत्येक मास के अन्तिम रविवार को कानपुर के श्रमिकों द्वारा आल इन्डिया रेडियो, लखनऊ से कार्यक्रम तथा समाचार प्रसारित किए जाते हैं। इस कार्यक्रम के मुख्य अंग नाटकाभिनय, संगीत, बतकही और प्रहसन हैं। इस वर्ष कुल ६२,६६८ श्रमिकों ने रेडियो कार्यक्रम सुने।

इन केन्द्रों में प्रतिमास संगीत के कई कार्यक्रम होते हैं। इन कार्यक्रमों को संचालित करने के लिए संगीतज्ञ नियुक्त हैं।

विभाग की ओर से अभिनय के लिए मंच तथा वस्त्राभूषणों आदि का पर्याप्त प्रबन्ध किया जाता है। इससे दो लाभ होते हैं। एक तो श्रमिकों को अपने खाली समय में अपनी अभिनय-कला को प्रस्फुटित करने का अवसर मिलता है और दूसरे श्रमिक वर्ग के सहस्त्रों स्त्री–पुरुषों तथा बच्चों का मनोविनोद होता है।

शारीरिक व्यायाम तथा कमरे के अन्दर और मैदान के खेल

श्रमिकों के शारीरिक विकास के लिए केन्द्रों में कमरे के अन्दर के खेलों में कैरम, पचीसी, शतरंज, लूडो, और साँप और सीढ़ी के खेल हैं। मैदान के खेलों में क्रिकेट, हाकी, फुटबाल, और वालीबाल तथा अखाड़ों और जिमनैस्टिक की व्यवस्था है। कानपुर के १५ केन्द्रों में इन खेलों को खिलाने के लिये एक खेल पर्यवेक्षक नियुक्त है। बाहर के केन्द्रों में यह कार्य अधीक्षकों तथा संगठकों द्वारा किया जाता है।

इस वर्ष भीतरी-बाहरी खेलों से १३,२१,७१७ मज़दूरों ने लाभ उठाया। व्यायामों में २, ४६, ४५७ श्रमिकों ने भाग लिया।

शिक्षा–सम्बन्धी सुविधायें

प्रत्येक केन्द्र में श्रमिकों के शैक्षिक और सांस्कृतिक विकास के लिए एक पुस्तकालय और वाचनालय है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक केन्द्र में पढ़ने वालों की उपस्थिति के अनुसार दैनिक, साप्ताहिक तथा मासिक पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं। अनपढ़ श्रमिकों को केन्द्रों के कर्मचारियों द्वारा समाचार-पत्र पढ़कर भी सुनाये जाते हैं।

इस वर्ष पुस्तकालयों की सदस्य-संख्या २७,०३७ रही और ३६,७४५ पुस्तकें पढ़ने को दी गई। २१,५००पुस्तकें केवल केन्द्रों में पढ़ने को दी गई। वाचनालयों से ६,००,५३७ मज़दूरों ने लाभ उठाया।

स्काउटिंग तथा गाइडिंग

कानपुर, फिरोज़ाबाद, आगरा, हाथरस, लखनऊ, इलाहाबाद, देहरादून और गाज़ियाबाद के केन्द्रों में श्रमिकों तथा उनके बच्चों को स्काउटिंग की शिक्षा देने का प्रबन्ध है। इस समय विभिन्न केन्द्रों में स्काउटों की कुल संख्या १,४२६ है। इस वर्ष कानपुर के केन्द्रों में श्रमिक लड़कियों को गाइडिंग की शिक्षा देना भी आरम्भ किया गया है। गाइडों तथा बुलबुलों की कुल संख्या २८० है। स्काउटों ने इस वर्ष विभिन्न मेलों में सेवा-कार्य किया तथा समय-समय पर 'रैली' के कार्यक्रमों में भाग लिया। श्रमिक स्काउटों का एक अपना बैंड भी है। समय-समय पर विभाग के कार्यक्रमों में तथा जलसों में स्काउट बैंड बजाते हैं। इसके अतिरिक्त यह बैंड इस वर्ष विवाह आदि में किराये पर भी दिया गया।

श्रम हितकारी सलाहारिणी समितियाँ

राज्य सरकार ने श्रम हितकारी कार्यों के संबंध में सरकार को समय-समय पर उचित राय देने के लिए राज्य श्रम हितकारी सलाहकारिणी समिति और १४ ज़िलों में श्रम हितकारी सलाहकारिणी समितियाँ बनाई हैं। इन श्रम हितकारी सलाहकारिणी समितियों में सरकार, श्रमिकों और उद्योगपतियों के प्रतिनिधि हैं। यह समितियाँ समय-समय पर श्रम हितकारी कार्यों की योजनाओं पर विचार करती हैं और श्रम हितकारी कार्यों के संचालन के लिए उचित सलाह देती रहती हैं।

श्रम हितकारी केन्द्रों की इमारतें

आजकल मकानों की कमी के कारण श्रम हितकारी केन्द्रों के लिए उपयुक्त स्थान कठिनाई से मिलते हैं। इस समय तक कानपुर में दर्शनपुरवा एवं रायपुरवा के केन्द्रों और हाथरस के 'ब' श्रेणी के केन्द्र तथा श्रम हितकारी राजयक्ष्मा चिकित्सालय कानपुर के लिए सरकारी भवन निर्मित किए जा चुके हैं। आर्थिक कठिनाई के कारण इस ओर इस वर्ष विशेष प्रगति नहीं हो सकी। दर्शनपुरवा केन्द्र और राजयक्ष्मा चिकित्सालय की इमारतों में इस वर्ष चहार-दिवारी और सड़कें इत्यादि बनाई जा रही हैं।

टी० बी० सैनेटोरियम

सरकार अब इस सुझाव पर विचार कर रही है कि कानपुर के बाहर किसी बस्ती में क्षय से पीड़ित श्रमिकों तथा उनके परिवार के व्यक्तियों के उपचार के लिए एक टी० बी० सैनेटोरियम खोला जाय।

मधुमक्खी पालने की योजना

कानपुर के दो श्रम हितकारी केन्द्रों में मधुमक्खी पालने की योजना प्रारम्भ की गई थी। यह योजना अब भी चालू है। इस योजना का मुख्य ध्येय यह है कि श्रमिक एवं उनके परिवार के लोग अवकाश के समय मधुमक्खी पालें, जो कम लागत में करने वाला एक अच्छा व्यवसाय है।

वार्षिक खेलकूद

प्रत्येक वर्ष कानपुर तथा कानपुर के बाहर के केन्द्रों में श्रम हितकारी खेलकूद-प्रतियोगितायें आयोजित की जाती हैं। कानपुर में ये प्रतियोगिताएँ सितम्बर से फरवरी तक चलती रहती हैं। इन प्रतियोगिताओं में कबड्डी, रस्साकशी, वालीबाल, फुटबाल, तीन मील की दौड़, १ मील की दौड़, ४४० गज़ की दौड़, तकियों की लड़ाई, लम्बी कुदान, ऊँची कुदान, झंडी दौड़, बोरे की दौड़ आदि खेल-कूद सम्मिलित हैं। ये प्रतियोगितायें वयस्क श्रमिकों तथा उनके बालकों के लिए आयोजित की जाती हैं। कानपुर में इस वर्ष विभिन्न श्रम हितकारी केन्द्रों और कारखानों की टीमों ने फुटबाल, हाकी, वालीबाल, रस्साकशी, दौड़ों और खेल कूदों में भाग लिया। कानपुर में इस वर्ष क्रिकेट के खेल की प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया। इसमें श्रमिकों और उद्योगपतियों ने भाग लिया। कानपुर के केन्द्रों के खेलकूदों की प्रतियोगिताओं में इस वर्ष लगभग ६५० श्रमिकों और उनके बच्चों ने भाग लिया। २३ जनवरी, १९५५ को कानपुर के श्रम हितकारी केन्द्रों के खेलकूदों की

प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार बांटने के लिये स्थानीय हरिहर नाथ शास्त्री नगर के केन्द्र में एक उत्सव किया गया।

बरेली में

बरेली प्रदेश के केन्द्रों के वार्षिक टूर्नामेन्ट में इस वर्ष बरेली और मुरादाबाद के श्रम हितकारी केन्द्रों की टीमों के अतिरिक्त उस प्रदेश के ११ कारखानों के श्रमिकों ने भी भाग लिया। दिनांक २६ दिसम्बर, १६५४ को बरेली के नई बस्ती केन्द्र में श्रमिकों के दंगल के अवसर पर उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग के मन्त्री श्री हर गोविन्द सिंह तथा सिंचाई विभाग के उपमन्त्री श्री राममूर्त्ति ने पधारने का कष्ट किया। दिनांक ३१ दिसम्बर, १६५४ को बरेली में रस्साकशी एवं वालीवाल के अन्तिम मैच हुए और उस अवसर पर भारत सरकार के वर्तमान गृह मंत्री पं० गोविन्द वल्लभ पन्त ने खेल के स्थान पर पधारने की कृपा की और श्रमिक खिलाड़ियों का उत्साह बढ़ाया। दिनांक ८ जनवरी, १६५५ को बरेली में वार्षिक खेलकूद की प्रतियोगिताएँ उत्तर प्रदेश के सिंचाई विभाग के उपमन्त्री श्री राममूर्त्ति के सभापतित्व में हुई। दिनांक १५ जनवरी, १६५५ को बरेली में खेलकूद प्रतियोगिताओं के वार्षिकोत्सव के अवसर पर उत्तर प्रदेश के श्रम मंत्री माननीय आचार्य जुगल किशोर जी ने प्रत्येक खेलकूद की विजयी टीमों और खिलाड़ियों को शील्ड और पारितोषिक वितरित किये।

* * ये राधा और कृष्ण !

कानपुर के शास्त्रीनगर केन्द्र में पुरस्कार-वितरणोत्सव पर श्रमिक-बालिकाओं द्वारा राधाकृष्ण लीला का प्रदर्शन

मेरठ में

इसी प्रकार मेरठ प्रदेश के उद्योगपतियों और श्रमिकों में खेलकूद की प्रतियोगिताओं के प्रति बड़ा उत्साह है। इस प्रकार का उत्सव पिछले वर्ष दौराला में हुआ था। इस वर्ष मेरठ प्रदेश के श्रम हितकारी टूर्नामेन्ट अभी समाप्त नहीं हुए हैं। वहाँ के टूर्नामेन्टों का वार्षिकोत्सव इस वर्ष मवाना (मुज़फ्फ़र नगर) में आयोजित किया गया है।

आगरे में तथा अन्यत्र

आगरा, फिरोज़ाबाद और हाथरस में सभी श्रमिकों के खेलकूदों की प्रतियोगितायें हो रही हैं। वहाँ के उद्योगपतियों और श्रमिकों में इन खेलकूदों की प्रतियोगिताओं के प्रति बड़ा उत्साह है। इसके अतिरिक्त लखनऊ, इलाहाबाद, मिर्ज़ापुर, सहारनपुर और आगरा में भी श्रमिकों के लिये प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया है।

(पृष्ठ ६ से आगे)

सांस्कृतिक विकास के लिये श्रम हितकारी केन्द्र राज्य में जगह-जगह और विशेषकर औद्योगिक केन्द्रों में खोल रखे हैं, जहाँ कमरे के भीतर और बाहर के खेल, अखाड़ों, पुस्तकालयों एवं वाचनालयों, रेडियो, स्काउटिंग, संगीत के लिये हारमोनियम और तबले, लोकनृत्य एवं लोक-गीत, नाटक, सावधिक चलचित्र-प्रदर्शन आदि की व्यवस्था रहती है। यह स्पष्ट है कि कुछ थोड़े-से केन्द्रों को लेकर इन महत्वपूर्ण कार्यों को सम्पन्न नहीं किया जा सकता। प्रायः यह देखा जाता है कि इन सब सुविधाओं के होते हुये भी श्रमिक उनसे लाभ नहीं उठाते और प्रायः उदासीन से रहते हैं। उनमें स्फूर्ति और उत्साह उत्पन्न करने के लिये यह आवश्यक है कि सामाजिक कार्यकर्त्ता प्रत्येक अहाते या मज़दूर-बस्ती में जायँ और उन्हें अपने व्यक्तित्व के विकास के लिये प्रोत्साहित करें।

यह बताने की आवश्यकता नहीं कि देश में सच्ची लगन वाले कार्यकर्त्ताओं की कमी है। सभी दलों के मज़दूर कार्यकर्त्ताओं के लिये यह क्षेत्र खुला पड़ा है, परन्तु वे अपना समय दलगत स्वार्थों की पूर्त्ति में और मुक़दमे लड़ने में ही बिता देते हैं। भारत के पड़ोसी नए चीन में श्रमिक संघ इस दिशा में अच्छा काम कर रहे हैं और श्रमिक-कल्याण के कार्य में वे वहाँ की सरकार का पूरा हाथ बँटाते हैं। हमारे श्रमिक संघ भी व्यक्तिगत स्वार्थ एवं संघर्ष से ऊपर उठ कर अपने सदस्यों के कल्याण-कार्य में लग कर एक दृष्टांत प्रस्तुत कर सकते हैं। अहमदाबाद का टेक्सटाइल लेबर एसोसिएशन गांधी जी के मार्ग का अनुसरण कर समाज-सेवा के कार्य में शान्त भाव से लगे रह कर अनुकरणीय कार्य कर रहा है। परन्तु किसी एक स्थान में ऐसा होने से सारे देश के श्रमिकों की आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो सकतीं। प्रत्येक राज्य में आदर्श श्रमिक संघ स्थापित करने होंगे, जो सरकार द्वारा किए जाने वाले कार्यों में योगदान तो देंगे ही, अपनी ओर से भी इस काम को आगे बढ़ावेंगे, तभी 'कल्याण-कारी राज्य' का स्वप्न पूरा किया जा सकता है। वह दिन दूर नहीं, जब इस राज्य में प्रत्येक श्रमिक-परिवार हृष्ट-पुष्ट, सुसंस्कृत, शिक्षित और खुशहाल होगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

ब्रिटेन में औद्योगिक सम्बन्धों में संयुक्त वार्त्ता का स्थान

(पृष्ठ ५२ से आगे)

संयुक्त वार्त्ता के महत्व को उन्होंने समझा है और उससे वे लाभ भी उठा रहे हैं। ट्रेड यूनियन कांग्रेस एवं ब्रिटिश कान्फेडरेशन आफ इम्प्लायर्स में निकट सहयोग होने के कारण औद्योगिक सम्बन्धों और सामूहिक सौदा-वार्त्ता के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है।

उक्त दोनों संघों का अन्तिम लक्ष्य एक है और वह है—दोनों पक्षों में सामन्जस्य की स्थापना और संयुक्त वार्त्ता द्वारा दोनों पक्षों में सद्भाव की वृद्धि। इसी लक्ष्य को दृष्टि में रख कर जब कभी कोई विशेष कानून बनाना आवश्यक होता है, तो दोनों के प्रस्ताव श्रम मन्त्रालय के पास इस आश्वासन के साथ जाते हैं कि दोनों पक्ष उसका पालन करेंगे। दोनों पक्षों को और निकट लाने के लिये संयुक्त परामर्शदात्री परिषद् का निर्माण किया गया। यह परिषद् उभयपक्षों के हित के विषयों पर विचार करने के लिये नियमित रूप से बैठकें करती है। संयुक्त परामर्शदात्री परिषदों का महत्व इसी बात से आँका जा सकता है कि वे उनसे सम्बन्धित समस्याओं पर श्रम मन्त्री को परामर्श दे सकती हैं।

(पृष्ठ १६ से आगे)

देते, जिसके फलस्वरूप यूनियन के हिसाब में गड़बड़ी होती है।

संघ अपनी जिम्मेदारी समझें !

श्रमिक संघों के निरीक्षकों द्वारा ऊपर लिखी हुई त्रुटियों के बतलाने पर संघों द्वारा उनमें सुधार किया जाता है, फिर भी यह उचित है कि किसी भी सार्वजनिक संस्था से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्ति हिसाब-किताब के मामले में अपनी ज़िम्मेदारियों की ओर विशेष ध्यान देवें। आज के युग में श्रमिक-कल्याण की व्यवस्थाओं में श्रमिक संघों की बड़ी जिम्मेदारी है। अतएव श्रमिक संघों के संचालन और उनके हिसाब-किताब के रखने में जितना अधिक सुधार किया जायगा, उतना ही उनकी आर्थिक दशा सुदृढ़ होगी, और उसके फलस्वरूप श्रमिकों का, समाज का तथा देश का कल्याण होगा।

(चित्र के मध्य में) श्रम मंत्री आचार्य युगल किशोर द्वारा अध्यक्षीय भाषण। (दाहिनी ओर) श्रम मंत्री की धर्मपत्नी श्रीमती शांति देवी अग्रवाल, एम० एल० सी० द्वारा स्वस्थ एवं स्वच्छ श्रमिक-शिशुओं को पुरस्कार-वितरण।

श्रम मंत्री आचार्य युगल किशोर के सभापतित्व में आयोजित शिशु-प्रदर्शिनी
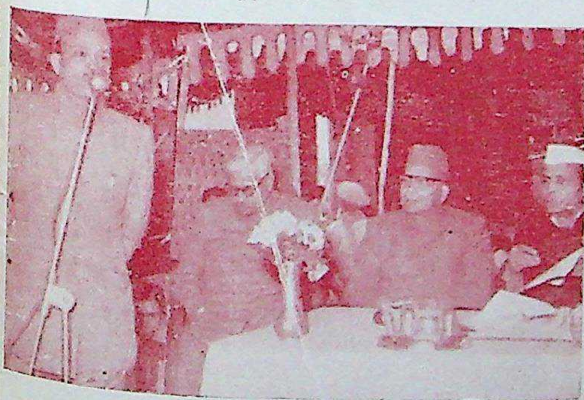
प्रति श्रम कमिश्नर श्री उदय वीर सिंह श्रम मंत्री एवं श्रीमती अग्रवाल को धन्यवाद दे रहे हैं। उनके दाहिनी ओर बैठे हैं—श्रम कमिश्नर श्री ओंकार नाथ मिश्र, श्रम सचिव श्री कुलदीप नारायण सिंह तथा श्रम मंत्री आचार्य युगल किशोर।

श्रम कमिश्नर, उत्तर प्रदेश, कानपुर द्वारा सम्पादित तथा प्रकाशित।
महाराजकृष्ण मिर्ज़ा द्वारा अजन्ता प्रेस, स्वरूप नगर, कानपुर में मुद्रित।

रजिस्टर्ड नं० ए-५६८

पं० जवाहरलाल नेहरू एवं पं० गोविन्दवल्लभ पंत कानपुर की नई श्रमिक-बस्तियों में

नगर-प्रशासक श्री भैरव दत्त सनवाल नेहरू जी को नव-निर्मित श्रमिक-बस्तियों के नक्शे दिखला रहे हैं, जिन्हें पंत जी दाहिनी ओर खड़े देख रहे हैं।

★ ★ ★

हरिहर नाथ शास्त्री नगर की श्रमिक-बस्ती में पंत जी श्रमायुक्त श्री ओंकारनाथ मिश्र, ग्राम एवं नगर संयोजक श्री केदार नाथ मिश्र तथा श्रम एवं जन-निर्माण विभागों के अन्य अधिकारियों के साथ।

तार का पता :
LABORCOM

टेलीफोन नं०
३ २ ६ ६

श्रमजीवी

वार्षिकोत्सवांक
१९५६
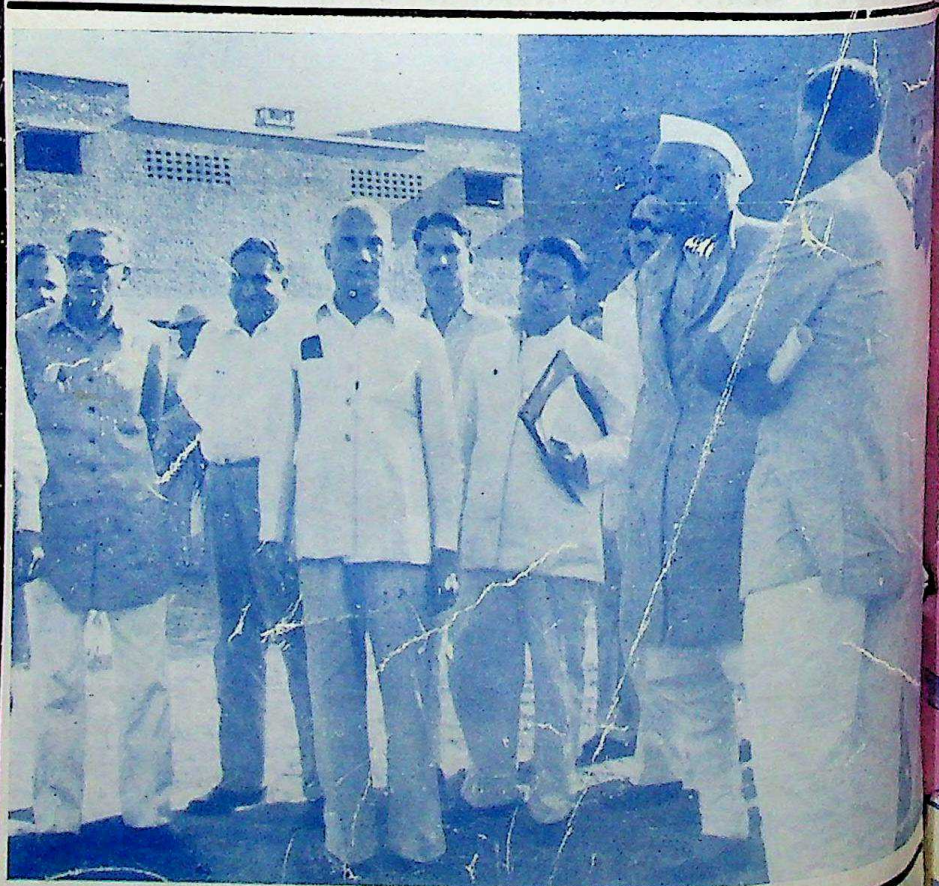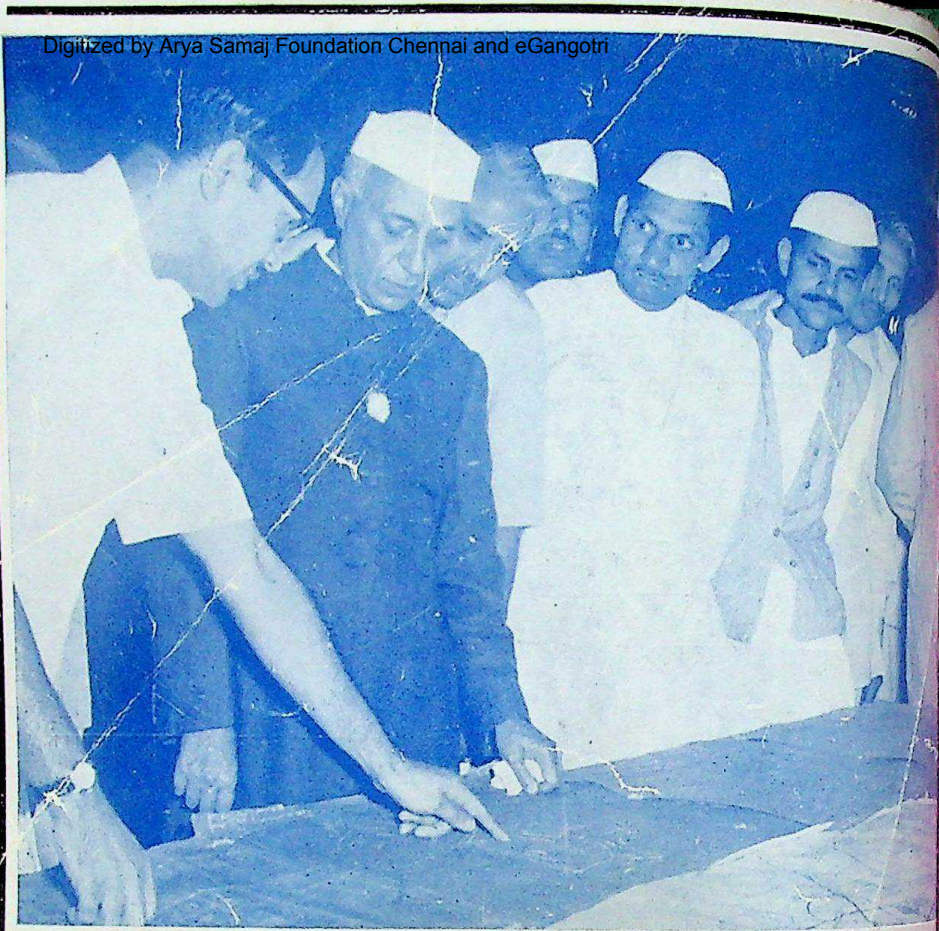
"मुझे यह जान कर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि उत्तर प्रदेशीय सरकार हिन्दी साप्ताहिक पत्र 'श्रमजीवी' का प्रकाशन कर कामगर-बन्धुओं में नव जागरण की प्रेरणा प्रदान करने के साथ ही उन तक श्रम-सम्बन्धी कार्यों, आँकड़ों तथा केन्द्रीय सरकार के निश्चय पहुँचा कर स्तुत्य कार्य कर रही है। मैंने पिछले वर्ष का 'श्रमजीवी' का विशेष अंक भी देखा। इसे देख कर मेरी यह धारणा है कि वास्तव में यह अत्यन्त हितकारक है।
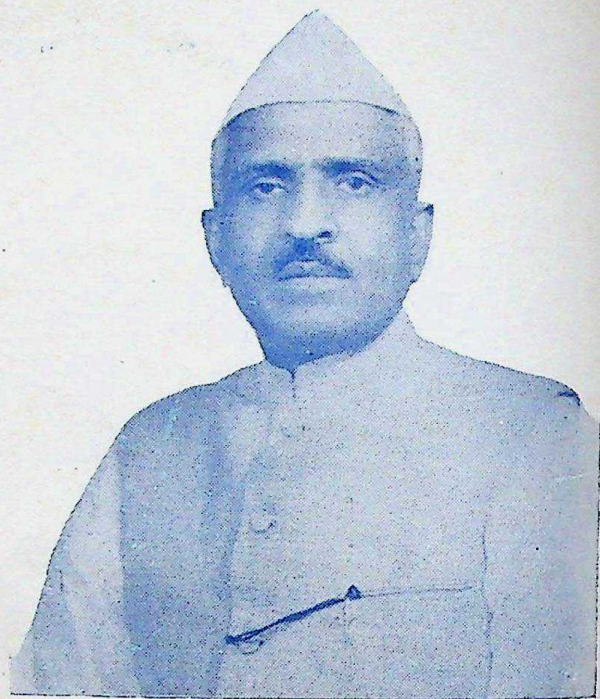
मुझे पूर्ण आशा है कि श्रमजीवी-समाज में यह पत्र नव जागरण का सन्देश पहुँचायेगा तथा उनमें भ्रातृत्व, देश-हित व उन्नति की भावना भरेगा।"

खंडूभाई क. देसाई
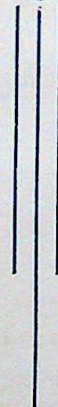
भारत के श्रम मंत्री
श्री खंडूभाई क० देसाई का शुभाशीर्वाद

विषय-सूची

कविताएँ

लेख

कहानियाँ, रेखाचित्र एवं एकांकी

उत्तर प्रदेशीय श्रम विभाग का
साप्ताहिक मुखपत्र

वर्ष : ८ १९ फरवरी, वार्षिक मूल्य ३)

संख्या : २४ १ ९ ५ ६ इस अंक का ।=)

'श्रमजीवी' की नियमावली

ग्राहकों एवं एजेन्टों से

१. 'श्रमजीवी' प्रत्येक सप्ताह बुधवार को प्रकाशित होता है।

२. 'श्रमजीवी' का वार्षिक मूल्य ३) रु० और एक प्रति का एक आना है।

३. वर्ष में एक सचित्र विशेषांक भी निकलता है, जो नियमित ग्राहकों को निःशुल्क दिया जाता है।

४. 'श्रमजीवी' का शुल्क मनीआर्डर द्वारा या नक़द भेजा जाना चाहिए। वी० पी० द्वारा अंक भेजने का नियम नहीं है।

५. प्रत्येक औद्योगिक नगर में एजेन्सी लेने के नियमों की जानकारी के लिए संपादक, 'श्रमजीवी' पो० बा० २२०, कानपुर से जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

लेखकों से

१. 'श्रमजीवी' में जो लेख, कहानियाँ, एकांकी एवं कविताएँ प्रकाशित होती हैं, वे श्रम से सम्बन्धित, विवाद-हीन एवं अधिकृत आँकड़ों एवं तथ्यों पर आधारित होनी चाहिए।

२. स्वीकृत रचनाओं पर उचित पारिश्रमिक देने की व्यवस्था है।

३. सभी रचनाएँ काग़ज़ के एक ओर, पार्श्व-भाग छोड़कर, स्याही से लिखी जानी चाहिए।

४. सम्पादक को रचना में संशोधन अथवा परिवर्तन करने का पूर्ण अधिकार रहेगा।

५. अस्वीकृत रचनाएँ साथ में उपयुक्त डाक-व्यय आने पर ही लौटाई जा सकेंगी। मार्ग में खोने आदि का दायित्व 'श्रमजीवी' कार्यालय पर न होगा।

६. सभी रचनाएँ सम्पादक, 'श्रमजीवी', पो० बा० २२०, कानपुर के पते पर भेजी जानी चाहिये।

★ इस विशेषांक के लेखों एवं अन्य रचनाओं में प्रकट किए गए विचार लेखक-लेखिकाओं के अपने निजी विचार हैं, जो किसी भी प्रकार सरकारी नीति के द्योतक नहीं हैं।

❀ मुखपृष्ठ का चित्र ❀

अन्न बोते हुये खेतिहर मज़दूर और उसकी पत्नी।

सभी औद्योगिक नगरों में 'श्रमजीवी' की बिक्री के लिए एजेन्ट चाहिए।

श्रमायुक्त, उत्तर प्रदेश, कानपुर द्वारा सम्पादित तथा प्रकाशित।
महाराजकृष्ण मिर्ज़ा द्वारा अजन्ता प्रेस, स्वरूपनगर, कानपुर में मुद्रित।

पथ पर बढ़ रहे चरण !

श्रम - सीकर से सिंचित,
धूसर रज - कण - मण्डित,
फूलों से अपमानित,
शूलों से अभिनन्दित,
अंकित कर चिन्ह विरल
गिरि-पथ चढ़ रहे चरण !
पथ पर बढ़ रहे चरण !

दिशि-दिशि बिखरी उँगली,
बुझी नख - नखत - अवली,
एक दिशा में पगली
कोई गति बाँध चली,
निज अनगढ़ साँचे में
युग-छवि गढ़ रहे चरण !
पथ पर बढ़ रहे चरण !

नील दिशाएँ उभरीं,
स्पन्दित आनन्द—भरीं,
लहराई ध्वनि—लहरी
गिरि-घाटी में गहरी,
युग - नयनों से युग की
गाथा पढ़ रहे चरण !
पथ पर बढ़ रहे चरण !

श्लथ, विजड़ित रहे हार,
सम्मुख शीतल बयार,
सुखद छाँह, सुमन-धार
पर न सके सब बिसार,
मन्दाकिनि-तट गिरि-संकट
कढ़ रहे चरण !
पथ पर बढ़ रहे चरण !

भारत पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा अपना विकास कर रहा है और यह विकास संपत्ति के उत्पादन और वृद्धि पर ही निर्भर है। यही कारण है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में श्रम-समस्या को बड़ा महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। प्रस्तावित द्वितीय पंचवर्षीय योजना में भी श्रमिकों के उत्थान और कल्याण के लिये अनेक कार्यक्रम बनाए गए हैं। इस दृष्टि से विद्वान लेखक का यह जानकारी-पूर्ण लेख पठनीय है।

आज यदि हम पाँच वर्ष पूर्व के भारत की आर्थिक दशा पर दृष्टि डालें, तो हम पायेंगे कि इस छोटी-सी अवधि में एक युगान्तर उपस्थित हो गया है। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति और सन् १९४७ में देश के विभाजन के बाद उत्पन्न अनेक समस्याओं के कारण देश के आर्थिक पुनर्निर्माण की ओर पूरा ध्यान नहीं दिया जा सका, जिसके फलस्वरूप अन्न के अभाव और औद्योगिक उत्पादन में उत्तरोत्तर ह्रास का विकट संकट सामने आ खड़ा हुआ। दूसरी ओर बढ़ती हुई जनशक्ति का सदुपयोग न हो पाने के कारण बेकारी बढ़ी और जनता का और विशेषकर श्रमिक-वर्ग का जीवन-स्तर गिरता चला गया। देश के जननायकों और अर्थ-विदों का ध्यान देश की इस आर्थिक दुरवस्था की ओर आकृष्ट हुआ और मार्च, १९५० में भारत सरकार ने 'योजना आयोग' की नियुक्ति कर दी। इस आयोग को देश के साधनों का सर्वाधिक प्रभावशाली और संतुलित उपयोग करने के लिये एक योजना बनाने का भार सौंपा गया। योजना आयोग ने जुलाई, १९५१ में योजना की रूप-रेखा का एक मसविदा प्रस्तुत कर दिया।

प्रथम पंचवर्षीय योजना

अन्तिम रूप से जो योजना स्वीकृत हुई और जो प्रथम पंचवर्षीय योजना के नाम से

विख्यात हुई, उसकी अवधि अप्रैल, १९५१ से मार्च, १९५६ तक निश्चित की गई। योजना में अनेक ऐसी विकास योजनाएँ भी सम्मिलित कर ली गईं, जिनको योजना-काल से पूर्व ही प्रारम्भ किया जा चुका था, यथा दामोदर घाटी निगम और सिन्दरी का खाद का कारखाना, आदि। इस योजना पर २०६९ करोड़ रुपये व्यय करने का निश्चय किया गया, जिसमें से श्रम-कल्याण के लिये ६.७४ करोड़ और श्रमिकों के लिये गृह-निर्माण कार्य के लिये ४९ करोड़ रुपये निर्धारित किये गये।

प्रथम योजना और श्रमिक

योजना आयोग ने देश के सम्मुख प्रथम पंचवर्षीय योजना का जो प्रतिवेदन उपस्थित किया, उसमें एक संपूर्ण अध्याय [३४ वाँ अध्याय] श्रम–समस्या पर विचार करते हुये दिया गया है। इसमें श्रम-समस्या के पाँच प्रमुख अंगों पर विचार किया गया था :—

(१) औद्योगिक संबंध, (२) मज़दूरी तथा सामाजिक सुरक्षा, (३) काम करने की दशाएँ, (४) नियोजन और प्रशिक्षण, तथा (५) उत्पादन।

औद्योगिक संबंध के प्रश्न पर विचार करते हुए योजना में कहा गया है कि 'नियोजक और मज़दूर का संबंध वास्तव में समाज की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये साझीदारी का संबंध है।' अधिक उत्पादन, वस्तु-गुण (Quality) में सुधार, लागत में कमी आदि के लिये इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि 'प्रत्येक स्तर पर' मालिक और मज़दूर में 'निकटतम सहयोग' हो। इसके अतिरिक्त व्यावसायिक संघों की मान्यता, आपसी विवादों को निष्पक्ष जाँच–पड़ताल और पंचायत के द्वारा तय करने और कोई निपटारा न होने पर ही अभिनिर्णय का सहारा लेने, महत्वपूर्ण उद्योगों के लिए पृथक–पृथक मज़दूरी मण्डलों (Wage Boards) की स्थापना, सरकारी उद्योग के संचालक–मण्डल में श्रम-समस्याओं के जानकार लोगों को स्थान देने आदि की महत्वपूर्ण सिफारिशें की गई हैं।

मज़दूरी और सामाजिक सुरक्षा के सम्बन्ध में नीति निर्धारित करते हुए योजना में कहा गया है कि मज़–दूरी केवल असमानता को दूर करने, कम मज़दूरी की दर को समानता के स्तर पर लाने, उत्पादन-क्षमता बढ़ाने अथवा युद्ध-पूर्व की वास्तविक मज़दूरी का स्तर लाने के लिए ही बढ़ाई जानी चाहिए। मज़दूरी की समस्याओं को हल करने, आँकड़ों के संकलन और मज़–दूरी के समन्वय के लिये केन्द्र और राज्यों में स्थायी मज़दूरी–मण्डलों की स्थापना की जानी चाहिए। श्रमिक की सामाजिक सुरक्षा के लिये योजना में कर्म–चारी राज्य बीमा कानून और प्राविडेण्ट फण्ड कानून के उचित रीति से प्रशासन और विस्तार पर ज़ोर दिया गया है।

जहाँ तक काम की दशाओं का सम्बन्ध है, इस प्रश्न पर योजना में कारखाना कानून के कुशल प्रशासन और उसके सामाजिक पहलू पर ज़ोर दिया गया है और यह भी सुझाव दिया गया है कि औद्योगिक स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण से सम्बन्धित एक अजायबघर की स्थापना की जाय।

योजना की पूर्त्ति के लिये देश की जनशक्ति के उचित उपयोग तथा उसकी भर्ती और प्रशिक्षण के लिये नियोजन संस्था को सुदृढ़ बनाने की सिफारिश की गई है।

श्रमिकों की उत्पादन-शक्ति बढ़ाने के लिये काम के वर्तमान तरीकों और संगठन, काम के वर्गीकरण, वेतन-क्रमों आदि के अध्ययन का सुझाव दिया गया है।

श्रमिकों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में उन्नयन

इस प्रकार श्रमिकों के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाने, उनके सर्वांगीण विकास तथा समाज में उन्हें सम्मान-पूर्ण स्थान दिलाने की दृष्टि से प्रथम पंचवर्षीय योजना में जो व्यवस्थाएँ की गई हैं, उनसे श्रमिक के संबंध में युगों-पुरानी धारणाएँ बदल रही हैं। श्रमिक अब 'क्रय-विक्रय की वस्तु' न रह कर औद्योगिक उत्पादन में बराबर का साझीदार–एक प्राणवान मानव–समझा जाने लगा है। देश के कुछ प्रगतिशील कारखानेदार इसे किताबी सिद्धान्त तक सीमित न रख कर व्यावहारिक स्थान दे चुके हैं। अहमदाबाद के दो सूती कारखाने और जमशेदपुर की टाटा आइरन एण्ड स्टील कम्पनी इस दिशा में अग्रणी का काम कर रही है।

उत्तर प्रदेश की श्रम-सम्बन्धी पंचवर्षीय योजना

उत्तर प्रदेश में औद्योगिक सम्बन्धों का विकास यद्यपि इस हद तक नहीं हुआ कि प्रबंधक स्वयं अपने कारखानों के संचालन में मज़दूरों का सहयोग प्राप्त करने के लिये उनका आवाहन करें और न स्वयं श्रमिक ही इस भार को वहन करने के लिये अपने को समर्थ बना सके हैं, तथापि यहाँ आपसी मतभेदों को सर्वप्रथम आपसी समझौतों के द्वारा ही हल करने का प्रयत्न किया जाता है। आपसी समझौता न हो सकने पर विवाद को अभिनिर्णय के लिये अभिनिर्णायकों अथवा राज्य औद्योगिक न्यायाधिकरण, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद के पास भेज दिया जाता है। उनके निर्णयों से सन्तुष्ट न होने वाले पक्ष भारत के श्रम अपीली न्यायाधिकरण के समक्ष अपील दाखिल कर सकते हैं।

राज्य के चीनी उद्योग, वस्त्र उद्योग और बिजली के कारखानों में सरकार द्वारा न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित की जा चुकी है। राज्य के चीनी उद्योग में मज़दूरी और पद के सरूपीकरण [Standardization] के प्रश्न पर भी कई बार विचार-विनिमय किया गया, परन्तु कई कारणों से इस सम्बन्ध में कोई प्रगति न हो सकी। न्यूनतम मज़दूरी कानून, १९४८ के अन्तर्गत कृषि तथा छोटे और असंगठित उद्योगों में भी मज़दूरी निर्धारित की जा चुकी है।

मज़दूरों की सामाजिक सुरक्षा के लिए इस राज्य में उत्तर प्रदेश• मातृका हितलाभ कानून, मज़दूर हरजाना कानून, कर्मचारी राज्य बीमा कानून तथा प्राविडेण्ट फंड कानून का प्रशासन सुचारु रीति से होता है। राज्य बीमा कानून को कानपुर के अलावा जनवरी, १९५६ के मध्य में लखनऊ, आगरा और सहारनपुर में भी लागू किया जा चुका है। इसी प्रकार उक्त वर्ष में प्राविडेण्ट फंड योजना के अन्तर्गत १०१ कारखाने लाये जा चुके हैं, जबकि सन् १९५३ में यह केवल ८१ कारखानों पर ही लागू थी।

कारखानों में श्रमिकों के काम की दशाओं के सुधार के लिये यह प्रयत्न किया जाता है कि कारखाना कानून, मज़दूरी-वितरण कानून और बाल नियोजन कानून का उचित रीति से पालन किया जाय। इसी प्रकार दूकान कर्मचारियों के काम की दशाओं के नियमन के लिए राज्य में उत्तर प्रदेश दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून, १९४७ का भी प्रशासन किया जाता है। बाग मज़दूरों के काम की दशा सुधारने के लिये प्रथम योजना–काल में यद्यपि कुछ नहीं किया जा सका, परन्तु द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में इसके प्रशासन के लिये उचित व्यवस्था किये जाने की सम्भावना है।

भारत की विशाल जनशक्ति के उपयोग के लिए उत्तर प्रदेश में भी भारत सरकार द्वारा संचालित नियोजन संस्थायें एवं प्रशिक्षण केन्द्र बड़ी उपयोगी सेवा कर रहे हैं। यह आशा की जाती है कि आगामी वित्तीय वर्ष से उनका प्रबन्ध राज्य सरकार के हाथ में आ जाने पर उनका कार्य और भी तीव्र गति से बढ़ेगा।

श्रमिकों के लिये नये मकान

प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में भारत सरकार की सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास योजना तथा राज्य के चीनी मज़दूरों के लिये चीनी और चालक मद्यसार उद्योग श्रमिक-कल्याण एवं विकास निधि कानून के अन्तर्गत संचालित गृह-निर्माण योजना ने बड़ी प्रगति की। प्रथम योजना के अन्तर्गत अब तक प्रथम चरण में कानपुर में २२१६ और लखनऊ में ५६० मकान बन कर तैयार हो चुके हैं और श्रमिकों को रहने के लिये दिये जा चुके हैं। द्वितीय चरण में कानपुर में बनने वाले ३७५० मकान भी बन चुके हैं, जिनमें से २१४६ श्रमिकों को रहने के लिये दिये जा चुके हैं। तृतीय चरण में कानपुर, आगरा, फिरोज़ाबाद, इलाहाबाद, मिर्ज़ापुर, सहारनपुर और अलीगढ़ में मकान बनाये जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त चतुर्थ चरण के अन्तर्गत कानपुर और रामपुर में मकानों का बनाया जाना आरम्भ हो चुका है। ये मकान अधिकतर हातों की जगह या उनके निकट बनाये जा रहे हैं।

द्वितीय योजना के अन्तर्गत ३१ दिसम्बर, ५५ तक राज्य के ५० चीनी के कारखानों द्वारा ११०६ मकान

(शेष पृष्ठ ५७ पर)

समाज के समाजवादी ढाँचे में मज़दूर

श्री ओंकार नाथ मिश्र

देश समाज के समाजवादी ढाँचे को खड़ा करने के लिये कृतसंकल्प हो चुका है। इस समाजवादी ढाँचे में मज़दूर का अपना एक विशिष्ट स्थान होगा, यद्यपि उसके अधिकारों एवं सुविधाओं की वृद्धि के साथ उसके कर्त्तव्य और दायित्व भी बढ़ेंगे। विद्वान एवं अनुभवी लेखक ने ग़लतियों एवं दुर्बलताओं से बचे रहने के लिए उसे जो चेतावनी दी है, वह सामयिक होने के साथ अनुकरणीय भी है।

मज़दूर आज के समाज का एक प्रमुख अंग है। एक समय था, जब समाज में उसका स्थान नगण्य था और उसके काम और रहन-सहन की दशाएँ बड़ी असंतोषजनक और शोचनीय थीं। औद्योगीकरण के साथ समाज में उसका महत्व बढ़ा। उसकी आर्थिक एवं सामाजिक सुरक्षा की ओर समाज का, उसके बृहत् रूप राष्ट्र का ध्यान आकृष्ट हुआ और अनेक प्रगतिशील कानून बना कर उसके हितों की रक्षा का प्रयत्न प्रारंभ हुआ। समाज की प्रगतिशीलता के साथ श्रमिक का महत्व बढ़ता चला गया। अब हम समाज के समाजवादी ढाँचे के ध्येय को सामने रख कर समाज की उस नई व्यवस्था की ओर बढ़ रहे हैं, जिसका स्वप्न राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी अपने जीवन-काल में देखा करते थे। समाजवादी ढाँचे का निर्माण श्रमिक-वर्ग के खुले सहयोग के बिना संभव नहीं है।

यह कोई नया नारा नहीं है !

समाजवादी ढाँचे की समाज-रचना कोई नया नारा नहीं है। अब से काफी अरसे पहले सर्वप्रथम कांग्रेस ने अपने कराची अधिवेशन में एक प्रस्ताव स्वीकृत कर एक 'समाजवादी कार्यक्रम' देश के सम्मुख रखा था। परन्तु देश के स्वतंत्र न होने से उस दिशा में कोई व्यावहारिक क़दम उठा सकना उस समय संभव न था। देश के स्वतंत्र होने पर कांग्रेस का ध्यान पुनः अपने 'समाजवादी कार्यक्रम' की ओर आकृष्ट हुआ। प्रधान मंत्री पं० नेहरू ने राष्ट्रीय विकास परिषद् में ९ नवंबर, १९५४ को यह स्पष्ट कर दिया कि 'मेरे मन में (समाज

की) जो तस्वीर है, वह निश्चित रूप से और पूर्णतः समाज की समाजवादी तस्वीर है।' इसको और स्पष्ट बनाते हुए उन्होंने कहा था कि 'उत्पादन के साधनों पर समाज का कब्ज़ा और नियंत्रण समूचे समाज के हित के लिये होना चाहिये। वैयक्तिक उद्योग के लिये काफी मैदान पड़ा है, परन्तु शर्त यह है कि मुख्य ध्येय स्पष्ट रखा जाय।' अवाड़ी कांग्रेस ने बाद में इसी 'समाज की समाजवादी तस्वीर' को 'समाज के समाजवादी ढाँचे' के रूप में स्वीकार कर लिया। भारतीय संसद् और देश की पंचवर्षीय योजनाओं के निर्माता भी अब इसी समाजवादी व्यवस्था की स्थापना को अपना आदर्श घोषित कर चुके हैं।

समाजवादी ढाँचे की रूप-रेखा

समाजवादी ढाँचे से संबंधित अवाड़ी कांग्रेस के प्रस्ताव में कहा गया था कि 'संयोजन (Planning) इस दृष्टि से होना चाहिए कि समाज का समाजवदी ढाँचा स्थापित हो सके, जिसमें उत्पादन के मुख्य साधन समाज के अधिकार या नियंत्रण में रहें, उत्पादन उत्तरोत्तर बढ़े और राष्ट्रीय संपत्ति का समान वितरण हो।' उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण और संपत्ति के समान वितरण का यह महान कार्य पं० नेहरू के शब्दों में 'लोकतंत्रात्मक एवं शांतिपूर्ण' तरीके से संपन्न किया जायगा। भारत के शिक्षा मंत्री मौलाना आज़ाद ने १६ जनवरी, १६५५ को कांग्रेस की विषय-निर्धारिणी समिति की बैठक में प्रस्ताव के अभिप्राय को और स्पष्ट करते हुए कहा था कि 'उत्पादन पर समाज के अधिकार या नियंत्रण के यह मानी नहीं कि पुराने वैयक्तिक उद्योगों का, बहुत बड़ी धनराशि क्षतिपूर्त्ति के रूप में देकर, राष्ट्रीयकरण कर दिया जाय। ज़रूरत यह है कि बड़े से बड़े पैमाने पर अधिक उत्पादन किया जाय, जिससे समान वितरण के लिये देश में वस्तुतः अधिक संपत्ति हो।'

उपर्युक्त व्याख्या से समाजवादी व्यवस्था की भावी रूप-रेखा बहुत कुछ स्पष्ट हो जाती है। इस व्याख्या के अनुसार समाजवादी व्यवस्था के मुख्य आधार दो हैं:—

(१) उत्पादन पर समाज का अधिकार एवं नियंत्रण, और (२) राष्ट्रीय संपत्ति का समान वितरण।

उत्पादन को प्राथमिकता

तर्क से भी और व्यवहार में भी उत्पादन के बाद ही वितरण की बात सोची जा सकती है। वितरण का प्रश्न तभी उठता है, जब देश में पर्याप्त संपत्ति हो। वर्तमान परिस्थितियों में राष्ट्रीय संपत्ति को बढ़ाने के लिये उत्पादन को बढ़ाना एक बुनियादी आवश्यकता है। इसीसे देश की प्रस्तावित द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस बात की ओर ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है कि उद्योग तथा खेती की उपज किस प्रकार बढ़ाई जाय! खेती की उपज में वृद्धि का प्रश्न यद्यपि प्रथम योजना द्वारा बहुत कुछ हल किया जा चुका है और आज हम खाद्य की दृष्टि से आत्मनिर्भर भी हो चुके हैं, तथापि बढ़ती हुई आबादी की आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिये खेती का हर संभव विकास करते जाना आज भी आवश्यक बना हुआ है। खेती के साथ ही कल-कारखानों और छोटे उद्योग-धन्धों का विकास भी देश के आर्थिक ढाँचे को संतुलित बनाए रखने के लिए बहुत ज़रूरी है। इसके बिना खेती-किसानी के काम के बाद बेकार रहने वाली देश की बृहत् जन-शक्ति को पूरे साल भर काम में लगाए नहीं रखा जा सकता।

वैयक्तिक उद्योग में मज़दूर का स्थान

यह स्पष्ट है कि समाजवादी ढाँचे में सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार होगा, परन्तु वैयक्तिक क्षेत्र के उद्योगों का अन्त न होगा, विशेषकर छोटे खेतों और छोटे एवं कुटीर उद्योगों या व्यापार पर भारतीय परंपराओं की पृष्ठभूमि में, राज्य का नियंत्रण अभी कुछ काल तक संभव नहीं दीखता। परन्तु वैयक्तिक क्षेत्र के प्रबंधकों को अपनी रीति-नीति बदलनी होगी। उन्हें अपने को धन का संरक्षक समझ कर श्रमिक-वर्ग और समूचे समाज की सेवा में उसका उपयोग करना होगा। सरकारी क्षेत्र के साथ वैयक्तिक क्षेत्र की प्रबंध-व्यवस्था भी इस प्रकार की होनी चाहिये कि श्रमिक-वर्ग भी उसमें अपनी राय दे सके और अपने कारखाने के प्रबंध में सक्रिय भाग ले सके। कुछ प्रगतिशील उद्योगपतियों ने इस दिशा में स्पृहणीय क़दम उठाए हैं। अहमदाबाद के दो सूती कारखानों में उद्योग के प्रबंध में श्रमिकों के सहयोग के प्रयोग प्रारंभ भी हो चुके

हैं, जिनमें से एक कारखाने में, जिसने अभी तक अपना नाम प्रकट नहीं किया है, इस प्रयोग को चलते लगभग पाँच महीने हो चुके हैं। फलस्वरूप वहाँ के श्रमिकों में सद्भाव और दायित्व की भावना बढ़ी है, जिसके कारण उत्पादन की 'क्वालिटी' में अभूतपूर्व सुधार हुआ है और मज़दूर-मालिक-संबंधों में तनाव समाप्त होकर विवाद भी आपसी ढंग पर सुलझाए जाने लगे हैं। ऐसा ही एक प्रयोग करने के लिये जमशेदपुर की टाटा आइरन एण्ड स्टील कम्पनी तथा टाटा वर्कर्स यूनियन के बीच गत ८ जनवरी को एक समझौता हो गया है। समझौते के अनुसार 'धीरे-धीरे करके विविध स्तरों पर' श्रमिकों का उत्तरोत्तर सहयोग प्रबंधकों को उद्योग-संचालन में प्राप्त होगा। उक्त समझौते का स्वागत करते हुए भारत संघ के श्रम मंत्री श्री खण्डूभाई देसाई ने अतुल (सूरत) में कहा है कि 'उद्योगों के प्रबंध में श्रमिकों का सहयोग वर्तमान युग की माँग है और यह भारत सरकार की भावी श्रम-नीति के अनुरूप है।'

खेतिहर मज़दूर का योगदान

यह तो रही कारखानों के मज़दूरों के भावी अर्थ एवं समाज-व्यवस्था में योगदान की बात। खेतिहर मज़दूरों का भी बड़े पैमाने पर उत्पादन करने वाले कृषि-फार्मों के संचालन में सहयोग देने के लिये आवाहन किया जाना चाहिये। इस देश में दुर्भाग्य से बड़े कृषि-फार्मों या खेतों की संख्या अन्य देशों की तुलना में कम है, अत: खेतिहर मज़दूर इस प्रयोग में अधिक योगदान देने का संभवत: अवसर न भी पा सकें, परन्तु जहाँ कहीं भी यह अवसर उन्हें सुलभ होगा, उससे निश्चय ही उपज की वृद्धि में बड़ी सहायता मिलेगी। जब तक इस प्रकार के अवसर न बढ़ें, छोटे-छोटे किसान और खेतिहर मज़दूर सहकारिता के आधार पर संगठित होकर इस प्रकार के बड़े खेतों या फार्मों का निर्माण एवं संचालन कर सकते हैं।

श्रमिक की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार

प्रबंध-व्यवस्था में मज़दूरों के योगदान का अर्थ केवल अधिक श्रम और अधिक उत्पादन ही नहीं होगा, वरन् यह भी होगा कि वे उद्योग के मुनाफे में भी साझीदार बनें, उनका आर्थिक शोषण बंद हो और उनके काम और रहन-सहन की दशाओं में सुधार हो। जैसे-जैसे इस प्रकार के प्रयोग सफल होते जायँगे, श्रमिकों का सामाजिक और आर्थिक स्तर ऊँचा उठेगा और समाजवादी व्यवस्था का मार्ग प्रशस्त होता चलेगा। मज़दूर-मालिक का अन्तर कम होने से आमदनी का समान-वितरण भी कठिन न रहेगा। समाजवादी ढाँचा बनाने के लिये इस प्रकार की विषमता को दूर करना ज़रूरी है। इस प्रकार मज़दूर और मालिक सच्चे अर्थों में उद्योग में बराबर के भागीदार बन सकेंगे और एक साथ बैठ कर राष्ट्रीय संपत्ति की अभिवृद्धि के लिये विचार-विमर्श ही नहीं, सक्रिय योग भी दे सकेंगे।

श्रमिक उत्तरदायित्व सँभालने के लिये तैयार रहें!

इस महान उत्तरदायित्व को सँभालने के लिये मज़दूर-समाज को अपने को अभी से तैयार करना है। इसके लिये वे अपनी योग्यता और शक्ति बढ़ाएं कि वे इस गुरु भार को, जो उनके ऊपर आने वाला है, सँभाल सकें। वे अपना आचरण ऐसा बनावें कि एक अनुशासित और मर्यादित ढंग से काम कर सकें। उनका जो भी क़दम उठे, उसे वे ख़ूब सोच-समझ कर उठावें। ग़लत क़दम का हमेशा ग़लत प्रभाव पड़ता है। राष्ट्र की जनशक्ति के अपव्यय से राष्ट्रीय आय की हानि होती है और राष्ट्रीय आय में कमी होने से समान वितरण का कार्य असंभव नहीं तो कठिन अवश्य बन जाता है। जल्दी या ना-समझी में प्राय: श्रमिकों का क़दम चूक जाता है और ग़लती हो जाती है। इसी प्रकार की एक ग़लती का उदाहरण कानपुर की सूती वस्त्र मिलों में २ मई, ५५ से प्रारंभ हुई वह लम्बी हड़ताल है, जिससे राष्ट्रीय आय की क्षति के साथ स्वयं श्रमिक-वर्ग को भी अनन्त कष्ट झेलने पड़े। बरेली के दियासलाई के कारखाने के मज़दूरों की ११ अप्रैल, ५५ से शुरू हुई हड़ताल और सहारनपुर में १२ दिसंबर, ५५ से प्रारंभ हुई सूती मज़दूरों की हड़ताल भी ऐसी ही ग़लतियों के दूसरे उदाहरण हैं। किसी भी हड़ताल के प्रारंभ होने के पूर्व से ही मज़दूर का

दिल-दिमाग बिगड़ जाता है और उसके समाप्त होने के बाद भी उसका हृदय साफ नहीं हो पाता। हड़ताल एक दुधारी तलवार है, जिससे श्रमिक और उद्योग दोनों को ही हानि होती है। प्रस्तावित समाजवादी व्यवस्था में हड़ताल एक पिछड़े हुए अस्त्र की भाँति बेकार पड़ जायेगी, क्योंकि नई व्यवस्था में वे स्वयं उद्योग को चलाने में सक्रिय भाग लेंगे। प्रधान मंत्री के शब्दों में 'मज़दूर स्वयं अपने विरुद्ध हड़ताल नहीं कर सकेंगे।'

दुर्भाग्यवश हमारे श्रमिकों की वर्तमान स्थिति संतोषजनक नहीं है। आपसी दलबन्दी मजदूरों के हितों का हनन कर रही है। यदि मज़दूर अपना, अपने उद्योग और देश का भला चाहते हैं, तो उन्हें अपने हृदय को टटोल कर यह देखना पड़ेगा कि क्या उनकी रोज़मर्रा की कार्रवाइयाँ किसी भी दृष्टिकोण से देश और उद्योग की भलाई कर सकेंगी? अगर नहीं, तो उन्हें यह विचार करना चाहिए कि इस ग़लत रास्ते पर उन्हें कौन लिये जा रहा है। इस देश के सच्चे नागरिक होने के नाते श्रमिकों को अपने पैरों पर खड़ा होना सीखना चाहिए। किसी भी प्रकार का आन्दोलन उठाने अथवा नारा लगाने के पहले यह सोच लेना चाहिये कि ऐसा करना जनहित में है या नहीं। श्रमिकों को अपने हित-साधन की दृष्टि से भी अपने उद्योग को उन्नत करना आवश्यक है। अगर उनका उद्योग फले-फूलेगा, तभी उन्हें भी उसके मुनाफे में अधिकाधिक भाग मिल सकेगा और तभी उनका प्रबन्ध में भाग लेना सार्थक होगा। समाजवादी ढाँचा बनाने में भी इसी सूरत में श्रमिक सहयोग दे सकेगा। इसलिये अपने देश में समाजवादी ढाँचा खड़ा करने में श्रमिकों को एक बड़ा उत्तरदायित्वपूर्ण भाग लेना है, जिसके लिये श्रमिकों को अभी से तैयार होना चाहिये।

प्रबन्धक-वर्ग को भी आगे आ कर नई समाजवादी व्यवस्था में खुले हृदय से सहयोग देकर इस नये प्रयोग को सफल बनाने में कोई कोर-कसर नहीं उठा छोड़नी चाहिये। उन्हें यह समझ लेना चाहिये कि श्रमिक उनके उद्योग के अभिन्न अंग हैं और श्रमिक के बिना किसी उद्योग की कल्पना नहीं की जा सकती। यह तभी संभव है, जब वे समाजवादी व्यवस्था को खुले मन से स्वीकार कर लें। अहमदाबाद और जमशेदपुर के उदाहरण इस बात के सबूत हैं कि जागृत उद्योगपति युग-धर्म के प्रति, समय की माँग के प्रति सजग हैं और वे समाज के समाजवादी ढाँचे के निर्माण के लक्ष्य को पूरा होने का यथेष्ट अवसर देंगे।

बेकारी और गृहोद्योग

"भारत को अपने हाथ से वस्तुओं के उत्पादन की कुशलता परंपरा से प्राप्त है। इसलिये हमें उपभोग्य वस्तुओं का उत्पादन कारखानों के बजाय गृहोद्योगों द्वारा करना चाहिए। हमारे देशवासी खाली न रहें, इसलिये उपभोग्य वस्तुओं के उत्पादन में हमें गृहोद्योगों का अधिकतम उपयोग करना है। इसके यह मानी नहीं कि हम वर्तमान कारखानों द्वारा उपभोग्य वस्तुओं का उत्पादन बन्द कर देंगे। हमें आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन को पहली प्राथमिकता देनी होगी और अब हमें कारखानों और गृहोद्योगों के बीच प्रतियोगिता को बन्द कर देना होगा। मनुष्य-मात्र का जीवन-स्तर ऊँचा उठाना है, अतः हमें अपने गृहोद्योगों द्वारा ही उपभोग्य वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाना होगा।"

—प्रो० पी० सी० महालनबीस

कहानी—

अंतिम विदा

श्री कुमारिल देव

कड़ाके का जाड़ा पड़ रहा था। फूलो कई दिनों से बीमार थी, इसलिये वह रजाई ओढ़े अभी चारपाई पर ही पड़ी थी। सवेरा हो चुका था। फूलो के पति दुर्गा अपने इकलौते पुत्र रुद्दा की सेवा-टहल में लगे हुये उसे बहलाने की कोशिश कर रहे थे। वह अभी पाँच ही वर्ष का था। उसकी माँ बीमारी से काफी अशक्त हो गई थी। साथ ही वह गर्भवती भी थी, इसलिये उसकी हालत और भी नाजुक थी। कुछ ही दिनों में वह दूसरी संतान की माँ बनने वाली थी। रजाई के नाम पर उसका रोग-ग्रस्त शरीर चिथड़ों में लिपटा हुआ था, जिन्हें एक दूसरे के साथ सीकर रजाई का नाम दे दिया गया था।

सहसा ही रुद्दा चिल्ला उठा—'अम्मा, हम तो भूखे हैं, दूध लेंगे!'

दिन और रुक जा। तेरी हीया (भैंस) ब्याई पड़ती है, तब खूब दूध पीना।' तभी बच्चा और मचल गया—'नहीं, हम तो अभी लेंगे। दूध लेंगे, पूई (पूड़ी) लेंगे।'

माँ ने उसे बहुतेरा समझाया - बहलाया, किन्तु वह अपनी हठ पर अड़ा रहा। तभी दुर्गा दुःखी होकर बोले—'भगवान, तू गरीबों को औलाद ही न दे, तो अच्छा। यदि औलाद दे, तो खाने-पीने को भरपूर दे।' तत्पश्चात् वह फूलो की ओर रुख करके बोले—'रुद्दा की माँ, हमारे रुद्दा को तो किसी अमीर घर में पैदा होना चाहिये था। न मालूम, क्यों ईश्वर ने भूल से उसे इस ग़रीब मज़दूर की झोपड़ी में भेज दिया है। बताओ, इसे कसे समझाया जाय कि जो चीज़ है ही नहीं, उसका हठ करने से क्या फायदा। अब तुम ही इसे

दुर्गा ने बच्चे को समझाते हुये कहा—'बेटा, अब दूध कहाँ है? कुछ और ठहर जा। तेरी भैंस ब्याई जाती है, तब खूब दूध पीना। देख, अब तेरी माँ बीमार है। तेरे रोने-पीटने से उसे तकलीफ़ होगी। तू चुपचाप अपनी चारपाई पर सो जा।' इतना कह कर वह चुप हो गया, किन्तु रुद्दा को अपने बाप की बात न जँची। उसकी अंतड़ियाँ भूख से कुड़मुड़ा रही थीं। उस अबोध बच्चे को माँ की तकलीफ़ और बीमारी का क्या ज्ञान! वह और भी ज़ोर से चिल्लाने लगा— 'अम्मा, हम तो दूध लेंगे।' इस तरह कुनमुनाते हुये वह अपनी माँ की चारपाई के पास पहुँच गया। माँ ने उसे चुमकारते हुए प्यार से कहा—'मेरे लाल, अब दूध कहाँ है? कुछ

समझाओ-बुझाओ। मैं तो जंगल को जा रहा हूँ, कुछ घास-फूस ले आऊँ। भैंस ब्याने को हो रही है, लेकिन तुम्हारी बीमारी ने उसकी सेवा-टहल ही रोक दी। अगर उसका पेट अभी से न भरेगा, तो ब्याने पर क्या खाक़ दूध देगी। खैर, इन झगड़ों को छोड़ो और अपनी तबियत का हाल बताओ कि कैसी है? पेट में अब दर्द तो नहीं होता?'

'हाँ, रुद्दा के दादा, अब पेट में तो दर्द नहीं है, सिर में कुछ-कुछ होता है। फूलो ने धीरे से कराहते हुये कहा—'देखो, अभी तो बुल्ला बाबा ने हमारी मेहनत का पाँच सेर अनाज नहीं दिया है, उसे माँग कर तो लाओ। घर का अनाज तो आज खतम हो जायगा। कल

से क्या खाओगे ?'

'उसे भी लाऊँगा रुद्दा की माँ, क्या करूँ ? दिन ही कुछ खोटे आ गये हैं। मैं तो बँधे हुए काम पर रहा करता था, लेकिन इस साल ऐसा काम खराब हुआ कि बँधा काम मिल ही न सका। तभी तो दो दिन काम मिलता है और दो दिन खाली घर पर बैठे रहना पड़ता है। फिर ऐसी हालत में क्या गुज़ारा हो सकता है। मेरे जी में तो ऐसा आता है कि परदेश कमाने चला जाऊँ। यहाँ की चख-चख से तो मैं तंग आ गया हूँ, लेकिन मुझे एक ही विचार रोके रहता है और वह यह है कि तुम्हें और रुद्दा को किसके ऊपर छोड़ जाऊँ। घर में कोई बड़ा-बूढ़ा भी सिर पर न रहा, जो तुम्हारी देख-भाल करता। खैर, अब यहीं मेहनत-मज़दूरी करेंगे। भैंस ब्या पड़ी, तो मट्ठे से गुज़ारा करेंगे। अच्छा, अब मैं घास को जाता हूँ। अगर कोई काम पर बुलाने आये, तो हामी भर लेना। मैं उसका काम कर आऊँगा।' इतना कह कर दुर्गा ने खुरपी और एक टाट का टुकड़ा झोपड़े के एक कोने से उठा कर सँभाला और फिर फूलो को ठीक तरह से दवा-दारू लेने की हिदायत देता हुआ बाहर की ओर चल दिया। फूलो अशक्त होने के कारण हूँ-हूँ के सिवा और कुछ उत्तर न दे सकी।

रुद्दा अभी दूध-पूड़ी के लिये ठुनक ही रहा था। जब उसके दादा और अम्मा ने अपनी बातचीत में उसको भुला ही दिया, तो वह और भी ज़ोर-ज़ोर से ठुनकने लगा। बीमार फूलो उसके ठुनकने से तंग आ गई, किन्तु उसे समझाने के सिवा और कोई चारा भी न था। सहसा एक बात सूझी और तुरन्त ही उसने रुद्दा से कहा—'बेटा, दूध-पूड़ी अपनी हीया से माँग ला। जा, वह तुझे ज़रूर दे देगी।' 'हीया देगी अम्मा?' रुद्दा ने ललचाई आँखों से अपनी माँ की ओर देखते हुये पूछा।

'हाँ, बेटा, हीया देगी। तू जा, उसके पास धूप में बैठ कर उससे माँग ले।' फूलो के इस प्रकार समझाने पर बच्चा उसकी बात मान गया और वह घर से बाहर भैंस के पास चला गया। द्वार पर बँधी हुई भूखी भैंस चारे के लिये घर की ओर देख रही थी। रुद्दा भैंस की नाँद के पास जाकर खड़ा हो गया। सुहावनी धूप निकल रही थी। वह चिल्ला-चिल्ला कर गीत की तरह गाने लगा — 'हीआ, पूई दै-दै री ! हीआ, दूध दै-दै री !' रुद्दा इस गीत की धुन बाँध चला। उस मार्ग से जो भी कोई व्यक्ति निकलता, वह उस अबोध बालक की ज्ञान- शून्यता पर मुस्कराता जाता और कोई-कोई उससे यह भी कह जाता कि अपनी माँ से जाकर माँग, भैंस नहीं दिया करती।

इसी बीच सहसा ही गाँव के लेखपाल उधर से गुजरे। वे ग्राम-सुधार योजना के अन्तर्गत

पत्नी फूलो की अन्तिम विदा की स्मृति लिये हुये दुर्गा अपने रुद्दा को पीठ पर लाद अज्ञात दिशा की ओर चल दिया।

आबादी की ज़मीनों का मुआयना करते फिर रहे थे; दुर्गा की भैंस के थलकाव को देखकर उनके मुँह में पानी भर आया। भैंस एक-दो दिन में ही ब्याने वाली थी। वे वहाँ खड़े होकर बहुत देर तक भैंस की निरख-परख करते रहे। अन्त में कुछ सोच-विचार करके वे दुर्गा की झोपड़ी के दरवाज़े पर पहुँचे और उनको आवाज़ दी। झोपड़े में से फूलो ने लेखपाल की आवाज़ सुनकर कराहते हुए कहा—'क्यों, पंडित जी हैं क्या ?'

'हाँ, मैं ही हूँ चाची !' वे बोले—'दुर्गा चाचा कहाँ गये हैं ?'

'वे अभी घास के लिये गये हैं। पंडित जी, तुम जगह बता जाओ। जहाँ भी तुम्हारा काम हो रहा होगा, मैं वहीं रुद्दा के दादा को भेज दूँगी। वे खुद भी कह गये हैं कि मैं जल्दी आऊँगा।'

वर्ष नूतन हो कि चाहे हो पुरातन, भाग्य-रेखा किन्तु सबकी तो वही है !

सत्य का लेकर सहारा पंथ अपना था सँवारा,
पर पड़ी नौका भँवर में, दूर है अब तो किनारा;
क्यों खड़े दिग्भ्रांत होकर, श्रम नहीं हारा किसी से, क्या न यह माँझी सही है ?

बलवती दोनों भुजाएँ झेल सकतीं आपदाएँ,
मत निराशा को निहारो, टूट यदि पतवार जाएँ;
तुम भुजाओं को बना पतवार लेना, सत्य जानो सिद्धि में संशय नहीं है !

देख लेना तुम, प्रवाहित तरणि तट से जा लगेगी,
श्रमिक के पग को विजित होकर सफलता चूम लेगी;
सत्य, श्रम औ' भाग्य से तो आदि-युग से देख लो तुम होड़ लगती आ रही है !

'चाची, मैं उन्हें काम के लिये बुलाने नहीं आया हूँ।' लेखपाल बोले—'मैं तो एक और ही ज़रूरी बात करने आया हूँ। तुम लोगों को तो अभी पता ही नहीं है कि दुनिया में क्या हो रहा है। ऐसे समय में हमारा ही यह फ़र्ज़ हो जाता है कि हम आप लोगों की सेवा करें। हमें गरीब-अमीर सबके भले का ध्यान रहता है। चाची, तुम लोग भले ही चमार हो, लेकिन मैं तुम्हें ठाकुरों से भी ज्यादा प्यार करता हूँ और मानता हूँ। असल बात यह है कि अब चकबन्दी हो रही है। उसके साथ ही ग्राम-सुधार का काम चलेगा। इस काम में गरीबों और बेज़मीन वालों को घर-बार और नौहरों के लिये सरकार की ओर से जमीनें मिलेंगी, लेकिन यह सब काम मेरी कलम से होगा। अब ऐसे में मौक़ा है कि तुम अपने लिये चार हाथ जगह का इंतज़ाम कर लो। देखो, यह झोपड़ी भी तुम्हारी अपनी ज़मीन में नहीं है। इस पर लोका नम्बरदार का कब्ज़ा लिखा हुआ है। अगर इस पर तुम अपना कब्ज़ा लिखाना चाहो, तो कुछ भेंट-पूजा करो। मैं तुम्हें इसके अलावा और कुछ ज़मीन दिलवा दूँगा। आज तो तुम इस लायक भी हो कि अपना काम मुझसे करा सकती हो। अवसर चूक जाने पर कल को पछताना ही पड़ेगा। यह बात मैं तुम से छिपकर ही करना चाहता हूँ, क्योंकि यदि इसका पता नम्बरदार को लग गया, तो वह बुरा मान जायगा और फिर तुम नुक़सान में रहोगी। इसलिये मैं बात साफ़ किये देता हूँ कि यदि तुम मुझसे यह काम कराना चाहो, तो अपनी भैंस चुपके से मेरे खूँटे पर बँधवा दो, नहीं तो फिर तुम जो चाहो, सो करो। मुझसे तुम्हारी कोई कहन न रहेगी कि पंडित ने समय पर साफ़ बात नहीं की थी। देख लो, यह तुम्हारे हाथ-पैर का मैल है। भैंस तो तुम्हारे पास सैकड़ों आ जायँगी, लेकिन यह झोपड़ा हाथ नहीं रहेगा। अगर सौदा जँचे, तो दुर्गा चाचा को आज ही मेरे घर पर भेज देना। बाक़ी रही तुम्हारी मर्ज़ी।' इतना कह कर लेखपाल चुप हो गये।

फूलो लेखपाल की बातें सुन कर स्तब्ध-सी रह गई। वह काफी देर तक कुछ भी न बोल सकी। मुश्किल से कराह के साथ उसके मुँह से कुछ शब्द निकले—'पंडित जी, अपनी मर्ज़ी हम मज़दूरों के भाग्य में कहाँ है। अपनी मर्ज़ी तो अमीर लोगों की होती है, ज़मीन-ज़ायदाद वालों की होती है। हमारे हाथ में तो एक खुरपिया ही है। इसके बल पर ही रो-पीट कर हम पेट भर पाते हैं और जब कोई काम पर नहीं बुलाता, तो इससे भी रह जाते हैं। मैं बीमार पड़ी हूँ। दवा-दारू का कोई इंतज़ाम नहीं है। रुद्दा के दादा को ही यह सारी आफ़त भुगतनी पड़ती है। आखिर अकेला आदमी क्या-क्या करे, पंडित जी!'

'कोई बात नहीं है, चाची! हारी-बीमारी तो लगी ही रहती है। भगवान् तुन्हें जल्दी ही सेहत बख्शे। मैं अब जाता हूँ। अगर काम कराना है, तो चाचा को आज ही भेज देना, समझीं?' इतना कहकर वह झोपड़े के बाहर निकल आया और फिर भैंस की ओर एक ललचाई दृष्टि डाल कर अपने मार्ग पर चला गया। रुद्दा अब भी रुक-रुक कर अपना गीत गा रहा था।

दुर्गा घास लेकर जब घर लौटे, तो फूलो दर्द से कराह रही थी। फूलो की कराह सुनकर उनके दरवाजे पर ही प्राण-से निकल गये। उन्होंने घास चबूतरे पर डाल दी और व्यग्रता से घर में घुसे। अन्दर पहुँचते ही उन्होंने फूलो से पूछा—'क्यों रुद्दा की माँ, अब पीर कुछ ज्यादा है क्या?'

'नहीं, यों ही थोड़ा सिर-दर्द है, रुद्दा के दादा!' फूलो ने अपने कष्ट को छिपाते हुए कहा----'गाँव में तो अब परलय ही होने जा रही है। आज लेखपाल हमारे घर आया और उसने ऐसी बातें बतलाईं कि जिनको सुन कर सिर की पीर तो क्या, दिल में भी पीर हो गई। वह कहता था कि इस झोपड़े की ज़मीन पर तुम्हारा कब्ज़ा नहीं है, कब्ज़ा लोका नम्बरदार का है। कब्ज़ा बहाल करने के लिये हमारी भैंस माँगता है और साथ ही कुछ और ज़मीन दिलाने की बात कहता था। सुनते हैं कि गाँव के आस-पास की ज़मीन किसानों से लेकर सरकार ग़रीब मजूर और ज़रूरतमन्दों को देगी। रुद्दा के दादा, मैं तभी से इस अफसोस में पड़ी हूँ कि क्या किया जाय। इधर देखती हूँ तो रुद्दा पर तरस आता है और उधर देखती हूँ, तो जमीन हाथ से निकलने का कलक आता है। कुछ भी सही, मैं तो अब यही चाहती हूँ कि जैसे बने, वैसे मड़ैया हाथ से न जाय।' इतना कह कर वह चुप हो गई। दुर्गा भी ये बातें सुनकर स्तब्ध रह गये और बोले—'चिन्ता न करो रुद्दा की माँ, मैं आज रात को उसके घर जाऊँगा और बातचीत करूँगा। पहले भैंस को चारा डाल आऊँ, तब तुझे दवा दूँगा। मेरी खुद समझ में नहीं आता कि ऐसे में क्या किया जाय। बिना दूध के रुद्दा कैसे रहेगा। गाँव के इस देवता की भेंट में मेरे दुधमुँहे रुद्दा की भैंस चली जायगी, इस विचार-मात्र से मेरा दिल दुखता है।' इतना कहकर वे बाहर निकल गये।

*　　*　　*

साँझ का समय था। दुर्गा के द्वार पर उसकी भैंस ब्या रही थी। तभी लेखपाल अपना आदमी लेकर वहाँ आ पहुँचे और दुर्गा के पास पहुँच कर बोले—'चाचा, चिन्ता न करो। अब तुम्हें इस घर से कोई नहीं हटा सकता। अब तुम इसमें चैन करो। तुम बरतो और तुम्हारे बाल-बच्चे बरतें। देखो, मैं अपना आदमी ले आया हूँ। तुम दोनों मिल कर भैंस के पड़वे को मेरे घर ले चलो। भैंस पीछे-पीछे आप चली चलेगी। अब ज़रा फुर्ती का काम है, ताकि जल्दी से जल्दी भैंस का दूध काढ़ा जा सके। इसका ज्यादा देर रुकना ठीक नहीं है।' इतना कहकर वे वहाँ से चले गये। भैंस लेखपाल के दरवाज़े पर पहुँच गई। बेचारा रुद्दा तृषित नेत्रों से उसकी ओर देखता ही रह गया।

रात्रि के अँधियारे में फूलो के प्रसव-वेदना हुई, किन्तु जाड़े की अधिकता और दाई की कमी के कारण उसका प्रसव में प्राणांत हो गया। प्रातः होते-होते फूलो का शरीर श्मशान में अग्नि की भेंट चढ़ कर भस्मीभूत भी हो गया।

दुर्गा मातमपुरसी के दिन पूरे करके एक रात को प्रातः के अंधकार में अपने रुद्दा को पीठ पर लाद, गाँव से अंतिम विदा के लिये अज्ञात दिशा में विलीन हो गया।

कानपुर में व्यावसायिक संघ आन्दोलन का विकास

—श्री पवन बिहारी लाल

कानपुर उत्तर प्रदेश का प्रमुख औद्योगिक नगर है। इसी नगर में सबसे पहले ब्रिटिश इण्डिया कारपोरेशन द्वारा स्थापित विद्युत्-संचालित पहला कारखाना उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्थापित हुआ था और तब से नगर के औद्योगीकरण में निरन्तर प्रगति होती गई। स्वभावत: तभी से इस नगर की जन-संख्या में श्रमिक-वर्ग की अधिकता रही है।

प्रादुर्भाव

कानपुर नगर में व्यावसायिक संघों का प्रादुर्भाव उसी समय से नहीं हुआ, जब से कल-कारखाने यहाँ स्थापित हुए। श्रमिकों की दशा सुधारने के लिए सबसे पहली संस्था १९२० ई० में बनी। इसका नाम 'मज़दूर सभा' था और यह सोसाइटीज़ रजिस्ट्रेशन ऐक्ट, १८६० के अन्तर्गत प्रमाणित कराई गई थी। इसका मुख्य ध्येय श्रमिकों के कल्याण के लिए समुचित प्रबन्ध करना था। उस समय तक भारत में व्यावसायिक संघ कानून न बना था। इस प्रकार का पहला कानून भारत सरकार ने १९२६ ई० में बनाया। मज़दूर सभा इस राज्य के श्रमिकों का पहला संगठन है, जो भारतीय व्यावसायिक संघ कानून के अन्तर्गत १९२८ ई० में प्रमाणित हुई। इस संगठन की स्थापना नगर के प्रमुख राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता श्री गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा हुई थी और नगर के राष्ट्रीय विचार-धारा के सभी सामाजिक कार्यकर्त्ता उस समय से इस संस्था के माध्यम से श्रमिक-वर्ग की सेवा करते रहे। सन् १९३८ में कानपुर श्रम जाँच समिति की स्थापना, जिसका सभापतित्व स्वतंत्र भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने किया था, इसी मज़दूर सभा के संघर्ष के फलस्वरूप हुई और उक्त समिति की सिफारिशों पर नगर के श्रमिकों की आर्थिक दशा में समुचित सुधार हुआ। सन् १९४२ ई० के स्वतंत्रता-संग्राम के पश्चात इस संस्था पर साम्यवादी कार्यकर्त्ताओं का अधिकार हो गया।

यह कहना अनुचित न होगा कि १९२८ ई० से ही इस नगर में ही नहीं, वरन् हमारे राज्य में भी व्यावसायिक संघ आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ। उपलब्ध आँकड़ों के आधार पर निम्नलिखित आँकड़े कानपुर के व्यावसायिक संघ आन्दोलन की प्रगति पर प्रकाश डालते हैं:—

वर्ष	प्रमाणित व्यावसायिक संघों की संख्या
१९२८	१
१९३९	६
१९४०	१८
१९४५	११
१९५०	८९
१९५५	१२७

औद्योगिक वर्गीकरण

कपड़ा उद्योग नगर का मुख्य उद्योग रहा है और इसी उद्योग के श्रमिकों में व्यावसायिक संघ आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और अब तक सदैव इसी उद्योग के श्रमिक व्यावसायिक संघ आन्दोलन के मुख्य अंग रहे हैं। अन्य उद्योगों के श्रमिकों का संगठन बाद में प्रारम्भ हुआ और उनके व्यावसायिक संघों की सदस्य-संख्या अपेक्षाकृत कम रही है। नगर के विभिन्न उद्योगों में व्यावसायिक संघों का विकास आगे के आँकड़ों से ज्ञात होता है:—

उद्योग	१६३०	१६३६	१६४०	१६४५
कपड़ा	१	३	५	४
चमड़ा	—	—	१	२
तेल	—	—	—	१
रसायन	—	—	—	—
बिजली	—	—	३	१
इञ्जीनियरिंग	—	१	१	१
गोला–बारूद	—	—	—	—
परिवहन	—	—	१	—
अन्य	—	२	७	२

स्वतन्त्रता के बाद

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि व्यावसायिक संघ आन्दोलन राष्ट्रीय सरकार की स्थापना के बाद अधिक तीव्र गति से बढ़ा। सन् १६४६ के अन्त में नगर में केवल १५ व्यावसायिक संघ थे और आज उनकी संख्या १३४ है अर्थात् दस वर्ष की इस अवधि में ७६३·३ प्रतिशत वृद्धि हुई।

संघों की सदस्यता

पिछले दस वर्षों में नगर के व्यावसायिक संघों की सदस्य-संख्या बराबर बढ़ती रही है। सन् १६४६ में संघों की सदस्य-संख्या १६,१६०, सन् १६४६ में ४१,०६३, सन् १६५२ में ५६,६०८, तथा सन् १६५५ में ४०,४५२ रही। सन् १६५५ के वर्ष में नगर के २० संघों के संबंध में विवरण उपलब्ध नहीं हो सके।

राजनैतिक प्रभाव

देश के व्यावसायिक संघों पर राजनैतिक दलों का प्रभाव आरम्भ से ही रहा है और कानपुर नगर का मज़दूर–आन्दोलन भी अपने शैशव–काल से ही राजनीति से प्रभावित रहा है।

संघों पर प्रभाव रखने वाले दलों में मुख्य हैं कांग्रेस, प्रजा समाजवादी पार्टी, साम्यवादी और क्रान्तिकारी समाजवादी दल। कुछ संघ ऐसे भी हैं, जो स्पष्ट रूप से स्वतंत्र कहे जाते हैं, यद्यपि उनका दृष्टिकोण भी भीतर से राजनीति द्वारा ही संचालित रहता है। नगर के अधिकांश संघ जिन अखिल भारतीय श्रमिक–संगठनों से संबद्ध हैं, वे हैं: (१) भारतीय राष्ट्रीय मज़दूर कांग्रेस, (२) अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस, (३) हिन्द मज़दूर सभा, (४) संयुक्त ट्रेड यूनियन कांग्रेस तथा (५) अखिल भारतीय रक्षा विभाग कर्मचारी फेडरेशन।

सुधारों की आवश्यकता

राष्ट्र प्रगति के पथ पर है। पंचवर्षीय योजनाओं को कार्यान्वित करने तथा देश में समाजवादी ढाँचा स्थापित करने के लिए हमारे राष्ट्र के महान कर्णधार कृत–संकल्प हैं। ऐसी स्थिति में नगर की समुचित औद्योगिक प्रगति में व्यावसायिक संघों को महत्वपूर्ण योगदान देना है। इसके लिए यह आवश्यक है कि श्रमिक अपने संगठनों को मज़बूत बनावें। व्यावसायिक संघ अनुशासन से कार्य करें। श्रमिकों को संघों के संचालन एवं प्रबन्ध–व्यवस्था में आगे आने का समुचित अवसर मिले और मालिक भी व्यावसायिक संघों के प्रति अपनी विचार–धारा में समयानुकूल परिवर्तन करें। इसी में राष्ट्र का हित निहित है।

"'श्रमजीवी' ने अपने जन्म से ही अपने क्षेत्र में विशेष स्थान प्राप्त कर लिया है। यों तो ऐसे कई पत्र निकलते हैं, जो श्रम और उद्योग के प्रश्न पर मालिकों की दृष्टि से विचार करते हैं। श्रमिकों के अपने पत्र तो कम हैं, परन्तु जो हैं, उनकी विचार-धारा स्वभावतः श्रमिकों के पृथक स्वत्वों की दिशा में जाती है। 'श्रमजीवी' आरम्भ से ही तटस्थ रहा है। उसके सामने समाज का हित सर्वोपरि है, क्योंकि समाज के हित में सभी वर्गों का हित है। वह ऐसे तथ्यों को सामने रखता है, जिनका उपयोग सभी लोग पूरे भरोसे के साथ कर सकते हैं। इसीलिये वह उद्योगपति और श्रमिक दोनों का विश्वासपात्र है। मैं चाहता हूँ कि वह इसी पथ पर अग्रसर रह कर उन्नति करता रहे।"
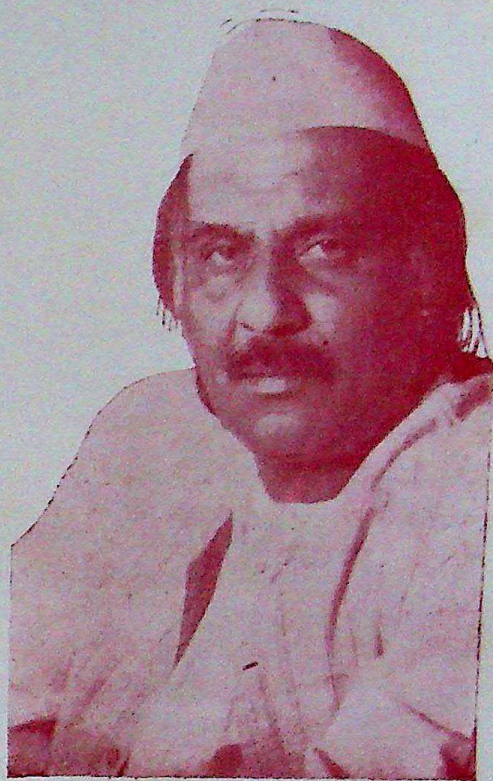
उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री
डा० सम्पूर्णानन्द का शुभाशीर्वाद

"जबसे मैंने उत्तर प्रदेश सरकार में श्रम मन्त्री का कार्य-भार सँभाला है, मैं 'श्रमजीवी' का अवलोकन नियमित रूप से करता रहा हूँ। इसमें श्रमिकों तथा सेवायोजकों दोनों ही के लिये उपयोगी सामग्री रहती है। श्रम-सम्बन्धी समस्याओं में दिलचस्पी लेने वालों को एक-दूसरे के विचार जानने तथा तत्सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने का यह एक उपयुक्त माध्यम है। मैं चाहता हूँ कि इसमें श्रमिकों के अपने दृष्टिकोण को प्रकट करने का और अधिक अवसर मिले।

'श्रमजीवी' का उद्देश्य श्रमिकों तथा उद्योग दोनों का हित-साधन करना है। मुझे आशा है कि श्रम विभाग इस पत्रिका को जितना अधिक से अधिक सम्भव होगा, उपयोगी बनाने में सचेष्ट रहेगा।

'श्रमजीवी' के इस विशेषांक के अवसर पर मैं इसके पाठकों के प्रति अपनी शुभ-कामनायें प्रकट करता हूँ और उन सज्जनों को बधाई देता हूँ, जो इसकी उपयोगिता बढ़ाने में सहयोग दे रहे हैं।"

उ० प्र० के श्रम एवं समाज-कल्याण मंत्री आचार्य जुगल किशोर का शुभाशीर्वाद

हिन्दी और उसके काव्य-साहित्य का जन्म जन-साधारण के बीच में हुआ और जन-वाणी के रूप में ही यह सतत् विकासोन्मुख रही। गत कई शताब्दियों के मध्य पर्याप्त राजकीय प्रश्रय के अभाव में भी भारत की बहु-संख्यक जनता की भाषा होने के कारण ही हिन्दी आज राष्ट्रभाषा का गौरवपूर्ण पद प्राप्त कर सकी है। फलत: प्रारम्भ से ही हिन्दी-काव्य में समाज के निचले स्तर के व्यक्तियों, विशेषकर श्रमिकों के जीवन की सच्ची अभिव्यक्ति प्राप्त होती है।

श्रमिक-कवि कबीर

यदि क्रियात्मक दृष्टिकोण से देखा जाय, तो संत कबीर सबसे पहले श्रमिक-कवि के रूप में सामने आते हैं। आजीवन वे एक बुनकर रहे तथा करघे पर कपड़ा बुन कर अपनी आजिविका चलाते रहे। अपने व्यवसाय का आध्यात्मिक वर्णन उन्होंने 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' में किया है। वे श्रमिक-वर्ग के सच्चे प्रतिनिधि थे, परन्तु उस समय आजकल की-सी श्रम-समस्याएँ सामने न होने के कारण उन्होंने अपने वर्ग के संबंध में अधिक कुछ नहीं लिखा।

श्री देवी शंकर बाजपेयी

'मानस' और श्रमिक

कबीर के बाद गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरित् मानस' में श्रमिक-वर्ग की महत्ता का दिग्दर्शन कराया गया है। तुलसी के राम यद्यपि चक्रवर्ती सम्राट् महाराज दशरथ के पुत्र हैं, किन्तु उनके जीवन का अधिकांश समय समाज की अविकसित जातियों के बीच बीतता है। रामायण के निषाद, शबरी आदि पात्र समाज के निम्न वर्ग के प्राणियों—श्रमिकों—का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। राम ने अपने कथनों द्वारा बराबर उनके हृदय से हीनता की भावना दूर करने का प्रयास किया है। अरण्य काण्ड में जिस समय शबरी ने कहा है—'केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी। अधम जाति, मैं जड़मति भारी ॥,' तो श्रीराम स्पष्ट घोषणा करते हैं कि:—

'कह रघुपति—सुनु भामिनि, बाता।
मानहुँ एक भगति कर नाता ॥
जाँति-पाँति, कुल, धर्म, बड़ाई।
धन, बल, परिजन, गुन, चतुराई ॥
भगति-हीन नर सोहहि कैसा।
जल-बिनु बारिद देखिय जैसा ॥'

केवट नाव चला कर अपनी आजीविका चलाता था। वह मज़दूर-वर्ग का सच्चा प्रतिनिधि है, जैसा कि उसने स्वयं एक स्थल पर कहा है—'अमित काल मैं कीन्ह मजूरी। आज दीन्ह विधि सब भलि पूरी ॥' राम गंगा के पार जाना चाहते हैं। केवट उनके सामने अपनी 'माँग' पेश करता है तथा माँग पूरी न किये जाने तक काम न करने की स्पष्ट घोषणा करता है:—

'बहु तीर मारहु लखन,
पै जब लगि न पायँ पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास
नाथ कृपालु, पार उतारिहौं ॥'

अंत में केवट की माँग पूरी होती है और माँग पूरी होने पर ही वह राम को गंगा के पार करता है। इसी प्रकार निषाद और महर्षि वशिष्ट के प्रसंग में वशिष्ट द्वारा निषाद का आलिंगन कराके जाति-पाँति के बन्धन तोड़ कर श्रमिक-वर्ग की महत्ता प्रतिष्ठित की गई है:—

'एहि सम नीच निपट कोउ नाहीं।
बड़ वशिष्ठ-सम को जग माँहीं ॥
तेहि लखि लखनहु ते अधिक मिले मुदित मुनिराव।
सो सीतापति-भजन को प्रगट प्रताप प्रभाव ॥'

इसी प्रकार रामायण में स्थान-स्थान पर श्रमिकों का सामाजिक महत्व बढ़ाया गया है।

"जबसे मैंने उत्तर प्रदेश सरकार में श्रम मन्त्री का कार्य-भार सँभाला है, मैं 'श्रमजीवी' का अवलोकन नियमित रूप से करता रहा हूँ। इसमें श्रमिकों तथा सेवायोजकों दोनों ही के लिये उपयोगी सामग्री रहती है। श्रम-सम्बन्धी समस्याओं में दिलचस्पी लेने वालों को एक-दूसरे के विचार जानने तथा तत्सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने का यह एक उपयुक्त माध्यम है। मैं चाहता हूँ कि इसमें श्रमिकों के अपने दृष्टिकोण को प्रकट करने का और अधिक अवसर मिले।

'श्रमजीवी' का उद्देश्य श्रमिकों तथा उद्योग दोनों का हित-साधन करना है। मुझे आशा है कि श्रम विभाग इस पत्रिका को जितना अधिक से अधिक सम्भव होगा, उपयोगी बनाने में सचेष्ट रहेगा।

'श्रमजीवी' के इस विशेषांक के अवसर पर मैं इसके पाठकों के प्रति अपनी शुभ-कामनायें प्रकट करता हूँ और उन सज्जनों को बधाई देता हूँ, जो इसकी उपयोगिता बढ़ाने में सहयोग दे रहे हैं।"

उ० प्र० के श्रम एवं समाज-कल्याण मंत्री आचार्य जुगल किशोर का शुभाशीर्वाद

हिन्दी और उसके काव्य-साहित्य का जन्म जन-साधारण के बीच में हुआ और जन-वाणी के रूप में ही यह सतत् विकासोन्मुख रही। गत कई शताब्दियों के मध्य पर्याप्त राजकीय प्रश्रय के अभाव में भी भारत की बहु-संख्यक जनता की भाषा होने के कारण ही हिन्दी आज राष्ट्रभाषा का गौरवपूर्ण पद प्राप्त कर सकी है। फलतः प्रारम्भ से ही हिन्दी-काव्य में समाज के निचले स्तर के व्यक्तियों, विशेषकर श्रमिकों के जीवन की सच्ची अभिव्यक्ति प्राप्त होती है।

श्रमिक-कवि कबीर

यदि क्रियात्मक दृष्टिकोण से देखा जाय, तो संत कबीर सबसे पहले श्रमिक-कवि के रूप में सामने आते हैं। आजीवन वे एक बुनकर रहे तथा करघे पर कपड़ा बुन कर अपनी आजिविका चलाते रहे। अपने व्यवसाय का आध्यात्मिक वर्णन उन्होंने 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' में किया है। वे श्रमिक-वर्ग के सच्चे प्रतिनिधि थे, परन्तु उस समय आजकल की -सी श्रम-समस्याएँ सामने न होने के कारण उन्होंने अपने वर्ग के संबंध में अधिक कुछ नहीं लिखा।

'मानस' और श्रमिक

कबीर के बाद गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरित् मानस' में श्रमिक-वर्ग की महत्ता का दिग्दर्शन कराया गया है। तुलसी के राम यद्यपि चक्रवर्ती सम्राट् महाराज दशरथ के पुत्र हैं, किन्तु उनके जीवन का अधिकांश समय समाज की अविकसित जातियों के बीच बीतता है। रामायण के निषाद, शबरी आदि पात्र समाज के निम्न वर्ग के प्राणियों—श्रमिकों—का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। राम ने अपने कथनों द्वारा बराबर उनके हृदय से हीनता की भावना दूर करने का प्रयास किया है। अरण्य काण्ड में जिस समय शबरी ने कहा है—'केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी। अधम जाति, मैं जड़मति भारी॥,' तो श्रीराम स्पष्ट घोषणा करते हैं कि :—

'कह रघुपति—सुनु भामिनि, बाता।
मानहुँ एक भगति कर नाता॥
जाँति-पाँति, कुल, धर्म, बड़ाई।
धन, बल, परिजन, गुन, चतुराई॥
भगति-हीन नर सोहहि कैसा।
जल-बिनु बारिद देखिय जैसा॥'

केवट नाव चला कर अपनी आजीविका चलाता था। वह मज़दूर-वर्ग का सच्चा प्रतिनिधि है, जैसा कि उसने स्वयं एक स्थल पर कहा है—'अमित काल मैं कीन्ह मजूरी। आज दीन्ह विधि सब भलि पूरी॥' राम गंगा के पार जाना चाहते हैं। केवट उनके सामने अपनी 'माँग' पेश करता है तथा माँग पूरी न किये जाने तक काम न करने की स्पष्ट घोषणा करता है:—

'बहु तीर मारहु लखन,
पै जब लगि न पायँ पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास
नाथ कृपालु, पार उतारिहौं॥'

अंत में केवट की माँग पूरी होती है और माँग पूरी होने पर ही वह राम को गंगा के पार करता है। इसी प्रकार निषाद और महर्षि वशिष्ठ के प्रसंग में वशिष्ठ द्वारा निषाद का आलिंगन कराके जाति-पाँति के बन्धन तोड़ कर श्रमिक-वर्ग की महत्ता प्रतिष्ठित की गई है:—

'एहि सम नीच निपट कोउ नाहीं।
बड़ वशिष्ठ-सम को जग माँहीं॥

तेहि लखि लखनहु ते अधिक मिले मुदित मुनिराव।
सो सीतापति-भजन को प्रगट प्रताप प्रभाव॥'

इसी प्रकार रामायण में स्थान-स्थान पर श्रमिकों का सामाजिक महत्व बढ़ाया गया है।

किन्तु आधुनिक काव्य-साहित्य में प्रत्यक्ष रूप से श्रमिकों का स्वतंत्र वर्णन प्रगतिवादी साहित्य के श्रीगणेश के बाद ही मिलता है। यद्यपि श्री जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' में भी अप्रत्यक्ष रूप से कर्म अर्थात् श्रम को ईश्वर का रहस्यपूर्ण वरदान बताया गया है—

'जिसे तुम समझ रहे अभिशाप,
जगत की ज्वालाओं का मूल।
ईश का वह रहस्य--वरदान,
कभी मत जाओ इसको भूल ॥'

किन्तु श्रमिकों के जीवन का स्पष्ट एवं स्वतंत्र चित्रण पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की कविता में प्राप्त होता है। भारतीय स्वातंत्र्य के संघर्षमय युग में यदि हिन्दी का कवि राजाओं, राजमहलों तथा सुन्दरियों के हास-विलास को छोड़कर साधारण मज़दूर और 'चिथड़ों-गुदड़ों से सुसज्जित' सड़क के किनारे पत्थर तोड़ती हुई मज़दूरिन की ओर दृष्टि न डालता, तो यह जन-भाषा के लिये कलंक की बात होती :—

'मैंने देखा उसे इलाहाबाद के पथ पर,
वह तोड़ती पत्थर।'

'निराला' के पश्चात्

'निराला' के पश्चात् कुछ अन्य कवियों की दृष्टि भी श्रमिक-वर्ग की ओर गई, जिनमें सर्वश्री भगवती चरण वर्मा, सोहनलाल द्विवेदी, रामधारी सिंह 'दिनकर', आदि कवियों ने कुछ-न-कुछ श्रमिकों के सम्बन्ध में लिखा। अब तो अनेकों प्रगतिवादी एवं प्रयोगवादी कवि इस विषय पर अपनी लेखनी माँज रहे हैं।

देश के स्वतंत्र होने के बाद

स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् भी श्रमिक की सामाजिक स्थिति में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं हुआ। श्रमिकों के लिये नवीन गृह-निर्माण की योजनाओं के बावजूद ताजमहल, कुतुब मीनार तथा असंख्य उच्च अट्टालिकाओं का निर्माण करने वाले अधिकांश श्रमिक अन्धकार, सीलन एवं धुएँ से भरी खपरैल की कोठरी में ही रहते हैं। श्रीमती हीरादेवी चतुर्वेदी की मज़दूरिन निराशा-भरे स्वर से कह उठती है कि—

'महल, हवेली, दुर्ग अनेकों बना चुकी मैं कितने सारे,
किन्तु दूर वे मुझसे उतने, जितने नील गगन के तारे।
तन सूखा, मन भूखा मेरा कब किसने जग में पहिचाना!
किसने मेरे दुख-दर्दों पर बुना कभी है ताना-बाना!'

इसी प्रकार श्रीमती लज्जा देवी मिश्र ने मज़दूर का चित्र खींचते हुये लिखा है:—

'बड़े-बड़े ऊँचे महलों के हम ही हैं निर्माता,
बाँधों, पुलों, कारखानों के हम हैं भाग्य-विधाता।
कितना भी श्रम करें, किन्तु हैं सदा मज़े से दूर—
हम कहलाते मज़दूर।'

श्री कुमार ने भी इसी प्रकार की निराशा प्रकट करते हुये कहा है :—

'ताजमहल के निर्माता को जगह मिलेगी सबसे नीची,
लाल किले का निर्माता तब द्वार-द्वार जाकर भटकेगा।'

किन्तु इन निराशा के स्वरों के बीच श्रीमती शकुन्तला श्रीवास्तव के उद्‌बोधन के स्वर श्रमिक के कानों में गूँज उठते हैं :—

'तुम भारत के कर्णधार हो, उसकी नौका पार लगाओ।
ले कर में पतवार श्रमिक अब, नाविक का कर्तव्य निभाओ।
मर कर पुनः जन्म लेकर भी तुम्हें कार्य पूरा करना है,
शोषित, पीड़ित जन-समाज में तुमको नवजीवन भरना है॥'

श्रमिक के श्रम और उत्सर्गमय जीवन का उपन्यासकार एवं कवि श्री अज्ञात, एम० ए० ने अपने एक गीत 'हम भारत के निर्माता हैं' में एक अत्यन्त उदात्त चित्र खींचा है:—

'नंगों को देते वस्त्र-वसन,
भूखों को देते अन्न--अशन,
खुद रह नंगे, खुद कर अनशन,
जग को देने वालों के भी हम दानी हैं, हम दाता हैं।'

श्रमिकों और कृषकों के जीवन का पं० वंशीधर शुक्ल ने भी सुन्दर चित्रण किया है। खेतिहर मज़दूर के जीवन से संबंधित उनकी 'राम-मड़ैया' कविता बड़ी सुन्दर बन पड़ी है :—

'जहाँ बँदरवा डाका डारै, चोरी करै बिलैया।
बाँसन के ओइ झुरमुट मा है हमरी राम मड़ैया॥'

(शेष पृष्ठ ५३ पर)

कहानी —

गुप्त दान

उस पीपल के पेड़ के नीचे वह सदा बैठी रहती। शरीर पर बहुत पुराने, फटे चिथड़े लपेटे। हाथ में अल्मोनियम का बड़ा-सा टूटा कटोरा, जिसके छेदों से फुटपाथ की धूल साफ दिखाई पड़ती। केश प्रायः सब सफेद, रूखे और चिकटे। आँखें अन्दर धँसी हुईं और ज्योतिहीन। हाथों में कम्पन और चेहरे पर अनेक वर्षों की गहरी रेखायें। उस राह से आने-जाने वालों को देख दन्तहीन पोपले मुख से वह कह उठती—'बच्चा, परमेसुर के नाँव पै दिये जाव।' अनेक 'बच्चे' उधर से प्रातः निकलते। प्रातः ही क्यों, दिन भर धनिकों, मध्यवर्गीयों और श्रमिकों का आवागमन होता रहता, परन्तु भगवान के नाम पर देने वालों की संख्या भगवान ही जाने ? रामधन, छब्बीस-सत्ताइस वर्ष का युवक, मिल जाते-आते समय नित्य उसे देखता। साथियों की बातों में उसका ध्यान उधर कम जाता, किन्तु दृष्टि उसके स्थान और कान उसके स्वर से परिचित हो गये थे। पीपल के पेड़ की तरह वह भी एक जड़ पदार्थ, उसके मार्ग का एक चिन्ह-सी बन गई थी।

❀ श्री अमर, एम० ए० ❀

ग्रीष्म की लू समाप्त हुई। कालक्रम से वर्षा का आरम्भ हुआ। पानी की रिमझिम में बच्चे सड़क पर किलकारी लगाते। बुढ़िया पेड़ के नीचे पानी में ही बैठी रहती। पास के दूकानदार ने दया कर फटे टाट का एक टुकड़ा उसे दे दिया था। उसे ही ओढ़े वह अपने भगवान के नाम पर कुछ माँगती।

रामधन सायंकाल छुट्टी पाकर छाता लगाये अपने मकान की ओर धीरे-धीरे जा रहा था। पीपल के पुराने तने से लिपटी बुढ़िया ने अपनी चिर-परिचित आवाज़ में माँगा। रामधन की विचार-धारा टूटी। उसने पूरी दृष्टि से बुढ़िया को देखा। ज्यादा देखने की आवश्यकता न थी। संसार भर का दैन्य मानों उसमें केन्द्रित हो गया था—करुण, निर्मम और वास्तविक। समीप ही गन्दी नाली में जल बह रहा था। बुढ़िया की फटी धोती का एक भाग पानी की लहरों में काँप रहा था इस भीषण दरिद्रता से घबड़ाता हुआ। इसी समय पीछे से मोटर के हार्न की कर्कश ध्वनि ने रामधन को चौंका दिया। कीचड़ के छींटों से बचने के लिये रामधन चट उछल कर फुटपाथ पर आ गया। कीचड़ के छींटों का पूर्ण वेग तथा भार पड़ा बुढ़िया के सूखे, गहरी लकीरों वाले मुख पर। बुढ़िया ने अपने जीर्ण हाथों से उसे पोंछने का प्रयत्न किया और धीमे स्वर में भगवान के नाम पर कुछ पाने की प्रार्थना दुहराई। रामधन ने देखा कि छींटे फेंकने वाले को उसने कुछ न कहा।

रामधन ने दूर निकल जाने वाली मोटर पर एक दृष्टि फेंकी और फिर अपनी जेब में हाथ डाला। दस पैसे थे। एक आने की मैंनपुरी। दो पैसे की लल्लू के लिये मूँगफली। तीन पैसे की दियासलाई। बचा एक पैसा। उसने पास के दूकानदार से दियासलाई खरीदी और पैसा बुढ़िया के कटोरे में डाल दिया। पैसे की खनक ने बुढ़िया के कानों को सचेत किया। 'दूधन बढ़ौ पूतन फलौ, बच्चा' का आशीर्वाद देकर काँपते हाथों से उसने कटोरा टटोला। पैसा पाया। रामधन देख रहा था।

'भैया, दुई पैसा का सतुआ दै देव', उसने क्षीण स्वर से बगल के दूकानदार को पुकारते हुये कहा। दूकानदार अन्य ग्राहकों में व्यस्त था, न सुन सका। बुढ़िया एक बार ही पुकार कर शान्त हो गई, मानों उसकी सारी शक्ति उस पुकार में ही समाप्त हो गई हो। उसकी इस शांति ने रामधन को अशान्त कर दिया। वह अपनी आवश्यकताओं को भूल गया। दूकान से सत्तू लेने झपटा। दूकान वाला रामधन की सूरत से परिचित था। उसे सत्तू माँगते देख बोला—'क्यों भाई, घर में खैर तो है?' 'हाँ,' संक्षिप्त उत्तर दे रामधन ने सत्तू लिया, पैसे दिए। सत्तू लेकर भिखारिन के पास पहुँचा।

'माई, ले सत्तू।' कह कर उसने पुड़िया खोलनी शुरू की। भिखारिन ने अपना कटोरा आगे बढ़ा दिया। रामधन ने बड़े-बड़े छेदों वाले कटोरे को देखा। सत्तू का उसमें रखना असम्भव था। कैसे डाले? बुढ़िया ने रामधन का पैसा और दूसरा पैसा मुट्ठी से निकाल कर बोलने वाले की दिशा में हाथ बढ़ाया। रामधन उस जीवित शव के-से सूखे हाथों में रक्खे ताँबे के सिक्कों को देखकर घबड़ा-सा गया। उसने कागज़-समेत सत्तू कटोरे में रख दिया और पीछे हट गया।

'भैया, पैसा लै लेउ,' बुढ़िया ने कहा

रामधन चुप रहा। क्या करता। बुढ़िया का हाथ भी काँपता हुआ फैला ही रहा। कब तक रहता। रामधन को कहना ही पड़ा—'माई! रहने दे।' बुढ़िया ने दूकानदार के परिचित स्वर से भिन्न स्वर को पहिचाना और 'बच्चा, जुग-जुग जिओ' का आशीर्वाद दिया। रामधन को बुढ़िया के आशीर्वाद में सार का अनुभव हुआ।

वह घर की ओर चल दिया। बुढ़िया की दशा देखकर उसका हृदय सहानुभूति से आर्द्र था। मन क्षुब्ध था। 'कैसे सत्तू सानेगी? पानी का नल सड़क के दूसरी ओर है। कार, ट्रक, ठेला, इक्का, ताँगा और साइकिलों का ताँता बीच में। आँख वाले भी लपेट में आ जाते हैं। कैसे पहुँचेगी नल तक?' यह विचार करते ही सहायता करने का एक अनिश्चित क्रम बना कर वह लौट पड़ा। देखा सत्तू का कटोरा बुढ़िया ने हाथों से ढँक रक्खा है और शांत बैठी है।

रामधन ने आते ही पूछा—'माई, पानी कहाँ से लाती हो?' 'बच्चा उई नल ते। राति का जब सवारी बन्द हुई जाति हैं, धीरे धीरे पहुँच जाइत है। कबहूँ कोउ यहीं दै देत है। भोरहरे मुनुवाँ भैया दै देत हैं।' मुनुवा भैया से सम्भवत: पास के दूकानदार का ही संकेत रहा हो।

'पानी किसमें रक्खेगी?'

बुढ़िया ने अगल-बगल हाथ फेरा। कुछ न मिलने पर अन्वेषण की परिधि बढ़ाई, परन्तु जो चाहती थी, न मिला। रामधन ने पूछा-'क्या लुटिया ढूँढ़ती हो?'

'नाहीं भैया, हुंडा रहै।'

हुंडा वहाँ न था। शायद मेहतर ने सड़क पर झाड़ू लगाते समय कूड़ा समझ कर उसे साफ कर दिया था। ज़मीन पर पड़े टूटे हुंडे को कूड़े के अतिरिक्त और क्या समझा जा सकता था।

बुढ़िया की शान्त, उपालम्भहीन वाणी ने रामधन की सहानुभूति की भावना को और तीव्र और सक्रिय बना दिया। पास के हलवाई से रामधन हुंडा माँगने चल दिया। बड़ी हुज्जत के बाद हलवाई ने एक फूटा-सा हुंडा दिया। रामधन उसे लेकर नल पर पहुँचा। पानी भरा। हुंडा टपक रहा था थोड़ा-थोड़ा। उसे लेकर बुढ़िया के समीप आया और सामने रखते हुए बोला—'माई, पानी ले और सत्तू खा ले।' बुढ़िया ने टटोल कर अपनी गली धोती के कोने पर सत्तू का कागज़ रक्खा और उसे पानी से साना। कुछ बहा और कुछ रहा। उसे ही खाकर उसने तृप्ति और सन्तोष की साँस ली। रामधन सब देखता रहा। गरीबी उसने देखी थी, परन्तु ऐसी नहीं, जिसमें मिट्टी का बर्तन भी सुलभ न हो। गाँव में भी निर्धन थे, परन्तु सबके पास रोटी बनाने के थोड़े-बहुत बर्तन थे, चाहे टूटे ही हों। परंतु यहाँ तो सब दुर्लभ!

इसी उधेड़-बुन में रामधन देर से घर पहुँचा। रास्ते में लल्लू के लिए मूँगफली और अपने लिए

(शेष पृष्ठ ७२ पर)

पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा भारत आज अपने आर्थिक पुनर्निर्माण में लगा हुआ है। प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि समाप्त होने जा रही है और हम अब द्वितीय पंचवर्षीय योजना के सिंहद्वार पर खड़े हैं। ऐसे समय में उद्योग में शांति का महत्व और भी बढ़ जाता है, जबकि हमें संयोजित अर्थ-व्यवस्था से होकर गुजरना पड़ रहा है। औद्योगिक शांति के बिना नव-निर्माण का कार्य किसी भी प्रकार आगे नहीं बढ़ सकता।

औद्योगिक शांति के लिये कानूनी व्यवस्था

देश में औद्योगीकरण के विस्तार के साथ-साथ मज़दूरों और मालिकों के बीच कुछ ऐसी समस्याएँ उठ खड़ी हुईं, जिन्हें हम 'औद्योगिक विवाद' कहते हैं। सन् १९४६ में केन्द्र में अस्थायी मिली-जुली सरकार के बनते ही उसका ध्यान श्रम और उद्योग से संबंधित इन राष्ट्र-व्यापी समस्याओं की ओर गया और उसने मार्च, १९४७ में औद्योगिक विवाद कानून, १९४७ पारित किया, जो १ अप्रैल, १९४७ से लागू हुआ। इस कानून का उद्देश्य यह था कि औद्योगिक विवादों की जाँच की जाय और उनका निपटारा कराया जा सके, जिससे औद्योगिक शांति बनी रहे। लगभग इसी उद्देश्य को सामने रखकर तत्कालीन संयुक्त प्रांतीय (अब उत्तर प्रदेश की) सरकार ने भी एक कानून सन् १९४७ में बनाया, जो 'उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद कानून, १९४७' के नाम से १ फरवरी, १९४८ से इस राज्य में लागू किया गया। इस कानून के अन्तर्गत राज्य सरकार को यह अधिकार है कि वह हड़ताल या तालाबंदी को रोक दे, मालिकों और मज़दूरों को नियोजन की विशिष्ट शर्तों का पालन करने के लिये

औद्योगिक शांति के बिना आर्थिक, संयोजन और नव-निर्माण के कार्य को तीव्र गति से किये बिना औद्योगिक शांति को स्थिर बनाए रखना कठिन है। इस प्रकार औद्योगिक शांति का महत्व दोहरा हो जाता है—संयोजन के पूर्व भी और उसके बाद भी। इस लेख में औद्योगिक शांति को स्थिर रखने के लिये किये गए प्रयत्नों का सिंहावलोकन कराते हुए उसे सुरक्षित रखने के उपायों पर विचार किया गया है।

विवश करे, औद्योगिक विवादों को समझौते और अभि-निर्णय के लिये प्रेषित करे और जनोपयोगी सेवाओं एवं प्रतिष्ठानों को काम करते रहने के लिये बाध्य करे। इन दोनों कानूनों के द्वारा औद्योगिक शांति की स्थापना में प्रचुर सहायता मिली।

औद्योगिक विराम-संधि

उपर्युक्त कानूनों के लागू होने पर भी कुछ-न-कुछ देश में औद्योगिक अशांति का वातावरण बना रहा और उत्पादन में क्षति होती रही। फलत: दिसंबर, सन् १९४७ में त्रिदलीय उद्योग सम्मेलन में सरकार, मिल-मालिकों और मज़दूरों के प्रतिनिधियों के बीच औद्योगिक विराम-संधि संपन्न हुई। उस सम्मेलन में स्वीकृत एक प्रस्ताव द्वारा मज़दूरों और प्रबंधकों से यह आग्रह किया गया कि वे औद्योगिक शांति बनाए रखें और तालाबंदी, हड़ताल या काम कम करने की नीति का अगले तीन वर्षों तक के लिये परित्याग कर दें। इसे सरकार ने भी स्वीकार कर लिया और श्रम-विषयक केन्द्रीय परामर्शदात्री परिषद् की स्थापना कर दी गई। इस परिषद् के प्रयत्नों तथा केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों के सहयोग से औद्योगिक अशांति को हटाने में इस प्रस्ताव का बड़ा मंगलकारी प्रभाव पड़ा। यही कारण है कि सन् १९४७ और सन् १९४८ के प्रथम ९ महीनों में जब काम-बंदी आदि के कारण क्रमश: १४८ लाख और ६७ लाख काम के दिनों की हानि हुई, तो सन् १९४९ की इसी अवधि में केवल ५२ लाख काम के दिनों की हानि हुई।

प्रथम पंचवर्षीय योजना और औद्योगिक शांति

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि आर्थिक पुनर्निर्माण के युग में औद्योगिक शांति का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण होता है। देश की जनप्रिय सरकार ने जब संयोजित आर्थिक पुनर्निर्माण की ओर ध्यान दिया, तो उसने औद्योगिक शांति के विश्वव्यापी एवं सामाजिक महत्व को पहिचाना। प्रथम पंचवर्षीय योजना के श्रम-विषयक ३४वें अध्याय में पृष्ठ ५७२ पर यह स्पष्ट उल्लेख है कि 'यदि हम विस्तार से विचार करें तो उद्योग में शांति का इसलिये बड़ा महत्व है कि वह विश्व-शांति को बल देती है। यदि हम उद्योग में मानव-संबंधों के लिये कोई सुदृढ़ आधार खोज निकालें, तो वर्गवाद और विश्व-संघर्ष के कारणों का निदान शीघ्र हो जाय। आर्थिक प्रगति भी औद्योगिक शांति की सहचरी है। अतएव 'औद्योगिक संबंध' केवल मालिकों और मज़दूरों के बीच की ही बात नहीं है, वरन् समाज की गहन चिन्ता का भी विषय है, जिसे वह अपने व्यापक हितों की रक्षा के लिये विधान बना कर अभिव्यक्त करता है।' इस नीति के अनुकरण का परिणाम यह हुआ कि सामान्यत: औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि हुई और वस्तुओं के मूल्य में गिरावट आई। औद्योगिक उत्पादन का सामान्यसूचक अंक, जो १९४७ में ९७.२ था, सन् १९५५ की पहली छमाही में बढ़ कर १५८ हो गया। इसी प्रकार मूल्य का सूचक अंक, जो सन् १९५४ के प्रारम्भ में ३९९.६ था, अगस्त, १९५५ के अन्त में घट कर ३५८.६ रह गया।

औद्योगिक शांति—एक सामाजिक आवश्यकता

इस प्रकार हम देखते हैं कि औद्योगिक शांति राष्ट्र-व्यापी एवं सामाजिक आवश्यकता का विषय बन चुकी है। अभी गत वर्ष (सन् १९५५ में) हमने समाजवादी ढंग की समाज-रचना के लिये संकल्प किया है, परन्तु इस प्रकार के समाज के निर्माण के लक्ष्य को पूरा करने के लिये भी संक्रान्तिकालीन औद्योगिक शांति परम आवश्यक है। प्रधान मंत्री पंडित नेहरू ने अपने एक भाषण में यह स्पष्ट कर दिया है कि समाजवादी ढंग के समाज का निर्माण हम 'लोकतंत्रात्मक और शान्तिपूर्ण ढंग से' करना चाहते हैं। अनिवार्यत: इस कथन के पीछे राजनैतिक शान्ति के साथ औद्योगिक शान्ति का आशय भी छिपा हुआ है। आज का मज़दूर समाज का एक विशिष्ट अंग है और समाजवादी समाज की स्थापना में निश्चय ही उसका सक्रिय सहयोग बहुत स्पृहणीय होगा।

औद्योगिक अशांति के चार कारण

औद्योगिक शांति को बनाये रखने के लिये इस बात पर विचार करना आवश्यक है कि औद्योगिक अशान्ति

(शेष पृष्ठ ४९ पर)

कर्मचारी राज्य बीमा योजना के संक्षिप्त इतिहास में सन् १६५५ का वर्ष बहुत महत्वपूर्ण रहा है। योजना के प्रारंभिक काल में अनेक उतार-चढ़ाव आये, परन्तु सन् १६५५ के वर्ष में योजना की तीव्र गति से प्रगति हुई और इसे सुदृढ़ होने का अवसर मिला। सन् १६५० के प्रारंभ में ही इस योजना को मूलत: कानपुर और दिल्ली में लागू करने का विचार किया गया था, परन्तु मालिकों द्वारा उठाई गई कुछ आपत्तियों के कारण कर्मचारी राज्य बीमा कानून में १६५१ में काफी परिवर्तन करना पड़ा और अन्ततः कानपुर और दिल्ली में इस योजना को २४ फरवरी, १६५२ को लागू किया जा सका। इन नगरों में क्रमश: ८०,००० और ४०,००० श्रमिक बीमा योजना के अन्तर्गत शामिल किये गये।

१० लाख से अधिक श्रमिकों पर बीमा योजना लागू

इसके बाद भी योजना की प्रगति मंद चलती रही और सन् १६५३ के अन्त तक इसे पंजाब के केवल सात नगरों में ही लागू किया जा सका। इस प्रकार इन नगरों के कुल ३५,००० श्रमिक बीमा योजना के अन्तर्गत लाए गए।

सन् १६५४ में योजना ने एक बड़ा कदम उठाया और यह २ अक्टूबर, १६५४ को वृहत्तर बंबई में लागू कर दी गई। वहाँ के ४,२५,०००· औद्योगिक श्रमिकों को लाभ पहुँचा। इसके कुछ पहले इस योजना को जुलाई, १६५४ में नागपुर में भी लागू किया जा चुका था, जहाँ के २२,००० औद्योगिक श्रमिक इससे लाभान्वित हुए।

इस प्रकार सन् १६५४ के अन्त तक लगभग ६ लाख श्रमिक इस योजना के अन्तर्गत लाए जा चुके थे। आलोच्य वर्ष में इसने एक और बड़ा कदम उठाया और इसे अक्टूबर, १६५५ में कलकत्ता नगर और हावड़ा जिले में भी लागू कर दिया गया। इससे वहाँ के लगभग २,३६,००० श्रमिकों को लाभ पहुँचा। इसी वर्ष मध्य भारत के चार नगरों,* कोयम्बटूर, हैदराबाद और सिकन्दराबाद, आन्ध्र के ७ नगरों** और मद्रास नगर में भी बीमा योजना लागू की गई। इस प्रकार सन् १६५५ के अन्त तक भारत के अनुमानित २० लाख औद्योगिक श्रमिकों में से १० लाख से अधिक श्रमिकों पर यह योजना लागू की जा चुकी है।

* ग्वालियर, इन्दौर, रतलाम और उज्जैन।

** विशाखापट्टम्, नेलीमल्ली, चिट्टीवल्सा, एलुरु, विजयवाड़ा, मंगलागिरि एवं गुन्टूर। —संपादक।

योजना का प्रसार न केवल विस्तृत क्षेत्रों में हुआ, वरन् इसको जहाँ पहले लागू किया गया था, वहाँ भी आलोच्य वर्ष में इसे सुदृढ़ता प्राप्त हुई। इस वर्ष भी कानपुर, दिल्ली और दूसरे क्षेत्रों में, जहाँ इसे पहले लागू किया जा चुका था, सफलता मिली।

प्रादेशिक मंडलों को उच्चाधिकार प्राप्त

कर्मचारी बीमा योजना के प्रशासन के विकेन्द्रीकरण के संबंध में बीमा निगम द्वारा किये गये पहले के निर्णय को सन् १९५५ के वर्ष में क्रियान्वित किया गया। यह स्मरणीय है कि कर्मचारी राज्य बीमा (सामान्य) नियम, १९५० के नियम (Regulation) १० के अन्तर्गत स्थापित प्रादेशिक मंडलों को मूलत: कम-बेस परामर्श देने का ही काम करना पड़ता था, परन्तु बाद में यह निश्चय किया गया कि प्रादेशिक मंडलों को प्रादेशिक स्तर पर योजना के प्रशासन का भार संभाल लेने के लिये उच्चाधिकार संपन्न बनाया जाय, और प्रादेशिक कार्यालय जिस राज्य में स्थित हो, उस राज्य के श्रम मंत्री उसकी अध्यक्षता करें। तदनुसार बंबई, कलकत्ता, मद्रास और कानपुर के प्रादेशिक मंडलों का पुनर्निर्माण कर आलोच्य वर्ष में उद्घाटन किया गया। कानपुर प्रादेशिक मंडल की प्रथम बैठक २७ सितंबर, १९५५ को उत्तर प्रदेश के श्रम मंत्री आचार्य युगल किशोर की अध्यक्षता में हुई।

कर्मचारी राज्य बीमा योजना अब तक देश के प्रमुख औद्योगिक नगरों में लागू की जा चुकी है और सन् १९५५ के अन्त तक देश के औद्योगिक श्रमिकों की अनुमानित २० लाख की आबादी में आधी से अधिक इसके हितलाभों से लाभ उठाने लगी है। बीमा योजना की प्रगति और प्रसार की दृष्टि से सन् १९५५ का वर्ष स्मरणीय रहा है।

हितलाभों का विस्तार

अपनी वर्तमान रूप-रेखा के साथ योजना के प्रसार के अलावा योजना के अन्तर्गत हितलाभों के विस्तार के संबंध में भी इस वर्ष अनेकों महत्वपूर्ण निर्णय किये गये। सन् १९५४ में श्रमिकों के परिवारों को भी चिकित्सा-संबंधी हितलाभ देने के प्रश्न पर बीमा निगम द्वारा विचार किया गया था और उक्त वर्ष के अन्त में निगम की पूँजी और देयधन का मूल्यांकन करने के लिये एक मूल्य-निर्धारक (Valuer) नियुक्त किया गया था, जो अब तक के अनुभव के आधार पर अनुदान और हितलाभ की सही-सही स्थिति बता सके। मूल्य-निर्धारक ने अपना प्रतिवेदन सन् १९५५ में दिया। इसी प्रतिवेदन के आधार पर निगम के वर्तमान साधनों के अन्तर्गत ही परिवारों को चिकित्सा-संबंधी हितलाभ देना संभव हो गया और तदनुसार ही निर्णय भी किया गया। इस निर्णय को कार्यान्वित करने के निमित्त आवश्यक प्रबंध करने के लिये राज्य सरकारों से प्रार्थना की गई। इस निर्णय के अनुसार निगम (Corporation) परिवारों को दिये जाने वाले चिकित्सा-संबंधी हितलाभ का तीन-चौथाई भाग देगा और राज्य सरकार उसका एक-चौथाई भाग देगी।

बीमा हुए क्षय-ग्रस्त रोगियों को बीमा योजना के अन्तर्गत और अधिक हितलाभ देने का प्रश्न भी निगम के विचाराधीन था। तदनुसार १८ सप्ताहों के लिये १२ आने या अन्तिम बार देय बीमारी हितलाभ की आधी दर से, जो भी अधिक हो, बढ़ा हुआ बीमारी हितलाभ देने का निश्चय किया गया। जहाँ तक क्षय-रोगियों को चिकित्सा-संबंधी हितलाभ देने का प्रश्न है, दिसंबर, १९५५ में हुई निगम की बैठक में यह निश्चय किया गया कि यदि बीमायुक्त व्यक्ति दो वर्ष या अधिक से काम करता रहा हो, तो चिकित्सा की अवधि एक वर्ष और बढ़ा दी जाय।

प्रस्तावित अस्पताल

बीमा हुए व्यक्तियों को भर्ती कर उपचार करने के लिये अस्पताल खोलने के लिये राज्य सरकार ने ग्रैण्ड

(शेष पृष्ठ ५४ पर)

नई ज़िन्दगी

एक छोटी-सी घटना इधर देखी है, उसी को लिखने का लोभ मन में उठ रहा है। बिना किसी टेकनीक का परिधान पहिनाए उसे ज्यों का त्यों लिख रही हूँ।

एक बुढ़िया लगभग दो साल से इस मुहल्ले में भीख माँगने आती रही है। हफ्ते में लगभग दो दिन वह मेरे दरवाज़े पर भी आती है। उसकी आवाज़—'बिटिया, बुढ़िया दुआ देत है'—कानों में बेहद परिचित हो गई है और यदि कभी बुढ़िया किसी हफ्ते नहीं आई, तो भी यह आवाज़ कानों में गूँजने लगती है। उसके आने का क्रम चल रहा है। वह आती है, दरवाज़ा चाहे बन्द हो चाहे खुला, वह आवाज़ लगाती है और मेरी माँ उसे खाने के लिये रोटी, दाल वगैरह देती हैं। यदि खाना तब तक नहीं बना है, तो उससे कह दिया जाता है—'अभी देर है,' और वह खाना बनने की इन्तज़ारी में घण्टे-आध घण्टे बैठी रहती है।

यों हमारा परिवार भी पढ़ा-लिखा है, भीख माँगने वालों को देखकर कम से कम बुज़ुर्गों को छोड़ कर हम सब भाई-बहिन तो चिढ़ते ही हैं, पर घर के दरवाज़े पर आए हुए भिखारियों या साधुओं से कुछ कहने की हम लोगों में से किसी की हिम्मत नहीं है, क्योंकि यह छोटा-मोटा साम्राज्य माँ का है और वहाँ शिक्षा के कोई तर्क नहीं चल सकते। द्वार पर आए हुए व्यक्ति को निराश नहीं किया जा सकता। जब भिखारी हमारे पीछे-पीछे चल कर गिड़गिड़ाते हैं, तो शिक्षा के द्वारा अर्जित किया हुआ आदर्श हम लोग बाज़ार में बघारते हैं—'तुम लोग काम करना नहीं चाहते; यह भीख माँगना भी एक पेशा बना रखा है; पता नहीं, हिन्दुस्तान कब तक ठीक होगा; तुम लोगों को भीख माँगते शरम नहीं आती;' आदि, आदि बातें कह कर हम अपने दंभ की हामी भरते हैं और भिखारियों से पीछा छुड़ाते हैं। परन्तु घर में तो रोटी की पत्तल और दाल का दोना हमी को दरवाज़े तक पहुँचाना है और हम लोग बिना आनाकानी के यह सब कर देते हैं, क्योंकि हमारी भूख का शमन भी घर में ही होना है और यदि हम लोगों की लापरवाही या

❀ कुमारी रमा सिंह ❀

अवश्य से बुढ़िया भूखी ही चली गई, तो वह दिन हमारे उपवास का भी मुहूर्त्त बन जायगा, चाहे कोई पुण्य तिथि हो या न हो। यों आज्ञा-पालन के नाते हम सब बुढ़िया की खातिर कर देते हैं, पर जब कभी आपस में बातचीत करते हैं, तब ज़रूर भीख माँगने की प्रवृत्ति की बुराई करते हैं। बुढ़िया की आलोचना में कोर-कसर नहीं छोड़ते। आखिर इतनी बूढ़ी भी नहीं है कि रोज़-रोज़ दावत खाने आ जाया करे। पता नहीं, ये लोग काम क्यों नहीं करते ? भिक्षा-वृत्ति भी सामाजिक जीवन का बोझ ही है। पर हम लोगों की यह आलोचना कमरे की दीवारों में ही गूँज कर खो जाती है, घर का जो रवैया है, उस पर इसका असर नहीं। घर का सारा काम एक ढर्रे पर चल रहा है। उस ढर्रे में बुढ़िया का भी अपना एक अस्तित्व बन गया है। वह आती है, आवाज़ लगाती है, खाना खाती है और अनगिनत असीस देती हुई सामने वाली गली में लोप हो जाती है। यह क्रम चल रहा है दो बरसों से।

इधर काफी अरसे से बुढ़िया नहीं आई। हम लोगों को भी लगता है, जैसे एक क्रम टूट गया हो। घर के ढर्रे की एक कड़ी कहीं खो गई है। माँ भी अक्सर कहती हैं, पता नहीं बुढ़िया कहाँ चली गई है—'शायद मर गई हो बेचारी।' यह कह कर वे ठंडी साँस लेती हैं और घर के दूसरे काम-काज देखने-भालने लगती हैं। बहुत-से भिखारी आते हैं, साधु आते हैं, फिर भी उस बुढ़िया की याद घर में हो ही जाती है। अधिकांशतः भिखारी पैसा माँगते हैं, साधु तीर्थ-यात्रा के किराये में मदद माँगते हैं, पर बुढ़िया ने कभी पैसा नहीं माँगा। वह खाना खा कर बड़ी तृप्ति के साथ चली जाती थी। एक बार खाना बनने में देर देख कर जब उसे पैसे दिए गए, तो उसने इन्कार कर दिया और कहा कि वह खाना बनने का इंतज़ार करती हुई बैठी रहेगी। पर इधर पता नहीं, क्या हुआ, बुढ़िया नहीं आ रही है। मुहल्ले में कहीं भी दिखाई नहीं पड़ी। कुछ दिनों तक उसके न आने पर उसकी याद होती रही, पर उससे ऐसा संबंध ही क्या था कि उसकी खोज-खबर ली जाती और धीरे-धीरे घर के उस बँधे हुए ढर्रे में बुढ़िया की बात भी खो गई।

*　　　*　　　*

आज इतवार का दिन है और हम सभी फुर्सत से उठे हैं, फुर्सत से बैठे हैं। सभी कामों में फुर्सत का 'मूड' है। सबेरे की चाय में देरी, नाश्ते में देरी। अखबार भी इत्मीनान से देखा जा रहा है, क्योंकि छुट्टी का दिन जो है। सबेरे दस बजे तक तैयार होकर काम पर जाने का कोई सवाल नहीं। घर के बहुत-से काम भी इतवार के लिये रख लिये गये हैं, क्योंकि माँ भी सोमवार से लेकर शनिवार तक कालेज और दफ्तर जाने वालों की हड़बड़ी में ही अपना सहयोग देती रहती हैं। आज उनके भी सारे काम इकट्ठे हैं, दाल की बड़ियाँ बननी हैं, मसाला साफ होना है, कुछ बर्तनों पर कलई होनी है, इत्यादि-इत्यादि। वे एक तरफ तो महरी को दाल पीसने का आदेश दे रही हैं और दूसरी ओर फेरी वालों की आवाज़ पर भी ध्यान रखे हैं कि शायद कोई कलई करने वाला आ जाय और अगर आज भी नहीं आया, तो उन्हें नौकर को बाज़ार भेजना पड़ेगा। हम लोगों को भी उन्होंने ताक़ीद की है कि ज़रा फेरी वालों की आवाज़ पर थोड़ा ध्यान रखें और यदि कलई वाला पुकारे तो उसे फौरन आवाज़ लगाकर बुला लें। कुछ-न-कुछ ज़िम्मेदारी तो बँटानी ही है और हम सब भाई-बहिन भी अखबार की बातों पर बहस करते हुये कलई वाले को बुला लेने की ज़िम्मेदारी लिये मज़े में बैठे हैं।

हम लोगों की कुछ बहस चल ही रही थी कि एक दम दरवाज़े से एक स्त्री का स्वर आया—'सिल-बट्टा बनवाइ लेउ......सिल-बट्टा-आ-आ......।' और यह आवाज़ सुनते ही हम लोगों ने माँ से कहा—'कोई सिल-बट्टा बनाने वाली आई है।' 'यह आवाज़ तो पहिचानी-सी लग रही है,' कहते हुए माँ ने आ कर दरवाज़ा खोल कर झाँका और बोली—'अरे ! तुम कहाँ चली गई थीं ? इतने दिन कहाँ रहीं ?'

हम लोगों को पता नहीं चला कि माँ को कौन परिचित मिल गया। उन दोनों के वार्तालाप की आवाज़ हम तक पहुँच रही थी।

'कहूँ नहीं माँ जी ! पहले तो भीख माँग के पेट भरिन। आप सबकी रोटी से परान [प्राण] बच गइन, तो अब सोचिन कि हाथ-पाँउ चलाई। सिल औ बट्टा में दाँत बनवइहो ?'

हम लोगों ने भी आवाज़ को कुछ पहिचाना और बाहर दौड़ आये। देखा तो वही बुढ़िया थी, जो पहले हमारे घर भीख माँगने आती थी। माँ उसे देख कर बेहद खुश हुईं और उसका हाल पूछती रहीं। उसने बताया कि उसके बीमार होने पर उसका रुपया-पैसा उसके लड़के और बहू ने ले लिया तथा उसे घर से निकाल दिया। लड़के और बहू के आगे गिड़गिड़ाना उसे मंजूर नहीं था। तभी वह इधर-उधर माँग कर अपना भरण-पोषण करती रही। अब जब उसके हाथ-पैर सबल हुये, तब वह खुद परिश्रम करेगी, ऐसा उसका निश्चय है। माँ ने उसे सिल-बट्टा दिलवाया। बुढ़िया थोड़ी देर तक ठक-ठक कर उसमें दाँत बनाती रही और उसके बाद उसने अपनी मजूरी की इकन्नी ली। इकन्नी देते हुये माँ ने कहा, 'बूढ़ा ! खाना तैयार है, खा के जाना।' पर उस दिन तो बुढ़िया का मुँह श्रम से दमक रहा था और वह बिना मेहनत की रोटी खाने को तैयार नहीं हुई।

'अब तो मुला हाथ-पाँव ठीक हैं, माई जी ! अब तो पेट भरे की मेहनत कर सकित हई। तुहार दया से अब तो हाथ-पाँव मज़बूत हुइ गए।' इतना कह कर वह उठ खड़ी हुई। अपने छोर में बँधे हुये पैसे उसने माँ को दिखाये और कहा—'आज भरे का ई पैसा तो कमाइ लिहिन है। जब कबहूँ बल थाकी, तब इहनैं आउब। अब तो तुहार सबकी किरपा से नई ज़िन्दगी मिलिगै।' यह कहती हुई वह जाने की तैयारी करने लगी। माँ उसे देखती रहीं, जब तक वह सामने वाली गली में 'सिल-बट्टा बनवाइ लेउ—सिल-बट्टा-आ-आ' की हाँक लगाती हुई दृष्टि से ओझल नहीं हो गई।

हम सभी लोगों को बुढ़िया का यह नया रूप देख कर बेहद ताज्जुब हुआ, क्योंकि हम लोग तो भीख-माँगने वालों को पेशेवर भीख माँगने वाला ही समझते हैं। बुढ़िया ने अपनी नई ज़िन्दगी का यह रूप दिखा कर जैसे हमारे मन की रूढ़ियों को और बँधे हुये खोखले सिद्धान्तों को झकझोर दिया हो, और उसे देख कर हमारे मन में यही विचार उठ रहे थे—'काश ! यह नई ज़िन्दगी हर भिखारी को मिल सकती !'

समाज-कल्याण में श्रम-कल्याण का स्थान

हमारा देश स्वतन्त्र हुये लगभग ६ वर्ष हो रहे हैं। सदियों की दासता की बेड़ियाँ टूटने के उपरान्त हम अपने पैरों पर खड़े हुये हैं। देश के कर्णधारों का ध्यान देश की उन्नति-सम्बन्धी अनेकों समस्याओं की ओर आकर्षित हुआ है और इन समस्याओं में एक प्रमुख समस्या 'समाज-कल्याण' की है।

समाज-कल्याण और श्रमिक-कल्याण

समाज-कल्याण के अन्तर्गत पिछड़े वर्गों का उत्थान करना, विधवाओं तथा अनाथों का प्रबन्ध, अन्धों और लाचारों की देख-रेख, भिखारियों का उत्थान और श्रमिक-कल्याण आदि विषय आते हैं। यद्यपि देश की परिस्थिति देखते हुये समाज-कल्याण के अन्तर्गत जितने भी विषय अथवा समस्याएँ आती हैं, उन सब का हल शीघ्रातिशीघ्र होना अत्यन्त आवश्यक है, परन्तु फिर भी हमारे लिये इस बात को देखना अत्यावश्यक है कि किस विषय अथवा समस्या को हम दूसरी समस्याओं की अपेक्षा अधिक महत्व दें।

एक बड़ा स्वतन्त्र देश होने के नाते हमारे देश को शीघ्र ही अन्य सर्वोन्नत देशों की पंक्ति में अपना स्थान ग्रहण करना है। ऐसा तभी हो सकता है, जबकि देश अपनी आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति करके सब प्रकार से अपने को योग्य बना ले।

किसी भी देश की आर्थिक उन्नति उसकी इस शक्ति पर निर्भर रहती है कि वह अधिक से अधिक उत्पादन करे, ताकि न केवल उसकी घरेलू आवश्यकताएँ पूरी हो सकें, वरन् वह अन्य देशों को भी माल निर्यात कर सके। परन्तु हमारे निर्यात करने की शक्ति हमारे अच्छे औद्योगिक उत्पादन पर निर्भर है। अच्छा उत्पादन पूर्णतया श्रमिक की कार्य-क्षमता तथा दक्षता पर निर्भर है, क्योंकि भूमि, पूँजी, प्रबन्ध और श्रम—उत्पादन के इन चार अंगों में सबसे महत्वपूर्ण स्थान श्रम का है।

श्रम-कल्याण : पश्चिमी देश और भारत

पश्चिमी उन्नत देशों को देखने से ज्ञात होता है कि श्रमिक-हित के कार्य को वहाँ बहुत अधिक महत्ता दी जाती है। उनकी शिक्षा-दीक्षा, स्वास्थ्य, खाना-पीना, मनोविनोद आदि सभी की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है, क्योंकि वे देश इस बात के महत्व को समझते हैं कि अशिक्षित, असन्तुष्ट और दुःखी रख कर वे श्रमिक से उच्च कोटि का उत्पादन नहीं करा सकते। हमारे देश में श्रमिक की कार्यक्षमता और दक्षता बढ़े, इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसके जीवन की आवश्यकताएँ पूरी की जायँ। श्रमिक को यथोचित मज़दूरी, रहने के लिये ढंग के आवास, शिक्षा का प्रबन्ध, स्वास्थ्य की देख-रेख और जाँच का प्रबन्ध, मनोविनोद और मनोरंजन की व्यवस्था आदि सभी की ओर हमें पूरा-पूरा ध्यान देना है। ऐसा सब करने से हमारे श्रमिकों का जीवन सुखी और सन्तुष्ट होगा और उन्हें कर्त्तव्याकर्त्तव्य का पूरा-पूरा ध्यान रहेगा।

इस प्रकार इस बात में दो मत नहीं हो सकते कि समाज-कल्याण में सबसे महत्वपूर्ण स्थान श्रमिक-कल्याण का है। श्रमिक समाज की रीढ़ है और इस नाते उसे उचित महत्ता देनी ही होगी।

श्रीमती सुशीला गंजू

सन् १६४५ में युद्ध के उपरान्त सेना से हटाये गये अथवा अवकाश-प्राप्त सैनिकों को पुन: नागरिक कार्यों में लगाने के हेतु पुनस्संस्थापन तथा नियोजन संगठन की स्थापना की गई। उस समय इस संगठन का एकमात्र उद्देश्य अवकाश-प्राप्त सैनिकों को पुनः काम में लगाना और उन्हें काम के योग्य बनाने के लिये प्राविधिक एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र चलाना था।

१३१ नियोजन कार्यालय एवं ६१ प्रशिक्षण केन्द्र

सन् १६४६ के अन्त तक भी इस संगठन द्वारा उपलब्ध की गई सुविधायें केवल सेना से हटाये गये तथा अवकाश-प्राप्त सैनिकों तक ही सीमित थीं। देश के विभाजन तथा बढ़ती हुयी माँगों के फलस्वरूप नियोजन कार्यालय सभी श्रेणी के काम ढूँढ़ने वाले व्यक्तियों की सेवा के लिये खोल दिये गये। इसी प्रकार प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रशिक्षण की सुविधा भी विस्थापितों तथा अन्य वयस्क नागरिकों के लिये उपलब्ध कर दी गई। इस समय देश में १३१ नियोजन कार्यालय तथा ६१ प्रशिक्षण केन्द्र हैं।

प्रशासन-व्यवस्था

यह पुनस्संस्थापन तथा नियोजन संगठन अपने वर्तमान संगठित रूप में पुनस्संस्थापन तथा नियोजन के महासंचालक के संरक्षण में कार्य करता है। महासंचालक के इन दायित्वपूर्ण कार्यों में सहायता देने के लिये एक नियोजन संचालक, एक प्रशिक्षण संचालक तथा एक सचिवालय की व्यवस्था की गयी है, जो इस संगठन का प्रधान कार्यालय है। कार्य का सुचारु रूप से संचालन करने के लिये देश को ११ प्रदेशों में विभाजित कर दिया गया है, जिनमें से प्रत्येक का प्रधान प्रादेशिक संचालक होता है। प्रादेशिक संचालक को सहायता देने के लिये नियोजन तथा प्रशिक्षण केन्द्रों के अनेक अधिकारी होते हैं।

शिवराव समिति की रिपोर्ट

मूल रूप में इस संगठन की स्थापना केवल पाँच वर्ष के लिये हुई थी। अगस्त, सन् १६४६ में सरकार ने यह निश्चय किया था कि महासंचालक के संरक्षण में यह संगठन ३१ जुलाई, १६५२ तक कार्य करेगा। पुन: इसकी अवधि मार्च, १६५६ तक बढ़ा दी गई। इसी समय संसद् के सदस्य श्री बी० शिवराव की अध्यक्षता में प्रशिक्षण तथा नियोजन सेवा संगठन समिति की स्थापना हुई। इस समिति का कार्य यह देखना था कि देश की उत्तरोत्तर आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति में इस संगठन की कहाँ तक आवश्यकता है तथा भविष्य में इसका क्या रूप होना चाहिये। २८ अप्रैल, १६५४ को समिति ने अपनी रिपोर्ट

नियोजन सेवा संगठन का अस्तित्व उसकी उपयोगिता के कारण स्वीकार किया जा चुका है। आवश्यकता इस बात की है कि उसको स्थायी रूप देकर उसके कार्य-क्षेत्र को विस्तृत किया जाय, जिससे देश की उपयुक्त सेवा करने में वह समर्थ हो सके। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अनुभव तथा शिवराव समिति की सिफारिशों के आधार पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना में उसके प्रसार और संवर्धन का एक व्यापक कार्यक्रम निश्चित किया गया है, जिसके कार्यान्वित होने पर उसकी उपयोगिता और भी बढ़ेगी।

प्रस्तुत की, जिसकी एक-एक प्रति राज्य सभा तथा लोक सभा के प्रत्येक सदस्य के सम्मुख रखी गई। समिति की रिपोर्ट प्रकाशित हो चुकी है, जिसकी मुख्य-मुख्य सिफारिशों को संक्षिप्त व्याख्या के साथ नीचे उद्धृत किया जा रहा है।

१. संगठन को स्थायी बनाया जाय—नियोजन के कार्य को हर संभव उपाय द्वारा दृढ़ करना तथा उसको बढ़ाना सरकार का एक स्वीकृत लक्ष्य है। नियोजन सेवा संगठन एक ऐसा विभाग है, जो श्रमिक संघों के प्रभावपूर्ण संगठन, बेकारी की समस्या का अन्त करने के लिये आवश्यक तथ्यों के निरूपण तथा व्यक्तियों और काम की जगहों के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिये एक प्रधान आधार है। नियोजन संगठन की आवश्यकता तथा उसको स्थायी रूप देने के प्रश्न को राज्य सरकार, मज़दूर संघ तथा नियोजकों से मान्यता भी प्राप्त हो चुकी है।

२. प्रशासन राज्य सरकार करे—निम्न कारणों से समिति ने नियोजन कार्यालयों का प्रशासन प्रादेशिक सरकारों को सौंपने का प्रस्ताव रखा है :—

(क) नियोजन-कार्यों के कार्यक्रम तथा कार्यक्षमता का परिचय स्थानीय नियोजन कार्यों से ही मिल सकता है। वास्तव में स्थानीय क्षेत्रों में ही नियोजन-सुविधाओं का उपयोग किया जा सकता है।

(ख) नियोजन तथा बेकारी की समस्या राज्य की आर्थिक दशा की कमज़ोरी की ही परिचायक है। इस समस्या का अन्त केवल नियोजन सेवा के द्वारा ही हो सकता है, जिसे करना एकमात्र प्रादेशिक सरकार का कार्य है। यदि नियोजन कार्यालय इस कार्य में प्रादेशिक सरकारों की सहायता करना चाहें, तो यह आवश्यक होगा कि वे प्रादेशिक सरकार के अधिकारियों के सहयोग से प्रशासन-सम्बन्धी कार्यों को करें।

(ग) प्रादेशिक सरकारों को प्रशासन का भार सौंप देने के उपरान्त ही उनका पूर्ण सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

केन्द्रीय सरकार के निरीक्षण से नीति-निर्धारण में एकरूपता बनी रहेगी तथा सम्पूर्ण देश में आदर्श नियमों के पालन में सहायता मिलेगी।

३. सूचनाओं का संग्रह एवं व्याख्या, आदि—बेकारी की समस्या का निदान विश्वसनीय तथा समयानुकूल सूचनाओं, रोज़गार की दशा तथा उसकी गतिविधि पर निर्भर रहता है। एकत्रित की गई सूचनायें इस विषय की होती हैं कि नियोजन कार्यालयों की सहायता प्राप्त करने वाले बेकार व्यक्तियों तथा कार्यालय को सूचित रिक्त स्थानों की संख्या कितनी है।

प्रथम बार काम चाहने वालों या स्कूल-कालेजों से शिक्षा समाप्त कर निकलने वाले युवकों में से अधिकतर तो ऐसे होते हैं, जिनको उचित कार्यों में लगाने के लिये व्यावसायिक सलाह तथा निर्देश देना आवश्यक होता है। अतः बेकारी की समस्या को दूर करने में इस प्रकार के परामर्श का कार्य बड़ा महत्वपूर्ण है।

नियोजन कार्यालयों के विरुद्ध यह एक आम शिकायत है कि वे कार्य के योग्य उचित व्यक्तियों को नहीं भेजते। इस प्रणाली में सुधार तभी हो सकता है, जबकि कार्यालय परीक्षण के उपरान्त व्यक्तियों को चुन कर श्रेणियों में विभक्त कर दे। अतः कार्यालयों को चाहिये कि वे परीक्षाओं के द्वारा प्रशिक्षण अथवा व्यवसायों के लिये इच्छुक प्रार्थियों की योग्यता तथा निपुणता को निर्धारित करें।

नियोजकों तथा श्रमिकों के लिये संगठन की उपयोगिता बढ़ाने में व्यावसायिक खोज तथा कार्यों का ठीक विभाजन अति आवश्यक है।

४. तथ्यों और आँकड़ों का संग्रह—जन-शक्ति का उपयोग अनेक तथ्यों एवं आँकड़ों पर निर्भर है: रोज़गार तथा बेरोज़गारी के तथ्य, काम तथा व्यापारिक संस्थायें, रिक्त स्थान कितने हैं तथा कितनों की नियुक्ति हुई तथा कितने व्यक्ति काम की तलाश में हैं। अतः नियोजकों के लिये यह आवश्यक कर दिया जाना चाहिये कि इस प्रकार का छमाही लेखा अवश्य प्रस्तुत करें।

५. वैयक्तिक नियोजक रिक्त स्थानों की सूचना दें—जनमत से प्रभावित होकर समिति ने इस बात की सिफारिश की है कि नियोजन कार्यालयों के द्वारा रिक्त स्थानों की पूर्त्ति की प्रणाली केन्द्रीय सरकार, राज्य

सरकार, स्थानीय संस्थायें, राज्य सरकार द्वारा संचालित कार्यालयों, अर्ध-सरकारी तथा कानून द्वारा निर्मित सभी संस्थाओं के लिये समान रूप से लागू होनी चाहिये। जहाँ तक सार्वजनिक गैर-सरकारी संस्थाओं का प्रश्न है, समिति ने यह निश्चय किया है कि उनके लिये आवश्यक होना चाहिये कि वे अपने सभी रिक्त स्थानों की सूचना नियोजन कार्यालयों को दें, जिससे उन्हें योग्य प्रार्थियों को अधिक से अधिक संख्या में कार्य दिलाने की सुविधा प्राप्त हो सके तथा कार्यालयों में लिखित सभी प्रार्थियों को अधिक काम पा सकने का अवसर दिया जा सके। इस प्रकार नियोजन कार्यालयों को सभी आवश्यक सूचनाएँ प्राप्त हो जायँगी। इससे व्यवसाय का झुकाव किस ओर है, यह भी मालूम हो जायगा, अत: वे सरकार तथा जनता को अपने प्रशिक्षण-कार्यक्रम तथा अन्य उन्नतिशील कार्यक्रमों के विषय में परामर्श भी दे सकेंगे।

९. संगठन का व्यय-भार—समिति ने यह निश्चय किया है कि संगठन का व्यय ६० : ४० के अनुपात में केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के बीच विभाजित होना चाहिये। उपयोग से बचे हुये धन को संगठन के कार्यों को बढ़ाने के लिये उपयोग में लाना चाहिये।

नियोजन तथा प्रशिक्षण विभागों के पृथक्करण के सम्बन्ध में समिति का प्रस्ताव है कि नियोजन कार्यालय प्रशिक्षण के विषयों को निश्चित करने, प्रशिक्षण केन्द्रों के विकास, प्रशिक्षण के लिये व्यक्तियों के चुनाव तथा जिन्होंने शिक्षा समाप्त कर ली है, उनके लिये योग्य काम ढूँढ़ने में सहायता करें।

सिफारिशें स्वीकृत

सन् १९५४ में नयी दिल्ली तथा सन् १९५५ में हैदराबाद में हुये श्रम मंत्रियों के सम्मेलन के ११वें तथा १२वें अधिवेशनों में शिवराव समिति की सिफारिशों पर विचार किया गया तथा केन्द्रीय सरकार ने उनको स्वीकार कर लिया। समिति के प्रस्तावों को लागू करने के सम्बन्ध में राज्य सरकारों से भी विचार-विनिमय किया जा रहा है। आशा है कि वर्तमान वित्तीय वर्ष के अन्त तक प्रतिदिन का प्रशासकीय कार्य राज्य सरकारों को हस्तांतरित कर दिया जायगा।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना

प्रथम पंचवर्षीय योजना की रिपोर्ट तथा 'प्रशिक्षण तथा नियोजन कार्य संगठन समिति' की सिफारिशों के आधार पर केन्द्रीय सरकार ने जनशक्ति तथा नियोजन के सम्बन्ध में ६ नई योजनायें तैयार की हैं, जो द्वितीय पंच-वर्षीय योजना के अन्तर्गत सम्पूर्ण देश में लागू की जायँगी :

१. क्षेत्र-विस्तार के लिये नवीन कार्यक्रम—इस योजना के अन्तर्गत द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रथम तीन वर्षों में नियोजन-कार्य का क्षेत्र इतना विस्तृत हो जायगा कि जिले के मुख्य स्थान तथा मुख्य व्यावसायिक केन्द्र इसके अन्तर्गत-आ जायँगे।

२. नियोजन-सम्बन्धी सूचनाओं का पाँच भागों में संग्रह—(क) यह निश्चित किया गया है कि आँकड़े सविस्तार एकत्रित किये जायँगे। इससे एक ओर तो नियोजन कार्यालयों द्वारा बेकार व्यक्तियों को दिये गये रोज़गार तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण की सहायता से सम्बन्धित सूचनाओं की जानकारी होगी, तथा दूसरी ओर विभिन्न व्यावसायिक तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली नियोजन-सुविधाओं की जानकारी होगी। रिक्त स्थानों की आवश्यक जानकारी के लिये यह आवश्यक है कि इस प्रकार की सूचनाएँ एकत्रित की जाएँ।

(ख) दूसरी योजना के अन्तर्गत यह प्रस्ताव किया गया है कि श्रमिक-संख्या के मासिक विवरण के साथ सब केन्द्रीय, प्रादेशिक एवं अर्ध-सरकारी कार्यालयों, कानून द्वारा निर्मित अन्य संस्थाओं तथा स्थानीय संस्थाओं को तिमाही विवरण नियोजन कार्यालयों के पास भेजना होगा, जिसमें यह बताना होगा कि पिछली अवधि में कितने स्थान रिक्त हुये, किस प्रकार लोगों को कार्य पर नियुक्त किया गया तथा निश्चित समय के अन्त तक कितने स्थान रिक्त रहे। जनशक्ति-सम्बन्धी सूचनाओं को एकत्रित करने का यह मुख्य आधार होगा।

(ग) यह प्रस्तावित किया गया है कि नियोजन कार्यालय उन निजी नियोजकों के सम्बन्ध में जो ५० या इससे अधिक व्यक्तियों को नियुक्त करते हैं, नियोजन-सम्बन्धी सूचनाओं को 'नियोजक पंजी-लेखन' के रूप में एकत्रित करेंगे, जिससे सभी मुख्य-मुख्य नियोजकों का एक

प्यास बुझाओ

श्री पुरुषोत्तम तिवारी

तुम करो परिश्रम अथक,
न रोको हाथ, न छोड़ो साथ
हथौड़े और कुदाली का,
हलों में नँधे हुए
युग के साथी
ऊँचे-ऊँचे कंधों वाले
चंचल बैलों की जोड़ी का !
जीवन गति है,
पाँव उठाओ और बढ़ाओ
श्रम के, नए सृजन के पथ पर
आशा का सम्बल लेकर तुम
श्रम-आराधक, नव-निर्माता,
मुक्त देश के गौरव के प्रतीक !
चलो, न मानो हार,
हार को तो तुम जानो जीत,
न भूलो तुम स्वर्णिम इतिहास
पूर्वजों के श्रम-गौरव का।
स्वेद की बरसातों से—
स्वाँति-बूँद से—
चातक-सी प्यासी धरती की प्यास बुझाओ !

व्यापक लेखा बनाया जा सके। इससे मुख्य व्यवसायों तथा औद्योगिक क्षेत्रों के श्रमिकों की मज़दूरी की दर-सम्बन्धी सूचनाओं को एकत्रित करने में सहायता मिलेगी।

(घ) चौथा प्रस्ताव यह है कि आवश्यक रूप से प्रेषित आँकड़ों के आधार पर रिक्त स्थानों का केन्द्र तथा राज्यों के आधार पर विश्लेषण किया जायगा तथा केन्द्र और राज्यों को समान रूप से सुविधा प्रदान की जायगी।

(ङ) यह जानने के लिये कि विभिन्न उद्योगों तथा व्यवसायों की आवश्यकता के अनुकूल शिक्षा दी जा रही है अथवा नहीं, यह आवश्यक है कि प्रशिक्षण-सुविधाओं तथा शिक्षा-प्राप्त व्यक्तियों के पूर्ण आँकड़े एकत्रित किये जायँ। ये सूचनायें शिक्षण-कार्यक्रमों के प्रसार के लिये नियोजन-मंत्रणाओं तथा औद्योगिक पथ-प्रदर्शन के लिये बहुत ही मूल्यवान होंगी।

३. **युवकों के लिये पृथक विभाग की स्थापनाः**—यह प्रस्ताव किया गया है कि बड़े-बड़े नगरों में नियोजन कार्यालयों में एक विशेष विभाग खोला जायगा, जिसके द्वारा युवकों को विशेष रूप से नियोजन-सुविधायें दी जायँगी। यह योजना मुख्यतया स्थानीय शिक्षा संस्थाओं, राज्य के शिक्षा विभाग तथा खासकर उन संस्थाओं से सम्बन्धित रहेगी, जहाँ लड़कों तथा लड़कियों को औद्योगिक शिक्षा दी जाती है।

४. **नियोजन मंत्रणालयों की स्थापनाः**— जिन युवकों तथा युवतियों ने अब तक अपने व्यवसाय का निश्चय नहीं किया है अथवा जिनकी शिक्षा किसी निश्चित व्यवसाय से सम्बन्ध नहीं रखती, जब वे लोग सहायतार्थ कार्यालयों में आते हैं, तो उनको व्यावसायिक सलाह देना आवश्यक होता है। अतः यह निश्चय किया गया है कि नियोजन कार्यालयों में मंत्रणालयों की स्थापना की जायगी, जो उनको व्यावसायिक राय बताने के साथ यह भी बतायेंगे कि वे किस योग्य हैं। इसके लिये योग्यता-परीक्षा तथा अन्य मनोवैज्ञानिक तरीकों को काम में लाया जायेगा, जिससे प्रार्थियों को सफलतापूर्वक व्यवसायों में लगाया जा सके।

(शेष पृष्ठ ५४ पर)

उत्तर प्रदेश में श्रम-हितकारी कार्य – एक सिंहावलोकन

दर्शनपुरवा केन्द्र में वार्षिक खेल-कूदों के उद्घाटन पर श्रमायुक्त श्री ओंकारनाथ मिश्र, आई० ए० एस० भाषण दे रहे हैं।

उत्तर प्रदेश श्रम-हितकारी कार्य में अग्रणी रहा है, क्योंकि श्रम-हितकारी कार्य को संगठित करने वाला देश में यह प्रथम राज्य है। उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सन् १९३७ में प्रारम्भ किए गये हितकारी कार्य का लक्ष्य श्रमिकों को श्रम-कल्याण केन्द्रों के माध्यम से चिकित्सा, स्वस्थ मनोरंजन, खेल-कूद आदि का प्रबन्ध करके उनका कल्याण-साधन कर उन्हें सुखी बनाना था। उक्त वर्ष श्रम-हितकारी कार्य का प्रारम्भ छोटे रूप में केवल १० हजार रुपये से कानपुर में चार श्रम-हितकारी केन्द्र खोल कर किया गया। तबसे प्रतिवर्ष श्रम-हितकारी कार्य के लिए आवश्यक अनुदान, हितकार्य केन्द्रों की संख्या और उनमें होने वाले हितकारी कार्यों का क्षेत्र क्रमशः बढ़ता जा रहा है। सन् १९५५ के वर्ष में श्रम-हितकारी केन्द्रों की कुल संख्या ४४ हो गई और बजट-अनुदान बढ़ा कर ८,८२,६०० रु० कर दिया गया। औसत् व्यय 'अ' और 'ब' श्रेणियों के केन्द्रों के लिए २१,४०० रु० और 'स' श्रेणी के केन्द्र के लिए १५०० रु० है।

ये केन्द्र अपने कार्यक्रमों के अनुसार 'अ', 'ब' और 'स' श्रेणी में विभक्त हैं। इन केन्द्रों में से पन्द्रह कानपुर में, चार-चार लखनऊ और बरेली में, दो-दो केन्द्र सहारनपुर, फिरोज़ाबाद, अलीगढ़ तथा हाथरस (अलीगढ़) में तथा मुरादाबाद, गाज़ियाबाद, बनारस, मिर्ज़ापुर, आगरा, इलाहाबाद, रुड़की, रामपुर, झाँसी, हरवंशवाला, हर्बर्टपुर, रामकोला, खटौली, बलरामपुर और राजा-का-सहसपुर में से प्रत्येक नगर में एक-एक केन्द्र है। एक नया 'ब' श्रेणी का केन्द्र धौरा (झाँसी) में पत्थर खोदने वाले मज़दूरों के कल्याण के लिए खोलने की स्वीकृति दी जा चुकी है और बहुत शीघ्र ही इस केन्द्र के प्रारम्भ होने की आशा है।

मौसमी केन्द्रों की सफलता

खटौली (मुज़फ्फरनगर), बलरामपुर (गोंडा) और राजा-का-सहसपुर (मुरादाबाद) के श्रम-हितकारी केन्द्र प्रति वर्ष गन्ना पेरने के दिनों में अर्थात् नवंबर से मार्च तक खुले रहते हैं।

ये मौसमी केन्द्र बहुत सफल सिद्ध हुए हैं, अतएव सरकार उन्हें पूरे वर्ष चलाने का विचार कर रही है। रामकोला (ज़िला देवरिया) का मौसमी केन्द्र सन् १९५५ में स्थायी बना दिया गया है।

राजयक्ष्मा का उपचार

श्रम-हितकारी केन्द्रों के अतिरिक्त कानपुर में, जहां क्षय का विस्तार सर्वाधिक है, कानपुर-स्थित राजकीय

१

२
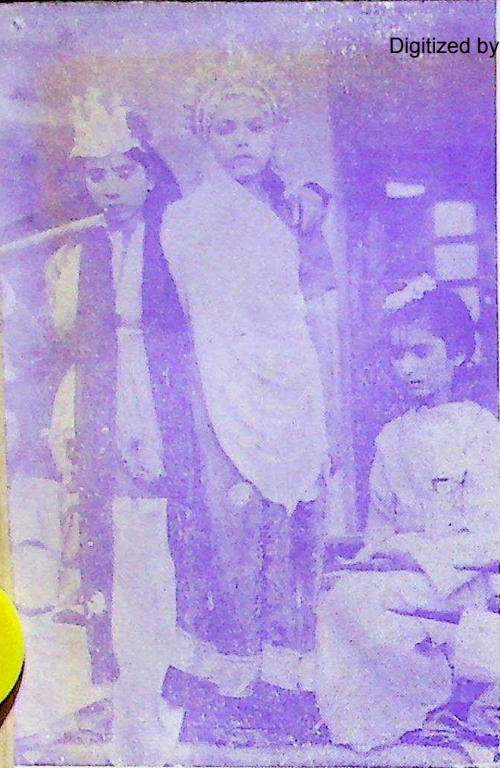
श्रम-हितकारी राजयक्ष्मा चिकित्सालय में श्रमिक क्षय-रोगियों के उपचार का प्रबंध किया गया है। यहाँ पर श्रमिकों तथा उनके परिवार के लोगों की चिकित्सा मुफ्त की जाती है। जिन श्रमिकों का मासिक वेतन १०० रु० से अधिक है, उनसे एक्सरे तथा स्क्रीनिंग का नाममात्र शुल्क लिया जाता है।

संकट-काल की आवश्यकताओं के लिए दो पलंगों का प्रबंध भी किया गया है। चिकित्सालय में रखे गये रोगियों को मुफ्त उपाहार भी दिया जाता है। सन् १९५५ में इस चिकित्सालय द्वारा किये गये उपचार आदि का विवरण इस प्रकार है:—

(१)	एक्सरे	१,४४०
(२)	स्क्रीनिंग	७,५११
(३)	रोगियों की संख्या	३६,५३५
(४)	बीमा निगम द्वारा प्रेषित रोगी	१,८७८
(५)	नैदानिक जाँच	७,६९१

चिकित्सा-सहायता

इस समय केन्द्रों के प्रत्येक एलोपैथिक, होम्योपैथिक, आयुर्वेदिक और यूनानी दवाखानों में एक डाक्टर और उसकी सहायता के लिए दो कम्पाउण्डर रहते हैं। सभी एलोपैथिक दवाखानों का निरीक्षण समय-समय पर संबंधित ज़िलों के सिविल सर्जन करते हैं और अधिक अच्छा प्रबंध करने के बारे में श्रम विभाग को उनका परामर्श प्राप्त है। सन् १९५५ के पूर्व होम्योपैथिक दवाखानों के निरीक्षण के लिए कोई नियमित व्यवस्था न थी। इसलिए सन् १९५५ में एक चिकित्सा-अधीक्षक (Medical Superintendent) (होम्योपैथिक) की नियुक्ति की गई। राज्य के ३५ केन्द्रों में १४ एलोपैथिक, १४ होम्योपैथिक, ६ आयुर्वेदिक और कानपुर के कर्नलगंज केन्द्र में एक यूनानी दवाखाना है।

सन् १९५५ में इन दवाखानों में कुल १४,१४,९५९ रोगियों की चिकित्सा हुई। चीड़फाड़ के रोगियों की

६

श्रम-हितकारी केन्द्रों के विविध कार्यक्रम

१. राधा-कृष्ण नृत्य का एक दृश्य।
२. बाबूपुरवा केन्द्र की श्रमिक-बालिकाओं द्वारा 'शाम भई सखि, श्याम न आए' का भाव-नृत्य।
३. तीन मील की दौड़ के विजेता खिलाड़ी।
४. गोला फेंकने वाले विजेता खिलाड़ी।
५. धीमी साइकिल-दौड़ का एक दृश्य।
६. ऊँची कुदान का एक दृश्य।
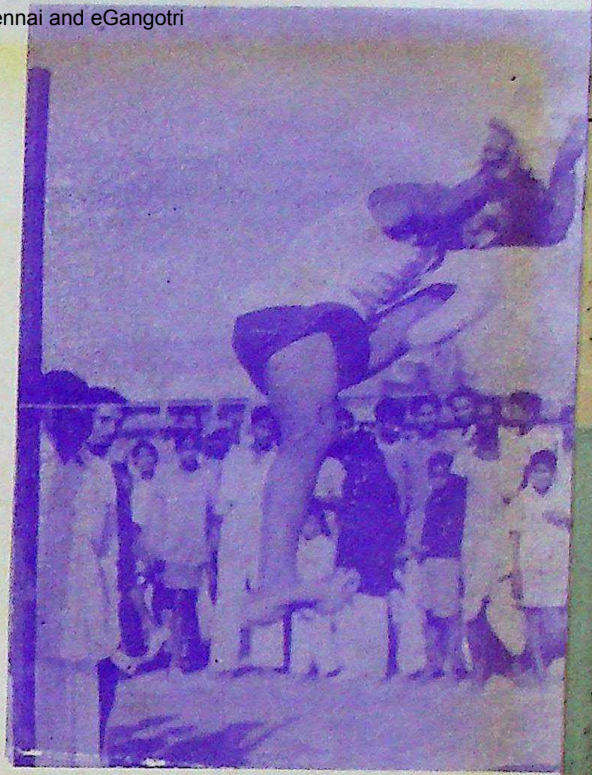
४ ५
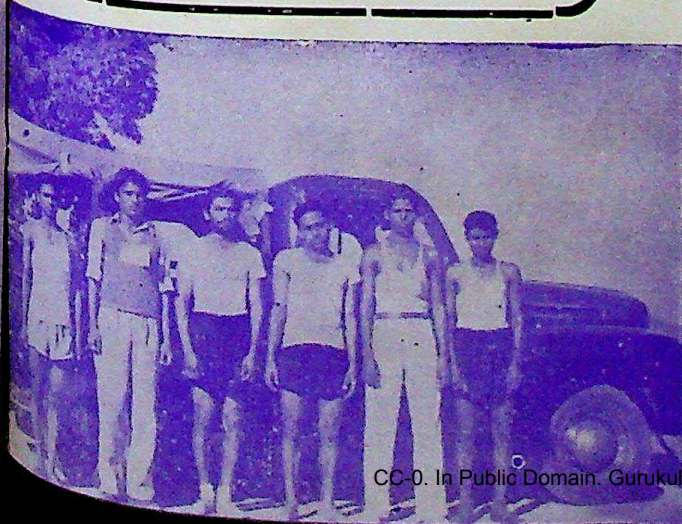
संख्या २६०० और मरहम-पट्टी कराने वालों की संख्या ४,६४,५३८ रही। चिकित्साधिकारियों ने १३२६ रोगियों को उनके घर पर देखा।

देहरादून के लिये चल चिकित्सालय

अभी तक देहरादून ज़िले के चाय बागों में काम करने वाले मज़दूरों को चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधायें प्राप्त न थीं, परन्तु अब राज्य सरकार ने उनके लिए एक चल-चिकित्सालय चलाने के लिए धन स्वीकृत कर दिया है। इस चल चिकित्सालय में एक एलोपैथिक डाक्टर और दो कंपाउण्डर पूरे सामान-सहित रहेंगे।

महिला तथा शिशु विभाग

प्रत्येक (अ) श्रेणी के केन्द्र में दो मिडवाइफ़ें और दो दाइयाँ और 'ब' श्रेणी के केन्द्र में एक मिडवाइफ़ तथा दो दाइयाँ केन्द्र में आने वाली रोगी-महिलाओं और बच्चों की देखभाल के लिए रहती हैं।

सन् १६५५ में केन्द्रों से निःशुल्क दूध पाने वाले रोगियों, प्रसूतिकाओं एवं गर्भवती स्त्रियों तथा बच्चों की संख्या क्रमशः ३२,६६४, २६,४२१ तथा २,८०,५२८ थी। बाँटे गये कुल दूध की मात्रा ८६,८३० सेर थी। इस वर्ष मक्खन निकाला गया दूध भी अनेक केन्द्रों में श्रमिकों को बाँटा गया।

केन्द्रों की मिडवाइफ़ों ने इस वर्ष प्रसव के पूर्व ३५१२ स्त्रियों को देखा, ३०६५ प्रसव कराए और ३१२६ स्त्रियों की प्रसवोपरांत सेवा की। घरों पर १,१०,१६४ स्त्रियों को परामर्श दिए गये। केन्द्रों में जाँच और परामर्श के लिए २,०३,५७६ स्त्रियाँ आईं।

सन् १६५५ में रोटरी क्लब, कानपुर ने स्थानीय हरिहरनाथ शास्त्रीनगर केन्द्र में आने वाली स्त्रियों और बच्चों के लिए खेल के मैदान का सामान दिया। सन् १६५५ में शिशु-प्रदर्शिनियों और शिशु मेलों के आयोजन बड़े पैमाने पर और अधिक बार किए गये।

नृत्य-कक्षायें

श्रमिकों के बच्चों में सांस्कृतिक विकास का लक्ष्य लेकर कुछ केन्द्रों में नृत्य-कक्षायें भी प्रारम्भ की गईं। सन् १६५५ में ये कक्षायें बड़ी जनप्रिय हुईं और अब उनमें नियमित रूप से बड़ी संख्या में बच्चे आते हैं।

(शेष पृष्ठ ६८ पर)
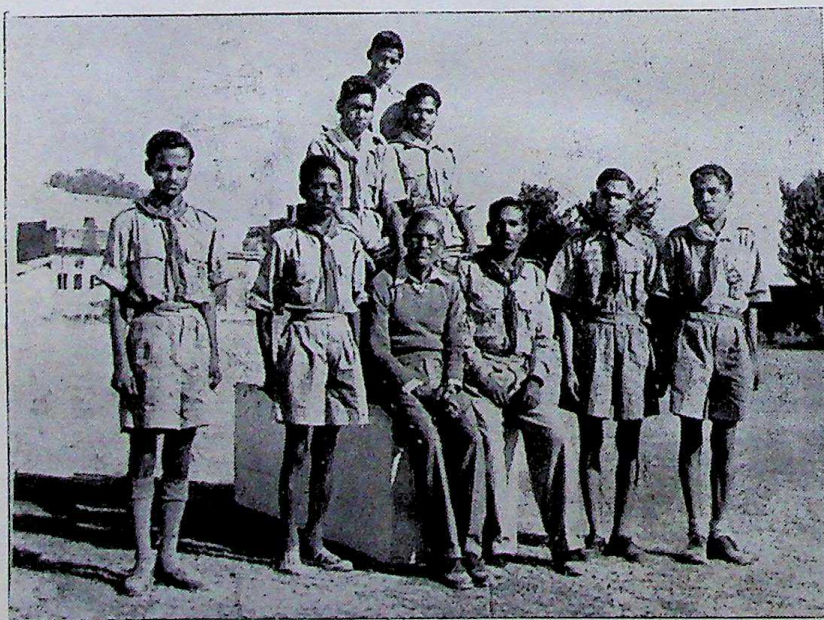
★ श्रमिक-स्काउटों का एक दल।

मेरा ख्याल था कि मैं झूठ नहीं बोलता हूँ। मैंने कई बार जब यह याद करने की कोशिश की है कि मैं कब झूठ बोला हूँ, तो मुझे ऐसा कोई मौक़ा याद नहीं आया। ऐसे अवसरों पर जबकि झूठ बोलने से किसी का कोई नुक़सान नहीं हो, लोगों का कहना है कि झूठ बोलने में कोई हानि नहीं है, जैसे मान लीजिये, आप किसी के यहाँ रात को दस बजे पहुँचे हों किसी दूसरे शहर से। घर के सब लोग खाना खा-पीकर सो गये हों। आपके जाने से अगर लोग जग कर आपकी खातिर-पूछ में लगें कि आप खाना खाकर आये हैं या भूखे हैं, तो आप धर्म-संकट में पड़ सकते हैं। मान लीजिये, आप भूखे हैं, पर आप यह बताना नहीं चाहते कि ऐसा करने पर शायद वे लोग फिर से चूल्हा जलाकर आपके लिये खाना बनाने की तकलीफ करेंगे, पर आप यह कह कर कि 'खाना खा लिया है' झूठ भी नहीं बोलना चाहते, तब आप क्या करेंगे? शायद ऐसे अवसरों के लिये ही वह नीति बताई गई है कि जहाँ किसी का नुक़सान न होता हो, वहाँ झूठ बोल देने में कोई हानि नहीं है। जहाँ ऐसे अवसरों पर शायद आप झूठ बोल देने को ही धर्म-संगत बतायेंगे, मैंने अपनी समझ से सत्य बोल कर ही लोगों की तकलीफ़ भी बचा दी है, और झूठ बोलने के इलजाम से बचे रहने का आत्म-संतोष भी प्राप्त किया है। यह इस प्रकार कि यह कह दिया कि 'हाँ, खाना तो इतना खाया है कि अब कल भी शायद भूख नहीं लगेगी।' अब इस खाने से मेरा तात्पर्य सबेरे या दिन के खाने से ही रहता है, पर लोग इस धोखे में आ कर कि शायद अभी के खाने से मतलब है, आगे अधिक छान-बीन नहीं करते या शायद इसलिये भी न करते हों कि अच्छी बला टली, छुट्टी मिली! पर अपने को तो यह संतोष रहता ही है कि साफ-साफ झूठ नहीं बोले कि 'हाँ, हाँ, अभी खाकर चले आ रहे हैं।' और कल के बारे में 'शायद' लगा दिया, जिसमें काफी गुंजाइश छोड़ दी। या मान लीजिये, दिन में किसी के यहाँ ऐसे वक्त पहुँचे कि मामला सब साफ नज़र आया! अब अगर आप कहते हैं कि खाना नहीं खाकर आये, तो सफा-सफा उनको फिर से चौका-चूल्हा तैयार करने का आदेश दे रहे हैं। अगर हाँ करते हैं, तो झूठे बोलना हुआ। ऐसे मौक़े
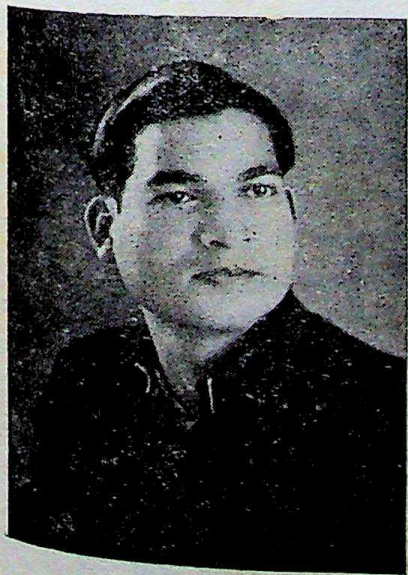
सत्य का निर्णय अत्यंत कठिन है और आज के युग में तो यह और भी कठिन हो गया है, क्योंकि तर्क और आत्मा की दुर्बलता से सत्य-कथन ही असंभव-सा हो गया है। इस लेख में विद्यार्थी जी ने सदैव की भांति कहानी-जैसी रोचक शैली में इसी सत्य का निरूपण किया है।

पर भी मैंने सत्य का सहारा लेकर काम चला लिया, जैसे यह कह दिया कि 'नहीं खाकर तो नहीं, आये, पर आप चिन्ता न करें! सप्ताह में एक दिन हम उपवास रहते हैं, सो आप इसकी चिन्ता न करें।' अब ऐसा कोई विरला ही होगा, जो यह बहस करने लगे कि उपवास के लिये आपने यही दिवस क्यों चुना! हमारे यहाँ तो हर दिन किसी-न-किसी कारण उपवास करने का बहाना निकल सकता है। दूसरे हमने यह कब कहा कि हम आज के ही दिन उपवास करते हैं? हमने तो यह कहा था कि हफ्ते में एक दिन उपवास का है, दिन कोई भी हो। हम किसी के कहने से तो उपवास करते नहीं! न किसी के बंधन में बंधे हैं! हम आज़ाद हैं। जब जी में आया, उपवास कर बैठे। जो दिन समझ में आया, चुन लिया, इस सप्ताह में सोमवार को किया, तो अगले सप्ताह मंगल के दिन। ऐसा मौक़ा आ जाने पर उसी दिन हमें उपवास कर डालने से कौन रोक सकता है! इस प्रकार हमने अपनी समझ से कई बार मुसीबत की घड़ियों में (अपनी भी और दूसरों की भी) सच बोलकर ही काम चलाया है, झूठ बोलकर नहीं; चाहे नीति के हिसाब से भी वैसा झूठ बोलने में कोई हानि न होती, पर जहाँ सच ही से काम चल रहा हो, वहाँ झूठ बोलने की क्या आवश्यकता! और सच पूछिये तो सच से अगर काम चलाया जाय, तो हर जगह चल सकता है!

पर उस दिन बिना कोशिश किये ही मुझे मालूम हो गया कि सच बोलना कितना कठिन है और यह भी कि जानकर चाहे मैंने असत्य न बोला हो, पर अनजाने न जाने कितनी बार मैं असत्य बोलता रहा होऊँगा। उस दिन मैं एक रिश्तेदार के यहाँ यों ही चला गया, तो मालूम हुआ कि वहाँ सत्यनारायण की कथा होने वाली है। सोचा, यह तो बुरा फँसा, क्योंकि सत्यनारायण की कथा बड़ी प्रचलित एवं प्राचीन होने के साथ-साथ नीरस भी मालूम होती है या शायद पंडितों के कहने का ढंग ही ऐसा हो गया हो। मैंने कभी एक साथ बैठ कर उसे शुरू से अंत तक नहीं सुना होगा। सुनने की कोशिश भी की तो ध्यान नहीं लग पाया, पर उस दिन क्या करता! सत्यनारायण की कथा से उठ कर भी तो जाना उचित नहीं समझा जाता, अतः बैठना ही पड़ा!

जब कथा समाप्त होने लगी, तो पंडित जी ने कहा- 'देवियों और सज्जनों, जिन्होंने आज सत्यनारायण की कथा सुनी है, उनसे मैं एक बात की प्रार्थना करता हूँ और वह यह कि वे कम से कम आज इस बात की प्रतिज्ञा करें कि आज सोने के वक़्त तक वे कोई बात झूठ नहीं कहेंगे।'

सबने इस बात की प्रतिज्ञा की। मन-ही-मन मैंने सोचा कि अब शाम हो चली है, रात होने में चंद घंटों की ही क़सर है। इतनी सी ज़रा देर के लिये सत्य बोलने की प्रतिज्ञा! यह भी कोई कहलाने की बात थी! इतनी देर में कौन झूठ बोलता। बेकार ही पंडित जी ने ज़रा-सी बात को इतना महत्व दिया। यह कौन मुश्किल बात थी, जिसके लिये प्रतिज्ञा की जाय। प्रतिज्ञा ही करानी थी तो एक साल के लिये कराते या कम से कम एक महीने के लिये या एक सप्ताह ही कहते। अब चार घंटों के लिये प्रतिज्ञा की जाय। यह भी खूब रही और मुझे यह सोचकर हँसी आई। कथा समाप्त हो गई थी। प्रसाद बँट रहा था। उसे लेने के बाद लोग जाने लगे। मैं भी बहुत देर से बैठा सोच रहा था कि किसी तरह कथा समाप्त हो, तो घर चला जाय, पर जब कथा समाप्त हो गई और मैं प्रसाद लेकर घर चलने की तैयारी करने लगा तो रिश्तेदार लोगों ने आ घेरा और बोले—'वाह, आप अभी कैसे जायँगे! अब आप खाना वगैरह खाकर रात को जाइयेगा।' मेरी तबियत वैसे ही काफी ऊब चुकी थी। यह नई मुसीबत खाना खाने की और सामने आ गई। भूख में खाना न मिले, यह मुझे बड़ी मुसीबत नहीं मालूम होती, पर खाने की इच्छा न हो और खाना खिलाया जाय, यह मुझे बहुत भारी मुसीबत लगती है। इससे तो किसी तरह छुटकारा पाना ही था। बिना कुछ सोचे-समझे ही ऐसे मौक़े पर अक़्ल मदद करने पहुँच जाती है। उसी की सहायता पाकर शायद बेज़ाब्ता मेरे मुँह से निकला—'नहीं, मुझे अब जाना ही है। घर पर कुछ लोग आने वाले थे, वे आये होंगे, तो इन्तज़ार कर रहे होंगे!' अपनी सूझ पर जहाँ अपने आप ही मैं अपने को दाद देने वाला था, क्योंकि अब भला कौन रोक सकता था; सबने कहा—'अच्छा, लोग इन्तज़ार कर रहे होंगे, तब तो फिर

आपको जाने ही दो। वहीं एकाएक मुझे ख्याल आया कि लो, सत्य की प्रतिज्ञा लेने के एक घंटे के अंदर ही, एक घंटे क्या, पहले वाक्य में ही झूठ बोलना पड़ा। सोचने पर भी याद नहीं आया कि मैंने किसी को बुलाया हो या कोई आने वाला हो! वैसे आने वाले तो आते ही रहते हैं और यह सोचकर मन को भुलाया जा सकता था कि आने वाले क्या आयेंगे नहीं और आयेंगे तो संभव है कि इन्तज़ार भी करने बैठ जायँ, पर यह मन बहलाने की बात थी। दरअसल हक़ीक़त यही थी कि अनजाने बिना चाहे, बिना सोचे-समझे अनायास ही मैं एक शुद्ध झूठ बात कह गया था!

तब से मैं यह तो नहीं कहता कि मैं झूठ नहीं बोलता पर हाँ, अब भी मैं हानिकारक झूठ बोलने से बचने की कोशिश अवश्य करता रहता हूँ! हानिकारक से मेरा तात्पर्य अपने लिये हानिकारक नहीं, बल्कि सभी के लिये हानिकारक होने से है। पर हाँ, अब कोई बात कहते हुये मैं अधिक सतर्क रहने लगा हूँ कि यह झूठ तो नहीं है!

बचपन में मैंने सुना था कि जो व्यक्ति बारह साल तक बराबर सत्य बोलता रहे, वह बारह साल के बाद जो बात कह देगा, वही सत्य हो जायगी, अर्थात् वह किसी को वरदान दे दे तो पाने वाले का कल्याण हो और शाप दे दे, तो विनाश! मुझे इस बात पर तब विश्वास नहीं होता था कि सत्य में इतनी शक्ति है। मैं सोचा करता था कि महात्माओं और ऋषियों ने कौन-सी तपस्या करके इतनी शक्तियाँ प्राप्त की थीं कि उनके वचन खाली नहीं जाते थे। मैंने कई बार इरादा किया था कि अगर मुझे मालूम हो जाय, तो कितनी ही कठिनाई क्यों न उठानी पड़े, मैं भी वह तपस्या अवश्य करूँगा और ऐसी सिद्धि प्राप्त करने की कोशिश करूँगा! पर यह मुझे अब मालूम हुआ कि जब हमारे लिये एक दिन भी झूठ बोले बगैर रहना इतना कठिन है, तो यह सच है कि सत्य बोलना ही एक बड़ी भारी तपस्या है। इसीलिये तो कहा गया है:—

साँच-बराबर तप नहीं, झूठ-बराबर पाप।
जाके हिरदय साँच है, ताके हिरदय आप ॥

सचमुच कितना आसान है कि हम बिना कुछ विशेष परिश्रम किये केवल ज़रा-सा ध्यान रख कर सत्य बोलने से ही वह सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं, पर फिर भी हम कभी इस ओर ध्यान देने की कोशिश नहीं करते, जिसके कारण हमारा जीवन आजकल इतना कृत्रिम बन गया है—कृत्रिम, जटिल और विषम! अगर हमारे जीवन में सत्य को और अधिक स्थान मिलने लगे, तो जीवन की कितनी समस्याएँ अपने आप ही हल हो जायँ। जीवन कितना मधुर और सुंदर बन जाय!

लेकिन ऐसा नहीं है। मुझे कितनी बार ऐसी बातें सुनने को मिली हैं, कितनी बार ऐसे अवसर आये हैं कि मेरे लिये यह निश्चय करना ही मुश्किल हो गया है कि वास्तविकता क्या है! दरअसल सत्य कौन कहता है? एक पक्ष कुछ बताता है, सुनने से लगता है कि यह ठीक कह रहा है! थोड़ी देर बाद दूसरा पक्ष बिल्कुल भिन्न बात ही बताने लगता है। उसको सुनने के बाद लगता कि यह भी ठीक ही कह रहा है! अब किसकी बात सही मानी जाय! अगर दोनों पक्ष यह भी कहते कि हमारी बात भी सही है, तब भी उसमें अधिक विश्लेषण करने की कोशिश की जाती, क्योंकि अगर कोई यह कहे कि सूरज की रोशनी में हरा रंग है और दूसरा कहे नहीं, उसमें लाल रंग भी है, तो भी उसकी बात मानी जा सकती है कि हरा, लाल, पीला ही नहीं, उसमें तो सात रंग हैं। पर यदि कोई कहे कि उसमें हरा ही हरा है और दूसरा कहे-लाल ही लाल, तब ज़रूर मुश्किल होगा कि किसकी बात मानी जाय!

ऐसा ही मौक़ा मुझे उस दिन पड़ा, जबकि एक बड़ी व्यापारिक संस्था के मालिक ने मेरे सामने आकर कहा कि उन्होंने अपने नौकर का पूरा-पूरा पैसा अदा कर दिया है। कुछ भी बाकी नहीं रहा है। कर्मचारी कहता था कि उसे लगभग दो महीने से वेतन नहीं दिया गया है। हाँ, केवल १२) रु० पेशगी दे दिये गये हैं, जिन्हें वह स्वीकार करता है, पर उसके लगभग ३८) रु० निकलते थे, जो उसे नहीं मिले थे। संस्था इतनी बड़ी नहीं थी कि वहाँ का हिसाब बड़े-बड़े कारखानों की तरह 'कैशबुक' या निर्धारित रजिस्टरों में रखा जाय, फिर भी काफ़ी बड़ी थी

और वहाँ हज़ारों रुपयों का व्यापार होता था, अतः मालिक के लिये ३८) रु० देना कोई मुश्किल बात नहीं थी। पर जब मैंने उनसे कहा कि हो सकता है कि हिसाब में कोई भूल रह गई हो चलिये, यह ३८ रु० माँग रहे हैं, इन्हें २०) रु० दे दीजिये और झगड़ा खतम कीजिये ! कर्मचारी ने कहा-' नहीं, निकलता तो ३८ रु० ही है और कोई कारण नहीं कि मैं १८)रु० इन पर छोड़ दूँ, पर हाँ, इतना ज़रूर है कि आपकी बात नहीं टालना चाहता, अतः आप कहें तो मैं १८) रु० क्या पूरा पैसा छोड़ सकता हूँ !' बात जँचने वाली लग रही थी, पर मालिक ने बिगड़ कर कहा—'वाह साहब, यह खूब रही। एक आदमी झूठ भी बोले और पैसा भी पाये और हम सच भी बोलें और २०) रु० का दंड भी भोगें ! २०) रु० क्या, मैं तो इसके इस झूठ बोलने के कारण ही एक पाई भी नहीं दूँगा । यह मुझे झूठा बना रहा है ! अगर यह सच--सच कह दे कि उसे वेतन पूरा मिल गया है और फिर आप कह दें, तो ३८ रु० क्या, मैं इसे ३८००) रु० देने की क्षमता रखता हूँ, पर यह सच बोले तो !

बड़ी मुश्किल थी ! दोनों पक्षों में गर्मा--गर्मी बढ़ रही थी ! कर्मचारी कह रहा था कि मैं भीख क्यों माँगूँ और खैरात क्यों लूँ ! मेरा जो हक़ है, वह माँगता हूँ ! मालिक का कहना था कि मैं झूठे को उसके घर तक पहुँचाना चाहता हूँ, खुद झूठ बन कर २० रु० दंड देकर जान छुड़ाना नहीं चाहता। मालूम नहीं हो रहा था कि झूठ कौन बोल रहा है ! पर मैं उस समय सोच रहा था, काश हम सारे धर्म--कर्म के ढकोसले छोड़ कर केवल सत्य को ही अपनाने की कोशिश करते, तो दुनियाँ के कितने बखेड़े अपने आप ही ठीक हो जाते तभी दोनों की बातचीत और गरम हो उठी ! मालिक ने कहा--'अगर तुम अपने लड़के का हाथ पकड़ कर क़सम खा जाओ कि तुम्हे रुपये नहीं दिये गये हैं और ३८) रु० बाकी हैं, तो मैं तुम्हें पूरे रुपये दे दूँगा, ! मैंने कहा कि 'अगर यह लड़के की शपथ ले लेंगे तो क्या आप यह मान जायँगे कि आप झूठ बोले थे !' वह बोले -'नहीं, मैं यह तो नहीं मानूँगा कि मैं झूठ बोलता था, पर हाँ, इनके रुपये जो ये माँग रहे हैं, इनको ज़रूर दे दूँगा !' मैंने झगड़ा समाप्त करने के अभिप्राय से कर्मचारी से कहा कि क्यों भाई, तुम जो कह रहे थे, वह सत्य था या झूठ, उसने कहा, बिलकुल सत्य !'

तब फिर तुमको सत्य बात के लिये लड़के की हो या बाप की, क़सम खाने में क्या एतराज़ हो सकता है ! वैसे क़सम--वसम में मेरा भी विश्वास नहीं है, पर जब यह कह ही रहे हैं और तुम भी चाहते ही हो कि तुम्हारा रुपया तुम्हें पूरा—पूरा मिल जाय, तो तुमको संकोच क्यों !'

उसने कहा-'संकोच तो कोई नहीं, पर लड़के की कसम यहीं से खा सकता हूँ, उसका हाथ पकड़ कर नहीं कह सकूँगा !'

मैंने पूछा—'यह क्यों' ? और साथ ही साथ मालिक से भी कहा लो-'अब तो यह लड़के की कसम भी खा गये अब क्या रखा है झगड़ा बढ़ाने में ? खतम ।

पर मेरी बात खतम होने के पहले ही मालिक ने कहा—'नहीं, सो तो मैं नहीं मानूँगा ! क़सम 'यह लड़के का हाथ पकड़ कर खाएँ, तभी मैं रुपया दूँगा !"

मैंने उत्सुकतावश ही कर्मचारी से पूछा कि आपको लड़के का हाथ पकड़ने में क्या एतराज़ है ? कर्मचारी ने कहा—'बात यह है कि लड़के ने इसी साल मैट्रिक पास किया है और वह नौकरी की खोज़ में बिहार की तरफ गया है। वह दस--बारह दिन बाद वापस आयेगा।

मैंने मालिक से कहा—'तब !' मालिक ने कहा कि क्या हर्ज़ है। दस-बारह दिन बाद आ जाने दीजिये। जिस दिन यहाँ उसका हाथ पकड़ कर आपके सामने क़सम खा जायगा, मैं रुपया दे दूँगा ?

कर्मचारी ने कहा—'पर लड़के को यहां तक बुलाने का खर्च कौन देगा ! मैं क्यों बुलाऊँ उसे मुफ्त में इतनी दूर ?

मालिक ताव में थे । उन्होंने कहा-'खर्च मैं दूँगा, बुलाइये उसे यहाँ !, मैंने कहा-'लो' अब तय हो गया। बुला लीजिये । मैं भी देखूँ कि कौन सच बोलता है !' पर कर्मचारी पीछे रहने वाला नहीं था । उसने कहा--लाइये रुपया। मालिक ने कहा कि पहले बुलाइये तब पैसा दूँगा' कर्मचारी ने कहा कि पहले रुपया दें,

(शेष पृष्ठ ७१ पर)

कहानी—

माँ का सुख

श्री हरि नारायण वाजपेयी

मिडिल पास करने के बाद भी रामकिशोर को जब कोई नौकरी न मिली, तो उसकी आँखों के सामने जैसे अँधेरा छा रहा और उसकी विधवा माँ के पैरों के नीचे से तो जैसे ज़मीन ही खिसक चली। बड़ी मुसीबतें झेल कर उसने अपने एकलौते बेटे को पढ़ाया था। यदि कोई कहता—'जसोदा, तू भी बड़ी पागल है, दिन-रात मेहनत-मंजूरी में मरती-खपती है। क्यों नहीं, अपने बेटे को किसी धंधे से लगाती। बहुत से काम हैं। और नहीं तो गाँव के लोगों के ढोरों को ही बटोर कर चराए। क्या यह भी करने के लायक नहीं?' जसोदा को इस तरह की बातें सुनकर अपने स्वर्गीय पति के अन्तिम शब्द याद आ जाते—'रम्मू को पढ़ा-लिखाकर विद्वान बनाना। मुझे दुःख है कि भगवान बुलाये ले रहा है और मैं यह काम नहीं कर सकता। जसो, यह काम मैं तुम्हें सौंपे जा रहा हूँ।' और जसोदा इस तरह के सुझावों का केवल यही उत्तर देती—'मैं अपने पति के आदेशों का पालन कर रही हूँ और करूँगी। मैं अपने रम्मू को पढ़ा-लिखाकर विद्वान बनाऊँगी।'

रामकिशोर गाँव से दो मील दूर के मिडिल स्कूल में पढ़ने जाता। रास्ता करील की घनी झाड़ियों, नदी-नालों से भरा था। उसके गाँव का कोई भी लड़का वहाँ पढ़ने जाने को तैयार नहीं था। जसोदा यदि कभी किसी पढ़ने योग्य लड़के की माँ से कहती—'क्यों नहीं अपने बच्चे को पढ़ने भेजती,' तो उत्तर मिलता—'तुम्हारी तरह मैं कठोर हृदय वाली नहीं हूँ कि अपने बच्चे को भेड़ियों का शिकार बना दूँ। बाज़ आऊँ ऐसी पढ़ाई से।' जसोदा यह सुन कर खामोश हो जाती और फिर तो अपने रम्मू की कुशलता के लिये भगवान से और अधिक प्रार्थना करती।

रामकिशोर ने नौकरी ढूँढने में कोई क़सर उठा न रखी, किन्तु नौकरी कहीं न मिली। उसके गाँव से चार मील दूर एक बहुत बड़ी व्यापारिक मण्डी थी। वहाँ बहुत-से बनिये थे। एक-एक करके सभी बनियों से काम देने की प्रार्थना की, किन्तु सबने अपनी असमर्थता प्रकट की। अधिकांश बनियों से तो यही उत्तर मिला—'भाई, तुम्हें तो मैं अपने यहाँ रख लेता,

लेकिन मुश्किल तो यह है कि तुम मुड़िया नहीं पढ़े हो और बिना मुड़िया जाने मुनीमत के काम को तुम नहीं कर सकते।' जसोदा को जब मालूम हुआ कि मुड़िया पढ़ लेने से कम से कम मुनीमत तो मिल ही जायगी, तो उसने कहा—'जहाँ इतने कष्ट झेले हैं, वहाँ थोड़े दिन और सही। रामकिशोर व्यापारिक मण्डी के ही एक स्कूल में भर्त्ती हो गया और मुड़िया सीखने लगा। उसके दूसरे साथी उसका मज़ाक उड़ाते। कहते—'अरे, भाई रामकिशोर को तो देखो, नौकरी करने पर तुला हुआ है। जैसे भी नौकरी मिले, उसे लिये बिना नहीं रहेगा। मिडिल पास करने के बाद मुनीमत के लिये मुड़िया सीखना ज़रूरी जान पड़ा, तो अब मुड़िया भी सीखने लगा। बाँगडू हो गया है, न कुछ कमाता है न धमाता। बेचारी विधवा माँ कूट-पीस कर कहाँ तक पढ़ाये।' कभी-कभी वे उसकी माँ के पास आते और कहते—'काकी, तुम भी क्या हो? कहाँ तक पढ़ाओगी रम्मू को? छोड़ो यह ज़िद। उससे कहो, कोई काम करे। नहीं नौकरी मिलती, तो खेतों में निराने-गोड़ने का काम तो मिल ही सकता है।' जसोदा उनकी बातों को अनसुनी कर देती और वे मुँह बिचकाते हुये चले जाते।

रामकिशोर मुड़िया पढ़ कर जब नौकरी के लिये फिर व्यापारिक मण्डी में गया तो जिस किसी को मुनीम की ज़रूरत भी थी, उसने ज़मानत में लम्बी रकम माँगी। रामकिशोर के पास ज़मानत में इतने रुपये देने को तो थे नहीं। वह वापस आया और जब अपनी माँ से नौकरी न मिलने की खबर सुनाई, तो उसने अपना माथा पीट लिया। रामकिशोर ने आश्वासन देते हुये कहा—'माँ, इस तरह दुखी होने से क्या? मैं शहर जाऊँगा। वहाँ कोई काम ढूँढ लूँगा और साथ ही पढ़ता जाऊँगा। आजकल मिडिल पास करने पर कोई नौकरी नहीं मिलती। हाई स्कूल पास करना बहुत ज़रूरी है।'

'तो हाई स्कूल पास करने शहर जाओगे?' जसोदा ने पूछा। उसकी आवाज़ में चिन्ता, भय और विह्वलता थी।

'हाँ माँ, तुम चिन्ता न करो। मैं शहर जाकर सब ठीक कर लूँगा। तुम्हीं तो मुझे पढ़ा-लिखा कर विद्वान बनाना चाहती थीं और अभी तो पढ़ाई बहुत बाकी है। हाई स्कूल कर लूँगा, तो जो क़सर है, वह भी पूरी हो जायगी और नौकरी भी अच्छी मिल जायगी।

जसोदा को पुनः अपने पति के शब्द याद आ गये। उसने कहा—'क़सर है, तो उसे पूरी करना ही चाहिये बेटा! लेकिन कैसे जाओगे शहर? कहाँ रहोगे? कहाँ से खर्च आएगा? हाई स्कूल की पढ़ाई में खर्च भी तो बहुत चाहिये।'

'इसकी चिन्ता बिल्कुल न करो माँ, मैं सब ठीक कर लूँगा। केवल तुम्हारा आशीर्वाद चाहिये। और हाँ, मुझे शहर जाने और वहाँ कम से कम एक महीना रहने भर के लिये खर्च का प्रबन्ध हो जाय, तो सब ठीक हो जायगा।'

जसोदा अपने ज़ेवर गाँव के महाजन के यहाँ रेहन रख आई और रामकिशोर को ज़रूरी खर्च देकर बोली—'बेटा तुम पढ़-लिख कर विद्वान बनो, कमाओ-धमाओ, यही मैं चाहती हूँ और मुझे कुछ न चाहिये। इसी से मुझे सुख मिलेगा।'

* * *

शहर में आ कर रामकिशोर एक हाई स्कूल में भर्ती हो गया। सबेरे-शाम मेहनत-मजूरी करता, दिन को स्कूल जाता और रात को बिजली के खम्भे से टिक कर पढ़ता। थक जाता, तो वहीं किसी फुटपाथ पर सो रहता। गांव बहुत कम जाता। इतने पैसे नहीं थे कि रेल से आने-जाने का भाड़ा चुका सकता। माँ से अब वह कुछ नहीं लेना चाहता था। वह खुद ही कूट-पीस कर अपना पेट पाल रही थी, उसे देने के लिये अब धरा ही क्या था और फिर अब वह माँ को अपने लिये कष्ट देना भी नहीं चाहता था।

परिश्रम का फल मीठा होता है। रामकिशोर हाई-स्कूल पास करके जब गाँव आया, तो कुछ लोगों को प्रसन्नता हुई और कुछ को ईर्ष्या। वे मातायें जो अपने लड़कों को पढ़ाने की बात सुन कर जसोदा को कठोर हृदय वाली बताती थीं, अब पश्चात्ताप कर रही थीं।

रामकिशोर ने अपने कठोर परिश्रम और अथक साधना से ऊँची शिक्षा प्राप्त कर ली थी और उनके लड़के वही गँवार के गँवार बने थे।

रामकिशोर हाई स्कूल पास करके अब गाँव में ही नौकरी की तलाश में रहने लगा। जब काफी दिन बीत गये और नौकरी न मिली तो गँवार लड़कों की माताओं ने सन्तोष की साँस ली। सोचा—'अच्छा ही हुआ, जो हमने अपने लड़कों से मगज़मारी नहीं कराई। क्या धरा है पढ़ाई-लिखाई में? न नौकरी न चाकरी।' उनमें से कभी कोई जसोदा के पास आती और कहती—'देख लिया बहन, पढ़ाने-लिखने का नतीजा? तुम्हारे रम्मू की इतनी उमर बीत गई और किसी लायक न हुआ। ज़िन्दगी तो तुमने पिसाई-कुटाई में बिता दी। क्या सुख मिला संतान से?' जसोदा को उनकी इन बातों से दु:ख न होता, वह खरा उत्तर देती—'मेरे रम्मू ने पढ़ा है, तो क्या नौकरी के लालच से ही? मुझे सन्तोष है कि मैं अपने पति की मनोकामना को पूरी कर सकी हूँ और मेरे बच्चे ने मेरे इस काम में अनेक कष्ट झेलकर भी सहायता की। यही क्या कम है कि वह पढ़ लिख गया। उसका मस्तक आज ऊँचा है। वह तो एक मजूरिन माँ का बेटा है, उसके खून में मेहनत करने की क्षमता प्रवाहित है। भगवान ने चाहा, तो उसे नौकरी मिल ही जायगी।'

एक दिन रामकिशोर ने अपनी माँ से कहा—'माँ, दीनू मामा नागपुर की इम्प्रेस मिल में सुपरवाइज़र हैं, उनका पत्र आया है। बुलाया है। मुझे वह बिनता सिखायेंगे। मैं जाऊँगा।'

दीवालों के भी कान होते हैं। यह खबर भी गाँव भर में फैल गई। कई ईर्ष्यालु स्त्रियाँ आकर जसोदा से उल्टी-सीधी बातें करने लगीं—'देख लिया, तुमने सोचा होगा कि मेरा लड़का अँग्रेज़ी पढ़कर बाबू बनेगा, लेकिन जा रहा है बिनता सीखने। बिनता ही सीखना था, तो पढ़ने-लिखने की क्या ज़रूरत थी।

जसोदा के पास अब इतना सामर्थ्य नहीं था कि वह उनकी जली-कटी बातों का जवाब देती। वह प्राय: ऐसी बातें सुन कर खामोश ही रह जाती।

और एक दिन उसने पुन: आंखों में आँसू भर कर हृदय में आशीर्वाद का सागर उमड़ा कर, अपने एक-लौते बेटे को जीवन-संग्राम में जूझने के लिये विदा किया।

नागपुर आते ही दीनू मामा की कृपा से रामकिशोर को बिनता सीखने की सुविधा मिल गई। वह बिनता सीखता रहा और उसकी माँ जसोदा उसी प्रकार मेहनत-मजूरी में लग कर उदर-पोषण करती रही। अब उससे काम नहीं होता था। थोड़ा भी काम करने पर श्वास फूल आता, फिर भी इस दिन की खुशी में कि उसका बेटा मिल में नौकर होकर कुछ कमायेगा, यह सभी कष्ट झेलती जा रही थी। बिनता सीखने के बीच वह कभी कभी गाँव भी आता और अपनी माँ की दशा को देख-कर रो देता। कहता—'भगवान, अब मुझे इस योग्य जल्द बनाओ कि मैं अपनी माँ को सुख पहुँचा सकूँ।

बिनता सीखने के बाद रामकिशोर मिल में ही नौकर हो गया। उसने सोचा—'दो महीने की तनख्वाह लेकर माँ के पास जाऊँगा और जब माँ के हाथों में रखूँगा तो वे फूली नहीं समाएँगी।' दो महीने पहाड़ की तरह बीत रहे थे और जिस दिन उसे दूसरे महीने की तनख्वाह मिली, गाँव से तार आया—'तुम्हारी माँ सख्त बीमार हैं, जल्द चले आओ।' तार पाकर रामकिशोर शीघ्र ही गाँव को रवाना हो गया। मेल ट्रेन तेज़ गति से चल रही थी, किन्तु उसे लग रहा था, जैसे वह रेंग रही हो। किसी प्रकार रास्ता कटा, गाँव का स्टेशन आया और वह भागता हुआ गाँव आया। उसकी माँ एक टूटी-फूटी चारपाई पर पड़ी अन्तिम साँसें ले रही थी। वह आँखें बन्द किये पड़ी थी। साँस लेने में तकलीफ हो रही थी। रामकिशोर आते ही माँ से लिपट गया, बोला—'माँ, माँ, देखो मैं आ गया हूँ। माँ, तुम्हारा रम्मू आ गया है माँ।' जेब से दो सौ रुपये के नोट माँ के हाथ पर रखते हुये कहा—'माँ, देखो यह रुपये, मेरी नौकरी लग गई है। अब तुमको कोई तकलीफ नहीं होगी माँ।' जसोदा ने आँखें खोलीं, पथराई आँखों से रामकिशोर को देखा और उसे गले

से लगाते हुये बोली—'बेटा, यह रुपये मैं क्या करूँगी? इन्हें तुम अपने पास रखो और सुख करो। मुझे तो इसी में सन्तोष है कि मैं तुम्हारे पिता की इच्छा को पूरी कर सकी। मैं तुम्हें पढ़ा-लिखाकर विद्वान बना सकी। यही सुख मेरे लिये सबसे बड़ा सुख है, बेटा।' अन्तिम हिचकी और साँस के सितार का आखिरी तार भी टूट गया।

* * *

रामकिशोर अब मिल में उन्नति करते-करते सुपरवाइज़र हो गया है। उसने गाँव में अपनी माँ की स्मृति में एक पुस्तकालय खुलवा दिया है, नाम है—'जसोदा पुस्तकालय।' इसके उद्घाटन के अवसर उसने कहा था—'मेरी माँ ने मुझे विद्वान बनाने के लिये अनेक कष्ट सहे। अब मैं इस पुस्तकालय द्वारा सभी लोगों को विद्वान बनाकर उनके जीवन की महती इच्छा को पूरा करना चाहता हूँ। इसी से मेरी माँ की आत्मा को सन्तोष और सुख मिलेगा।'

औद्योगिक शांति के छः सूत्र

१० जुलाई, ५५ को त्रावणकोर-कोचीन श्रमजीवी पत्रकार संघ के चौथे सम्मेलन का उद्घाटन करते हुये भारत सरकार के भूतपूर्व श्रम मंत्री श्री वी० वी० गिरि ने द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि के दौरान में औद्योगिक शांति बनाए रखने के लिये निम्नांकित छः-सूत्रीय योजना प्रस्तुत की थी :—

(१) मालिक इस बात को मान लें कि श्रमिक संघ आंदोलन न केवल अस्तित्व में आ गया है, अपितु उद्योग के साझेदारों के बीच मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने का यह अत्यंत आवश्यक और उपयोगी साधन है।

(२) बिना किसी अन्तर्भाव या सीमाबद्धता के मालिक और मज़दूर दोनों एक उद्योग के लिये एक श्रमिक संघ स्थापित करने का प्रयत्न करें, जिससे संघ को यह विदित रहे कि समझौता-वार्ता के लिये किससे बात करना है।

(३) दोनों पक्षों की स्वीकृति स प्रत्येक उद्योग के लिये स्थायी आदेशों का आलेख बनाया जाय।

(४) उद्योग में उठने वाले मतभेदों और विवादों को दूर करने के लिये प्रत्येक उद्योग के लिये एक 'संयुक्त स्थायी समिति' बनाई जाय।

(५) मज़दूर और मालिक समझौते का मार्ग अपनावें और यदि वे असफल हों, तो परस्पर मध्यस्थ-निर्णय के लिये सहमत हो जायँ। मध्यस्थ-निर्णय उद्योग के स्तर पर हो जिसमें बाहरी व्यक्तियों—सरकार या न्यायालय—का हस्तक्षेप न हो।

(६) यूनाइटेड किंगडम इंडस्ट्रियल कोर्ट्स ऐक्ट, १९१८ के आधार पर एक औद्योगिक न्यायालय बनाया जाय, जहाँ निर्णय तो उसके न्यायाधीश ही दें, परन्तु निर्णय के मानने में अन्ततः जनमत ही पक्षों की सहायता करे।

औद्योगिक संयोजन और अभिनवीकरण

संयोजन (Planning) और अभिनवीकरण प्रायः एक-दूसरे से अभिन्न हैं। २८ सितम्बर, १६५५ को नई दिल्ली में आयोजित पत्रकार सम्मेलन में पं० नेहरू ने कहा था कि 'संयोजक को देश की भौतिक आवश्यकताओं, सामग्रियों तथा साधनों को ध्यान में रखना चाहिये। देश की आवश्यकताओं की गणना करने में केवल वर्तमान आवश्यकताओं को ही ध्यान में नहीं रखना है, अपितु उत्तरोत्तर आवश्यकताओं को भी।' यह गणना कैसे की जा सकती है? इस सम्बन्ध में नेहरू जी का यह कहना है कि 'यह गणना नमूने के सर्वेक्षणों (Sample surveys) द्वारा या अन्य माध्यमों द्वारा की जा सकती है।' यदि पं० नेहरू की संयोजन की इस व्याख्या की तुलना उनके द्वारा की गई अभिनवीकरण की परिभाषा से करें, तो दोनों के बीच सीमा-भेद को छोड़कर और कोई विशेष भेद दृष्टिगोचर नहीं होता। १० अप्रैल, १६५४ को अहमदाबाद में नेहरू जी ने कहा था कि रेशनलाइजेशन का यह अर्थ है कि जो कुछ भी हम करें, बुद्धि लगाकर करें।' उसी भाषण में उन्होंने यह भी बताया था कि 'संयोजन का अभिप्राय सम्पूर्ण राष्ट्र के जीवन का अभिनवीकरण करना है।' किन्तु यहाँ यह न भूल जाना चाहिये कि दोनों शब्दों के तात्पर्य में समता होते हुये भी कुछ अन्तर है। यह अन्तर केवल क्षेत्र और सीमा का है। एक का अभिप्राय राष्ट्रीय जीवन का सर्वांगीण अभिनवीकरण करना है, तो दूसरे का केवल उद्योगों का अभिनवीकरण करना। एक की क्रीड़ा-स्थली बृहत् और व्यापक है, तो दूसरे की कर्म-भूमि एकक्षेत्रीय तथा संकुचित है।

संयोजित अर्थतन्त्र क्यों?

आर्थिक और सामाजिक क्रान्ति को प्रेरणा प्रायः निर्धनता अर्थात् आर्थिक विषमता से मिलती है। भारतीय सरकार इस समस्या के प्रति सजग रह कर इस बात के लिये प्रयत्नशील है कि वह एक आर्थिक-सामाजिक क्रान्ति लाकर देश की इन विषमताओं का निराकरण करे। ऐसी अवस्था में समस्या केवल वर्तमान आर्थिक और सामाजिक ढाँचे में प्रवाह-मात्र लाने की नहीं, वरन् उस ढाँचे की पुनर्रचना की है, जिससे कि उन आवश्यकताओं की, जो कार्य के अधिकार, उचित आमदनी, शिक्षा तथा बीमारी, बुढ़ापा आदि अन्य असमर्थताओं के समय बीमा के हितलाभ पाने की माँगों के रूप में प्रकट होती हैं, पूर्त्ति हो सके। यही कारण है कि जनता देश में संयोजित अर्थतन्त्र का प्रसार देखना चाहती है।

संयोजित अर्थतन्त्र का मुख्य उद्देश्य उपलब्ध साधनों का पूर्ण संचय तथा उनका इस प्रकार से उपयोग है कि परिस्थिति के अनुकूल उत्तम परिणाम प्राप्त हो। यहाँ के अर्द्ध-विकसित अर्थतन्त्र की समस्या देश में उपलब्ध साधनों को अधिक सफलता के साथ प्रयोग में लाने की है। यह समस्या केवल संयोजन द्वारा ही हल हो सकती है।

औद्योगिक संयोजन की मुख्य समस्यायें और उनका हल

औद्योगिक संयोजन या अभिनवीकरण को व्यवहार में लाने से जो समस्यायें उठ खड़ी होती हैं, अब उन पर विचार कर लेना चाहिये:—

❀ श्री जगदीशचन्द्र दीक्षित ❀

पहली समस्या है—राष्ट्र की सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति, जिसकी सृष्टि आर्थिक प्रगति के विभिन्न तत्वों द्वारा होती है और जिसकी परिधि के अन्तर्गत ही अर्थ-तन्त्र को कार्य करना पड़ता है।

दूसरी समस्या है—बेकारी और मुद्रास्फीति की, जो उद्योगों के मुक्त विकास में बाधा डालती है।

पहली समस्या का निदान देशवासियों की जागरूकता में निहित है। यदि हम उनमें एक प्रकार की जागृति पैदा न कर सके, तो सामाजिक विषमता को दूर कर सकना असाध्य सिद्ध होगा। यह कार्य केवल राष्ट्र के विवेकी नागरिकों के सहकार्य और प्रचार से हो सकता है।

दूसरी समस्या के अन्तर्गत जहाँ तक बेकारी का सम्बन्ध है, उद्योग में वर्तमान नियोजित व्यक्तियों की संख्या को बाँध कर रखना है और उनकी संख्या में प्राकृतिक ह्रास से होने वाले रिक्त स्थानों के सम्बन्ध में अभिनवीकरण का सिद्धान्त लागू करना होगा, जिससे और अधिक लोग बेकार न हों। मुद्रा-स्फीति की दवा यह है कि हम उपलब्ध साधनों से अधिकाधिक लाभ उठावें। और देश का उत्पादन बढ़ावें।

औद्योगिक संयोजन और अभिनवीकरण प्रायः समानार्थी हैं। संयोजित अभिनवीकरण के बिना न वर्ग-संघर्ष दूर हो सकता है और न समाजवादी ढंग के समाज की रचना का स्वप्न ही पूरा किया जा सकता है। इस विषय पर लेखक के अपने विचार पठनीय हैं।

अभिनवीकरण के द्वारा क्या समाजवादी ढंग का समाज साध्य है ?

पं० नेहरू की कल्पना के अनुकूल समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना केवल संयोजित अर्थतन्त्र द्वारा ही हो सकती है। हमारे देश के संयोजन में उद्योगों का दो भागों में वर्गीकरण किया गया है—सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग (Public Sector) और वैयक्तिक क्षेत्र के उद्योग (Private Sector)। इस देश में अभिनवीकरण का सम्बन्ध मुख्यत: वैयक्तिक क्षेत्र के उद्योगों से ही है। अभिनवीकरण को यदि सामाजिक रूप से सार्थक सिद्ध होना है, तो उसे 'सामाजिक न्याय' की ठोस नींव पर खड़ा होना पड़ेगा। 'सामाजिक न्याय' का अर्थ है कि उसके द्वारा उद्योग से सम्बन्धित सभी पक्षों का समान हित हो। उद्योग से सम्बन्धित व्यक्तियों के तीन वर्ग होते हैं—पहला नियोजक या उद्योगपति, दूसरा मज़दूर और तीसरा उपभोक्ता।

जैसा कि प्राय: होता है, उद्योग में अभिनवीकरण का अर्थ तीनों वर्ग अलग-अलग लगाते हैं। मालिक समझते हैं कि अभिनवीकरण का अर्थ कम खर्च, अधिक लाभ और मज़दूरों की छँटनी है। मज़दूरों के मतानुसार अभिनवीकरण उनके लिये उच्च आर्थिक स्तर और काम की अच्छी स्थितियाँ प्राप्त करने का माध्यम है तथा उपभोक्ताओं के लिये उसका अर्थ है वस्तुओं का मूल्य कम होना। अत: प्रश्न यह उठता है कि औद्योगिक संयोजन या अभिनवीकरण किसके लिये क्या-क्या करे। इस प्रश्न का समुचित उत्तर ब्रिटेन के विश्व-कोष (Encyclopaedia Britannica) ने दिया है। उसका कहना है कि 'अभिनवीकरण को पहले पूँजी लगाने वाले के लिये लाभप्रद सिद्ध होना चाहिये और उसको अपने ऋण को अदा करने में उसे सहायता करनी चाहिये। उसे जनता की भी सहायता खर्च को कम करके मूल्यों में सस्तापन लाकर करनी चाहिये। तीसरे यह कि अभिनवीकृत प्रतिष्ठानों में नियोजित मज़दूरों को ऊँचे वेतन मिलने चाहिये। अधिक मूल्यों वाली मशीनों को लगाकर मज़दूरों की भारी संख्या को कम करना उचित नहीं है।'

इस प्रकार संक्षेप में संयोजित अभिनवीकरण द्वारा जब तक तीनों वर्ग संतुष्ट न हों, तब तक सामाजिक न्याय की स्थापना नहीं हो सकती और न विषम आर्थिक परिस्थितयों में उलझे हुये वर्गों को लेकर समाजवादी ढंग की समाज-रचना ही सफल हो सकेगी।

औद्योगिक शांति और संयोजन

(पृष्ठ २४ से आगे)

के मूल कारण क्या हैं और उनका निराकरण कैसे किया जाय। यदि सूक्ष्मता के साथ विचार किया जाय, तो इसके मूल में ४ प्रकार के कारण पाये जायँगे: (१) व्यावसायिक, (२) आर्थिक, (३) शैक्षिक एवं (४) मनोवैज्ञानिक।

व्यावसायिक कारण—व्यावसायिक कारण प्राय: प्राकृतिक होते हैं और उन पर प्रबन्धक या श्रमिक किसी का भी नियंत्रण प्राय: नहीं होता, जैसे कच्चे माल, कोयले या विद्युत् का अभाव, युद्धोत्तरकालीन व्यापारिक मन्दी, आदि। जहाँ प्रबन्धक इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न कर दें कि कच्चे माल, कोयले आदि का उचित प्रबन्ध न हो सके, वहाँ इस बात की ओर ध्यान रखना आवश्यक है कि इस प्रकार का कृत्रिम अभाव उत्पन्न करके श्रमिक-वर्ग में अशान्ति न फैलने दी जाय। परन्तु बाढ़, अकाल आदि दैवी प्रकोपों से उत्पन्न परिस्थिति को सुधारने में कुछ समय अवश्य लगता है।

आर्थिक कारण—आर्थिक कारण दो प्रकार के हैं: एक तो उद्योग में घाटा आ जाय और विवश होकर काम बंद कर देना पड़े अथवा घाटे की बात कह कर अन्य प्रकार से श्रमिकों के बोनस, वेतन-दर आदि में कमी की समस्या उत्पन्न कर दी जाय, जिससे श्रमिक-वर्ग में रोष और असंतोष फैल जाय। दूसरी ओर श्रमिक की आर्थिक एवं सामाजिक कठिनाइयाँ भी उसके इस असंतोष की वृद्धि में सहायक होती रहती हैं। इस देश में प्रबन्धक और श्रमिक को एक साथ मिलने-जुलने और सामाजिक समारोहों में एक साथ भाग लेने का अवसर अभी नहीं मिलता, जबकि ब्रिटेन, चीन, सोवियत संघ, आदि देशों में इस प्रकार के सम्बन्धों को बढ़ावा दिया जाता है, जिससे वे एक-दूसरे के निकट आते हैं और एक-दूसरे की कठिनाइयों को दूर करने का प्रयत्न करते हैं। हमें भी श्रमिकों और प्रबन्धकों के बीच के सामाजिक और आर्थिक अन्तर को यथाशक्ति कम करने का प्रयत्न करना चाहिये।

शैक्षिक कारण—तीसरा कारण भी बड़ा महत्वपूर्ण है। श्रमिक-वर्ग प्राय: अशिक्षित है और उसका नेतृत्व ऐसे लोगों और विशेषकर बुद्धिजीवियों के हाथ में है, जो स्वयं श्रमिक नहीं हैं और जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष तरीके से किसी-न-किसी राजनैतिक गुटबन्दी में शामिल रहते हैं। इस प्रकार श्रमिकों के लिये राजनैतिक दाँव-पेच का शिकार होने से बचे रहना कठिन हो जाता है। बहुधा नेतावर्ग राजनैतिक शतरंज में श्रमिकों का उपयोग शतरंज के मोहरे की भांति करता है, जिसको भोले-भाले श्रमिक नहीं समझ पाते। इस प्रकार की औद्योगिक अशांति का मूल कारण सीधी माँगों के अतिरिक्त कुछ और ही रहता है और ऐसी अशान्ति को दूर करने में अधिक समय लगता है। इस कारण को दूर करने के लिये श्रमिकों के संघों को चाहिये कि वे श्रमिकों को सही रास्ता दिखावें और उन्हें उनके उत्तरदायित्व की महत्ता बतलावें।

मनोवैज्ञानिक कारण—अन्तिम मनोवैज्ञानिक कारण ने तो कुछ श्रमिकों की मनोवृत्ति ही बदल दी है। देश के स्वतंत्र होने के बाद से श्रमिकों का एक वर्ग अपने उत्तरदायित्व को भूलकर कारखानों के भीतर 'कल-पुर्जों की तोड़-फोड़,' 'काम न करने' या 'कम काम करने की नीति,' छोटी-छोटी बातों पर विरोध-प्रदर्शन के लिये हड़ताल एवं नारेबाज़ी, आदि के कार्यों में संलग्न रहता है। इन्हीं लोगों के उद्बोधन के लिये प्रधानमंत्री पं० नेहरू ने एक नया नारा दिया है–'आराम हराम है'। वास्तव में आज इस बात की आवश्यकता है कि श्रमिक-वर्ग अपनी मनोवृत्ति को बदले और उद्योग को अपना समझ कर उत्पादन में जुट जाय।

औद्योगिक शांति सुरक्षित कैसे रहे?

अब प्रश्न यह होता है कि उपर्युक्त परिस्थितियों में औद्योगिक शान्ति को सुरक्षित कैसे रक्खा जाय। इसके लिये सबसे पहली आवश्यकता यह है कि अशान्ति के कारणों को दूर किया जाय। इस आवश्यक कार्य में सरकार के विविध प्रगतिशील श्रम-विधानों के योग के अतिरिक्त मालिकों और मज़दूरों के संघों के पूर्ण सहयोग की आवश्यकता है। अभी गत वर्ष (सन् १९५५ में) अहमदाबाद टेक्सटाइल लेबर एसोसियेशन और अहमदा-

पहली समस्या है—राष्ट्र की सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति, जिसकी सृष्टि आर्थिक प्रगति के विभिन्न तत्वों द्वारा होती है और जिसकी परिधि के अन्तर्गत ही अर्थ-तन्त्र को कार्य करना पड़ता है।

दूसरी समस्या है—बेकारी और मुद्रास्फीति की, जो उद्योगों के मुक्त विकास में बाधा डालती है।

पहली समस्या का निदान देशवासियों की जागरूकता में निहित है। यदि हम उनमें एक प्रकार की जागृति पैदा न कर सके, तो सामाजिक विषमता को दूर कर सकना असाध्य सिद्ध होगा। यह कार्य केवल राष्ट्र के विवेकी नागरिकों के सहकार्य और प्रचार से हो सकता है।

दूसरी समस्या के अन्तर्गत जहाँ तक बेकारी का सम्बन्ध है, उद्योग में वर्तमान नियोजित व्यक्तियों की संख्या को बाँध कर रखना है और उनकी संख्या में प्राकृतिक ह्रास से होने वाले रिक्त स्थानों के सम्बन्ध में अभिनवीकरण का सिद्धान्त लागू करना होगा, जिससे और अधिक लोग बेकार न हों। मुद्रा-स्फीति की दवा यह है कि हम उपलब्ध साधनों से अधिकाधिक लाभ उठावें। और देश का उत्पादन बढ़ावें।

औद्योगिक संयोजन और अभिनवीकरण प्रायः समानार्थी हैं। संयोजित अभिनवीकरण के बिना न वर्ग-संघर्ष दूर हो सकता है और न समाजवादी ढंग के समाज की रचना का स्वप्न ही पूरा किया जा सकता है। इस विषय पर लेखक के अपने विचार पठनीय हैं।

अभिनवीकरण के द्वारा क्या समाजवादी ढंग का समाज साध्य है ?

पं० नेहरू की कल्पना के अनुकूल समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना केवल संयोजित अर्थतन्त्र द्वारा ही हो सकती है। हमारे देश के संयोजन में उद्योगों का दो भागों में वर्गीकरण किया गया है–सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग (Public Sector) और वैयक्तिक क्षेत्र के उद्योग (Private Sector)। इस देश में अभिनवीकरण का सम्बन्ध मुख्यत: वैयक्तिक क्षेत्र के उद्योगों से ही है। अभिनवीकरण को यदि सामाजिक रूप से सार्थक सिद्ध होना है, तो उसे 'सामाजिक न्याय' की ठोस नींव पर खड़ा होना पड़ेगा। 'सामाजिक न्याय' का अर्थ है कि उसके द्वारा उद्योग से सम्बन्धित सभी पक्षों का समान हित हो। उद्योग से सम्बन्धित व्यक्तियों के तीन वर्ग होते हैं—पहला नियोजक या उद्योगपति, दूसरा मज़दूर और तीसरा उपभोक्ता।

जैसा कि प्राय: होता है, उद्योग में अभिनवीकरण का अर्थ तीनों वर्ग अलग–अलग लगाते हैं। मालिक समझते हैं कि अभिनवीकरण का अर्थ कम खर्च, अधिक लाभ और मज़दूरों की छँटनी है। मज़दूरों के मतानुसार अभिनवीकरण उनके लिये उच्च आर्थिक स्तर और काम की अच्छी स्थितियाँ प्राप्त करने का माध्यम है तथा उपभोक्ताओं के लिये उसका अर्थ है वस्तुओं का मूल्य कम होना। अत: प्रश्न यह उठता है कि औद्योगिक संयोजन या अभिनवीकरण किसके लिये क्या-क्या करे। इस प्रश्न का समुचित उत्तर ब्रिटेन के विश्व-कोष (Encyclopaedia Britannica) ने दिया है। उसका कहना है कि 'अभिनवीकरण को पहले पूँजी लगाने वाले के लिये लाभप्रद सिद्ध होना चाहिये और उसको अपने ऋण को अदा करने में उसे सहायता करनी चाहिये। उसे जनता की भी सहायता खर्च को कम करके मूल्यों में सस्तापन लाकर करनी चाहिये। तीसरे यह कि अभिनवीकृत प्रतिष्ठानों में नियोजित मज़दूरों को ऊँचे वेतन मिलने चाहिये। अधिक मूल्यों वाली मशीनों को लगाकर मज़दूरों की भारी संख्या को कम करना उचित नहीं है।'

इस प्रकार संक्षेप में संयोजित अभिनवीकरण द्वारा जब तक तीनों वर्ग संतुष्ट न हों, तब तक सामाजिक न्याय की स्थापना नहीं हो सकती और न विषम आर्थिक परिस्थितयों में उलझे हुये वर्गों को लेकर समाजवादी ढंग की समाज-रचना ही सफल हो सकेगी।

औद्योगिक शांति और संयोजन

(पृष्ठ २४ से आगे)

के मूल कारण क्या हैं और उनका निराकरण कैसे किया जाय। यदि सूक्ष्मता के साथ विचार किया जाय, तो इसके मूल में ४ प्रकार के कारण पाये जायँगे : (१) व्यावसायिक, (२) आर्थिक, (३) शैक्षिक एवं (४) मनोवैज्ञानिक।

व्यावसायिक कारण—व्यावसायिक कारण प्राय: प्राकृतिक होते हैं और उन पर प्रबन्धक या श्रमिक किसी का भी नियंत्रण प्राय: नहीं होता, जैसे कच्चे माल, कोयले या विद्युत् का अभाव, युद्धोत्तरकालीन व्यापारिक मन्दी, आदि। जहाँ प्रबन्धक इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न कर दें कि कच्चे माल, कोयले आदि का उचित प्रबन्ध न हो सके, वहाँ इस बात की ओर ध्यान रखना आवश्यक है कि इस प्रकार का कृत्रिम अभाव उत्पन्न करके श्रमिक-वर्ग में अशान्ति न फैलने दी जाय। परन्तु बाढ़, अकाल आदि दैवी प्रकोपों से उत्पन्न परिस्थिति को सुधारने में कुछ समय अवश्य लगता है।

आर्थिक कारण—आर्थिक कारण दो प्रकार के हैं : एक तो उद्योग में घाटा आ जाय और विवश होकर काम बंद कर देना पड़े अथवा घाटे की बात कह कर अन्य प्रकार से श्रमिकों के बोनस, वेतन-दर आदि में कमी की समस्या उत्पन्न कर दी जाय, जिससे श्रमिक-वर्ग में रोष और असंतोष फैल जाय। दूसरी ओर श्रमिक की आर्थिक एवं सामाजिक कठिनाइयाँ भी उसके इस असंतोष की वृद्धि में सहायक होती रहती हैं। इस देश में प्रबन्धक और श्रमिक को एक साथ मिलने-जुलने और सामाजिक समारोहों में एक साथ भाग लेने का अवसर अभी नहीं मिलता, जबकि ब्रिटेन, चीन, सोवियत संघ, आदि देशों में इस प्रकार के सम्बन्धों को बढ़ावा दिया जाता है, जिससे वे एक-दूसरे के निकट आते हैं और एक-दूसरे की कठिनाइयों को दूर करने का प्रयत्न करते हैं। हमें भी श्रमिकों और प्रबन्धकों के बीच के सामाजिक और आर्थिक अन्तर को यथाशक्ति कम करने का प्रयत्न करना चाहिये।

शैक्षिक कारण—तीसरा कारण भी बड़ा महत्वपूर्ण है। श्रमिक-वर्ग प्राय: अशिक्षित है और उसका नेतृत्व ऐसे लोगों और विशेषकर बुद्धिजीवियों के हाथ में है, जो स्वयं श्रमिक नहीं हैं और जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष तरीके से किसी-न-किसी राजनैतिक गुटबन्दी में शामिल रहते हैं। इस प्रकार श्रमिकों के लिये राजनैतिक दाँव-पेच का शिकार होने से बचे रहना कठिन हो जाता है। बहुधा नेतावर्ग राजनैतिक शतरंज में श्रमिकों का उपयोग शतरंज के मोहरे की भांति करता है, जिसको भोले-भाले श्रमिक नहीं समझ पाते। इस प्रकार की औद्योगिक अशांति का मूल कारण सीधी माँगों के अतिरिक्त कुछ और ही रहता है और ऐसी अशान्ति को दूर करने में अधिक समय लगता है। इस कारण को दूर करने के लिये श्रमिकों के संघों को चाहिये कि वे श्रमिकों को सही रास्ता दिखावें और उन्हें उनके उत्तरदायित्व की महत्ता बतलावें।

मनोवैज्ञानिक कारण—अन्तिम मनोवैज्ञानिक कारण ने तो कुछ श्रमिकों की मनोवृत्ति ही बदल दी है। देश के स्वतंत्र होने के बाद से श्रमिकों का एक वर्ग अपने उत्तरदायित्व को भूलकर कारखानों के भीतर 'कल-पुर्जों की तोड़-फोड़,' 'काम न करने' या 'कम काम करने की नीति,' छोटी-छोटी बातों पर विरोध-प्रदर्शन के लिये हड़ताल एवं नारेबाज़ी, आदि के कार्यों में संलग्न रहता है। इन्हीं लोगों के उद्बोधन के लिये प्रधानमंत्री पं० नेहरू ने एक नया नारा दिया है–'आराम हराम है'। वास्तव में आज इस बात की आवश्यकता है कि श्रमिक-वर्ग अपनी मनोवृत्ति को बदले और उद्योग को अपना समझ कर उत्पादन में जुट जाय।

औद्योगिक शांति सुरक्षित कैसे रहे ?

अब प्रश्न यह होता है कि उपर्युक्त परिस्थितियों में औद्योगिक शान्ति को सुरक्षित कैसे रक्खा जाय। इसके लिये सबसे पहली आवश्यकता यह है कि अशान्ति के कारणों को दूर किया जाय। इस आवश्यक कार्य में सरकार के विविध प्रगतिशील श्रम-विधानों के योग के अतिरिक्त मालिकों और मज़दूरों के संघों के पूर्ण सहयोग की आवश्यकता है। अभी गत वर्ष (सन् १९५५ में) अहमदाबाद टेक्सटाइल लेबर एसोसियेशन और अहमदा-

बाद के मिलओनर्स एसोसियेसन के बीच बोनस के प्रश्न पर प्रसिद्ध समझौता हुआ था और संभावित अशांति के बादल इस समझौते के फलस्वरूप टल गये थे। इस समझौते के एक प्रमुख सहलेखक श्री एस० आर० वसावड़ा ने २० नवम्बर, १९५५ को अपने एक भाषण में यह सुझाव दिया है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना की सफलता के लिये पाँच साल के लिये एक औद्योगिक विराम-संधि पर हस्ताक्षर कर दिये जायँ और आपसी झगड़ों का एक साथ बैठकर निपटारा कर लिया जाय। जो कुछ भी समझौता हो, उसका अक्षरशः पालन किया जाय। वास्तव में औद्योगिक अशान्ति को दूर रखने की यही कुन्जी है, परन्तु प्रायः देखने में यह आता है कि किसी-न-किसी पक्ष को कुछ-न-कुछ शिकायत बनी रहती है और इस असंतोष की शिला पर कुछ समझौते टकरा कर टूट जाते हैं। पर इससे निराश होने की आवश्यकता नहीं है। इन समझौतों का बड़ा महत्व है। 'सद्भावना' और 'लो और दो' की भावना से किये गये समझौते अधिकांश में सफल ही होते हैं।

यदि मिल-मालिक और मज़दूर यह समझ लें कि देश के कारखानों और उद्योगों में दोनों का हिस्सा है, तो औद्योगिक अशान्ति दूर हो जाय। केन्द्रीय सरकार के श्रम मंत्री श्री खंडू भाई देसाई ने ११ जनवरी, १९५६ को अतुल (सूरत) में दिये गये एक वक्तव्य में कहा है कि 'श्रमिक और पूँजीपति दोनों ही देश के उद्योगों की प्रगति के बराबर-बराबर जिम्मेदार हैं। यह युग-धर्म है कि आज के युग में श्रमिकों को औद्योगिक प्रबन्ध-व्यवस्था में सम्मिलित होने का अवसर दिया जाय। भविष्य के लिये भारत सरकार की श्रम-नीति इस सामयिक माँग का समर्थन करती है कि कल-कारखानों की प्रबन्ध-व्यवस्था में मिल-मालिकों के साथ-साथ श्रमिकों का भी हाथ रहे।' भारत सरकार के श्रम मंत्रालय द्वारा योजना आयोग को ऐसा ही सुझाव दिया गया है। इस 'युग-धर्म' की प्रेरणा के अनुकूल टाटा आइरन एण्ड स्टील कम्पनी (TISCO) ने टाटा वर्कर्स यूनियन से एक समझौता किया है और कम्पनी की प्रबन्ध-व्यवस्था में मज़दूरों को सम्मिलित कर लिया है। कम्पनी के संचालन में मज़दूरों ने भी अपनी पूँजी का योग दिया है। हमारा देश समाजवादी ढंग की समाज-व्यवस्था की ओर अग्रसर होने का संकल्प कर चुका है और वह समय दूर नहीं है जब इस देश में मिल-मालिक उद्योगों के काम और प्रबन्ध-व्यवस्था में श्रमिकों के योगदान और परामर्श का आदर करने लगेंगे। परन्तु इस समाजवादी व्यवस्था को कानूनों के द्वारा नहीं लाया जा सकता। इसके लिये उद्योग में मानव-सम्बन्धों का विस्तार आवश्यक है। औद्योगिक सम्बन्धों में मानवता का प्रवेश हुये बिना औद्योगिक शान्ति का विकास सम्भव नहीं है, क्योंकि श्रम को पूंजी से पृथक एक जड़ वस्तु मानकर व्यवहार करने से अशान्ति के कारण सदैव बने रहेंगे।

हम आज द्वितीय पंचवर्षीय योजना की देहली पर खड़े हैं। इस योजना की यत्किंचित् रूप-रेखा स्पष्ट भी हो चुकी है। यदि इसे सफलता की चरम सीमा तक पहुँचाना है, जिससे देश का पुनर्निर्माण एवं सर्वांगपूर्ण विकास हो सके, तो औद्योगिक अशान्ति की समस्या का कोई-न-कोई व्यावहारिक और स्थायी हल अवश्य खोज निकालना होगा। इस समस्या को स्वयं प्रबन्धक और मज़दूर अपने संकीर्ण दायरे से बाहर निकलकर युग के बढ़ते हुये क़दमों के साथ क़दम मिलाकर और 'युग-धर्म' का पालन करके हल कर सकते हैं। इन दोनों पक्षों के पथ-प्रदर्शन के लिये द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि औद्योगिक विवादों को निपटाने के लिये आपसी समझौता-वार्ता का मार्ग अपनाया जाय और मज़दूरी-सम्बन्धी विवादों को भी त्रिदलीय-आधार पर तय किया जाय। अब समय ही इसको सिद्ध करेगा कि दोनों वर्ग इस संकेत को किस प्रकार और कहाँ तक ग्रहण करते हैं।

व्यावसायिक संघों के अधिकार और दायित्व

श्री लक्ष्मीनारायण सिंह
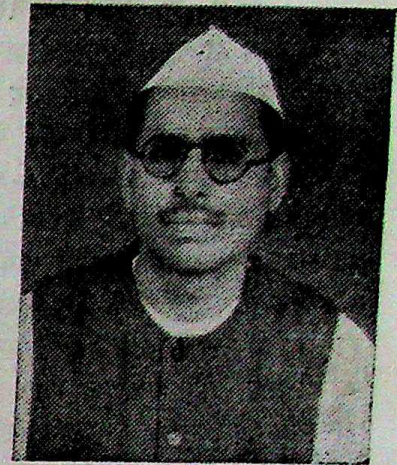
'आवश्यकता आविष्कार की जननी है,' इस लोकोक्ति के अनुसार जब आधुनिक ढंग के कल-कारखाने खुले और उनमें काम करने वाले मनुष्यों के वेतन, काम के घंटे, आराम की सुविधाएँ आदि की समस्याएँ सामने आईं, तो उन समस्याओं के निराकरण का उपाय भी सोचा जाने लगा। इस प्रकार व्यावसायिक या श्रमिक संघों की सृष्टि हुई। प्रारंभिक अवस्था में इन व्यावसायिक संघों की कोई निश्चित रूप-रेखा नहीं थी और न उनकी ओर किसी का विशेष ध्यान ही आकृष्ट हुआ। एक ही व्यवसाय में कई संघ बनते और मिटते तथा विभिन्न व्यवसायों के श्रमजीवियों का एक ही संघ में समावेश होता। इस तरह उनमें अस्त-व्यस्तता थी, किंतु कालक्रम से उनकी स्थिति में स्थिरता आई और उनका महत्व भी समझा जाने लगा।

व्यावसायिक संघ की परिभाषा और उसकी मान्यता

'हिस्ट्री आफ ट्रेड यूनियनिज्म' नामक ग्रंथ के सुप्रसिद्ध लेखक—युगल सिडनी तथा बियट्रिस वेब ने व्यावसायिक संघ की परिभाषा इस प्रकार लिखी है :—

'वेतनोपजीवी मानवों की वह जाग्रत संस्था, जो श्रमिक-जीवन की स्थिति को सुरक्षित रक्खे या उन्नतिशील बनाए।'

यद्यपि यह परिभाषा सर्वथा दोषरहित नहीं है, किंतु लोकप्रिय है।

प्रारम्भ की अनुन्नत अवस्था में व्यावसायिक संघों को अपनी स्थिति अक्षुण्ण बनाए रखने में अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। एक ओर उन्हें आंतरिक संगठनात्मक दुर्बलताओं पर विजय पाना था और दूसरी ओर उन्हें अपेक्षाकृत सुसंगठित एवं आर्थिक दृष्टि से सशक्त प्रतिपक्षियों से संघर्ष करना पड़ा। अब तो व्यावसायिक संघों ने अपने मूलभूत कुछ अधिकार कानून के आधार पर प्राप्त भी कर लिये हैं। प्रत्येक देश की सरकार ने उन्हें राजकीय मान्यता प्रदान की है, यद्यपि उनका स्वरूप देश-काल के अनुसार भिन्न-भिन्न है।

संघ बनाने का कानूनी अधिकार

भारत में व्यावसायिक संघ कानून पहली बार सन् १९२६ में बना, जो साधारण संशोधनों के अतिरिक्त आज तक उसी रूप में चला आ रहा है। इस कानून के उपरान्त बनने वाले भारतीय संविधान में भी व्यावसायिक संघ बनाने के अधिकार को 'मौलिक अधिकार' स्वीकृत किया गया है। व्यावसायिक संघ कानून के अन्तर्गत संघ के सदस्यों को अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिये कानूनी सुरक्षाएँ प्राप्त हैं। भारतीय दण्ड विधान की धारा १२०-ब के अनुसार 'षड्यन्त्र' की परिभाषा से ये संघ सर्वथा मुक्त हैं। भारतीय व्यावसायिक संघ कानून की धारा १७ तथा १८ के अनुसार संघ के सदस्यों को पारस्परिक एका करने तथा संगठित होकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये काम करने का व्यापक अधिकार प्राप्त है।

सन् १९५५ और कर्मचारी राज्य बीमा योजना

(पृष्ठ २६ से आगे)

ट्रंक रोड पर प्रस्तावित मेडिकल कालेज के स्थान के निकट १५.५ एकड़ ज़मीन १०,००० रु० प्रति एकड़ की दर से लेने की अन्तिम रूप-रेखा तैयार कर ली है। निगम ने पहले ही इस पर स्वीकृति दे दी है और शीघ्र ही अस्पताल बनाने के खर्च का अनुमान और नक्शा तैयार हो जायगा। अस्पताल के तैयार हो जाने पर उसमें १०० सामान्य रोगियों के पलंग, ६० क्षयरोगियों के पलंग और ४ बीमायुक्त स्त्रियों के प्रसव के लिये पलंग रहेंगे। इसके निर्माण की लागत का तीन-चौथाई निगम देगा और एक-चौथाई राज्य सरकार।

उत्तर प्रदेश में योजना का भावी प्रसार

यह निश्चय किया जा चुका है कि बीमा योजना को १९५६-५७ तक उन सभी जगहों पर लागू कर दिया जाय, जहाँ २००० या अधिक श्रमिकों की आबादी हो। उत्तर प्रदेश में योजना के प्रसार के प्रथम चरण में निगम ने उत्तर प्रदेश सरकार के सम्मुख १९५५-५६ के वर्ष में ५००० या अधिक श्रमिकों की आबादी वाले ६ नगरों—लखनऊ, आगरा, सहारनपुर, इलाहाबाद, बनारस तथा मोदीनगर — में योजना को लागू करने का प्रस्ताव रखा है, परन्तु १९५५-५६ के वर्ष में सरकार केवल प्रथम तीन नगरों में ही योजना को कार्यान्वित करने की व्यवस्था कर सकी। इस संबंध में निगम और राज्य सरकार ने आवश्यक प्रबंध कर लिया है। बीमा योजना के अब इन नगरों में १५ जनवरी, १९५६ से लागू होने की संभावना है।*

उक्त नगरों में शेष तीनों स्थानों—इलाहाबाद, बनारस और मोदीनगर—में १९५६-५७ के आगामी आर्थिक वर्ष के प्रारंभ में योजना को कार्यान्वित करने का विचार किया जा रहा है। इनके साथ ही २००० या अधिक श्रमिकों की आबादी वाले ६ नगरों—हाथरस, अलीगढ़, मेरठ, गाज़ियाबाद, क्लटरबकगंज और ज्वालानगर—में भी तभी से इस योजना के लागू किये जाने की संभावना है।

मध्य प्रदेश और विन्ध्य प्रदेश में

कानपुर प्रदेश में दो अन्य राज्य-मध्य प्रदेश और विन्ध्य प्रदेश-भी सम्मिलित हैं। जैसाकि पहले कहा जा चुका है, नागपुर में बीमा योजना वहाँ के २२,००० श्रमिकों पर ११ जुलाई, १९५४ से लागू हुई थी। नागपुर के अलावा मध्य प्रदेश में २००० से ५००० तक श्रमिकों की आबादी वाले ९ नगर हैं—१. जबलपुर, २. अकोला, ३. बुरहानपुर, ४. हिंगनघाट, ५. पुलगाँव, ६. राजनंदगाँव, ७. वर्धा, ८. बल्लारपुर तथा ९. बदनेरा। प्रथम ४ नगरों में योजना के बहुत जल्द लागू होने की संभावना है। शेष ५ नगरों के संबंध में यह विचार किया जा रहा है कि आगामी आर्थिक वर्ष में योजना के अन्तर्गत उन्हें ले आया जाय। विन्ध्य प्रदेश में २००० या अधिक श्रमिकों वाला कोई भी नगर नहीं है।

नियोजन सेवा संगठन

(पृष्ठ ३४ से आगे)

५. व्यावसायिक खोज तथा विश्लेषणः—यह निश्चय किया गया है कि प्राविधिक विशारदों, कर्मचारियों एवं व्यवसायों के प्रतिनिधियों तथा सरकारी सहयोग से व्यावसायिक खोज तथा विश्लेषण का कार्यक्रम बनाया जायगा, जिससे विभिन्न व्यवसायों की व्यापकता को बढ़ाने के लिये उनकी उचित परिभाषा दी जा सके तथा उनमें काम करने वालों की योग्यताओं तथा कामों को निश्चित कर उनकी सूची बनाई जा सके।

६. नियोजन कार्यालयों में व्यावसायिक परीक्षाः— प्रार्थी की व्यावसायिक या औद्योगिक योग्यता को देखने के लिये यह निश्चित किया गया है कि नियोजन कार्यालयों में औद्योगिक संस्थाओं के सहयोग से योग्यता-संबंधी तथा व्यावसायिक परीक्षायें ली जाएँगी।

उपर्युक्त सभी योजनाएँ समाज के लिये उपयोगी तथा लाभप्रद हैं तथा राज्य सरकारों की सहायता से इनको कार्य में लाया जायगा।

---

* तीनों नगरों—लखनऊ, आगरा और सहारनपुर—में बीमा योजना को लागू भी किया जा चुका है। लखनऊ में १५ जनवरी को और आगरा में १६ जनवरी को योजना का उद्घाटन किया गया।—सम्पादक

शिशु-प्रदर्शिनी का वार्षिक पुरस्कार -वितरणोत्सव (१)
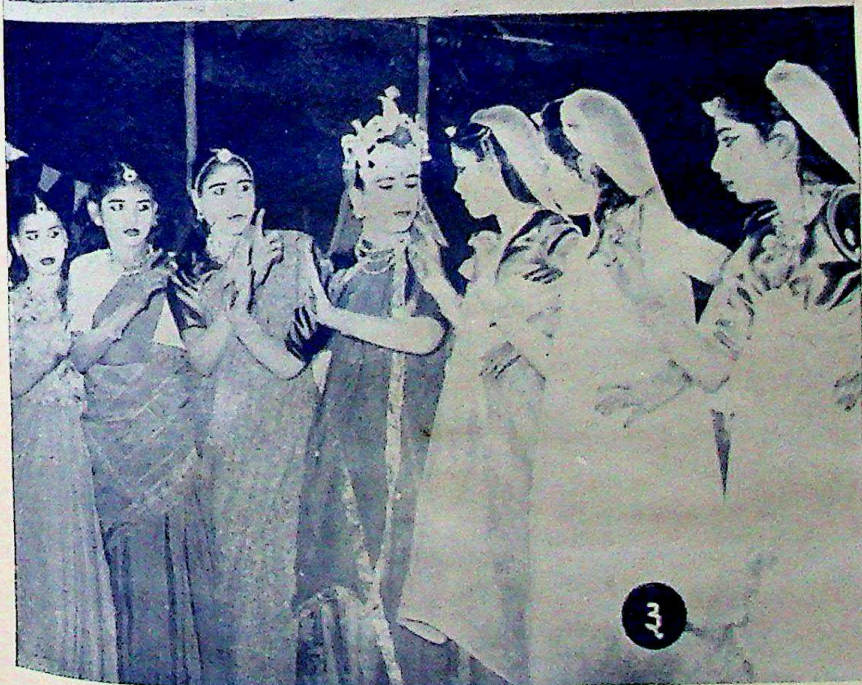
(१) श्रीमती आचार्य जुगलकिशोर अध्यक्षीय भाषण दे रही हैं।

(२) श्रीमती आचार्य युगलकिशोर विजेता बालक की माँ को पुरस्कार दे रही हैं।

(३) श्रमिक – बालिकाओं द्वारा प्रदर्शित 'वंशी–चोरी' नृत्य का एक दृश्य।

शिशु-प्रदर्शिनी का वार्षिक पुरस्कार-वितरणोत्सव (२)

(१) श्रम – हितकारी अधिकारी श्रीमती सुशीला गंजू वार्षिक रिपोर्ट पढ़ रही हैं।

(२) 'वंशी – चोरी' नृत्य का एक अन्य दृश्य।

(३) 'मैं मजदूरिन चली' भाव-नृत्य का एक दृश्य।

पंचवर्षीय योजना और श्रमिक

(पृष्ठ ६ से आगे)

बनाए जा रहे थे, जिनमें से ८६६ मकान पूरी तरह से बन कर तैयार हो चुके हैं। इन मकानों को बनाने के लिए कारखानों को कुल २०,३०,८४८ रुपये ७ आने दिये जा चुके हैं।

प्रस्तावित द्वितीय पंचवर्षीय योजना

प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में श्रमिकों की सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाने, उनके रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाने तथा औद्योगिक शांति को बनाए रखने के लिए जो क़दम उठाए गए, उन्हें स्थिर बनाए रख कर द्वितीय पंचवर्षीय योजना में उनके कल्याण के अनेक विस्तृत कार्यक्रम प्रस्तावित किए गए हैं, जिन पर सरकार, विभिन्न राजनैतिक दलों एवं जनता के बीच विचार-मंथन हो रहा है। द्वितीय योजना में श्रम-संबंधी जिन कार्यक्रमों के निर्धारित किए जाने का विचार है, वे प्रत्यक्ष रूप से नए दीखते हुए भी पहले से होने वाले विकास-कार्यों की अगली कड़ी-मात्र हैं। इस प्रकार प्रथम और द्वितीय योजनाएँ एक-दूसरे से पृथक्-पृथक् न होकर विकास की एक ही श्रृंखला बन जाती हैं। विकास का अर्थ भी यही है कि जिस हद तक काम हो चुका है, काम उसके आगे बढ़े। इस बीच यदि कोई भी समस्या उठ खड़ी हो, तो उसका भी समाधान करते चला जाय। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस बात का पूरा ध्यान रक्खा गया है।

द्वितीय योजना और श्रम-नीति

योजना आयोग ने द्वितीय पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में अपने स्मृति-पत्र के प्रारूप (Draft Memorandum) में श्रम-नीति पर विचार करते हुए मुख्यत: दो बातें कही हैं:—

१—विवादों के निपटारे के लिए आपसी समझौते से काम लिया जाय। केवल न सुलझ सकने वाले विवादों में ही सरकारी हस्तक्षेप की शरण ली जाय।

२—उत्तरोत्तर संवर्धनशील मज़दूरी के लिए केवल उत्पादन-क्षमता में वृद्धि को ही आधार माना जा सकता है, जिससे वास्तविक मज़दूरी क्रमश: बढ़ती है। इसी के साथ श्रमिकों को यह सुदृढ़ आश्वासन भी देना आवश्यक है कि मुनाफे में से उन्हें भी समान भाग मिलेगा।

मज़दूरी-सम्बन्धी विवादों के निपटारे के लिए त्रिदल मज़दूरी मंडल बनाना चाहिए।

बेकारी का हल और राष्ट्रीय आय में वृद्धि

इसके अतिरिक्त प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में देश में बेकारी की समस्या ने उग्र रूप धारण कर लिया, जिसके फलस्वरूप प्रथम योजना में शिक्षितों की बेकारी दूर करने के लिए एक ११-सूत्रीय कार्यक्रम सम्मिलित कर लिया गया था। साथ ही १७५ करोड़ रुपये की नई योजनाएँ भी हाथ में ले ली गईं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस समस्या की ओर भी पूरा ध्यान दिया गया। इसका लक्ष्य लगभग १ करोड़ २० लाख और व्यक्तियों को काम देना रखा गया है। इसी दृष्टि से छोटे और घरेलू उद्योगों के विकास एवं विस्तार पर भी ज़ोर दिया गया है।

इस योजना का दूसरा प्रमुख लक्ष्य २५ प्रतिशत राष्ट्रीय आमदनी बढ़ाना भी रक्खा गया है, जिससे न केवल सामान्य जनता वरन् श्रमिक-वर्ग भी लाभान्वित होगा।

उत्तर प्रदेश की प्रस्तावित द्वितीय श्रम-योजना

प्राय: इन समस्त बातों को ध्यान में रखते हुए उत्तर प्रदेश के श्रम विभाग ने अपनी द्वितीय पंचवर्षीय योजना भी तैयार कर ली है, जो सरकार के विचाराधीन है। प्रस्तावित योजना के अनुसार मुख्य १२ नए कार्यक्रमों को शुरू करने का विचार किया जा रहा है:—

१—श्रम-हितकारी कार्यों का विस्तार—इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कई अतिरिक्त श्रम-हितकारी केन्द्र, एक अतिरिक्त राजयक्ष्मा चिकित्सालय, कानपुर में एक राजयक्ष्मा आरोग्याश्रम (Sanatorium) तथा औषधालय, केन्द्रों में शिशुगृह खोलने आदि की ८ योजनाएँ सम्मिलित हैं।

२—समझौता-व्यवस्था का विस्तार।

३—मुख्य कारखाना निरीक्षक के कार्यालय का विस्तार और पुनर्संगठन।

४—उद्योगों में अभिनवीकरण–सम्बन्धी अध्ययन।

५—वाष्प ब्वायलरों के वाष्पोत्पादन में ईंधन का मितव्यय।

६—अनुसंधान, प्रचार और संख्या विभाग का विस्तार।

७—उत्तर प्रदेश में व्यावसायिक संघों का विकास।

८—राज्य के श्रम विभाग के कर्मचारियों का प्रशिक्षण।

९—कारखानों के स्थायी आदेशों के उत्तमतर पालन की व्यवस्था।

१०—बाग मज़दूर कानून, १९५१ का प्रवर्तन।

११—न्यूनतम मज़दूरी कानून, १९४८ तथा उत्तर प्रदेश दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून, १९४७ के प्रशासन–क्षेत्रों का विस्तार।

१२—नियोजन सेवा संगठन का विस्तार।

राज्य सरकार उपर्युक्त समस्त कार्यक्रमों पर एक करोड़ से अधिक का व्यय करने का विचार कर रही है। राज्य सरकार का यह अभियान जब पूरा होगा, उस समय उत्तर प्रदेश के श्रमिक अपने को आज की अपेक्षा कहीं अधिक सुखकर परिस्थितियों में पाएँगें।

औद्योगिक मतभेदों के हल का सर्वोत्तम मार्ग

"ऐसी अर्थ–व्यवस्था में, जहाँ राज्य के नियन्त्रण में विकास–कार्य का संयोजन इस प्रकार करना है कि एक निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति हो सके, श्रमिकों और प्रबन्धकों के सम्बन्ध के महत्वपूर्ण क्षेत्र को पूर्णत: दैव के भरोसे छोड़ना स्पष्टत: अव्यावहारिक है। हमारा विश्वास है कि पारस्परिक समझौता–वार्ता द्वारा न सुलझ पाने वाले श्रमिक–प्रबन्धक मतभेदों को दूर करने का सर्वोत्तम मार्ग हड़तालों द्वारा या काम छोड़ कर खड़े होकर शक्ति–परीक्षा करना नहीं, वरन् किसी निष्पक्ष संस्था द्वारा अभिनिर्णय करा लेना है।"

—शांतिलाल शाह

पात्र :—

धन्ना—श्रमिक
मैंकू—श्रमिक
सीता—धन्ना की पत्नी
राधा—मैंकू की पत्नी
सेठ जी—ब्याज पर रुपया देने वाला महाजन

[एक श्रमिक के साधारण मकान का कमरा। एक ओर दो चारपाइयाँ खड़ी रखी हैं। टाँड पर गृहस्थी की बहुत-सी चीज़ें, जैसे पुरानी टूटी-फूटी चारपाइयों की सिरवा-पाटी, पुरानी सुराही, सन्दूकें, सूप-चलनी आदि रखी हैं। कमरे के एक कोने में नारियल का चिलम लगा हुक्का दीवार के सहारे खड़ा किया हुआ रखा है। सीता और राधा फर्श पर बिछी चटाई पर बैठी बातें कर रही हैं।]

सीता—कहो बहन, सुशीला का ब्याह तो ठीक हो गया?

राधा—हाँ, ठीक हो गया, अबकी गर्मियों में होगा।

सीता—अबकी गर्मियों में? इतनी जल्दी? रुपए-पैसे का प्रबन्ध भी तो करना होगा?

राधा—रुपए-पैसे के प्रबन्ध की चिन्ता नहीं है, रन्नो की माँ! चिन्ता तो ठीक-ठीक वर के मिलने की थी, सो भगवान ने सुन ली।

सीता—कहाँ हुआ? कैसा है वर? क्या करता है?

राधा—हमारे ही देश का है, बहुत अच्छा है। बिल्कुल बाराजोरी है बाराजोरी। मिडिल पास है और यहाँ शहर में कारखाने में बिनता चलाता है।

सीता—बड़ी भाग्यवान है सुशीला।

राधा—उसी का तो भाग्य है रन्नो की माँ! नहीं, मैं तो किसी भी लायक नहीं थी। पढ़ा-लिखा नौकर-चाकर वर मुश्किल से मिलता है।

सीता—और यदि मिलता है, तो दूर की हाँकते हैं। इतना लेंगे, उतना लेंगे। बहुत कम लोगों की समाई होती है कि उनकी माँगों को पूरा करें।

राधा—लेकिन मैंने तो तय कर लिया था कि सुशीला का ब्याह करूँगी तो अच्छे घर में ही करूँगी, चाहे जो भी खर्च करना पड़े।

सीता—यह तो होनी की बात है, सुशीला की माँ! नहीं तो कौन नहीं चाहता कि हमारी लड़की को अच्छा वर मिले, अच्छा घर मिले।

राधा—होनी की बात कहती हो, तो कोई मैं मालदार नहीं और न रुपया ही कहीं जमा है। पिछले ही कई सालों से कारखाने में बोनस मिलता आ रहा है, उसी को मैं जमा करती रही। बीच में बहुत से खर्चे आए, लेकिन मैंने बोनस के रुपये में से एक पैसा भी नहीं लिया। वह अगर कहते कि बोनस के रुपयों से काम चला लो, तो मैं झट मुकर जाती। कहती—'न बोनस मिला होता, तो? तब फिर काम कैसे चलता?'

सीता—यह क्या कम भाग्य की बात है कि वह तुम्हारे कहे में हैं? तुम्हारी बात मानते हैं। एक मेरे भी हैं, जो अपने आगे किसी की सुनते ही नहीं। रुपये-पैसे जमा करने की बात करो, तो उसे यों ही उड़ा देते हैं। कहते हैं—'कल की बात मत करो। आज की सोचो।'

राधा—रन्नो की माँ, मर्द का स्वभाव बहुत-कुछ स्त्री के कामों से बनता-बिगड़ता है। अगर शुरू से ही ध्यान रखा जाय और मर्द के बहकावे में न आया जाय, तो फिर मर्द कभी भी फिजूल खर्चे नहीं करता।

सीता—मैं मानती हूँ तुम्हारी बात सुशीला की माँ, लेकिन शुरू-शुरू के हँसने-खाने के दिन होते हैं, कुछ सूझ नहीं पड़ता।

राधा—हँसने-खाने के दिनों में ही आगे की बात सोचना सबसे अधिक बुद्धिमानी है, लेकिन उस समय अगर मर्द ने झूठ-मूठ भी सिनेमा-थियेटर जाने का नाम लिया नहीं कि तैयार हो गईं। मर्द के सामने खुद अपनी तरफ से कभी यह प्रस्ताव रखा, कभी वह।

सीता—मैं तो ऐसी ही थी, सुशीला की माँ ?

राधा—तभी तो अब भुगत रही हो। अब से भी फिजूल-खर्ची से बच कर रुपए-पैसे जोड़ो, तो अच्छा है।

सीता—अब जोड़ूँगी सुशीला की माँ ! मेरी भी तो रन्नो धीरे-धीरे सयानी हो रही है।

दृश्य दो

[सेठ जी अपनी बैठक में गद्दी से टिके हुए वही के पन्नों को उलट-पलट रहे हैं। बैठक के एक कोने में एक तिजोरी रखी हुई है। मुख्य द्वार के सामने के ताख पर गणेश-लक्ष्मी की मूर्त्तियाँ हैं, जिन पर कुम्हलाई हुई फूल-माला पड़ी है।]

धन्ना—जयराम जी की सेठ जी।

सेठ जी—राम-राम। आओ धन्ना, बैठो। मैकू से बात की थी ?

धन्ना—नहीं।

सेठ जी—क्यों ?

धन्ना—अरे सेठ जी, उसको रुपए-पैसे की दरकार नहीं है।

सेठ जी—दरकार नहीं है ?

धन्ना—हाँ, सेठ जी उसे सचमुच दरकार नहीं है।

सेठ जी—लड़की का ब्याह करने जा रहा है और रुपए-पैसे की दरकार नहीं है ? यह तो मैं मान ही नहीं सकता।

धन्ना—यह तो मानना ही पड़ेगा आपको सेठ जी। मैकू की घरवाली बड़ी समझदार है। वह शुरू से ही पैसे जोड़ती रही। अब उसके पास इतना पैसा जमा है कि कन्या-दान आसानी से हो जायगा। उधार लेने की ज़रूरत ही न पड़ेगी।

सेठ जी—अच्छा ! बड़ी होशियार औरत है ! एक अच्छा असामी हाथ से निकल गया। लेकिन उसने जमा कैसे कर लिया, धन्ना ?

धन्ना—जमा करने के लिए कहीं वह कमाने तो गई नहीं। पर, हाँ, मैकू को जब-जब बोनस मिलता रहा, उसे वह अपने कब्जे में करती रही। उड़ाने-खाने को मैकू के हाथ पर एक पैसा भी नहीं रखा।

सेठ जी—हूँ ! तो यह बात है ?

धन्ना—बिल्कुल यही बात है सेठ जी ! बोनस तो मुझे भी मिलता रहा है, लेकिन मैं तो कौड़ी-कौड़ी जोड़ने में विश्वास नहीं करता। जामा को तकलीफ देने से क्या फायदा ?

सेठ जी—बहुत अच्छे, बहुत अच्छे !......तकलीफ ही क्यों होगी ? जब तक मैं मौजूद हूँ, भला तकलीफ हो सकती है ? धन्ना, रुपया उधार देना क्या कम परोपकार की बात है ? रही ब्याज की बात, सो ब्याज न लूँ तो क्या खाऊँ ! एकमुश्त रुपया देकर धीरे-धीरे करके वसूल करने में जो परेशानी होती है, उसे सभी लोग नहीं समझ सकते। तुम्ही को मैंने सौ रुपए दिए थे। एक साल होने को आया, अभी तक चुकता नहीं हुए।

धन्ना—वह तो है ही सेठ जी ! अब तो मेरे रुपए चुकता होने पर होंगे ?

सेठ जी—अभी चुकता हो जायेंगे ? अभी तो बहुत बाकी हैं।

धन्ना—कितने बाकी हैं ? सेठ जी ?

सेठ जी—फिर किसी दिन आना, देखकर बताऊँगा !... भाई धन्ना, तुम असामी लाते रहो, समझे !

धन्ना—सेठ जी, भला यह भी कहने की बात है। मैंने अकेले अपने ही कारखाने के न जाने कितने

मज़दूरों का रुपए उधार दिलाए हैं।

सेठ जी—तभी तो मैं तुम पर कभी ज़ोर-जबर्दस्ती नहीं करता।

धन्ना—यह आपकी मेहरबानी है, सेठ जी! मैं असामी लाऊँगा, और असामी लाऊँगा, सेठ जी। मैंकू को ही लाता, लेकिन क्या करूँ, उसे दरकार ही नहीं। मैंने तो पहले ही बताया था कि उसकी लड़की का ब्याह होने को है, लेकिन मेरी घरवाली से जब उसकी औरत ने पूरा हाल बताया, तो फिर मैंने इस बारे में बात करना ठीक नहीं समझा।

सेठ जी—कोई बात नहीं और भी तुम्हारे बहुत से साथी हैं। उनसे मिलते रहा करो। किसी न किसी को ज़रूरत तो होती ही रहती है।

धन्ना—सो तो मैं पूछ-ताछ करने में पीछे नहीं रहता। सेठ जी, घबड़ाते क्यों हैं, सभी मैंकू थोड़े ही बन जायेंगे।......अच्छा, तो मैं अब चलूँगा?

सेठ जी—जाना भाई, लेकिन फिर मेरी बात का ध्यान रखना।

धन्ना—ज़रूर, ज़रूर!

दृश्य तीन

[मैंकू अपने दरवाज़े पर चारपाई पर उदास बैठा है। धन्ना चारपाई से सटा हुआ खड़ा है]

धन्ना—मैंकू भाई, धीरज धरो। इस तरह कहीं उदास और दुखी होना चाहिए? बिटिया तो ग़ैर के घर की होती ही है।

मैंकू—बड़ी सुशील है मेरी बिटिया, धन्ना भाई! वह चली गई, तो लगता है घर की सब रौनक ही चली गई।

धन्ना—लच्छमी थी लच्छमी। भगवान लड़की दे, तो ऐसी ही दे।

मैंकू—अभी कल तक सब भूला था। उसके लिए वर की तलाश करने, कन्यादान की तैयारी करने, सब में लड़की के ममत्व के बल पर दूने उत्साह से काम किया, लेकिन आज......आज तो लग रहा है कि कहाँ पाऊँ, सुशीला बिटिया को देख लूँ। उसके बिना घर जैसे काटें खाता है।

धन्ना—बिटिया की बिदाई के समय ही तो माँ-बाप को खलता है, मैंकू भाई! और आपको तो सबसे कम खलना चाहिए।

मैंकू—क्यों, मुझे सबसे कम क्यों खलना चाहिए!

धन्ना—क्योंकि और लोगों की तरह आपको महाजन का कर्ज़ चुकाने की चिंता नहीं है। जो लोग कर्ज़ लेकर कन्यादान देते हैं, उन्हें बिटिया विदा हुई नहीं कि कर्ज़ के चुकाने की चिंता पैदा हो जाती है।

मैंकू—मुझे तो कर्ज़ नहीं लेना पड़ा धन्ना भाई, मैं तो बोनस के रुपयों को हमेशा जमा करता रहा और आज इस बात की खुशी है कि मैं किसी का धेले का कर्ज़ी नहीं हूँ।

धन्ना—तुमको तो चिंता नहीं है, लेकिन उस सूदखोर सेठ के तो पेट में चूहे कूद रहे हैं।

मैंकू—क्यों, क्यों भाई, ऐसा क्यों?

धन्ना—अरे भाई, वह आसरा लगाए था कि तुम बिटिया का ब्याह करोगे, तो उससे कर्ज़ लोगे और उसे लम्बा सूद मिलेगा।

मैंकू—अच्छा, तो यह बात है।

धन्ना—मैंने सौ रुपए लिए थे। न जाने कितना चुका दिया है, फिर भी कहता है कि अभी क्या दिया है? कभी हिसाब ही नहीं करता।

मैंकू—अरे, उससे...उससे तो रुपए लेकर उद्धार होना लोहे के चने चबाना है। ऐसा जाल रचता है कि ज्यों-ज्यों सुलझाओ, उलझते ही जाओ।

धन्ना—ऊपर से कहता है, असामी लाओ। रुपए चाहने वालों को मेरे पास लाओ।

मैंकू—जाने भी दो। अपने किसी भाई को उसके चंगुल में फँसाने से पाप के भागी बनोगे, धन्ना भाई!

धन्ना—नहीं, मैं ऐसा नहीं करने का।

मैंकू—देखो, तुमको भी अपनी लड़की का ब्याह करना है। तुम भी अबसे रुपए बचाओ। जो तनख्वाह मिले, उससे घर-गृहस्थी के ज़रूरी खर्चे चलाया करो और जो बोनस मिले, उसे जमा करते जाओ।

बिटिया के ब्याह के समय सूद पर रुपए उधार लेने की ज़रूरत ही न पड़ेगी।

धन्ना—यही करूँगा, मैकू भाई, यही करूँगा। अबसे जो भी बोनस मिलेगा, उसे बिटिया के ब्याह के लिए रखता जाऊँगा। उससे एक पाई भी नहीं लूँगा। मुझे तुमसे सबक मिला है भाई! इसे कभी नहीं भूल सकता। मैं अब बिटिया के ब्याह के लिए सूद पर रुपए उधार नहीं लूँगा।

दृश्य चार

[धन्ना चारपाई पर पलथी मारे बैठा चाय पी रहा है। उसकी पत्नी सीता चारपाई के नीचे बैठी एक थाली में गेहूँ रखे बीन रही है।]

सीता—देखा, मैकू ने किस तरह बिटिया का ब्याह किया? इतना बड़ा काम कर डाला, एक पैसे का भी कर्ज़ा नहीं है।

धन्ना—कर्ज़ा कैसे हो, बोनस के रुपए नहीं जमा करता था?

सीता—तो फिर तुम भी क्यों नहीं जमा करते? क्या तुम्हारे लड़की ब्याहने को नहीं है?

धन्ना—है क्यों नहीं। अब मैंने भी रुपए जोड़ना तय कर लिया है।

सीता—सच? तुम सच कह रहे हो?

धन्ना—और नहीं तो क्या झूठ कह रहा हूँ। बहुत फिज़ूलखर्ची की है और तुमने भी कभी हाथ नहीं रोका।

सीता—देखो, मुझे दोषी न ठहराओ। मैं क्या करती? तुम मेरे कहे में भी हो? मुझे तो तुम्हारी इस फिज़ूलखर्ची और घर में दिन-दिन सयानी होती बिटिया को देख कर न जाने कितनी चिंता लगी रहती है।

धन्ना—इसमें चिंता की क्या बात है?

सीता—क्यों, चिंता की बात क्यों नहीं। कहाँ से आयगा रुपया? तुम तो सोचते होगे, सेठ से उधार ले लूँगा। लेकिन सेठ से रुपए लेने का तो मतलब है—हमेशा-हमेशा के लिए कर्ज़ी हो जाना। अभी सौ रुपये लिए थे, पेट काट-काट कर भुगतते-भुगतते नाकों दम आ गया और रुपए अब तक भुगताए नहीं जा सके।

धन्ना—मैं सेठ से रुपए लूँगा? हुँ! सेठ से रुपए मैं नहीं लूँगा, बिल्कुल नहीं लूँगा। मैं भी रुपए जोड़ूँगा और बिटिया का ब्याह करूँगा।

सीता—सच, मुझे तो लग रहा है, जैसे सपना देख रही हूँ।

धन्ना—सपना नहीं, साक्षात् मैं तुमसे कह रहा हूँ।

सीता—काश, तुम जैसा कहते हो, वैसा ही करते!

धन्ना—अब वैसा ही करूँगा। मैकू से मुझे सबक मिल गया है। अब मैं सेठ से रुपए नहीं ले सकता, नहीं ले सकता।

सीता—मैं तुम पर बलिहारी जाती हूँ।

धन्ना—बलिहारी जाओ मैकू पर, जिससे मुझे सबक मिला है।

सीता—(बनावटी क्रोध से) क्या मज़ाक करते हो। मैकू मेरे कौन हैं? मुझे ऐसी मज़ाक अच्छी नहीं लगती।

धन्ना—ह: ह: ह:, तुम तो नाराज़ हो गई। अच्छा जाने भी दो। आज से हमें गृहस्थी को नए ढंग से चलाना है।

[पर्दा गिरता है]

उत्तर प्रदेश के श्रमिक और १९५५

विगत दो दशकों के मुकाबले उत्तर प्रदेश का श्रमिक आज कहीं अधिक सुविधा-सम्पन्न और सुखी है, जो राज्य सरकार द्वारा उसकी रहन-सहन और काम की दशाओं के सुधार के लिये किये गये विविध प्रयासों को देखते हुए कोई अतिशयोक्ति नहीं। श्रमिकों के लिये अच्छे मकान, न्यूनतम मज़दूरी की गारंटी, औद्योगिक संबंधों का नवीन मानवीय दृष्टि से मूल्यांकन, कारखानों एवं वाणिज्य प्रतिष्ठानों के भीतर श्रमिकों के काम की दशाओं के नियमन तथा श्रमिकों द्वारा व्यावसायिक संघों के संगठन, श्रमिक—कल्याण आदि के लिये विविध कानूनी एवं अन्य सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

श्रमिकों के लिये पक्के मकान

स्वच्छ एवं स्वस्थ मकानों में औद्योगिक श्रमिकों को बसाने के उद्देश्य से भारत सरकार की 'सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास योजना' के अन्तर्गत राज्य सरकार बहुत से मकान बनवा रही है। ये मकान राज्य के लगभग सभी महत्वपूर्ण औद्योगिक नगरों में बनाए जा रहे हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समाप्त होते-होते अर्थात् मार्च, १९५६ तक ५.६ करोड़ की लागत से २०,७१६ मकान बनाए जायँगे। इसके अतिरिक्त द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत भी १८,३०० मकान बनवाने का विचार है। इस प्रकार द्वितीय पंचवर्षीय योजना के समाप्त होने तक उत्तर प्रदेश में ३६,०१६ मकान बनकर तैयार हो जायँगे, जिनमें लगभग २० प्रतिशत श्रमिक रह सकेंगे।

अब तक यह कार्य कई चरणों के अन्तर्गत किया गया है। योजना के प्रथम चरण के अंतर्गत कानपुर और लखनऊ में क्रमश: २२१६ और ५६० मकान बनवाए गए हैं। योजना के दूसरे चरण के अंतर्गत कानपुर में ३,७५० मकान बना कर तैयार किये जा चुके हैं। तीसरे चरण के अंतर्गत ७४०० मकान बनवाए जाने को हैं—कानपुर में ३४००, आगरा में १२९६, फिरोज़ाबाद में १०००, इलाहाबाद में ५०४, बनारस में ५००, मिर्ज़ापुर में ९६ और सहारनपुर में ६०४। इस चरण के अंतर्गत भी बनारस को छोड़कर काम पूरा होने ही वाला है। बनारस में मकानों के लिये स्थान न मिलने के कारण मकान नहीं बनाए जा सके, परन्तु नवंबर, ५५ तक कानपुर में ३,३७६ मकान, फिरोज़ाबाद में १००० मकान, इलाहाबाद में ५०४ मकान और मिर्ज़ापुर में ७२ मकान बन कर तैयार हो चुके थे। आगरे में १२७८ मकान और सहारनपुर में सभी ६०४ मकान छत की सतह तक पहुँच चुके थे। चौथे चरण के अंतर्गत भी काम प्रारम्भ हो गया है। इस चरण में कुल मिला कर ६७९३ मकान बनवाए जाने को हैं। इस चरण के अन्तर्गत कानपुर में ५,२४५ मकान बनवाए जाने को हैं, जिनमें से ३४२ मकान नवंबर, ५५ तक नींव की सतह तक बन चुके थे। इसी प्रकार रामपुर में भी इस चरण के अन्तर्गत मकानों का बनवाया जाना प्रारम्भ हो गया है। यहाँ पर उक्त अवधि तक ३६ मकान नींव की सतह तक पहुँच चुके थे।

कानपुर में राज्य के सर्वाधिक महत्वपूर्ण औद्योगिक नगर होने के कारण प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत १४,६११ मकान बनवाए जायँगे और ये सभी मकान मार्च, १९५६ तक बन कर तैयार हो जायँगे। इनके अतिरिक्त कानपुर में ५,००० और मकान द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बनवाए जायँगे। इस प्रकार अकेले कानपुर में द्वितीय पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक १९,६११ मकान बन कर तैयार हो जायँगे।

सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास योजना के अन्तर्गत बनाए जाने वाले मकान पक्के हैं, जिनमें पानी के नलों, स्वतः धुलने वाली टट्टियों और बिजली के प्रकाश आदि की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। ये मकान ६, ८ और १२ के समूहों में बनवाए गए हैं।

इन नई श्रमिक-बस्तियों में पार्क, श्रम-हितकारी केन्द्र, दूकानें और स्कूलों तथा खेल के मैदानों के लिए स्थान है और ये सभी संयोजित ढंग से बनाए गए हैं।

इन मकानों में से अधिकांश में श्रमिकों को बसाया भी जा चुका है। इस योजना के अन्तर्गत बने मकानों के आवंटन, संरक्षण तथा प्रशासकीय कार्य के निमित्त आलोच्य वर्ष में राज्य की विधान सभा ने 'उ० प्र० औद्योगिक आवास विधेयक' स्वीकृत किया, जिसे अब कानून का रूप भी दिया जा चुका है। इसे शीघ्र लागू किया जायगा।

इसके अतिरिक्त राज्य के चीनी उद्योग के श्रमिकों के लिए भी सरकार अपनी एक पृथक योजना के अनुसार मकान बनवा रही है। ये मकान उत्तर प्रदेश चीनी एवं चालक मद्यसार औद्योगिक श्रम-कल्याण एवं विकास निधि कानून, १९५१ के अन्तर्गत शीरे की बिक्री पर लगाए गए उपकर से प्राप्त धनराशि से बनवाए जा रहे हैं। इस कोष में ४६,३७,६०० रुपये जमा किए गए हैं, जिनमें से ४५,४४,८४८ रु० श्रमिकों के लिये मकान बनवाने के लिए अलग कर दिए गए हैं। इस योजना के अन्तर्गत राज्य के ६५ चीनी के कारखानों में एक और दो कमरे वाले कुल १७३० (पहले की योजना के १५०० और नई योजना के २३०) मकानों के बनवाने की व्यवस्था की गई है। ३१ दिसंबर, १९५५ के अन्त तक राज्य के ५० चीनी के कारखाने ११०९ मकान बनवा रहे थे, जिनमें से ३२ चीनी के कारखानों में ८९९ मकान बन कर तैयार हो चुके हैं। राज्य सरकार ने अब तक विभिन्न चीनी के कारखानों को मकान बनवाने के लिए २०,३०,८४९ रु० दिए हैं।

न्यूनतम मज़दूरी की व्यवस्था

राज्य सरकार ने राज्य के विविध उद्योगों के श्रमिकों के लिये कानून के अन्तर्गत अथवा पृथक राज्यादेश निकाल कर न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित कर दी है। न्यूनतम मज़दूरी कानून, १९४८ के अन्तर्गत प्रायः सभी अनुसूचित छोटे एवं असंगठित उद्योगों के प्रौढ़ श्रमिकों के लिए २६ काम के दिनों के लिए २६ रु० मासिक अथवा १ रु० प्रति दिन की दर से न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित कर दी है। इसी प्रकार खेतों में काम करने वाले प्रौढ़ श्रमिकों के लिये भी २६ रु० मासिक या १ रु० प्रतिदिन और बालकों के लिये १६ रु० ४ आ० मासिक या १० आने प्रति दिन न्यूनतम मज़दूरी नियत कर दी गई है। खेतिहर मज़दूरों के लिये निर्धारित यह न्यूनतम मज़दूरी आलोच्य वर्ष में कम मज़दूरी वाले बारह ज़िलों के सभी फार्मों और कृषि–क्षेत्रों में तथा अल्मोड़ा, नैनीताल, गढ़वाल एवं टेहरी–गढ़वाल को छोड़कर राज्य के शेष ज़िलों में ५० एकड़ या इससे अधिक के फार्मों पर लागू कर दी गई। कम मज़दूरी वाले ज़िले हैं—बाँदा, हमीरपुर, जालौन, बाराबंकी, रायबरेली, प्रतापगढ़, जौनपुर, सुल्तानपुर, फैज़ाबाद, आज़मगढ़, बलिया और गाज़ीपुर।

बड़े उद्योगों में चीनी उद्योग के श्रमिकों के लिये सन् १९४८—४९ के वर्ष में ५५ रु० मासिक संपूर्ण मज़दूरी निर्धारित की गई थी, जो इस वर्ष भी लागू रही। इसी प्रकार कानपुर, आगरा, मेरठ, बरेली, लखनऊ, इलाहाबाद तथा बनारस के सूती एवं ऊनी वस्त्रोद्योग के श्रमिकों के लिए भी ३० रु० मासिक तथा मैट्रिक की योग्यता वाले क्लर्कों के लिए ५५ रु० मासिक न्यूनतम मूल मज़दूरी सन् १९४८ में निर्धारित की गई थी, जो पिछले वर्षों की भाँति सन् १९५५ में भी लागू रही। इसी प्रकार कानपुर तथा उपर्युक्त सभी नगरों के बिजली उद्योग में लगे श्रमिकों के लिये भी ३० रुपये मासिक

तथा अन्य स्थानों के लिये २८ रुपये मासिक न्यूनतम मूल मज़दूरी निर्धारित है। कानपुर के इंजीनियरिंग उद्योग में लगे श्रमिकों के लिये भी ३० रुपये मासिक या १ रु० २ आना ६ पाई प्रति दिन की दर से न्यूनतम मूल मज़दूरी नियत है।

सन् १९५५ में श्रम निरीक्षकों ने अनुसूचित उद्योगों में कुल १०,०८८ निरीक्षण किये, जिसके फलस्वरूप दोषी नियोजकों पर १४ अभियोग चलाए गये। पूर्ववर्ती वर्ष के अभियोगों को मिला कर कुल १४ प्रकरणों में निर्णय दिए गए। वर्ष के अंत में न्यूनतम मज़दूरी से संबंधित दो प्रकरण विचाराधीन रहे।

इसके साथ ही ठीक समय पर मज़दूरी देने के लिये मज़दूरी-वितरण कानून, १९३६ का उचित रीति से प्रशासन किया जाता है।

काम की दशाएँ और नौकरी की शर्तें

औद्योगिक एवं वाणिज्य प्रतिष्ठानों तथा बागों के श्रमिकों एवं कर्मचारियों के काम की दशा और नौकरी की शर्तों के नियमन के लिये सरकार की ओर से कानूनी व्यवस्थाएँ की गई हैं। राज्य सरकार इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये कारखाना कानून, १९४८, बाल-नियोजन कानून, १९३८, बाग मज़दूर कानून, १९५१, उ० प्र० दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून, १९४७ तथा औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) कानून, १९४६ का सुचारु रीति से प्रशासन करती है।

कारखाना कानून तथा अन्य—सन् १९५५ में १२९३ कारखानों के लाइसेंसों का नवीकरण किया गया और २२ नवीन कारखाने लाइसेंस-प्राप्त कारखानों की सूची में जोड़े गए। दूसरे शब्दों में गत वर्ष लाइसेंस-प्राप्त १२७३ कारखानों की अपेक्षा इस वर्ष १३१५ कारखानों ने लाइसेंस प्राप्त किए। ५१४ अन्य कारखानों ने भी लाइसेंस प्राप्त करने के लिए आवेदन-पत्र दिए, किन्तु उनको लाइसेंस न दिए जा सके, क्योंकि उनके द्वारा कुछ प्रारम्भिक वैधानिक कार्यवाहियाँ पूर्ण होना शेष थीं। उन पर कार्यवाही की जा रही है। इसके अतिरिक्त वर्ष के अन्त में राजकीय एवं स्थानीय संस्थाओं द्वारा संचालित ६८ ऐसे कारखाने भी थे, जो कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत प्रयोज्य हैं, परन्तु उन्होंने लाइसेंस प्राप्त करने के लिए आवेदन-पत्र नहीं भेजे थे, जिसके लिए सरकार को लिखा गया है। इस संबंध में उचित कार्यवाही हो रही है।

इस कार्यालय द्वारा आलोच्य वर्ष में कारखाना अधिनियम, १९४८ को अन्तर्गत ६१०५ निरीक्षण तथा बाल-नियोजन अधिनियम के अन्तर्गत ८२७ निरीक्षण किए गए।

इस कार्यालय में ८९९ मानचित्र कारखानों के भवनों तथा उनमें परिवर्तन करने के हेतु प्राप्त हुए, जिनमें ४२ मानचित्र जलपान-गृह, विश्रामालय, शिशुपालन-गृह आदि अन्य भवनों के थे।

आलोच्य वर्ष में कारखाना कानून के अन्तर्गत ३४७ शिकायतें प्राप्त हुईं। साथ ही ९३२२ दुर्घटनाओं की सूचना मिली, जिनमें २९ मृत्युएँ भी सम्मिलित हैं। १३७ कारखानों में दुर्घटनाओं की रोक-थाम के लिये 'सुरक्षा प्रथम समितियाँ' बनाई गईं।

इस राज्य में बाग मज़दूर कानून, १९५१ अभी तक लागू नहीं हुआ है। आलोच्य वर्ष में इस कानून के अन्तर्गत बागों का सर्वेक्षण किया गया।

दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून—दूकानों एवं वाणिज्य प्रतिष्ठानों के कर्मचारियों की काम की दशाओं के सुधार के लिये राज्य सरकार ने उ० प्र० दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठान कानून के अन्तर्गत आलोच्य वर्ष के अन्त तक राज्य के ३० नगरों के दूकान एवं वाणिज्य प्रतिष्ठानों के अन्तर्गत कर्मचारियों के काम की दशाओं का नियमन किया गया। इनमें से १९ नगर ऐसे हैं, जिनमें इस कानून की केवल १० वीं एवं १२ वीं धाराएँ ही लागू हैं। ये धाराएँ कर्मचारियों के लिए बंदी के दिन और साप्ताहिक छुट्टी से संबंधित हैं।

आलोच्य वर्ष में श्रम निरीक्षकों ने ४३,०४२ निरीक्षण किए और ८२१ प्रकरणों में अभियोग चलाए गए। कानून के अन्तर्गत कुल ८९९ प्रकरणों में निर्णय हुए, जिनमें ८९५ में दंड दिया गया, ३९ में मुक्त किया गया, १४ प्रकरणों को जमा कर दिया गया और एक को वापस ले लिया गया। औसत् जुर्माना १५.५ रु० प्रति प्रकरण

किया गया।

औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) कानून— नियोजन अर्थात् नौकरी की शर्तों से संबंधित औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) कानून, १६४६ बड़ा महत्व-पूर्ण है। यदि इस कानून की भावना के अनुकूल आचरण किया जाय, तो अनेक औद्योगिक विवाद स्वतः समाप्त हो जायँ।

सन् १६५५ के प्रारंभ में उन औद्योगिक प्रतिष्ठानों की संख्या ५६६ थी, जिनके स्थायी आदेश प्रमाणित हो चुके थे और वर्ष के अन्त में ऐसे प्रतिष्ठानों की संख्या बढ़ कर ६०१ हो गई। इस वर्ष ५ प्रतिष्ठानों ने अपने स्थायी आदेशों में संशोधन भी कराए। प्रमाणपत्र-दाता अधिकारी के आदेशों के विरुद्ध प्रस्तुत तीन अपीलों में राज्य औद्योगिक न्यायाधिकरण, उ० प्र०, इलाहाबाद द्वारा निर्णय भी दिये गए।

स्थायी आदेशों के निरीक्षकों ने तथा समूह योजना (Pooling Scheme) के अन्तर्गत श्रम निरीक्षकों ने इस वर्ष उत्तर प्रदेशीय औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) नियमावली, १६४६ के नियम ५ के अन्तर्गत १७, नियम ६ के अंतर्गत १३ तथा नियम १० के अंतर्गत १७ जाँचें कीं। इस प्रकार कुल ४७ जाँचें की गईं। श्रम निरीक्षकों ने औद्योगिक प्रतिष्ठानों के प्रमाणित स्थायी आदेशों का पालन कराने के लिये १६५ निरीक्षण किये। इसके अतिरिक्त ८७ जाँचें ऐसे औद्योगिक विवादों को सुलझाने के लिये भी की गईं, जो स्थायी आदेशों का उचित पालन करा कर समाप्त किये जा सकते थे।

कुछ औद्योगिक प्रतिष्ठानों को धारा १३ के अंतर्गत 'नोटिस' भेजकर उनसे स्थायी आदेशों का सुचारु रूप से पालन कराया गया।

गत वर्ष चीनी के कारखानों के स्थायी आदेशों में सुधार के लिये नियुक्त समिति के सरकार द्वारा स्वीकृत प्रस्तावों के आधार पर चीनी के कारखानों में नये स्थायी आदेश १२ नवंबर, १६५५ के एक राज्यादेश द्वारा लागू कर दिये गये।

औद्योगिक संबंधों का नवीन मूल्यांकन

मज़दूर और मालिक के संबंधों के विषय में युगों-पुरानी धारणाएँ अब बदल गई हैं और प्रस्तावित समाज के समाजवादी ढाँचे को पृष्ठभूमि में रख कर विचार किया जाय, तो हम देखेंगे कि अब श्रमिक कारखाने में काम करने वाला नौकर नहीं, उद्योग का समान साझीदार भी समझा जाने लगा है। जब तक यह परिवर्तन, यह क्रांति पूर्ण नहीं होती, तब तक औद्योगिक विवादों का अस्तित्व समाप्त नहीं हो सकता। उत्तर प्रदेश में इन औद्योगिक विवादों के निपटारे की एक अत्यंत मानवीय एवं उपादेय कानूनी व्यवस्था की गई है।

उ० प्र० औद्योगिक विवाद कानून, १६४७ के अन्तर्गत विवादों में समझौता कराने के लिये यहाँ अनेक समझौता अधिकारी नियुक्त हैं। ये अधिकारी किसी विवाद के सामने आने पर उसकी जाँच करते हैं और यथासंभव आपसी समझौते द्वारा उसे निपटाने का प्रयत्न करते हैं। यदि इसमें उन्हें सफलता नहीं मिलती, तो वे इसकी सूचना सरकार को दे देते हैं। साथ ही अपनी सिफारिश भी लिख देते हैं कि यह मामला अभिनिर्णय के लिये भेजने योग्य है अथवा नहीं। समझौता अधिकारी का प्रतिवेदन प्राप्त होने पर राज्य सरकार मामले की जाँच करती है और अभिनिर्णय के लिए मामले को भेजने का आदेश देती है। सामान्य-तया ज्येष्ठ समझौता अधिकारियों को अभिनिर्णायक बनाया जाता है, जो ऐसे विवादों में अपने निर्णय देते हैं। फिर भी अधिक महत्वपूर्ण विवादों को, जिनमें कोई कानूनी बात होती है या जिनका सम्पूर्ण उद्योग पर प्रभाव पड़ने को होता है, राज्य औद्योगिक न्यायाधिकरण, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद के पास भेज दिया जाता है। अभि-निर्णायकों तथा राज्य औद्योगिक न्यायाधिकरण द्वारा दिए गए निर्णयों के विरुद्ध श्रम अपीली न्यायाधिकरण में अपील की जा सकती है। इस न्यायाधिकरण की एक शाखा लखनऊ में है। श्रम अपीली न्यायाधिकरण में की जाने वाली अपील कुछ निश्चित मामलों और कानूनी बातों पर ही प्रस्तुत की जा सकती है और उसका निर्णय अंतिम होता है।

सन् १६५५ में पूर्ववर्त्ती वर्ष के विवादों को मिला कर समझौता मंडलों के समक्ष ३५२४ विवाद उपस्थित हुए, जिनमें से ३१७१ विवादों पर सुनवाई पूरी हो गई

और ३५३ विवाद विचाराधीन रहे। इस वर्ष समस्त विवादों में से ८५१ विवादों में आपसी समझौते हो गये। अभिनिर्णय के लिये पूर्ववर्त्ती वर्ष के विचाराधीन विवादों-सहित राज्य के अभिनिर्णायकों के समक्ष ७५८ तथा औद्योगिक न्यायाधिकरण के समक्ष १४४ विवाद उपस्थित हुए। कुल मिलाकर ६८५ विवादों में अभिनिर्णय दिए गए।

गत वर्ष की विचाराधीन अपीलों-सहित ६६६ अपीलें श्रम अपीली न्यायाधिकरण के समक्ष प्रस्तुत की गईं, जिनमें से ५०४ में निर्णय दिए गए और वर्ष के अन्त में १६५ अपीलें विचाराधीन रहीं।

व्यावसायिक संघ

राज्य में स्वस्थ व्यावसायिक संघ आन्दोलन के विकास के निमित्त भारतीय व्यावसायिक संघ कानून, १९२६ के प्रशासन की समुचित व्यवस्था उत्तर प्रदेश में भी की गई है। आलोच्य वर्ष के प्रारंभ में प्रमाणित व्यावसायिक संघों की संख्या ६६३ थी। इस वर्ष १६७ नए संघ प्रमाणित किये गये और विविध कारणों से ७९ संघों के प्रमाण-पत्र रद्द किये गये। इस प्रकार वर्ष के अन्त में प्रमाणित संघों की संख्या ७५१ थी।

व्यावसायिक संघों का नियमित निरीक्षण व्यावसायिक संघ निरीक्षक तथा सहायक निरीक्षकों द्वारा किया जाता है, जो उन्हें अपने मामलों की उचित ढंग से व्यवस्था करने तथा उचित लेखा एवं रजिस्टर रखने की सलाह देते हैं। व्यावसायिक संघ निरीक्षकों ने १९५५ के वर्ष में ३३० निरीक्षण किए तथा ७८ संघों से संबंधित विवाद-ग्रस्त मामलों में जाँचें कीं।

राज्य सरकार ने व्यावसायिक संघों को कानूनी सलाह देने के लिये एक कानूनी सलाहकार की भी नियुक्ति की है।

श्रमिक-कल्याण

जहाँ तक कारखानों के बाहर श्रमिक-कल्याण का प्रश्न है, राज्य सरकार ने समूचे राज्य में ४४ राजकीय श्रम-हितकारी केन्द्र खोल रखे हैं, जिनमें श्रमिकों के शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं सांस्कृतिक विकास के लिये विविध कार्यक्रम किये जाते हैं। इन कार्यक्रमों का विस्तृत विवरण इसी अंक में अन्यत्र (पृष्ठ ३५ पर) दिया गया है।

उद्योगों में अभिनवीकरण

ऊपर जिन सुविधाओं का वर्णन किया गया है, उनका अभिप्राय केवल यही है कि श्रमिक स्वस्थ, सुखी और समृद्ध होकर उत्पादन-वृद्धि में मनोयोग के साथ लगें। प्रायः यह देखने में आता है कि श्रमिक पूरा उत्पादन नहीं करते। दूसरी ओर यह भी सुनने में आता है कि कार्य-भार बढ़ाया जा रहा है। इस समस्या के निपटारे के लिये सरकार ने उद्योगों के अभिनवीकरण की ओर ध्यान दिया और इस समस्या के अध्ययन एवं निराकरण के लिये राज्य के श्रम विभाग के अन्तर्गत एक पृथक उपविभाग--कार्यकुशलता उपविभाग—खोल दिया!

आलोच्य वर्ष में अभिनवीकरण के प्रश्न पर मज़दूरों और मालिकों में मतभेद होने और संघर्ष उत्पन्न हो जाने पर यह अनुभव किया गया कि इस प्रश्न की भली प्रकार से जाँच की जाय। इसके लिये ११ अगस्त, १९५५ की एक अधिसूचना द्वारा न्यायाधीश श्री विन्ध्यवासिनी प्रसाद की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त कर दी गई है। समिति में विचार-विनिमय अभी ज़ारी है।

उपर्युक्त वर्णन से विदित होता है कि आज से २० वर्ष पहले की तुलना में श्रमिकों को अब क्या-क्या सुविधाएँ प्राप्त हैं। आज का श्रमिक अपने को अधिक सुरक्षित और संतुष्ट पाता है, और वह औद्योगिक उत्पादन को बढ़ाने के लिये, जो द्वितीय पंचवर्षीय योजना की सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है, अधिकाधिक योगदान देने के योग्य हो सका है।

उत्तर प्रदेश में श्रम-हितकारी कार्य : एक सिंहावलोकन

(पृष्ठ ३८ से आगे)

सिलाई, बिनाई एवं कढ़ाई की शिक्षा और पाठ्यक्रम

श्रमिकों की स्त्रियों तथा लड़कियों को सिलाई, बिनाई, और कढ़ाई की कला सिखाने के लिए प्रत्येक 'अ' तथा 'ब' श्रेणी के केन्द्र में सिलाई शिक्षिकायें नियुक्त हैं। इस के अतिरिक्त दो सिलाई मशीनें, कपड़ा, बिनाई के लिए ऊनी धागे तथा सिलाई के डोरे आदि सरकार द्वारा इन कक्षाओं को दिये जाते हैं।

आलोच्य वर्ष में कुछ केन्द्रों की सिलाई कक्षा में आने वाली स्त्रियों की संख्या बढ़ने पर वहाँ के लिये सिलाई की और मशीनें खरीदी गईं।

इस वर्ष सिलाई, कढ़ाई आदि की शिक्षा-प्रणाली में एक महत्वपूर्ण सुधार शिक्षण-कक्षाओं की स्त्रियों तथा लड़कियों के लिए एक नियमित पाठ्यक्रम भी निर्धारित किया गया।

इस वर्ष कुल सीखने वाली स्त्रियों और बच्चों की संख्या १,०७,०६२ थी, जिनमें ६३,८९१ शिक्षणार्थिनियाँ, ३०,७८४ अतिरिक्त आय करने वाली स्त्रियाँ तथा १२,३८७ आकस्मिक शिक्षणार्थिनियाँ थीं। कुल ३३,१४६ कपड़े सिले गये और कुल किए गये काम का अनुमानित मूल्य ६,७२७) हुआ।

मनोरंजन

इन केन्द्रों में श्रमिकों, उनकी स्त्रियों तथा बच्चों के लिए कई प्रकार के मनोरंजन के साधनों, जैसे चलचित्र-प्रदर्शन, रेडियो, संगीत-कार्यक्रम, कीर्त्तन, लोकगीत, नृत्य तथा नाटकों का प्रबंध रहता है।

विभाग की ओर से खुले मैदान में निःशुल्क दिखाये जाने वाले चलचित्र श्रमिकों में बड़े प्रिय हैं। उन्हें सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, शैक्षिक तथा वृत्तात्मक चित्र मुफ्त दिखाये जाते हैं। मद्य-निषेध विभाग की सहायता से विभिन्न केन्द्रों में मद्यनिषेध-संबंधी स्लाइडें भी दिखलाई जाती हैं।

रेडियो श्रमिकों के मनोरंजन का एक दूसरा महत्वपूर्ण साधन है। प्रत्येक केन्द्र में एक रेडियो सेट है और श्रमिक रोज़ सबेरे और शाम अखिल भारतीय आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों द्वारा प्रसारित समाचार तथा गीतों के कार्यक्रमों को सुनते हैं। आकाशवाणी के लखनऊ स्टेशन से प्रत्येक सोमवार को केन्द्रों से संबंधित श्रम-हितकारी समाचार भी सुनाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त कानपुर के श्रमिकों के गीत और अन्य कार्यक्रम तथा श्रम-संबंधी समाचारों को प्रत्येक महीने के अंतिम रविवार को आकाशवाणी, लखनऊ से सुनाया जाता है। इस कार्यक्रम में एकांकी नाटक, संगीत, वार्त्तालाप, बतकही तथा कीर्त्तन शामिल रहता है।

संगीत कार्यक्रम भी प्रत्येक केन्द्र में लगभग हर महीने श्रमिकों के मनोरंजन के लिए आयोजित किए जाते हैं।

आलोच्य वर्ष में श्रम विभाग ने इलाहाबाद के मलाका डोले-स्थित सरकारी छापेखाने में काम करने वाले श्रमिकों के मनोरंजन के लिये एक रेडियो, ढोलक एवं हारमोनियम दिया। इसी प्रकार रिहँध बांध (मिर्ज़ापुर) में लगे श्रमिकों के मनोरंजन के लिये दो रेडियो एवं दो लाउडस्पीकर विभाग द्वारा दिये गये।

कानपुर के श्रम-हितकारी केन्द्रों में सामूहिक वाद्य-संगीत के लिए वाद्य-यंत्रों का भी प्रबंध है। यहाँ श्रमिकों को इसकी नियमित शिक्षा भी दी जाती है। समय-समय पर तथा विशेष समारोहों के अवसर पर श्रम-हितकारी केन्द्रों में सामूहिक वाद्य कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। अपनी लोकप्रियता के कारण कई अवसरों पर इन कार्यक्रमों को आकाशवाणी, लखनऊ से प्रसारित भी किया गया है।

नाटक खेलने के लिये रंगमंच, कपड़ों तथा दूसरी सामग्री का प्रबंध विभाग द्वारा किया जाता है। मनोरंजन के अतिरिक्त इन नाटकीय प्रदर्शनों से श्रमिकों को अपनी प्रतिभा प्रदर्शित करने का भी अवसर मिलता है। सन् १९५५ में न केवल कानपुर में, बल्कि कानपुर के बाहर भी नाटक खेले गये।

व्यायाम तथा कमरे के अन्दर तथा बाहर के खेल

श्रमिकों के मनोरंजन के लिए कमरे के अन्दर के खेलों, जैसे कैरम, लूडो, पचीसी, शतरंज आदि की

सुविधायें और उनके शारीरिक विकास के लिये मैदानी खेल, जैसे हाकी, फुटबाल, क्रिकेट, वालीबाल और अखाड़ों का प्रबंध केन्द्रों में किया गया है। पहलवानों को चना तथा तेल मुफ्त दिया जाता है।

इस वर्ष कमरे के अन्दर और बाहर के खेलों में ४,८३,४१६ श्रमिकों ने भाग लिया और अखाड़ों पर १,१५,४६० श्रमिक उपस्थित हुये।

शैक्षिक सुविधायें

श्रमिकों के सांस्कृतिक तथा बौद्धिक विकास के लिये प्रत्येक केन्द्र में एक पुस्तकालय तथा वाचनालय है। प्रत्येक पुस्तकालय में विभिन्न विषयों पर जैसे कविता, नाटक, जीवन-चरित्र, कहानियाँ, उपन्यास आदि पर लगभग ३५०० पुस्तकें हैं। पुस्तकें उन श्रमिकों को दी जाती हैं, जो पुस्तकालय के सदस्य हैं। सन् १६५५ में श्रम-संबंधी पुस्तकें, श्रम-सम्बन्धी कानून, प्राविधिक तथा उद्योग-संबंधी विषयों पर पुस्तकें खरीदी गईं। पत्रिकायें विशेषकर बच्चों के काम की तथा स्वास्थ्य संबंधी पत्रिकायें भी खरीदी गईं। वाचनालय के लिये और भी कई दैनिक और साप्ताहिक पत्र तथा मासिक पत्रिकायें ली गईं। अनपढ़ श्रमिकों को समाचार-पत्र केन्द्र के कर्मचारियों द्वारा पढ़ कर सुनाए जाते हैं। सन् १६५५ में केन्द्रों की शैक्षिक सुविधाओं से सम्बन्धित आँकड़े निम्नलिखित हैं :—

(१) पुस्तकालयों की सदस्य-संख्या	३२,५६६
(२) दी गई पुस्तकें	५१,६८७
(३) केन्द्र में पढ़ी गई पुस्तकें	२६,३६५
(४) वाचनालयों में उपस्थिति	६,०४,६५४

केन्द्रों में श्रमिकों की ज्ञान-वृद्धि के लिए विभिन्न विषयों पर भाषणों का आयोजन भी किया जाता है। श्रमिकों के साहित्यिक विकास और ज्ञान के लिए कवि-सम्मेलन और मुशायरे भी होते हैं, जो बड़े जनप्रिय होते हैं और उनमें बड़ी संख्या में उपस्थिति होती है।

स्काउटिंग

सामाजिक सेवा की भावना उत्पन्न करने के लिए श्रमिकों तथा उनके बच्चों को श्रमिक स्काउट दलों में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। ये दल कानपुर, आगरा, फिरोज़ाबाद, हाथरस, लखनऊ, गाज़ियाबाद, बनारस, सहारनपुर और इलाहाबाद में हैं। सन् १६५५ में स्काउटों की कुल संख्या १४१४ थी। सन् १६५४ से कानपुर में गर्ल गाइडों के दल भी संगठित किए गए और आलोच्य वर्ष में गर्ल्स गाइडों के दो और दल झाँसी और आलमबाग, लखनऊ में संगठित किए गए। सन् १६५५ में गाइडों की संख्या ३८८ थी।

आगरा के कैलाश मेला, झाँसी के गोपाल बगिया और पंचकुटी मेले, बिठूर के कार्तिकी पूर्णिमा मेले, गंगाघाट (उन्नाव), रानीघाट (पुराना कानपुर), सरसैया-घाट (कानपुर), भरत मिलाप मेला (बनारस), सिद्धनाथ मेला (जाजमऊ, कानपुर) और गाज़ियाबाद, कानपुर और फिरोज़ाबाद में रामलीला के अवसरों पर और बगाही (कानपुर) के चेहल्लुम मेले में सामाजिक सेवा शिविरों का आयोजन किया गया।

स्काउट बैंड

श्रमिक स्काउटों का अपना बैंड भी है, जिसको वे स्वयं बजाते हैं। इसके लिए उन्हें शिक्षा दी जाती है। इस बैंड की सेवायें सर्वप्रथम विभाग द्वारा आयोजित सब समारोहों में विभाग को निःशुल्क मिलती हैं। श्रमिकों को बैंड उनके निजी समारोहों पर रियायती दर पर मिलता है और दूसरों को बाज़ार दर पर। बैंड के प्रयोग से प्राप्त धन का ५० प्रतिशत बैंड में बाजों के बदलने, रख-रखाव या बढ़ाने के लिए व्यय किया जाता है और ५० प्रतिशत बैंड बजाने वालों को दिया जाता है।

श्रमिक स्काउटों तथा गाइडों के ये दल भारत स्काउट्स तथा गाइड्स, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, से संबद्ध हैं!

श्रमिक स्काउट दल ने जिला सेंट जान्स एम्बुलेंस, कानपुर की एम्बुलेंस प्रतियोगिता में भाग लिया और द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

श्रम-हितकारी परामर्शदात्री समितियाँ

सन् १६५५ में राज्य एवं जिलों की श्रम-हितकारी परामर्शदात्री समितियों के संगठन में जनता के सब क्षेत्रों का और अधिक सहयोग प्राप्त करने की दृष्टि से परिवर्तन किया गया। राज्य श्रम-हितकारी परामर्शदात्री

समिति में चार सामाजिक कार्यकर्त्ता बढ़ाए गये और ज़िला श्रम-हितकारी परामर्शदात्री समितियों का अध्यक्ष सरकारी अधिकारी के स्थान में गैर-सरकारी व्यक्ति को बनाया गया। पुनस्संगठित राज्य श्रम-हितकारी परामर्शदात्री समिति की बैठक नैनीताल में ३ अक्तूबर, १९५५ को हुई, जिसमें कई प्रस्तावों पर विचार हुआ, जिनमें श्रमिकों के लिये अवकाश केन्द्र खोलने, वर्तमान श्रम-हितकारी केन्द्रों में सुधार के सुझाव, कारखानों तथा सरकार द्वारा किए जाने वाले हितकारी कार्यों में सामंजस्य और श्रम—हितकारी प्रतियोगिताओं (Tournaments) के आयोजन के प्रस्ताव शामिल थे। जिला श्रम–हितकारी परामर्शदात्री समितियों का पुनस्संगठन भी किया जा रहा है।

श्रम-हितकारी मंडल का निर्माण

सरकार बहुत दिनों से एक श्रम-हितकारी मंडल के निर्माण का विचार कर रही है, जिससे श्रम-हितकारी कार्य को जनता तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओं के सहयोग से चलाया जा सके। इसी दृष्टिकोण से सरकार ने एक विधेयक का मसविदा 'श्रम-हितकारी कोष विधेयक' नाम से तैयार किया है और वह सरकार के विचाराधीन है।

श्रम–हितकारी केन्द्र भवन

श्रम-हितकारी केन्द्रों के लिये उपयुक्त और बड़े भवनों के प्रबंध की समस्या बहुत दिनों से कठिनाई उपस्थित करती आ रही है, क्योंकि साधारण मकानों में श्रम-हितकारी केन्द्र के लिए पर्याप्त स्थान नहीं मिलता। अधिकांश केन्द्र किराये के मकानों में चल रहे हैं। इस समय तीन श्रम-हितकारी केन्द्र तथा राज्यक्षमा चिकित्सालय वैभागिक इमारतों में हैं। इसके अतिरिक्त कानपुर की तीन नई श्रमिक-बस्तियाँ अर्थात् हरिहरनाथ-शास्त्रीनगर, गोविन्दनगर तथा बाबूपुरवा में तथा लखनऊ की ऐशबाग श्रमिक–बस्ती में श्रम-हितकारी केन्द्र स्थापित किए जा चुके हैं

क्षय–आरोग्याश्रम

श्रमिकों तथा उनके परिवारों के लिये कानपुर के आस-पास कहीं क्षय-आरोग्याश्रम (T.B. Sanatorium) खोलने का प्रश्न भी सरकार के विचाराधीन है।

वार्षिक प्रतियोगितायें और समारोह

प्रति वर्ष सितम्बर से फरवरी तक कानपुर में श्रम-हितकारी खेल-कूद प्रतियोगिताओं का आयोजन होता है। इनमें कबड्डी, रस्साकशी, बालीबाल, फुटबाल, तीन मील की दौड़, एक मील की दौड़, ४४० गज की दौड़, तकिया-युद्ध, लम्बी कूद, ऊँची कूद, झंडी दौड़, बोरा दौड़ आदि के कार्यक्रम होते हैं। इस वर्ष ३५६ टीमों ने बालीबाल, हाकी, फुटबाल, कबड्डी, कुश्ती, रस्साकशी, कैरम, शतरन्ज और क्रिकेट में भाग लिया और खेलों के लिये ६०० प्रतियोगियों ने नाम लिखाये। कानपुर के बाहर के विभिन्न केन्द्रों में भी इन खेल-कूद प्रतियोगिताओं का आयोजन होता है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर विभिन्न केन्द्रों में बहुत-से विशेष कार्यक्रम होते हैं। अंतःकेन्द्रीय खेल-कूद भी आयोजित किये जाते हैं, जिनमें कानपुर के बाहर के केन्द्र भी भाग लेते हैं।

किसकी बात का विश्वास करूँ ?

(पृष्ठ ४२ से आगे)

तब बुलाऊँगा। आपकी बात का क्या एतबार ? वह आए, मैं शपथ खाऊँ, फिर भी आप इन्कार कर दें, तो मैं क्या कर लूँगा आपका !

मैंने मालिक से कहा—'दे भी दीजिये कुछ पेशगी। हर्ज़ क्या है !' वह बोले—'मैं तो आठ-दस आने रिक्शे का किराया जेब में डाल कर यहाँ चला आया था। मेरे पास इस समय एक रुपया भी नहीं है ! कहाँ से दूँ।' मामला दिलचस्प होता जा रहा था ! इतनी बड़ी दूकान के मालिक और जेब में एक रुपया भी नहीं ! बात आश्चर्यजनक ज़रूर लग रही थी, पर मेरी आदत अविश्वास करने की नहीं है ! कभी कभी ऐसी क्या, इससे भी कहीं अधिक आश्चर्यजनक बातें होती ही रहती हैं। मुझे यक़ीन था, यद्यपि कर्मचारी की दृष्टि से यही मालूम हो रहा था कि वह कह रहा था—'आप ही देख लीजिये, ये कितना सच बोलते हैं !' मैंने कहा—'अच्छा, यही बात है, तो इनके खर्चे का पेशगी मैं दिये देता हूँ। आप चाहें तो बाद में मुझे भेजवा दें और आज के पंद्रहवें दिन आप दोनों मेरे सामने फिर उपस्थित हों, पर लड़के को भी आ जाना चाहिये। अब तो कोई झगड़े की बात नहीं रही।'

अब झगड़े की बात ही क्या थी। दोनों पक्षों ने समझौते पर हस्ताक्षर किये और अपने-अपने घर चले गये। कर्मचारी को जो पेशगी मैंने दी थी, वह मालिक ने घर जाकर शाम को ही भेजवा दी।

अब पंद्रहवें दिन की बात सुनें ? सुनाने की इच्छा नहीं होती, पर सुनानी तो पड़ेगी ही ? सत्य बात को कहने में संकोच क्यों करूँ।

पंद्रहवें दिन मैं कोई दूसरा 'केस' ले रहा था। बहस चल रही थी, तभी चपरासी ने कहा कि आपका फोन है। मैंने पूछा—'किसका है ? इस समय 'केस ले रहा हूँ। क्या थोड़ी देर बाद बात नहीं हो सकती, ज़रा पूछो तो।' उसने पूछ कर बताया—'नहीं, ज़रूरी है, कहते हैं, एक मिनट के लिये सुन लीजिये।'

फोन की डोरी छोटी पड़ती थी, अतः मैं बेमन से उठ कर सुनने गया, तो वही मालिक थे ! बोले—'माफ कीजियेगा। आपको केस के बीच से उठाया है, पर आपको एक ज़रूरी बात बतानी थी, पर बात बड़े अफ़सोस की भी है, क्या किया जाय !'

मैंने व्यग्रता से पूछा—'क्यों, क्या हुआ !' बोले आज आपके सामने हमारा मुक़दमा था न ? मैंने कहा—'हाँ।' बोले—'अब वह मुक़दमा नहीं हो सकेगा। आज ही कर्मचारी के गाँव से तार आया है कि वह लड़का कल रात को बीमार हुआ और आज प्रातः मर गया ? कर्मचारी भी अब नहीं आयेगा ! मेरे आने की भी ज़रूरत नहीं होगी, पर मैंने सोचा, आपको खबर कर दूँ। देखिये, विद्यार्थी जी, झूठ कभी फलता नहीं। मैं क्या बताऊँ। मैं यह जानता, तो उसे २०)रु० दे ही देता, पर बात की बात थी। मैं झूठ नहीं बर्दाश्त कर सकता था, इसी से यह शर्त रखी थी, पर यह नहीं सोचा था। बड़ा अफ़सोस हुआ सुन कर।'

मैंने कहा—'और मुझे भी। अच्छा, नमस्ते, और फोन रख कर जब केस पर आया, तो मेरी उदासी देख कर लोगों ने पूछा—'क्यों, क्या खबर थी।' मैंने संक्षेप में बताया तो एक मालिक के प्रतिनिधि बोल उठे—'देख लीजिये साहब।' तभी मज़दूरों के प्रतिनिधि ने कहा—'मगर साहब, इन लोगों का कोई ठीक नहीं। मालूम नहीं, उसे कुछ दे-दिवा कर पटा लिया हो !' कर्मचारी और मालिक उसके बाद कोई मेरे सामने आज तक नहीं आये ! पर यह प्रश्न अब भी मेरे मन में उठा करता है—'मैं किसकी बात का विश्वास करूँ ?'
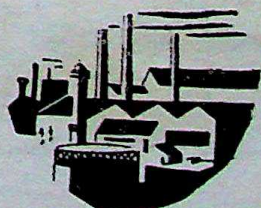
गुप्त दान

(पृष्ठ २२ से आगे)

मैनपुरी तम्बाकू लेना भी उसे याद न रहा। उसने भिखारिन की सहायता करने का निर्णय कर लिया था। घर पर उसकी स्त्री ने उसे गम्भीर पाया। न जाने क्या सोचा, चुप रही। लल्लू ने मूँगफली के लिये हाथ फैलाया। रामधन ने उसे गोद में उठाया, प्यार किया, परन्तु प्यार मूँगफली के अभ्यासी को तृप्त न कर सका। उसे मूँगफली देनी ही थी, ला कर दी।

अलगू के घर चिलम पीने पहुँचा। रोज़ का क्रम था। अलगू से उसी बुढ़िया की चर्चा की। अलगू ने थोड़ा-सा उत्साह दिखाया, पूर्व-जन्म के फलों की व्याख्या की और फिर सुपरवाइज़र की कठोरता की शिकायत शुरू कर दी, जो रामधन को आज नहीं रुची। थोड़ी देर बैठकर घर आया। भोजन कर अपनी टूटी-सी खटिया पर दिन भर का थका होने के कारण सो गया।

प्रात: लल्लू की माँ ने तेल के पराठे एक डिब्बे वाले टिफिन में रख दिये। नित्य कर्म से निवृत्त हो रामधन ने कुछ खाया और डिब्बा लेकर मिल चल पड़ा। रास्ते में बुढ़िया को पीपल तले बैठे पाया। उसे देखा और अलगू को भी दिखाया। अलगू ने रामधन को अपनी उदारता का साक्षी बनाते हुये एक पैसा भिखारिन के कटोरे में डाल दिया, परन्तु रामधन कुछ न दे सका और चल पड़ा। दिन भर मशीनों की खट-पट। चिर-अभ्यास से रामधन भी अन्यमनस्क मशीन की भाँति ही काम करता रहा। ऊपर का मिस्त्री रामधन को बदला हुआ-सा पाकर कुछ झुँझलाया। किसी बात पर बरस भी पड़ा, परन्तु रामधन ने कोई कटु उत्तर नहीं दिया। साथियों को अक्खड़ रामधन का यह परिवर्त्तित रूप कुछ विचित्र-सा लगा। रामधन का हृदय संकीर्णता को छोड़कर विशाल बन रहा था, उसमें मानव-मात्र के लिये कोमलता आ गई थी। उसे स्वार्थ-पूर्त्ति के स्थान पर आत्म-त्याग का अलौकिक आनन्द मिल चुका था।

सायंकाल साइरन की ध्वनि के साथ छुट्टी हुई। रामधन जानबूझ कर अपने साथियों से विलग हो गया। धीरे-धीरे सिर झुकाये चल पड़ा। दूर से ही वह पीपल का पेड़ दिखाई दिया। ज्यों-ज्यों समीप आता जाता, उसका हृदय कुछ अधिक स्पन्दित होता जाता। उसको अपने जीवन का यह प्रथम महान् कार्य कर सकने का साहस एकत्रित करना था। बुढ़िया के समीप पहुँच कर उसने आगे-पीछे देखा। कोई परिचित पास न था। बड़े संकोच से धीरे-धीरे बुढ़िया से कहा—'माई, तेरा कटोरा तो काम का रहा नहीं, ले इसमें सत्तू सानकर खा लिया कर।' अपने टिफिन का डिब्बा उसके हाथ में देते हुये रामधन फिर इधर-उधर देखने लगा। उसे डर था कि कहीं कोई भिखारिन के हाथ में डिब्बा देते हुये उसे देख तो नहीं रहा। इस परोपकार के कार्य को वह गुप्त ही रखना चाहता था। किसी ने रामधन की उदारता को न जाना। बुढ़िया ने गद्गद् कण्ठ से वही अपना रटा हुआ आशीर्वाद दिया और डिब्बे को पुराने कटोरे के अन्दर काँपते हाथों से रख लिया।

रामधन बुढ़िया के सन्तोष से आह्लादित लम्बे डगों से चल रहा था। उसने अपनी गाढ़ी कमाई का एक भाग दुखिया की सहायता में सार्थक किया था। घर पर लल्लू की माँ के प्रश्नों की उसको चिन्ता न थी।

कौन कह सकता है कि अशिक्षित श्रमिक में मानवता का भाव नहीं होता।
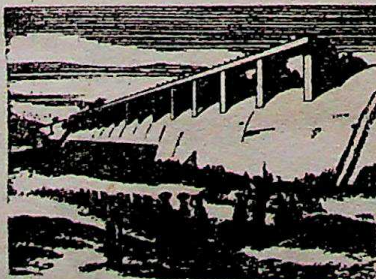
१. उड़ीसा के श्रम मन्त्री द्वारा हरिहरनाथ [शास्त्री]नगर (कानपुर) की श्रमिक-बस्ती का निरीक्षण।

२. श्रमायुक्त के कार्यालय में डा० सम्पूर्णानन्द [औद्यो]गिक मनोविज्ञानशाला के उद्घाटन के अवसर [पर] उ० प्र० के मुख्य मन्त्री डा० सम्पूर्णानन्द द्वारा निरी[क्षण]: बाएँ से दाहिनी ओर हैं—डा० सम्पूर्णानन्द, [मुख्य] कारखाना निरीक्षक श्री गुरुदत्त विश्नोई, श्रमायुक्त [श्री] ओंकारनाथ मिश्र, आई० ए० एस० तथा सहायक [श्रम]युक्त डा० वंशीधर।
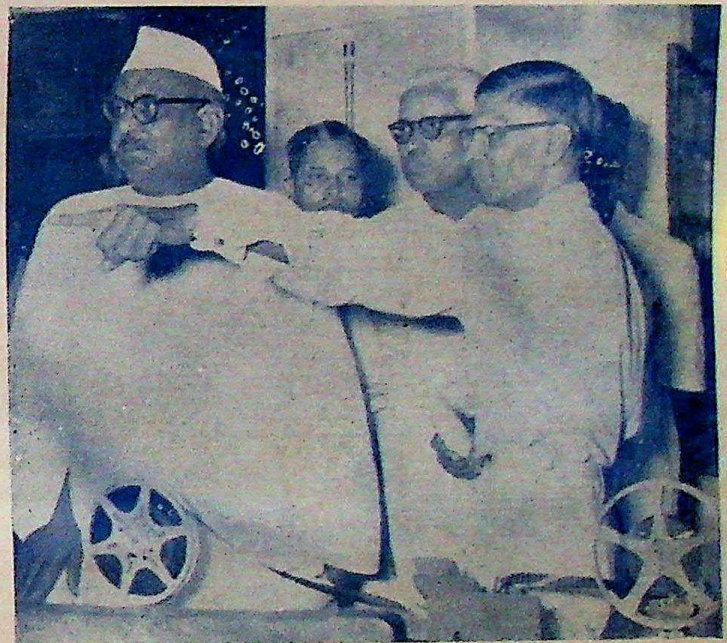
३. (नीचे दाहिनी ओर) सरदारनगर के चीनी [मज]दूरों के लिए बनी श्रमिक-बस्ती का एक दृश्य।

★

४. (नीचे बाईं ओर) विम्को (बरेली) के मैदान [में] श्रम-हितकारी खेल-कूद के उद्घाटन पर सिंचाई [वि]भाग के उपमन्त्री श्री राममूर्त्ति भाषण दे रहे हैं।
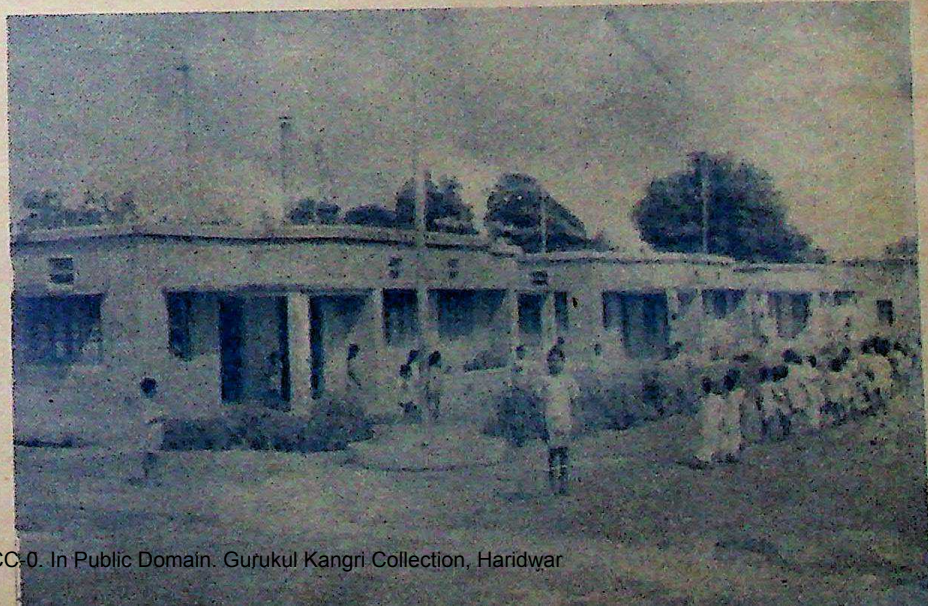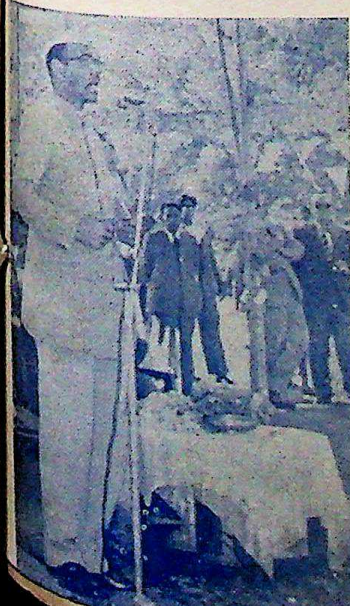
रजिस्टर्ड नं० ए-५६८
तार का पता : LABORCOM
टेलीफोन नं० ३२०६

उत्तर प्रदेश में श्रमिकों के आवास की नई व्यवस्था

★

❁ फिरोज़ाबाद में श्रमिकों के लिए बने नए मकान।
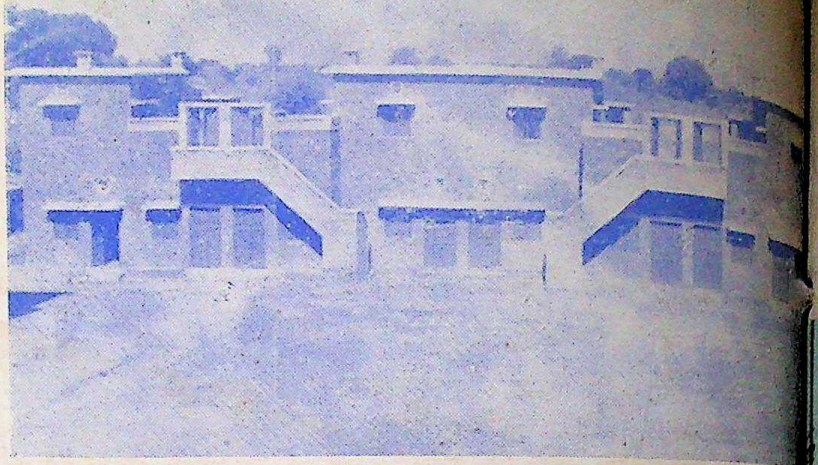
❁ आगरा की नव-निर्मित श्रमिक-बस्ती का एक दृश्य।

❁ बाबू पुरवा (कानपुर) में द्वितीय चरण में बने मकानों का एक समूह।

अमरीका में

दिसम्बर १९५९

श्रम व्यवस्था

देखिये पृष्ठ चार
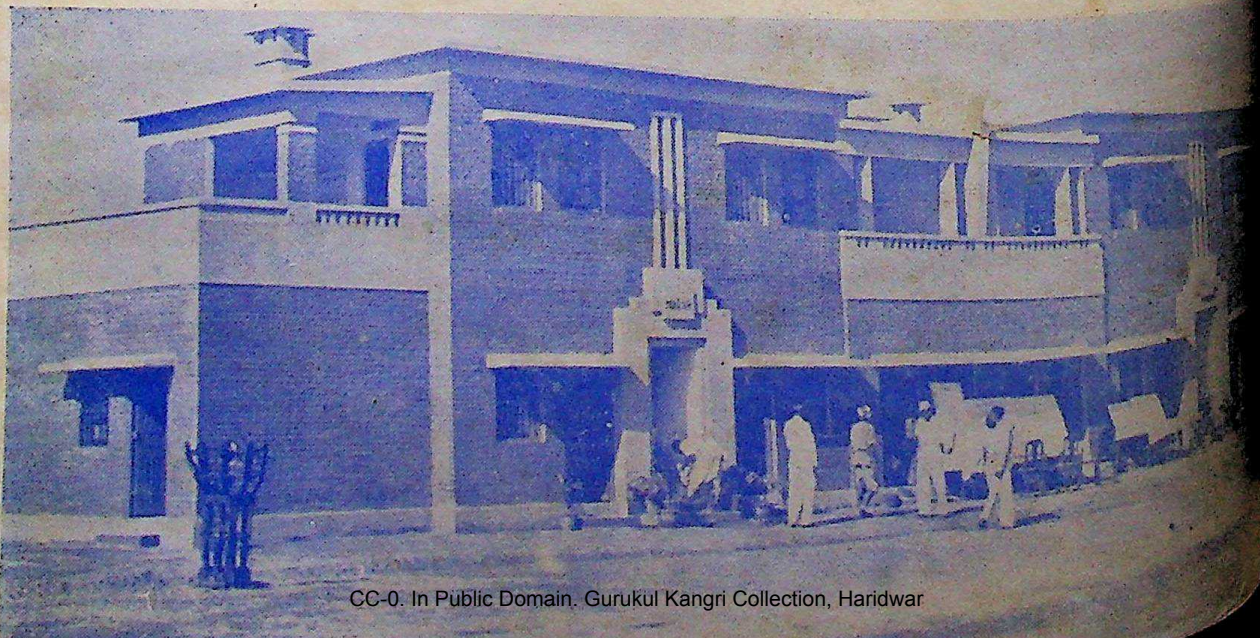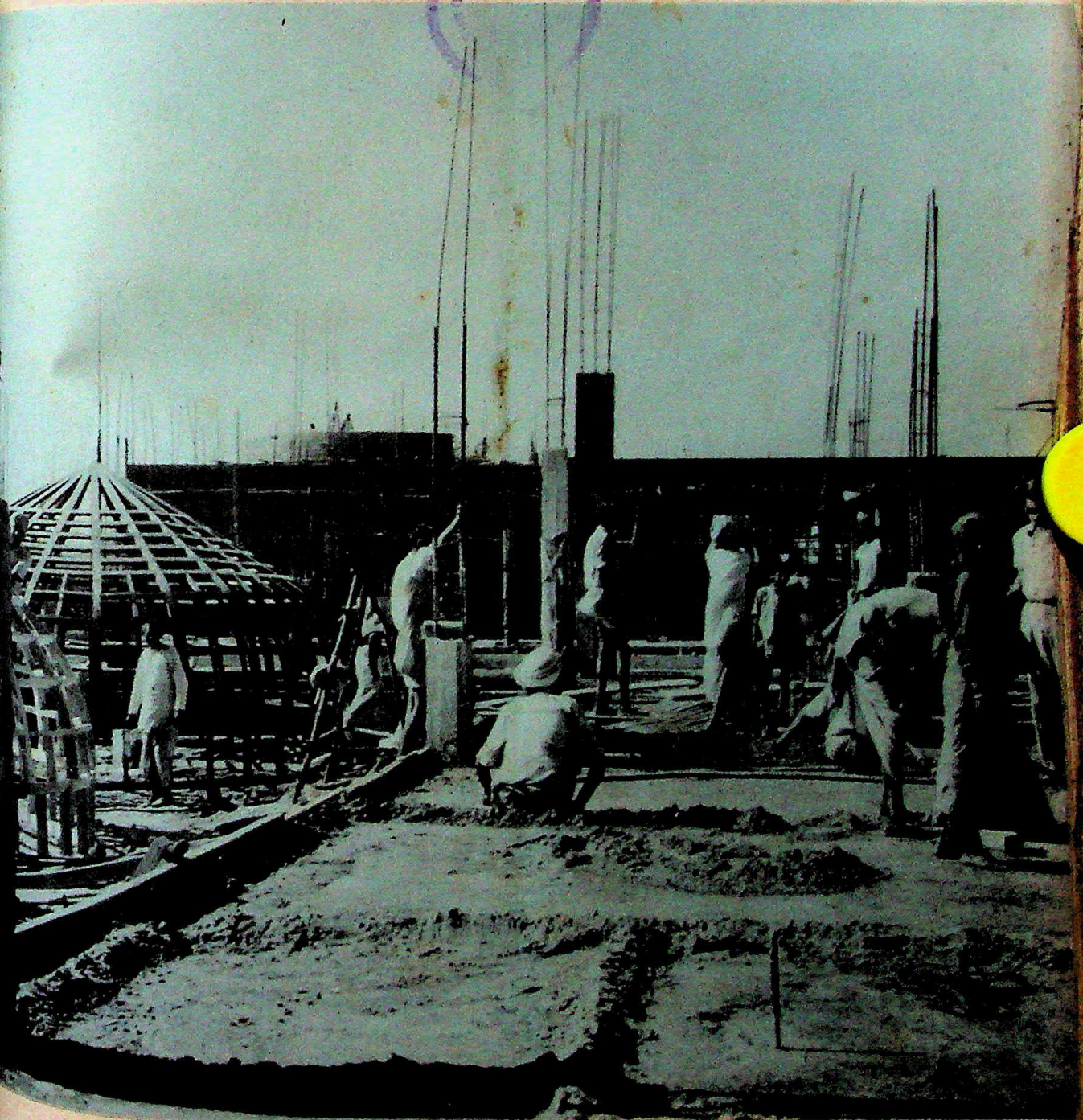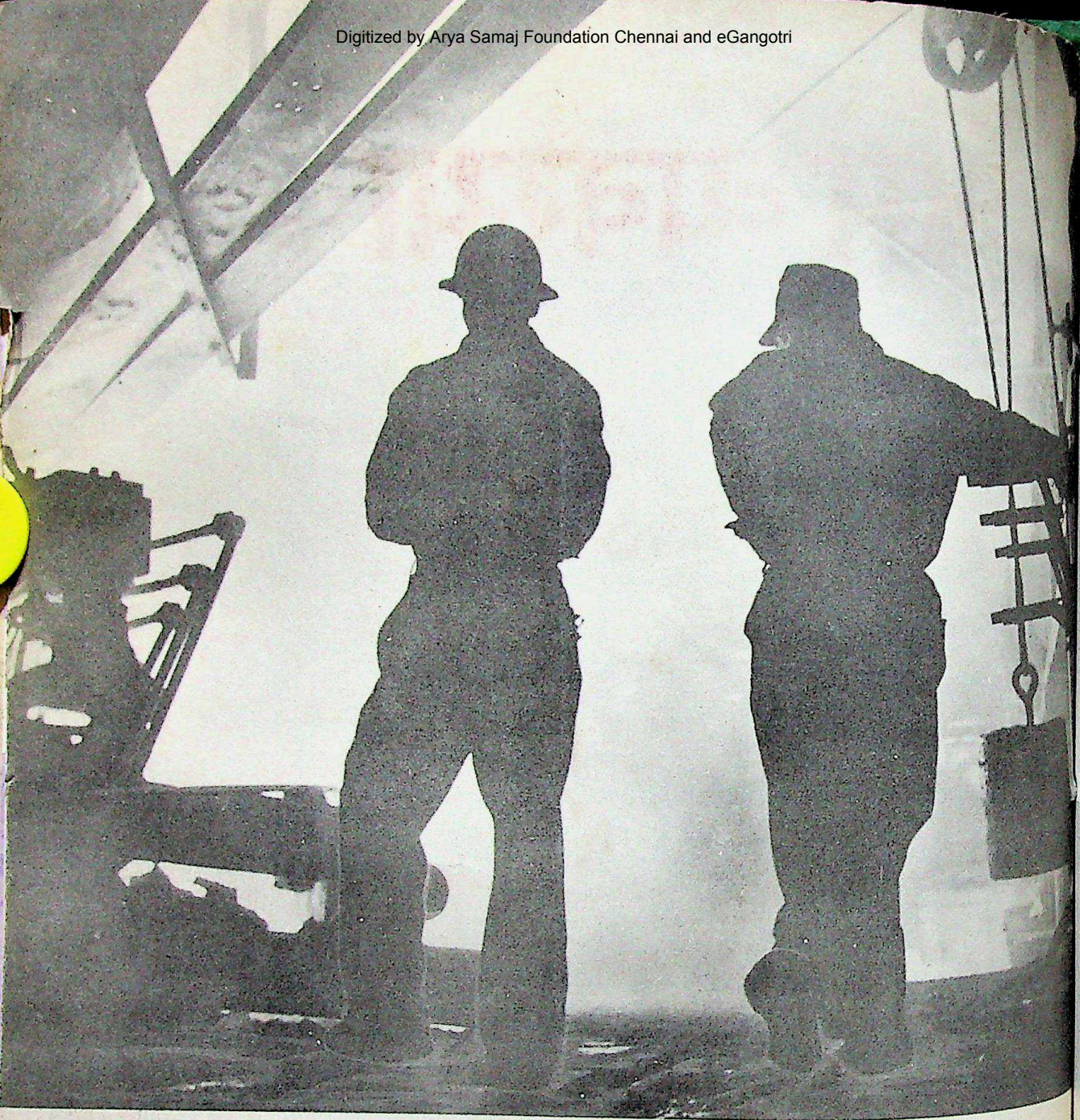
भारी उद्योगों का विकास, जिसमें कदाचित इस्पात-उद्योग सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, देश के औद्योगीकरण के लिये अपनायी गई योजनाओं का एक आवश्यक अंग है। इस्पात अमरीकी अर्थ-व्यवस्था में भी एक विशेष महत्व रखता है। अमरीका का इस्पात उद्योग बहुत ही वृहत् एवं विकसित है और उसमें हज़ारों सुदक्ष कर्मचारी काम करते हैं। चित्र : इस्पात की भट्ठी पर काम करते हुए दो अमरीकी कर्मचारी।

सम्पादक का पत्र

अमरीकी दूतावास
नई दिल्ली, भारत
१ दिसम्बर, १९५९

प्रिय मित्रो :

इस महीने राष्ट्रपति आइज़नहोवर की भारत-यात्रा हमारे दो लोकतन्त्रीय देशों के बीच बढ़ते हुए सौहार्द की प्रतीक है।

इस महत्वपूर्ण घटना के साथ-साथ भारत और अमरीका के स्वतन्त्र तथा लोकतन्त्रीय मज़दूर आन्दोलनों के बीच हाल के वर्षों में आपसी सम्बन्ध बढ़े हैं। अमरीका के मज़दूर आन्दोलन के नेता अधिकाधिक संख्या में पहली बार भारत आ रहे हैं। वे भारत के न केवल बड़े-बड़े शहरों में बल्कि देहाती इलाकों में भी कारखानों, मज़दूर यूनियनों के कार्यालयों और श्रमिकों के घरों में जाकर भारतीय श्रमिकों की समस्याओं तथा उनके लिए उपलब्ध अवसरों से भली प्रकार परिचित होकर स्वदेश लौट रहे हैं तथा उनमें विश्व के इस भाग के मज़दूर-आन्दोलन के विषय में अमरीकी श्रमिकों की जानकारी बढ़ाने की तीव्र लालसा है।

इसके साथ ही भारत के ट्रेड यूनियन नेताओं ने ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. के सानफ्रांसिस्को में हुए हाल के सम्मेलन में साथी प्रतिनिधियों के रूप में भाग लिया है। कुछ अन्य नेताओं ने अमरीकी कारखाने और खेत देखे हैं तथा अमरीकी श्रमिकों के घरों में आतिथ्य ग्रहण किया है। उन्होंने जहां हमारे देश की सफलताएं देखी हैं, वहां उनकी यात्रा निर्देशित न होने के कारण हमारे लोकतन्त्र की अपूर्णताएं भी उनके सामने आई हैं।

यह आशा करना सम्भव है कि भाषा तथा रीति-रिवाज़ों की भिन्नता के बावजूद अमरीकी और भारतीय मज़दूर नेता, जिन्होंने हाल में परस्पर देशों की यात्रा की है, यह समझने लगे हैं कि संसार भर में स्वतन्त्र मज़दूर आन्दोलन की आस्थाएं एक जैसी हैं। ये आस्थाएं हैं—श्रमिक की वैयक्तिक प्रतिष्ठा में विश्वास; यह आकांक्षा कि राज्य व्यक्ति का स्वामी नहीं सेवक है; यह संकल्प कि मशीन मेहनत के बोझ को कम करे न कि मनुष्य की आजीविका ही छीन ले और यह धारणा कि मज़दूर को अपने श्रम का उचित मूल्य प्राप्त करने का अधिकार है।

जब बहुत से राष्ट्रों के मज़दूरों की आधारभूत आस्थाएं ऐसी ही हैं तब ये सब मनुष्यों के व्यापक भाईचारे के लिए, जिसके लिए हम सब प्रयत्नशील और आशावान् हैं, आधार प्रदान करती हैं।

भवदीय

Daniel S. Burgess

डेविड एस० बर्जेस
श्रम-सहचारी

सम्पादक तथा प्रकाशक : डेविड एस. बर्जेस, श्रम-सहचारी, अमरीकी दूतावास, नई दिल्ली

आवरण पृष्ठ पर : नई दिल्ली में आयोजित विश्व कृषि मेले के लिए अमरीकी मंडप के निर्माण का दृश्य। ११ दिसम्बर को होने वाले राष्ट्रपति आइज़नहौवर द्वारा इसके उद्घाटन के पूर्व इसे पूर्णरूप से तैयार करने के लिए दो हज़ार मज़दूर दो पालियों में काम कर रहे हैं। यह प्रदर्शनी, जो अमरीकी सरकार की ओर से की गई सबसे बड़ी प्रदर्शनी है, अमरीकी कृषि व्यवस्था की एक दिलचस्प, आकर्षक और सच्ची कहानी बताती है।

अमरीका में श्रम-व्यवस्था
वर्ष १२, अंक १२ — १ दिसम्बर, १९५९

विषय - सूची

एक प्रति : १० नए पैसे — वार्षिक मूल्य : १ रुपया

अधिकार और उत्तरदायित्व

लेखक : **गस टाइलर**
डाइरेक्टर, प्रशिक्षण प्रतिष्ठान,
इण्टरनेशनल लेडीज़ गारमेंट वर्कर्स यूनियन

मज़दूर के धन्धे की रक्षा और उसकी प्रगति को प्रभावशाली ट्रेड यूनियनवाद का व्यापक आधार बनाए रखना आवश्यक है। लेकिन रोज़ी-रोटी की सुरक्षा के इस दायित्व को यदि व्यावसायिक यूनियनवाद या उससे भी बदतर नहीं होने देना है, अगर उसे एक निर्जीव यहाँ तक कि भ्रष्ट नेतृत्व में परिणत नहीं होने देना है, अगर उसे निष्क्रिय और यहाँ तक कि भूठी सदस्यता से बचाना है तो ट्रेड यूनियन का लक्ष्य करार की अपेक्षा उन्नत और उसका धर्म डालर प्राप्ति से अधिक व्यापक होना चाहिए।

बीसवीं सदी के उत्तरार्ध की अमरीकी अर्थव्यवस्था इतनी अधिक वैधानिक हो गई है कि यूनियनें अब यह भरोसा नहीं रख सकतीं कि वे सिर्फ़ करारों के ज़रिये ही अपने श्रमिकों की आर्थिक हैसियत की सुरक्षा कर सकती हैं।

अपने राजनीतिक कार्य में ट्रेड यूनियन को वैधानिक सत्ता की अपेक्षा सामाजिक ध्येय पर और व्यक्ति के बजाय कार्यक्रम पर अधिक बल देना होगा। यह न केवल नैतिक दृष्टि से वांछनीय है; बल्कि आगे काम करने का सबसे अधिक यथार्थ तरीका है। क्योंकि ट्रेड-यूनियन के नेता अपने सदस्यों के मत तभी प्राप्त कर सकते हैं जब वे उन्हें यह विश्वास दिला दें कि अमुक उम्मीदवार का कार्यक्रम अच्छा है।

ये वोट सदस्यों को समझाबुझा कर ही प्राप्त किए जा सकते हैं। मज़दूरों को यह मालूम होना चाहिए कि उन्हें मत क्यों देना है, किस चीज़ के लिए देना है और किसको देना है। मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा पर ध्यान दिए जाने से न केवल श्रमिकों का राजनीतिक धरातल ऊँचा होगा बल्कि अमरीका की राजनीति में भी क्रान्ति आएगी। क्योंकि लाखों मतदाताओं को यह बताया जाएगा कि राजनीति विचारों एवं आदर्शों का संघर्ष है, लेबिलों, चेहरों, नामों और पूर्वाग्रहों की प्रतियोगिता नहीं।

आधुनिक यूनियन को व्यावसायिक नेतृत्व की उसी प्रकार आवश्यकता है जिस प्रकार आधुनिक सरकार को एक व्यावसायिक मार्ग-निर्देशन की। व्यावसायिक प्रशासन और लोकतंत्रीय नियंत्रण के बीच उपयुक्त सम्बन्ध स्थापित कराना उस नई विचार धारा का आवश्यक अंग है जो चाहती है कि यूनियनों का संचालन एक ओजपूर्ण लोकतंत्र के ढाँचे के अन्तर्गत कुशलता के साथ नैतिक व सृजनात्मक दिशाओं में हो।

विभिन्न व्यवसायों और यूनियनों में लोकतंत्रीय निर्देशन और नियंत्रण के लिए अपनाए गए तरीके भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। लेकिन भावनाओं की तुलना में बाहरी रूप कम महत्व-पूर्ण है और वह भावना है लोकतंत्रीय नियंत्रण के मातहत व्यावसायिक कार्य-संचालन की।

अपने सदस्यों की सेवा करने तथा शिष्ट औद्योगिक सम्बन्ध कायम रखने की दृष्टि से यूनियन की सुरक्षा सम्बन्धी वे धाराएं जिनमें चन्दों के रूप में निरंतर होने वाली आय की संभावनाएं भी शामिल हैं, नितान्त आवश्यक है।

फिर भी चूंकि यूनियनों में काफी बड़ी रकमों का जमा-खर्च होता रहता है और चूँकि वह सदस्यों से लिए गए अनि-वार्य चन्दों के फलस्वरूप अमानती धन के रूप में लिया और खर्च किया जाता है इसलिए यह ज़रूरी है कि यूनियन के हिसाब की सार्वजनिक जाँच होती रहे।

अच्छा तो यही है कि यह जाँच पूर्णरूपेण और स्वेच्छा से कराई जाय। किन्तु यदि ऐसा न हो सके तो इसकी कानून द्वारा ऐसी अनिवार्य व्यवस्था की जानी चाहिए जिसमें यूनियन को काम करने की स्वाधीनता देने के साथ ही सदस्यों द्वारा जमा किए गए धन को चोरी या दुरुपयोग से बचाया जा सके।

यूनियनों को अपने आकार-प्रकार और अपनी नीति के बारे में स्वयं निर्णय करने की स्वाधीनता होनी चाहिए।

यह स्वशासन इसलिए आवश्यक है क्योंकि विभिन्न शिल्पों, व्यापारों और उद्योगों की अपनी अलग-अलग परिस्थितियाँ होती हैं और यूनियनों को उनके अनुसार अपने संगठन तथा अपनी नीति का ताल-मेल करना पड़ता है।

यद्यपि मज़दूर-आन्दोलन की अपने हर हिस्से के प्रति

अमरीका की कांग्रेस के चुनावों में भाग लेने के हेतु कर्मचारियों की सुविधा के लिए बड़े-बड़े औद्योगिक कारखानों में विशेष पंजीकरण-कक्ष कायम किए जाते हैं।

यूनाइटेड रबर वर्कर्स के कुछ सदस्य अलाबामा के सेनेटर स्पार्कमैन की वार्ता सुन रहे हैं

कोई कानूनी ज़िम्मेदारी नहीं थी और अपने किसी अंग के व्यवहार को सुधारने के निमित्त उसके पास कोई वैधानिक साधन भी नहीं था तो भी वह यह स्वीकार करता है कि जनता के सामने अपने प्रत्येक घटक के कार्यों के लिए उसकी सामूहिक ज़िम्मेदारी है। इसी अनुभूति ने स्वशासन की धारणा में सुधार करने की भावना को जन्म दिया है। अगर आप पारिवारिक नाम का इस्तेमाल करना चाहते हैं तो आप को परिवार के सम्मान का खयाल रखना चाहिए। आचरण का एक न्यूनतम स्तर निश्चित कर दिया जाता है और उस आचरण संहिता को विभिन्न प्रकार की सम्बन्धित चेतावनियों, सुधार विषयक निवेदनों तथा अंततः निष्कासन की व्यवस्थाओं के साथ लागू कर दिया जाता है।

यूनियनें चूँकि सार्वजनिक संस्थाएं जैसी होती हैं और सार्वजनिक हित पर गहरा और तात्कालिक प्रभाव डालती हैं इसलिए वे सार्वजनिक नियंत्रण से नहीं बच सकतीं, बल्कि उन्हें अपने ऊपर कुछ हद तक सार्वजनिक अथवा उपयुक्त वैधानिक नियंत्रण प्राप्त करने की स्वयं कोशिश करना चाहिए।

यूनियनों पर उपयुक्त वैधानिक नियंत्रण का विकल्प है—नियंत्रण का अभाव। यह भी सम्भव और स्वीकार करने योग्य हो सकता है बशर्ते यूनियनों के नेता धन या सत्ता का दुरुपयोग न करें। किन्तु अगर बड़े और बहुप्रचारित दुरुपयोग सामने आते रहेंगे, जिनकी सम्भावना सार्वजनिक नियंत्रण के अभाव में बढ़ जाती है तो राष्ट्र के विचार अन्ततोगत्वा ट्रेड-यूनियनवाद के खिलाफ़ हो जाएंगे और तब इन गड़बड़ियों के साथ ही यूनियनों के खात्मे की माँग करने लगेंगे।

क्या प्रस्तावित नीति के इन ६ सूत्रों को संतुलित अधिकारों और ज़िम्मेदारियों के एक ढाँचे में बुना जा सकता है?

यूनियन को हक है कि वह चन्दा देने वाले प्रत्येक सदस्य के हितों की पूरी तरह रक्षा करे और उनकी प्रगति के लिए प्रयत्नशील रहे। लेकिन यह समझना भी उसकी ज़िम्मेदारी है कि उसके कार्यकलापों का समस्त समाज पर, जिसके वह और उसके सदस्य एक अंग हैं, क्या प्रभाव पड़ रहा है।

यूनियन को सुरक्षा, यूनियन-शाप और एक नियमित आय का अधिकार है। लेकिन यह उसकी ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी कार्य-प्रणाली में लोकतंत्र की गारण्टी दे और अपने हिसाब-किताब की समुचित जाँच का प्रबन्ध करे।

यूनियन को स्वशासन का अधिकार है लेकिन उस पर अपने यूनियन-सदस्यों के साथ मिलकर नैतिक, लोकतंत्रीय और सामाजिक व्यवहार की एक सामूहिक संहिता तैयार करने और उस पर अमल कराने की ज़िम्मेदारी भी है।

यूनियन को तरीकों और व्यक्तियों की उन्नति करने का अधिकार है जिससे व्यवसाय का ऊँचा स्तर कायम हो। लेकिन उसका यह उत्तरदायित्व भी है कि वह इस व्यावसायिक तंत्र को लोकतंत्रीय नियंत्रणों के मातहत रखे।

यूनियन को राजनीतिक कार्रवाई करने का हक है लेकिन अपनी राजनीतिक शक्ति को उच्च सामाजिक ध्येय की प्राप्ति में लगाना उसका कर्त्तव्य है।

यूनियन को जनतंत्रीय ढाँचे के अन्तर्गत स्वतंत्र कार्रवाई करने तथा कानूनी हैसियत स्थापित करने का अधिकार है किन्तु उसकी यह भी जिम्मेदारी है कि वह उस लोकतंत्रीय ढाँचे के अन्तर्गत ही काम करे, अपनी कानूनी हैसियत को इस प्रकार नियंत्रित करे और उसकी ऐसी परिभाषा बनाए कि उससे लोकतंत्रीय समाज को बल तथा नैतिक आदर्शों की प्राप्ति हो।

—'ए.एफ.एल-सी.आई.ओ अमेरिकन फैडरेशनिस्ट' से

अमरीकी पब्लिक स्कूल के कुछ अध्यापक श्रम-सम्बन्धों के बारे में एक वार्ता सुन रहे हैं

नई पोशाक फैक्टरी में मज़दूरों को सुख-सुविधाएं

ट्यूबों की रोशनी तथा शीत-ताप नियंत्रण व्यवस्था कर्मचारियों की सुख-सुविधाएं बढ़ाता है

अमरीका में मज़दूरों की प्रगति की कहानी से शायद ही किसी अन्य उद्योग का इतना निकट सम्बन्ध हो, जितना स्त्रियों की पोशाक बनाने के उद्योग का है। यह उद्योग न्यूयार्क का सबसे बड़ा उद्योग है।

यहां, मनहट्टन के जनाकीर्ण पोशाक कारखानों में, 'इण्टर-नेशनल लेडीज़ गारमेण्ट वर्कर्स यूनियन' के नेतृत्व में काम की स्वास्थ्यप्रद हालतों, काम के घण्टों और उचित वेतन के लिए प्रारम्भिक लड़ाइयां लड़ी गईं और उनमें विजय प्राप्त की गई।

सन् १९१० में यहां झगड़ों के निपटारे के लिए पहला उद्योगव्यापी तन्त्र कायम किया गया। यहीं पर यूनियनों और प्रबन्धकों के सहयोग से शांतिमय श्रम-सम्बन्ध कायम रखने के तरीके ईजाद किए गए। वर्ष बीतते गए और 'आई.एल.जी.डब्लू.' ने मालिकों से एक स्थायी प्रभाव तथा उद्योग के लिए वरदान के रूप में अधिकाधिक मान्यता प्राप्त की। एक फर्म जिसने यूनियन के प्रयत्नों के प्रति सदैव सहानुभूति प्रदर्शित की है, 'बार्किन लेविन एण्ड कम्पनी' है। यह स्त्रियों के कोट बनाने वाली प्रमुख कम्पनी है। उसके न्यूयार्क में स्थित १० कारखानों में लगभग ४०० कर्मचारी काम करते हैं।

अपने कार्यों को केन्द्रित करने के लिए इस कम्पनी ने

हाल ही में एक नया आधुनिक कारखाना लगाया है जिसमें कर्मचारियों को अधिक सुख-सुविधाएं प्रदान करने तथा काम की थकावट को कम करने के लिए अनेक नए-नए उपाय किए गए हैं। यह कारखाना ईस्ट नदी के पार 'लांग आइलैण्ड सिटी' में स्थित है जहां न्यूयार्क के पोशाक-केन्द्र से आसानी से पहुँचा जा सकता है।
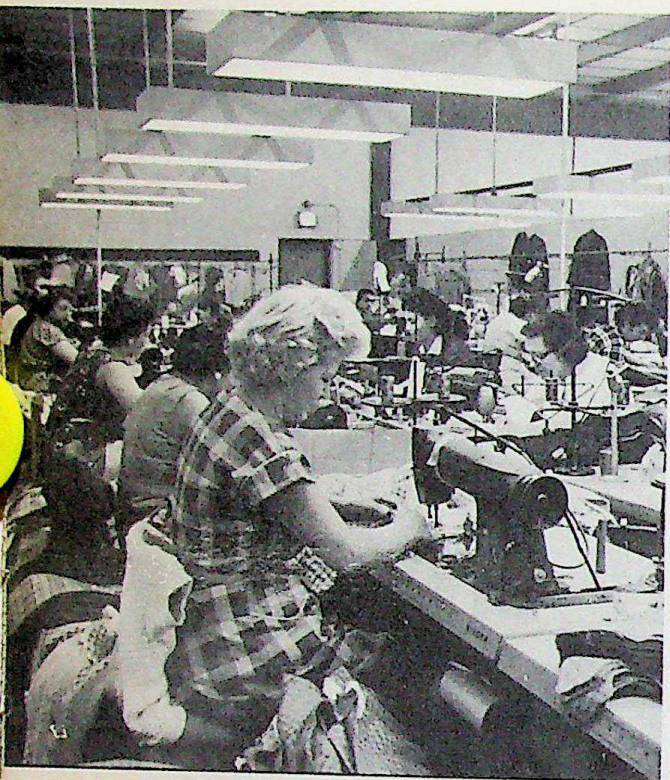
कारखाना एक निवास क्षेत्र में स्थित है और उसके चारों ओर कर्मचारियों के आमोद-प्रमोद के लिए पार्क तथा खेल के मैदान हैं। इमारत में कोई खिड़की नहीं है, सिर्फ जहां कार्यालय है, वहां है। तापमान और आर्द्रता के कृत्रिम नियंत्रण से गर्मी या ठंडक पैदा करली जाती है और दिन के प्रकाश की पूर्ति चमकदार विद्युत-प्रकाश से की जाती है।

ऊँची-ऊँची छतें और अन्दर की आकर्षक बनावट सारे कारखाने में एक ऐसा भव्य वातावरण पैदा करती है जिसे देखकर प्रसन्नता होती है। यह प्रभाव उन मीठे-मीठे और मन्द-मन्द गानों से और भी कई गुना बढ़ जाता है जो रिकार्डों द्वारा काम के समय में भी निरन्तर सुनाए जाते हैं।

कर्मचारियों को प्रदान की गई सुविधाओं में एक आकर्षक भोजनालय है जहां रियायती दरों पर खाना मिलता है, लेकिन कम्पनी उसमें परोसी जाने वाली वस्तुओं की किस्म और मूल्य की देख-रेख करती है। इस भोजनालय के पार्श्व में ही वाचनालय है जहां लंच के समय तथा काम से पहले और काम की समाप्ति के बाद लोग अपनी थकान मिटा सकते हैं।

कारखाने में काम करने के स्थान पर भी थकान कम करने की व्यवस्था की गई है। उदाहरण के लिए कटिंग के

(ऊपर) ऊँची-ऊँची छतें और अन्दर की आकर्षक सजावट कारखाने में एक सुख देने वाला वातावरण पैदा करती हैं। सिलाई का कमरा उद्योग के प्रारम्भिक दिनों की भीड़-भाड़ तथा गन्दी हालतों से सर्वथा मुक्त है।

(दायें) दक्ष कटर विद्युत चालित यंत्रों की सहायता से खड़े होकर अपना कठिन काम करते हैं। उनके पैरों की थकान कम करने के लिये फर्श पर स्पंज रबड़ की एक मोटी तह बिछा दी जाती है।

विशाल कमरे में जहां ज्यादातर काम खड़े होकर करना पड़ता है, फर्श पर भारी-भारी स्पंज रबर की चद्दरें रखी गई हैं।

इस नए बार्किन-लेविन कारखाने में पोशाकें तैयार करने की परम्परागत प्रक्रियाओं से बिल्कुल भिन्न प्रक्रियाएं अपनाई गई हैं। कार्य की उपयोगिता की दृष्टि से तैयार किए गए डिज़ाइनों के आधार पर सब कार्यों को एक सम्मिश्रित ढांचे में सम्बद्ध करने के बाद कम्पनी-अध्यक्ष डान डब्लू. बार्किन का खयाल है कि उत्पादन-कौशल में ८० प्रतिशत वृद्धि की जा सकती है।

(ऊपर) कारखाने में मज़दूरों को प्रदान की गई सुविधाओं में एक आकर्षक उपाहार-गृह तथा एक वाचनालय भी है।

(दायें) उत्पादन-कौशल का काम की हालतें सुधारने तथा श्रमिकों की थकावट कम करने से गहरा सम्बन्ध है। इस चित्र में दो कर्मचारी संगीत के रिकार्ड चुन रहे हैं जो सारे कारखाने में काम के समय बजाए जाएंगे।

उन्होंने कहा है कि "हमने पुराना तरीका बिल्कुल खत्म कर दिया है जिसमें पोशाकें बनाने के मुख्य-मुख्य काम दूर-दूर स्थित संयंत्रों में किए जाते थे। इसके बजाय हमने कपड़े के बने बनाये थानों से लेकर उन्हें काटने, सीने, किस्म नियंत्रण, टिकट लगाने, अन्तिम वितरण और जहाज पर लदान तक के सब कार्य एक ही छत के नीचे व्यवस्थित और वैज्ञानिक ढंग से एकत्र कर दिए हैं।

"तैयार कोट 'मोनोटेल' प्रणाली के ज़रिये किस्म-नियंत्रण और टिकट लगाने की विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजरता हुआ सीधा कारखाने के जहाज निर्यात विभाग में पहुँच जाता है। ट्रकों पर माल लादने और उनसे उतारने के जिस काम में पहले मनहट्टन के भीड़-भाड़ वाले इलाकों में से गुज़रने के कारण २-३ घण्टे लग जाते थे अब उसमें हमारे सड़क के पार उतार देने वाले डाँकों के ज़रिये सिर्फ २० मिनट लगते हैं।"

चूंकि कोट बनाने वाले कर्मचारियों की वेतन श्रेणियां खण्ड दर प्रणाली पर आधारित हैं इसलिए यूनियन के अधिकारी यह आशा करते हैं कि कारखाने की कार्य प्रणाली में सुधार से प्रतिव्यक्ति उत्पादन बढ़ेगा और कर्मचारियों की आय में भी वृद्धि होगी।

फिल्म के इस दृश्य में एक मशीन चालक को, जो "औद्योगिक सभ्यता का शिल्पी" है, दिखाया गया है।

ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. की टेलीविज़न फिल्म सिरीज
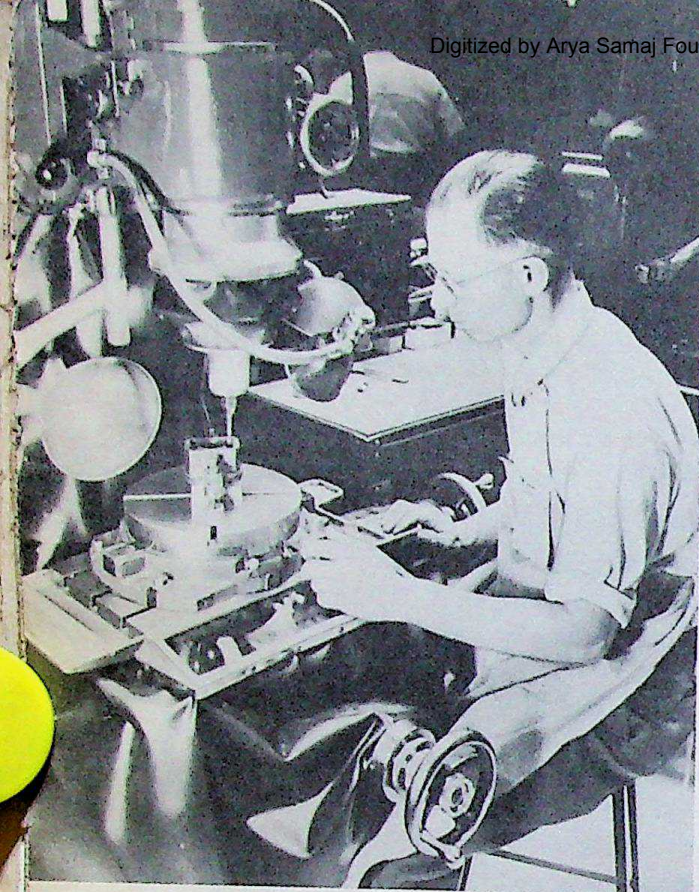
'अमेरिकन फेडरेशन ऑव लेबर' एवं 'कांग्रेस ऑव इंडस्ट्रियल आर्गनाइज़ेशन' के कथनानुसार उन्होंने 'कार्यरत अमरीकी' नामक टेलीविज़न के लिए जो फिल्म-सिरीजें बनाई हैं उनकी टेलीविज़न केन्द्रों के मैनेजरों तथा दर्शकों ने एक स्वर से प्रशंसा की है। उन्होंने उसे 'एक महान शैक्षिक महत्व का सार्वजनिक कार्यक्रम' कहा है। फेडरेशन को इस सम्बन्ध में जो पत्र या सम्वाद प्राप्त हुये हैं उनमें भी इन फिल्मों को 'अत्यधिक मनोरंजन एवं सूचना प्रधान' बताया गया है। उनके लेखकों ने यह स्वीकार किया है कि उन्होंने इन फिल्मों के ज़रिये इस बात की अपेक्षाकृत अधिक जानकारी प्राप्त की है कि मशीन युग में सुदक्ष कर्मचारी की भूमिका क्या है।

डिट्रायेट (मिशिगन) के डब्लू.डब्लू.जे. नामक टेलीविज़न केन्द्र के मैनेजर ने अपने एक विशिष्ट सन्देश में कहा है कि

हाथ से बारीक सिलाई का काम करते हुए पोशाक कर्मचारी
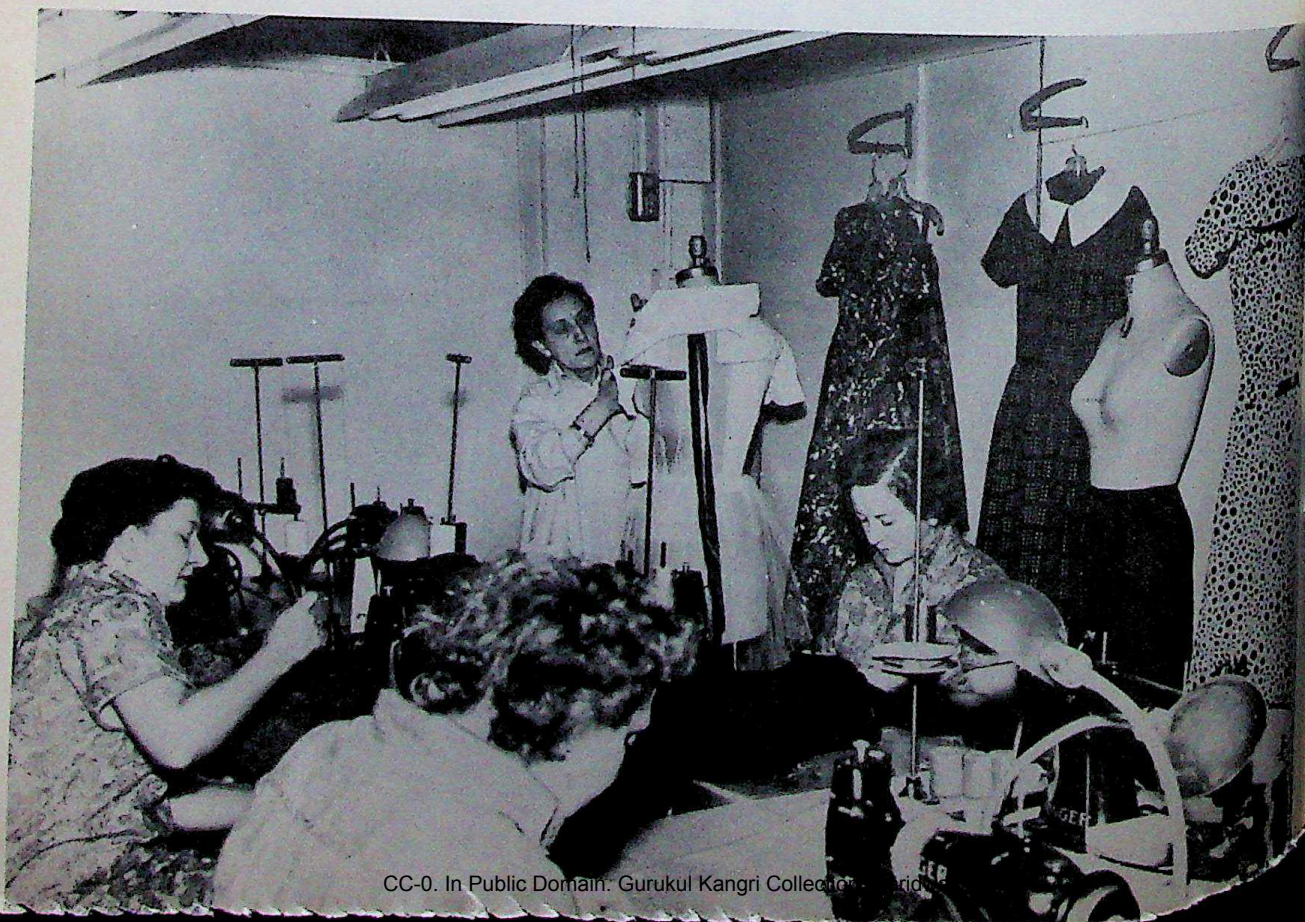
इन फिल्मों के बारे में डिट्रायेट क्षेत्र के दर्शकों की यह राय है कि इनको देखकर दर्शकों को ऐसे क्षेत्र के मज़दूरों और मशीनों की जानकारी होती है जिनसे अक्सर जनसाधारण अपरिचित होते हैं। उनकी राय में ये प्रभावशाली ढंग से अमरीकी अर्थ-व्यवस्था के अनेक महत्वपूर्ण क्षेत्रों की दिलचस्प और बोधगम्य कहानी बताती हैं।

इस फिल्म सिरीज़ का प्रारम्भ इस वर्ष जनवरी में किया गया था और अब यह देश भर के ७५ टेलीविज़न केन्द्रों द्वारा प्रदर्शित की जा रही हैं। अपनी पूर्ति पर, सिरीज़ में ५२ फिल्में होंगी। अब तक जिन फिल्मों का प्रदर्शन किया जा चुका है उनमें निम्नलिखित उद्योगों की विस्तारपूर्वक जानकारी पेश की गई है: समाचार पत्रों का प्रकाशन, शीशा एवं कागज का निर्माण आटोमोबाइल आदि। उनमें बेकरी (बिस्कुट व डबल रोटी उद्योग) कर्मचारियों, कुम्हारों, जूता बनाने वालों, जिल्दसाज़ों, पोशाक उद्योग में काम करने वाले मज़दूरों और मशीनिस्टों (यांत्रिकों) और उनके कार्य की ब्योरेवार कहानियां बताई गई हैं।

उदाहरणार्थ, एक फिल्म में न्यूयार्क के विशाल पोशाक-निर्माण केन्द्र के एक कारखाने की सम्पूर्ण कार्य-शैली दिखाई गई है। इसमें बताया गया है कि अमरीका की महिलाओं के लिए पहले डिज़ाइनरों द्वारा नये-नये स्टाइल बनाए जाते हैं। कपड़ों के टुकड़ों को जोड़-जोड़ कर पूरी पोशाक तैयार करके डिज़ाइनरों द्वारा ईजाद किए गए स्टाइल को मूर्त रूप दिया जाता है।

डिज़ाइन पहले एक सैम्पल-मेकर के पास जाता है जो उसमें पिनों तथा सुइयों की परख के अनुसार आवश्यक हेर-फेर करके एक नमूने की पोशाक तैयार करता है। इसके बाद यह पोशाक पैटर्न बनाने वाले के पास जाती है जो नमूना बनाने वालों द्वारा जोड़े गए विविध हिस्सों के पैटर्न तैयार करता है। फिर ये पैटर्न, मूल नमूने के अनुसार अपेक्षित आकार के लिए उसी अनुपात से छोटे या बड़े बनाये जाते हैं इस बीच जिस कपड़े से पैटर्न काटा जाता है, वह छांट लिया जाता है और उसकी तहें लगा दी जाती हैं जिसमें एक बार में ही अधिक से अधिक कपड़ा काटा जा सके।

अब 'कटरों' (कपड़ा काटने वालों) का काम शुरू होता है। इनकी गिनती उद्योग में सबसे अधिक वेतन पाने वालों में है। यद्यपि अब चाकू-कैंची के स्थान पर बिजली से चलने वाली कटिंग मशीनें इस्तेमाल की जाती हैं फिर भी उनका संचालन बड़ी बारीकी के साथ करना पड़ता है।

कटाई के बाद एक जैसे सब हिस्सों की गठरियां बांध दी जाती हैं। असार्टर (वर्गीकरण करने वाले) इस बात की देखभाल करते हैं कि सिलाई के कक्षों में सभी उपयुक्त हिस्से एक साथ भेजे जाएं। अन्त में ये पोशाकें प्रेस करने वालों के पास भेजी जाती हैं। फिर उन्हें निरीक्षकों के पास भेजा जाता है। निरीक्षक उन्हें ध्यानपूर्वक देखकर इस बात का निश्चय करते हैं कि पोशाक यूनियन के लेबिल लगाने के लायक है या नहीं।

ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. के अध्यक्ष जार्ज मीनी का कथन है कि राष्ट्र के टेलीविज़न स्टेशन को इस प्रकार की फिल्म सिरीज़ भेंट करने में श्रमिकों का उद्देश्य बहुत सरल और स्पष्ट है। "हम चाहते हैं कि श्रमिक अपने कार्यों में अधिक गौरव का अनुभव करें और बेशक, हम यह भी चाहते हैं कि हमारे साथी अमरीकी हमारे राष्ट्र के श्रमिकों तथा लोकतंत्र के अंतर्गत स्वतंत्र व्यवसाय पद्धति में उनके योगदान में गौरव का अनुभव करें।"

एक मोटर कारखाने में विभिन्न हिस्सों को जोड़ते हुये मज़दूर
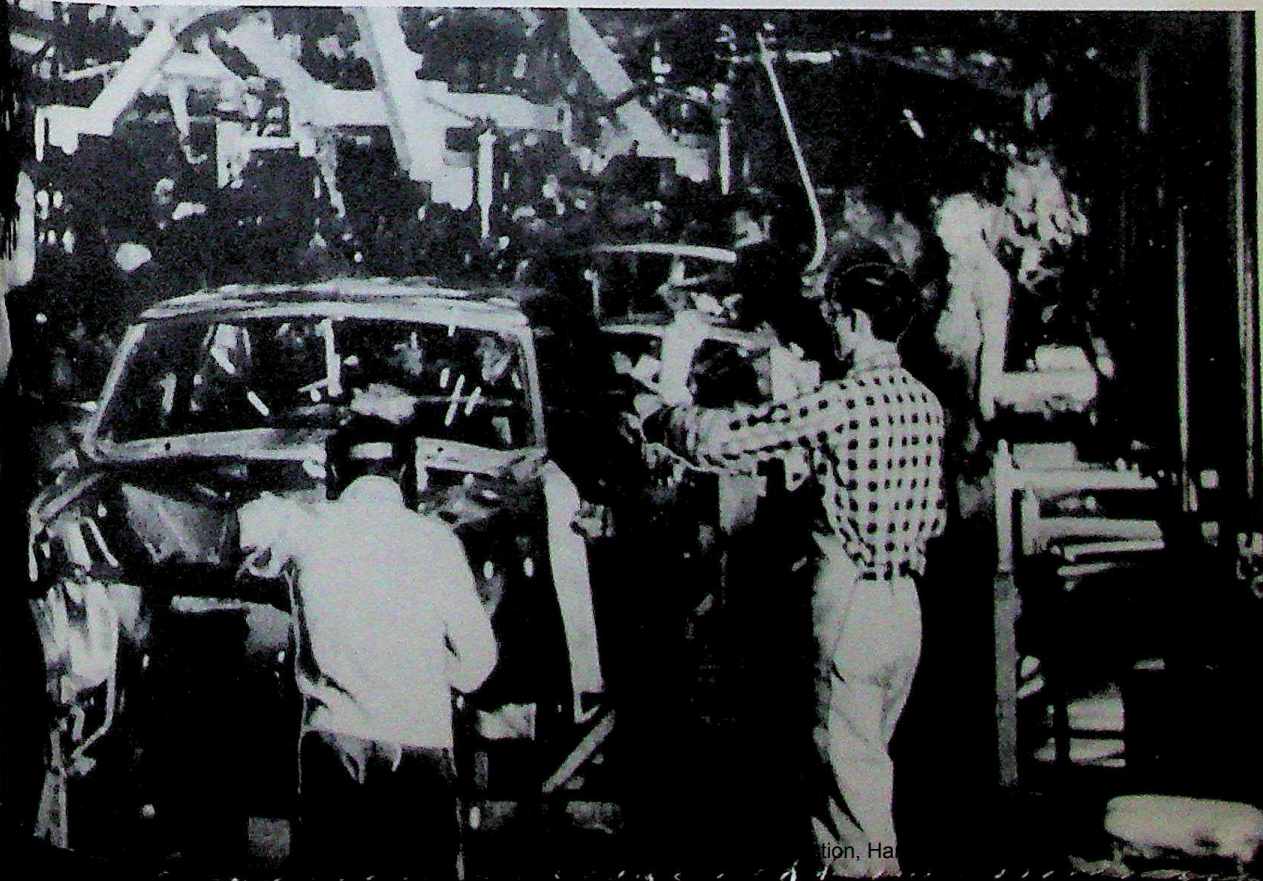
अमरीकी उद्योगों में अपंग कर्मचारियों को अधिक रोज़गार

अमरीकी उद्योगपति अपंग व्यक्तियों को अपने व्यवसाय की उन्नति की खातिर अधिकाधिक संख्या में काम पर लगा रहे हैं। वे उन्हें किसी किस्म की दया की भावना से प्रेरित होकर नहीं बल्कि उनकी दक्षता और योग्यताओं के आधार पर काम दे रहे हैं।

अनुभव से उन्होंने यह जाना है कि आंशिक रूप से अपंग कर्मचारी का औसत उत्पादन, पूर्ण समर्थ कर्मचारी के उत्पादन से अधिक होता है। उसका काम भी उससे अच्छा होता है तथा वह माल भी कम खराब करता है। इसका कारण यह पाया गया है कि उसमें स्वयं को कार्यदक्ष सिद्ध करने की तीव्र लालसा रहती है।

विभिन्न उद्योगों में अपंगों को अधिकाधिक संख्या में काम पर लगाया जा रहा है। अमरीकी कार्य नियोजन सर्विस के आंकड़े इसके साक्षी हैं। सन् १९५७ में इस सर्विस ने

एक आंशिक रूप से अपंग कर्मचारी अपनी यांत्रिक भुजा की सहायता से कटिंग मशीन चला रहा है।

सामने के पृष्ठ पर दिखाए गए अपंग कर्मचारी ने अपना व्यावसायिक जीवन प्रयोगशाला के टेक्नीशियन के रूप में शुरू किया था। अब वह सूक्ष्म झलाई का विशेषज्ञ है।

ऐसे कर्मचारियों का उत्पादन समस्त उद्योग में होने वाले औसत उत्पादन से अधिक होता है।
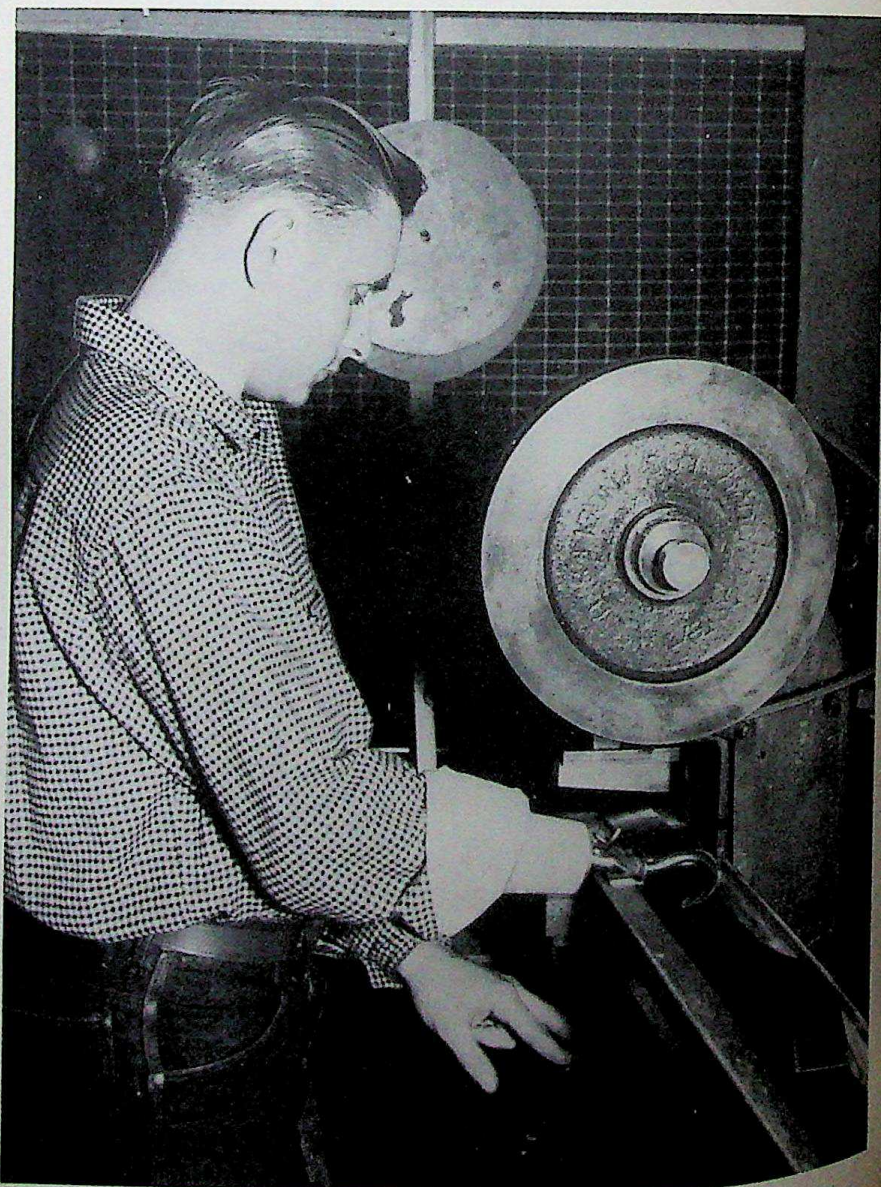
२,९६,७०० अपंगों को काम दिलवाया—जो शांति-काल का एक रिकार्ड है। सन् १९५४ में इस सर्विस ने २,०८,४२७ व्यक्तियों को, सन् १९५५ में २,१४,००० व्यक्तियों को तथा सन् १९५६ में २, ९०,००० से कुछ कम अपंग कर्मचारियों को काम दिलवाया था।

अन्य बहुत से स्त्री-पुरुषों को, जो अवसर मिलने पर काम करने के इच्छुक थे, इसी अवधि में अन्य एजेंसियों के ज़रिये काम मिला। इन एजेंसियों में मुख्य प्राइवेट काम दिलाऊ सर्विसें या राज्यीय-संघीय व्यावसायिक पुनर्वास कार्यक्रम थे।

सन् १९५७ में व्यावसायिक पुनर्वास कार्यक्रम की सहायता से ७१,५०० व्यक्तियों ने काम प्राप्त किया जो पिछले वर्ष से ५,२९७ अधिक थे। आज अमरीका के कुल श्रमिकों में अपंग कर्मचारियों की संख्या ७०-८० लाख मानी जाती है।

अपंग कर्मचारियों के प्रति उद्योग मालिकों के रवैये में यह परिवर्तन अमरीकी कार्य नियोजन सर्विस तथा लगन वाले स्त्री पुरुषों द्वारा संगठित प्राइवेट एजेंसियों के प्रयत्नों से हुआ है। इस क्षेत्र में सबसे प्रभावशाली योग देने वालों में एक निजी मुनाफा कमाने वाली कम्पनी 'एबिलिटीज़, इन्कार्पोरेटेड' है जो केवल अपंग व्यक्तियों को ही नियमित रूप से और पूरे समय के लिए अपने यहाँ काम पर रखती है, उन्हें समर्थ कर्मचारियों के समान वेतन देती है और उनकी बनाई चीज़ों को उचित मूल्य पर बेचती है।

'एबिलिटीज़, इन्कार्पोरेटेड' के अध्यक्ष हेनरी विस्कार्डी के कथनानुसार इस कम्पनी की स्थापना सन् १९५२ में ४ व्यक्तियों ने की थी जिनमें "सिर्फ एक काम लायक टांग थी और ५ काम लायक हाथ थे।" अब इसमें ३०० से अधिक कर्मचारी हैं और इसने न केवल अपंगों की सहायता के लिए बल्कि उत्पादन के उच्च स्तर के लिए भी राष्ट्र भर में ख्याति प्राप्त की है।

अमरीका के श्रमिक संगठनों ने भी इस कार्य में अपना योग प्रदान किया है। ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. ने यूनियन सदस्यों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया है कि वे अपंग कर्मचारियों को काम पर लगवाने में मदद करें और उनके हितों की रक्षा करें।

ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. के अध्यक्ष जार्ज मीनी का कथन है: "हमारा विश्वास है कि अमरीका के अपंग कर्मचारियों को अपनी योग्यता सिद्ध करने का अवसर प्राप्त करने का अधिकार है। महत्व उनकी असमर्थता का नहीं बल्कि उनके सामर्थ्य का है।"

समुद्रों की नई
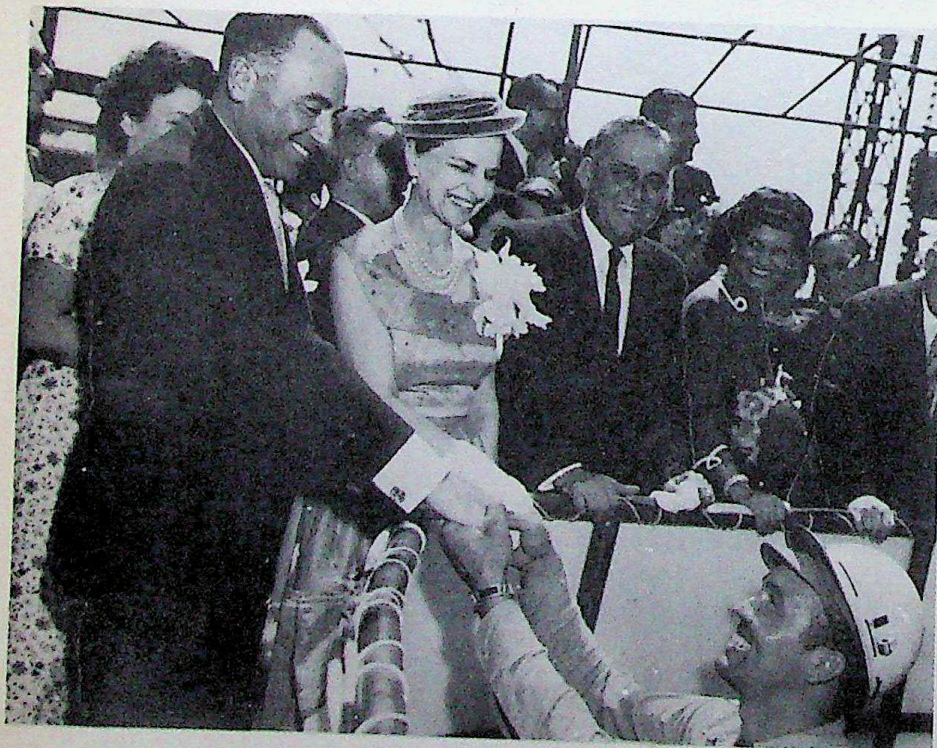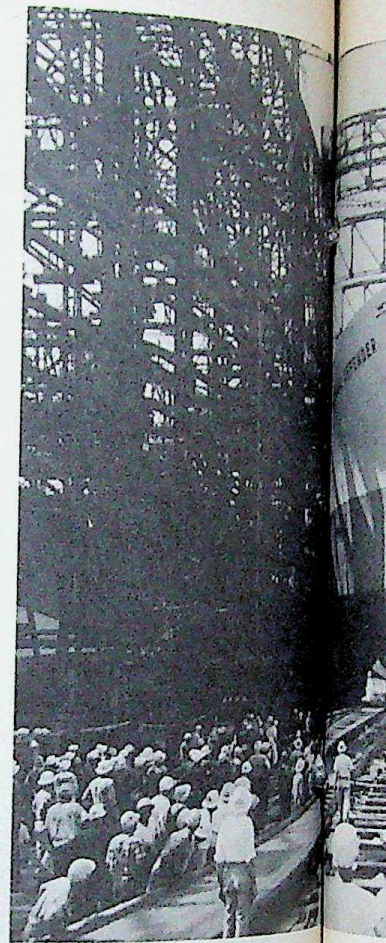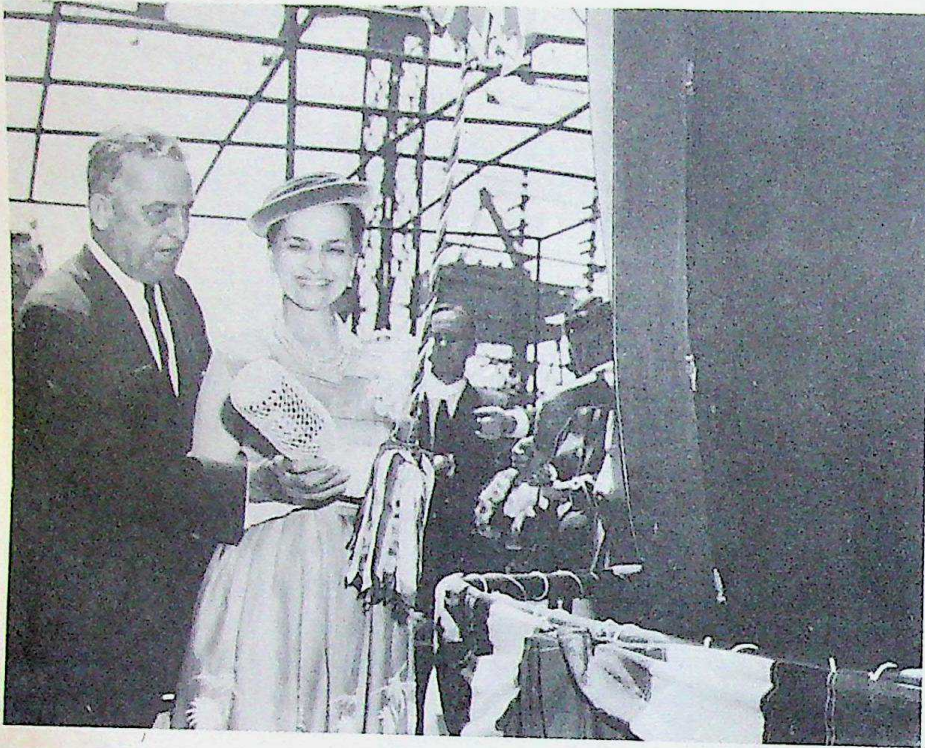
नए सुपर-टैंकर के सामने के हिस्से पर ... खड़े होकर शैम्पेन की बोतल तोड़ने ... परम्परागत रिवाज की तैयारी में ... रल एन.एल. रालिंग्स श्रीमती जॉन ... डोराकोपुलोस की सहायता कर रहे हैं।

श्री व श्रीमती थियोडोराकोपुलोस 'नेशनल ... डिफैण्डर' के निर्माण में भाग लेने ... एक स्टीम फिटर को 'कार्य की ... पूर्ति' के लिए बधाई दे रहे हैं।

नी
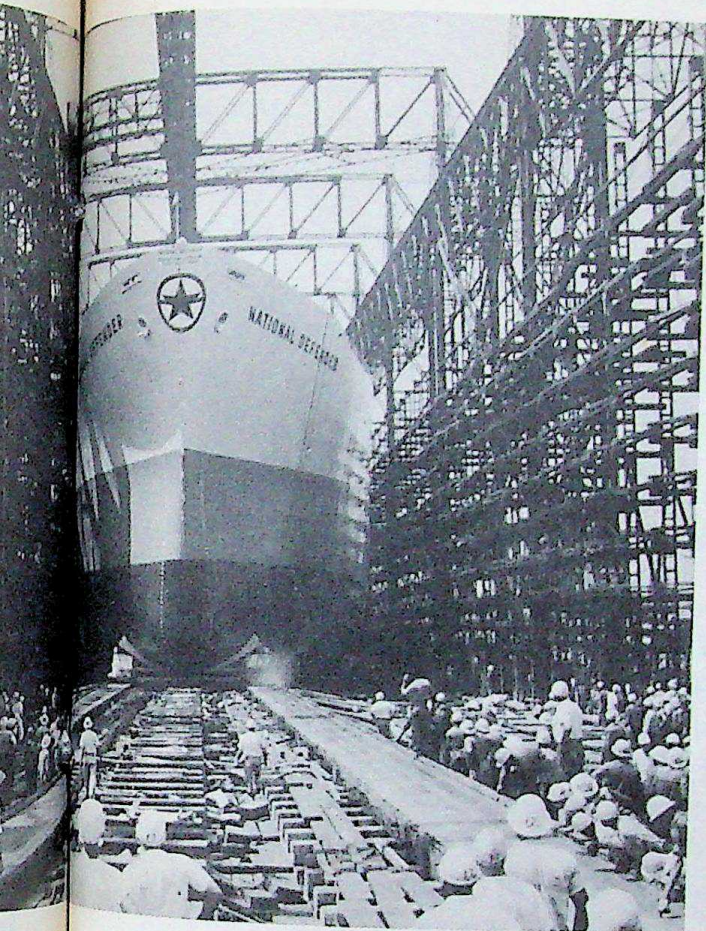
अमरीका की व्यापारिक जहाजरानी का दूसरा सबसे बड़ा तेलवाही जहाज सुपर-टैंकर एस.एस. "नेशनल डिफेंडर" जिसे टेक्नीशियनों, फिटरों, कारपेन्टरों तथा बन्दरगाह-कर्मचारियों समेत सैकड़ों कर्मचारियों ने बनाया है, १९ अगस्त, १९५९ को न्यूपोर्ट न्यूज, वर्जीनिया में एक नई रानी की भाँति सजधज के साथ पानी में उतारा गया। ६५,९२६ टन के डिफेंडर से केवल आकार में बड़ा जहाज 'युनाइटेड स्टेट्स' ही है। यह तेलवाही जहाज 'नेशनल ट्रान्सपोर्ट कार्पोरेशन ऑव न्यूयार्क' के लिए बनाया गया है।

'न्यूपोर्ट न्यूज़ शिप बिल्डिंग एण्ड ड्राई डॉक कम्पनी' में जहाज के जलावतरण समारोह में कार्पोरेशन के कर्मचारियों के अलावा बहुत से मेहमानों ने भी भाग लिया। श्रीमती जॉन थियोडोराकोपुलोस ने परम्परागत शैम्पेन-समारोह के साथ इस विशाल जहाज का नाम रखा। उनके पति श्री थियोडोराकोपुलोस, जो समारोह में उपस्थित थे, जहाज के आंशिक स्वामी और नेशनल ट्रान्सपोर्ट कार्पोरेशन बोर्ड अध्यक्ष हैं। उन्होंने इस जहाज के निर्माण के लिये, जो संसार में एक सबसे आधुनिक तेलवाहक जहाज है, कर्मचारियों को उनके शानदार कार्य के लिए बधाई दी।

नया सुपर-टैंकर अपनी गति तथा दक्षता के कारण राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय परिवहन में एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान कर सकता है। ४,७८,६३५ पीपे ढोने की उसकी क्षमता २ करोड़ गैलन गैसोलीन ढोने की क्षमता के बराबर है।

शाली नया जहाज जो एक अति-निक तेल वाहक है न्यूपोर्ट न्यूज बिल्डिंग और ड्राई डॉक कम्पनी के मार्ग पर उतारा जा रहा है।

८१० फुट लम्बा तथा १०४ फुट है और उसकी रफ्तार १७ नाट है। अमरीकी झंडे के नीचे काम करने बनाया गया सबसे बड़ा जहाज है।

जेम्स बी. कैरे

सब के लिए मुफ़्त शिक्षा
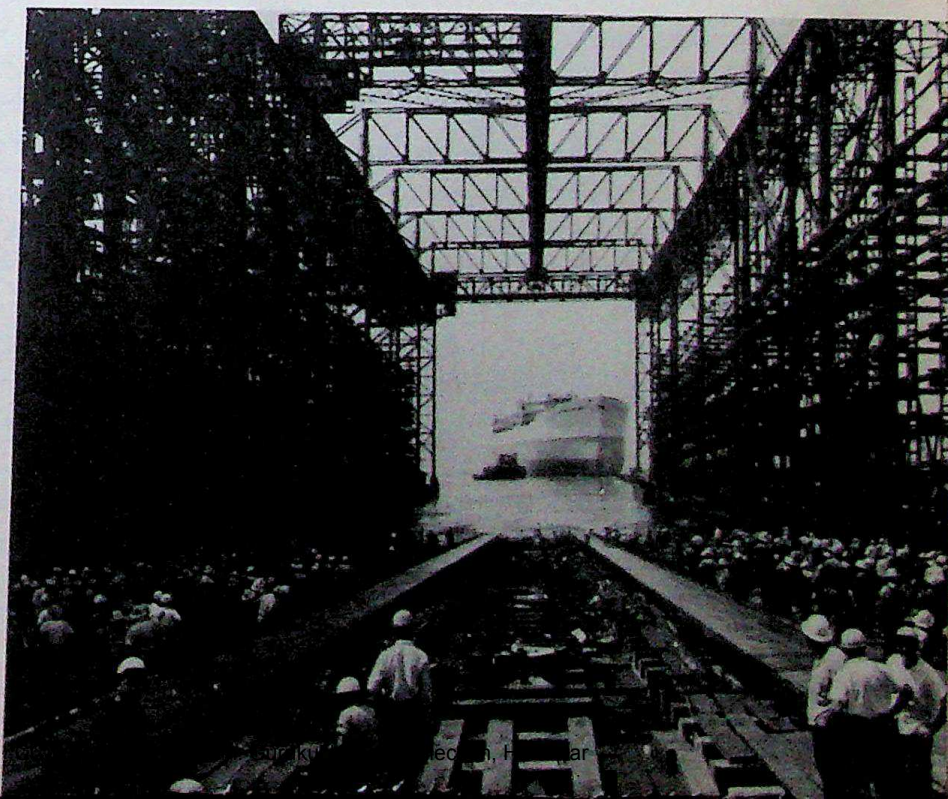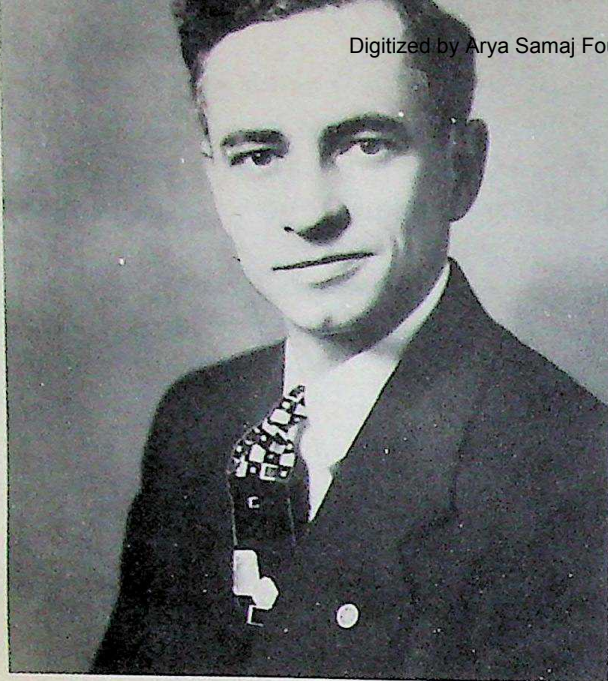
लेखक : **जेम्स बी. कैरे**
विद्युत, रेडियो तथा मशीन कर्मचारियों की अन्तर्राज्यीय यूनियन के अध्यक्ष

एक सौ तीस वर्ष पूर्व न्यूयार्क के एक छोटे से कमरे में जिसमें धुंधली सी रोशनी थी, उत्सुक और दत्तचित्त श्रमिकों की एक टोली के समक्ष एक क्रांतिकारी दस्तावेज़ पढ़ा गया। यह दस्तावेज़ लम्बा था किन्तु उसकी हृदयस्पर्शी समाप्ति समस्त श्रोताओं के लिए इस एक वाक्य में हुई :

"हम एक ऐसी प्रणाली स्थापित करने का प्रयत्न करेंगे जिसमें गरीब और अमीर आदमियों के, विधवाओं तथा यतीमों के बच्चे सब एक छत के नीचे एकत्र होंगे; जहां, वंश या कुल के आधार पर नहीं बल्कि उत्कृष्ट श्रम, गुण तथा सफलताओं के आधार पर भेद किए जाएंगे।"

१८२९ का वर्ष था, नव-निर्मित श्रमिक दल की एक सभा का अवसर था। वह दस्तावेज़, जो मेरे द्वारा उद्धृत घोषणा की दृष्टि से क्रांतिकारी था, दल का मुख्य मंच था।

इस प्रकार अमरीका में मुफ्त शिक्षा की प्रणाली के लिए आन्दोलन शुरू हुआ। लेकिन विशुद्ध ऐतिहासिक दृष्टि से इसकी शुरुआत इससे भी पहले से है।

१८२९ में अमरीका का श्रमिक आन्दोलन इस दृष्टि से अभी सिर्फ दो ही वर्ष का था, कि सिर्फ दो वर्ष पूर्व ही विभिन्न उद्योगों की पहली केन्द्रीय संस्था अमरीका में कायम हुई थी। लेकिन 'ईस्टर्न सी. बोर्ड' के आस-पास स्थानीय यूनियनों ने १७९० के दशक में ही मुफ्त शिक्षा को अपना एक मुख्य ध्येय बना लिया था।

इस ध्येय की बदौलत बाद के वर्षों में अमरीका का मज़दूर आन्दोलन एक अद्वितीय दिशा में अग्रसर हुआ जिसका उदाहरण अन्य किसी मज़दूर आन्दोलन में नहीं मिलता।

यह एक असाधारण तथ्य है और जिसके विषय में बहुत ही कम जानकारी है कि उन शुरू के वर्षों में, विशेषकर १८२० और १८३० के दशक में श्रम संगठनों का पहला और सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य अधिक वेतन, काम के कम घण्टे अथवा काम की बेहतर हालतों की प्राप्ति नहीं था बल्कि आश्चर्य है, कि उनका पहला लक्ष्य मुफ्त शिक्षा थी।

सन् १८३० के दशक में श्रमिकों के अनेक पत्र निकलते थे। पत्रों के मुख पृष्ठों के ऊपर तथा सम्पादकीय स्तम्भ के ऊपर यह नारा लिखा रहता था : "समान सार्वभौम शिक्षा।"

शिक्षा पर यह असाधारण ज़ोर क्यों ? अमरीकी क्रांति का चमत्कार और कीर्ति लोगों के दिमाग में अब भी तरो-ताज़ा थी। लोग जिस हवा में सांस लेते थे वह आत्म-निर्णय तथा स्वशासन से उद्भूत प्रतिज्ञाओं से सुरभित थी।

'स्वाधीनता की घोषणा' के ये शब्द कि "सब मनुष्य समान हैसियत में पैदा होते हैं" शुरू के श्रमिकों के कानों में साक्षात् गूंजते रहते थे।

यूनियनों ने कहा कि समान मनुष्यों के समान अधिकार होने चाहिएं किन्तु शिक्षा के ज़रिये ही स्वतन्त्र व्यक्ति शासन के लिए समझदारी से नेता और नीतियां चुन सकते हैं।

इतिहासकार फौस्टर आर. डलेस ने कहा है : "शिक्षा में, जो मानव जाति के लिए सबसे बड़ा वरदान है, लोगों का विश्वास इतना अधिक पहले कभी नहीं रहा, जितना इस पीढ़ी के अमरीकियों का था।

"श्रमिकों ने अपने बच्चों के लिए एक अधिकार के रूप में इसकी मांग करने में, जिसका उन्हें नैतिक दृष्टि से हक था, जो दृढ़ता दिखाई, उससे अधिक दृढ़ता की कल्पना नहीं की जा सकती।"

औद्योगिक यूनियन विभाग का सहायता कार्यक्रम

व्यावसायिक और प्राविधिक कर्मचारियों की समस्याओं पर विचारार्थ नव-निर्मित समिति ने व्यावसायिक तथा प्राविधिक कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व करने में ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. के औद्योगिक यूनियन विभाग से सम्बद्ध यूनियनों को सहायता देने के लिए एक कार्यक्रम बनाया है। समिति की बैठक में, जिसमें १० सम्बद्ध यूनियनों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया, इस क्षेत्र में यूनियन संगठन के विचार की आवश्यकता पर बल दिया गया। समिति ने औद्योगिक यूनियन विभाग को आगामी कुछ महीनों में निम्नलिखित कार्यक्रम चालू करने का अधिकार प्रदान किया है :

व्यावसायिक और प्राविधिक कर्मचारियों की धन्धे सम्बंधी समस्याओं के विषय में यूनियन के प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण देने के लिए एक शिक्षण संस्था कायम करे और उसमें स्टाफ रखे।

व्यावसायिक, प्राविधिक तथा उससे मिलते जुलते कर्मचारियों के विषय में चालू यूनियन समझौतों का व्यापक विश्लेषण प्रदान करे।

राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर व्यावसायिक और प्राविधिक कर्मचारियों पर प्रभाव डालने वाले कानूनों का अध्ययन तथा विश्लेषण करे और इन कर्मचारियों के हितों की पूर्ति के लिए आवश्यक कानूनी कार्यक्रम की रूप रेखा बनाए।

लोकप्रिय प्रचार सामग्री तैयार और प्रकाशित करे जिसमें यह बताया जाय कि व्यावसायिक तथा प्राविधिक कर्मचारियों ने किस प्रकार अपने व्यावसाय तथा धन्धे के दर्जों को नुकसान पहुँचाए बिना सामूहिक सौदेबाज़ी से लाभ प्राप्त किया है।

औद्योगिक विभाग के डाइरेक्टर ऐल ह्वाइटहाउस ने सभा पर टीका-टिप्पणी करते हुए कहा है कि "विभाग की गतिविधियाँ राष्ट्र में व्यावसायिक तथा प्राविधिक धन्धे करने वाले कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि से उत्पन्न चुनौती का सामना करने में सम्बद्ध यूनियनों की सहायता करने तक सीमित रहेंगी। यह अपने कार्यक्रम को लेकर यथा सम्भव तेजी के साथ आगे बढ़ेगा।"

यूनियन के प्रयत्नों से सब की सहायता

राष्ट्र के सब लोगों की सहायता के लिए सुधारों की प्राप्ति के संघर्ष में श्रम-संगठनों ने जो प्रमुख भाग लिया है, अमरीका उसके लिए उनका ऋणी है। यह राय कैन्सास के भूतपूर्व गवर्नर तथा सन् १९३६ में जी.ओ.पी. के राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार ऐल्फ एम. लैण्डन ने हाल में टोपेका, (कैन्सास) में प्रकट की है।

लैण्डन ने पुराने दिनों की याद करते हुए कहा कि आधी सदी पूर्व जब वे कालेज के विद्यार्थी थे तब उन्होंने यह देखा था कि ए.एफ.एल. ने उद्योगों में बाल-श्रम की समाप्ति के लिए तथा महिला कर्मचारियों की सुरक्षा के लिए कानून बनवाने के हेतु कांग्रेस तथा राज्यों के विधान-मण्डलों में किये गए संघर्षों का नेतृत्व किया था।

"तभी से मैं श्रमिकों के संगठन बनाने तथा सामूहिक तौर पर सौदेबाज़ी करने के अधिकार में विश्वास करने लगा" ये शब्द लैण्डन ने यहां राज्य श्रम-संघ के हाल के अधिवेशन में कहे थे। "और", उन्होंने आगे कहा, "अपनी इस धारणा को बदलने का मुझे कभी कोई कारण नहीं मिला। मेरा विश्वास है कि मजबूत श्रम-संगठन एक ठोस पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था के पूरक हैं और हमारे राष्ट्र के जीवन में आर्थिक शक्ति पर काबू और सन्तुलन रखते हैं।"

लैण्डन ने यह भी कहा कि कैन्सास के विधान-मण्डल के कार्य का उन्हें ४० वर्ष का अनुभव है और इस अरसे में उन्होंने मजदूरों के प्रतिनिधियों से बढ़कर सार्वजनिक हित की भावना रखने वाले 'गोष्ठी प्रचारक' नहीं देखे।"

उन्होंने इस बात पर बल दिया कि "वे सदा बेहतर शिक्षा, बेहतरीन सड़कों, बेहतर किफ़ायत, मनोरंजन की बेहतरीन सुविधाओं तथा सफ़ाई व सुरक्षा के बेहतर उपायों के हामी रहे हैं। इस राज्य के किसानों को भी ग्राम विद्युतीकरण प्रशासन की सुविधाएं न मिल पातीं अगर श्रम-संगठनों ने तत्सम्बन्धी कानून का प्रबल समर्थन न किया होता।"

लैण्डन ने कुछ मज़दूर यूनियनों में व्याप्त भ्रष्टाचार की निन्दा की और व्यवसाय के क्षेत्र में भी इस प्रकार के भ्रष्टाचार के कुछ उदाहरण दिए जिनके कारण संघीय नियामक कानून बनाना पड़ा।

"लेकिन", लैण्डन ने कहा, "दोनों में आधारभूत फर्क है। बड़े व्यवसायों ने अपनी इन खराबियों को दूर करने का कोई यत्न नहीं किया जबकि ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. अपने अध्यक्ष जार्ज मीनी के बुद्धिमत्तापूर्ण नेतृत्व में श्रम-संगठनों में भ्रष्टाचार की बुराइयों को दूर करने का ज़ोरदार प्रयत्न कर रही है और इस कार्य में वह सरकारी अधिकारियों, प्रबन्धकों तथा जनता से पूर्ण सहयोग प्राप्त करने की अधिकारी है।"

उन्होंने कहा कि "यूनियनों पर नियंत्रण रखने वाले संघीय कानूनों का दायरा सार्वजनिक सुरक्षा के लिए न्यूनतम आवश्यकताओं तक ही परिमित रहना चाहिए।" उन्होंने ऐसे किसी भी कानून का विरोध किया जिसका उद्देश्य मजबूत और जिम्मेदार यूनियनों की तरफ से की जाने वाली सामूहिक सौदेबाजी के सिद्धांत और स्वरूप को कमज़ोर करना हो।

श्री लैण्डन ने यह भी कहा कि संसार में आम खुशहाली तथा स्वतन्त्रता के लिए श्रम-संगठनों ने जो महानतम योग दिया है वह है कम्यूनिज्म के खिलाफ़ उनका तीव्र और शिथिल न होने वाला विरोध।

'वी ओपेन द गेट्स' का सातवां अध्याय

तेल उद्योग में भेद-भाव नहीं चलेगा

"उन्हें अपनी यूनियनों को मत तोड़ने दो"—यह बात ए.एफ. एल.-सी.आई.ओ. की तेल, रासायनिक और अणु कर्मचारी अंतर्राष्ट्रीय यूनियन के अध्यक्ष ओ. ए. नाइट ने कही थी। मार्च १९५६ का समय था और स्थान था अटलांटा (जार्जिया)। श्री नाइट यूनियन के गोरे और नीग्रो सदस्यों के एक दल के बीच भाषण कर रहे थे। यह यूनियन पैट्रोलियम रासायनिक और अणु उद्योगों के लगभग २००,००० कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व करती है।

"उन्हें" से उनका क्या अभिप्राय था, इसे स्पष्ट करने के लिए श्री नाईट ने ह्वाइट-सिटीजन्स कौंसिल के अनेक नेताओं के नाम पढ़कर सुनाए जो मजदूरों को प्रलोभन देकर फुसलाने में सक्रिय थे।

उन्होंने आगे कहा : आप किसी को अपने दिमाग में यह विश्वास न बिठाने दें कि एक जाति के लिए एक ईश्वर है और दूसरी के लिए दूसरा। याद रखिये कि आप दुनिया के सर्वोत्तम देश के नागरिक हैं, जहां सबसे बड़ा लोकतंत्र है और सबसे अधिक अवसर प्राप्त हैं। अपने देश के कानूनों के विरुद्ध मत जाइए। याद रखिये आप इस यूनियन के सदस्य हैं और आपने यह वचन दिया है कि आप किसी भी साथी को जान-बूझकर हानि नहीं पहुंचाएंगे। यह वायदा बिना किसी रंगभेद के सभी पर लागू होता है।"

ओ.सी.ए.डब्लू. (तेल रासायनिक और अणु उद्योग कर्मचारी संघ) के एक तिहाई से अधिक सदस्य दक्षिण में काम करते हैं जिनमें से कम से कम १५ प्रतिशत नीग्रो हैं। यूनियन ने उन बाधाओं को खत्म करने के लिए लगातार संघर्ष किया है जिन्होंने नीग्रो लोगों की नौकरियां सीमित की हैं और अधिक कुशल तथा अधिक वेतन वाले कामों पर उनकी तरक्की को रोका है।

ओ.सी.ए.डब्लू. दो यूनियनों से मिलकर बनी है, जो मार्च १९५६ में मिल गई थीं। इनके नाम थे तेल मजदूर अंतर्राष्ट्रीय यूनियन और अमरीका के गैस कोक और रासायनिक कर्मचारी यूनियन। विशेष रूप से तेल कर्मचारियों की यूनियन की सदस्य संख्या दक्षिण में काफी अधिक थी और उसका वहां काम करने का लम्बा अनुभव था। १९३० के दशक में यूनियन ने गल्फकोस्ट के बड़े-बड़े तेल साफ करने के कारखानों के गोरे और नीग्रो मजदूरों को संगठित किया था। उस समय
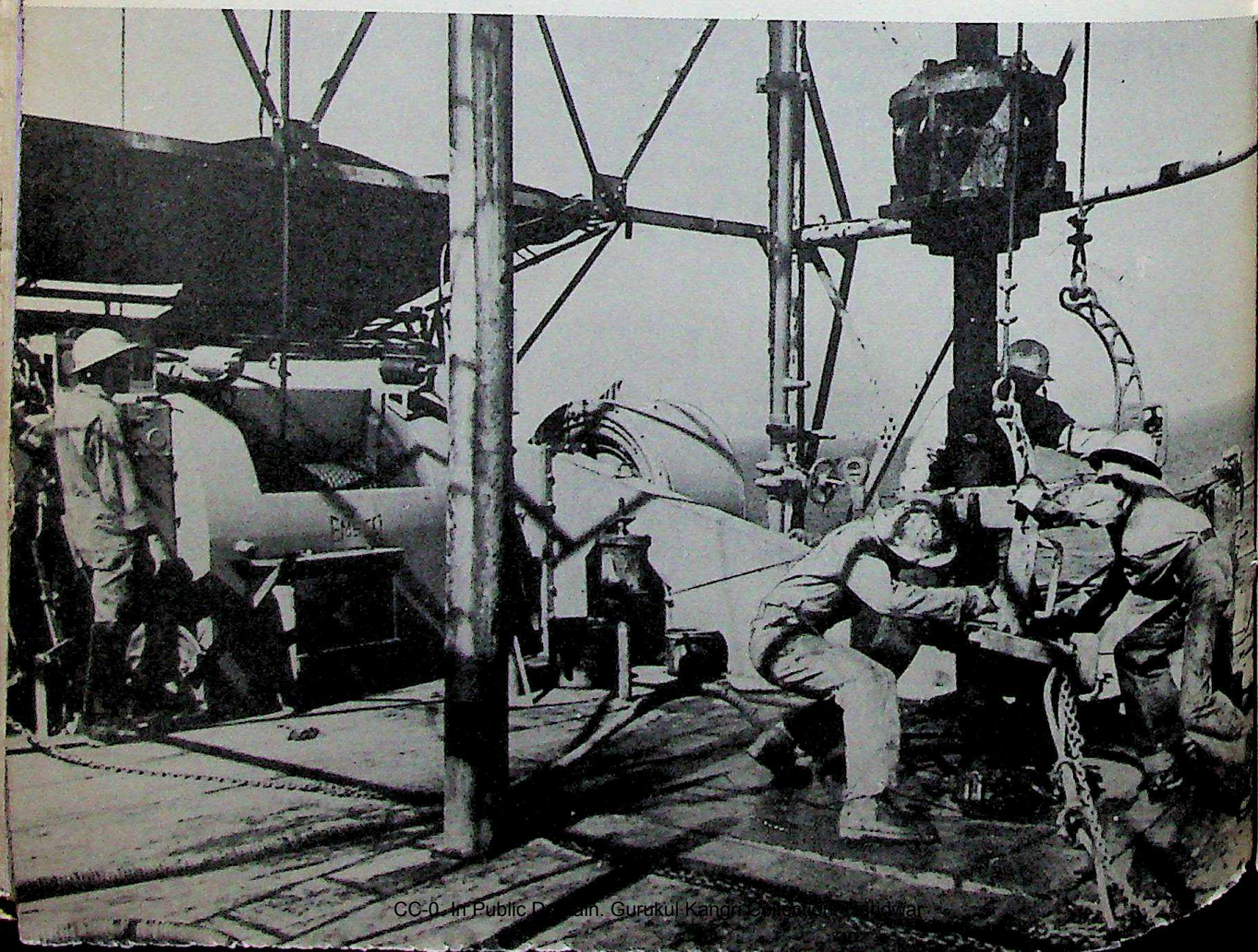
अनेक यूनियनें या तो नीग्रो लोगों की परवाह नहीं करती थीं या उन्हें सदस्य नहीं बनाती थीं। लेकिन तेल मज़दूरों ने इस बात पर ज़ोर दिया कि कारखानों के दोनों गोरे और नीग्रो लोगों को यूनियन में शामिल किया जाना चाहिए। एक को भी कम वेतन मिलने से सभी का नुकसान होता है—यह एक आसान सी युक्ति थी।

दक्षिण के कुछ भागों में सबसे पहले तेल-कर्मचारियों ने यूनियन की मिलीजुली बैठक की। यह प्रथा उन्होंने बिना किसी दिखावे या धूमधाम के वास्तविक तौर पर की थी।

तेल कर्मचारी यूनियन की स्थापना से पहले नीग्रो लोगों को एक जैसे कार्य के लिए कम मज़दूरी मिला करती थी। यूनियन ने इस प्रथा को बातचीत करके, जहां भी संभव हुआ, खत्म करा दिया और दूसरी लड़ाई के दौरान उसने फैडरल कोर्ट का आदेश प्राप्त करके एक समान काम के लिए अलग-अलग मज़दूरी देने की प्रथा को गैर-कानूनी घोषित करा दिया। यूनियन ने तेल साफ करने के कारखानों के नीग्रो मजदूरों द्वारा छुट्टी के दिनों में कम्पनी सुपरवाइजरों के घरों पर घास के मैदान में घास काटने की मालिक-मजदूर प्रणाली को भी बंद कर दिया।

सन् १६३० और १६४० के दशक में यूनियन के गोरे कार्यकर्त्ता प्रायः इस बात को लेकर जेल भेज दिये गए कि वे बिना किसी भेदभाव के सभी तेल कर्मचारियों को यूनियन का सदस्य बना रहे थे और जिम क्रो के कर्फ्यू कानूनों का उल्लंघन करते थे जिनमें रात में गोरों के अश्वेत लोगों की बस्ती में जाने पर प्रतिबन्ध लगाया गया था।

धीरे-धीरे नीग्रो लोगों के लिए रोज़गारों की संख्या में वृद्धि हुई। लेकिन काफी अर्से तक नीग्रो तेल-मज़दूरों को तरक्की के कोई अवसर नहीं मिले। गोरे मज़दूरों को काम पर लगाने और उन्हें तरक्की देने की रफ्तार एक थी और नीग्रो कर्मचारियों के लिए दूसरी। थोड़े से धंधों में ही इने-गिने स्थान अश्वेतों के लिए थे, जबकि गोरे अधिकांश अच्छे पदों पर तरक्की कर जाते थे।

दक्षिण के तेल उद्योग की यह भेदभाव की परम्परा ब्यूमांट (टैक्सास) में भी तोड़ी गई है जहां मगनोलिया तेल कंपनी (साकोनी-मौबिल) के मज़दूरों का प्रतिनिधित्व ओ.सी.ए.डब्ल्यू. की स्थानीय यूनियन ४-२४३ और ४-२२६ करती है।

मगनोलिया कारखाने में ओ.सी.ए.डब्लू. के गोरे और नीग्रो कर्मचारियों ने अपनी स्थानीय यूनियनों के बावजूद यूनियन की शिकायतों पर और समाज के कल्याण कार्यों के समर्थन में अच्छी तरह मिलजुल कर काम किया।

दिसम्बर १६५५ में ओ.सी.ए.डब्लू. इंटरनेशनल के प्रतिनिधि ने मगनोलिया की दोनों स्थानीय यूनियनों की सहायता से एक नया समझौता किया जिसके अनुसार चालबाज़ी से भरे वरिष्ठता के चार्टों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया जो नीग्रो लोगों को आगे नहीं बढ़ने देते थे।

नए समझौते के अन्तर्गत नीग्रो और गोरे सामान्य सहायक के रूप में काम आरम्भ करते हैं और जैसे-जैसे स्थान खाली होते हैं योग्यता के अनुसार आगे बढ़ते हैं। छटनी के समय में कारखाने भर में वरिष्ठता का पालन किया जाता है।

दोनों स्थानीय यूनियनों ने नए समझौते को भारी बहुमत से स्वीकार कर लिया। जब कम्पनी ने अपने मशीन विभाग में १०० नई नौकरियाँ निकालीं तो १५ अश्वेत प्रार्थियों ने आवश्यक परिक्षाएँ पास कीं। एक साल के अन्दर ही ६ नीग्रो ऊँचे वेतन वाले पदों पर आगे बढ़ने लगे थे। शैल और मगनोलिया समझौतों ने काम पर लगाने और तरक्की के जो सुधारे हुए नमूने पेश किये, वे समस्त तेल और रासायनिक उद्योगों में फैल गए। इसी तरह के समझौते कैंसास सिटी (मिसौरी) में फिलिप पैट्रोलियम से और पोर्ट आर्थर (टैक्सास) में गल्फ कारपोरेशन के साथ किए गए।

ओ.सी.ए.डब्लू. के नेताओं को मालूम है कि उनके बहुत से सदस्यों का विश्वास है कि भेदभाव सही और उचित है। लेकिन वे यह भी जानते हैं कि सदस्यों में औचित्य की दृढ़ भावना है, जो यदि लोगों को विरोधी नहीं बनाया जाए तो सामने आ जाएगी।

दक्षिण में पले-पोसे यूनियन नेताओं ने पता लगाया है कि कुछ तरीके एकीकरण की रुकावटों को खत्म कर देते हैं, जबकि कुछ दूसरे तरीके विरोध पैदा कर देते हैं। मिसाल के तौर पर धीरे-धीरे और शान्ति के साथ की गई उन्नति को प्रायः वस्तु-स्थिति भांपकर स्वीकार लिया जाता है जबकि भारी शोरगुल से बहुत से भद्रजन भेदभाव की वकालत करने लगते हैं।

जातीय मामलों पर गरमागरम बहस करने से कोई उपयोगी कार्य सिद्ध नहीं होता। अच्छी मिसालें महत्वपूर्ण पाठ पढ़ाती हैं। दक्षिण के तेल मज़दूरों ने बड़ी मुसीबतों से लोहा लिया है और अब उनकी मज़दूरी की दरें देश की सबसे ऊँची दरों में हैं। उनकी स्थानीय यूनियनें मज़बूत और आत्मनिर्भर हैं। वास्तव में वे अक्सर देश के अन्य भागों में कमज़ोर यूनियनों को सहायता देती हैं।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि दक्षिण की यूनियनों के नेतागण इस रिपोर्ट के आरम्भ में दिए इस आदर्श-वाक्य में विश्वास रखते हैं : "उन्हें अपनी यूनियनों को मत तोड़ने दो।"
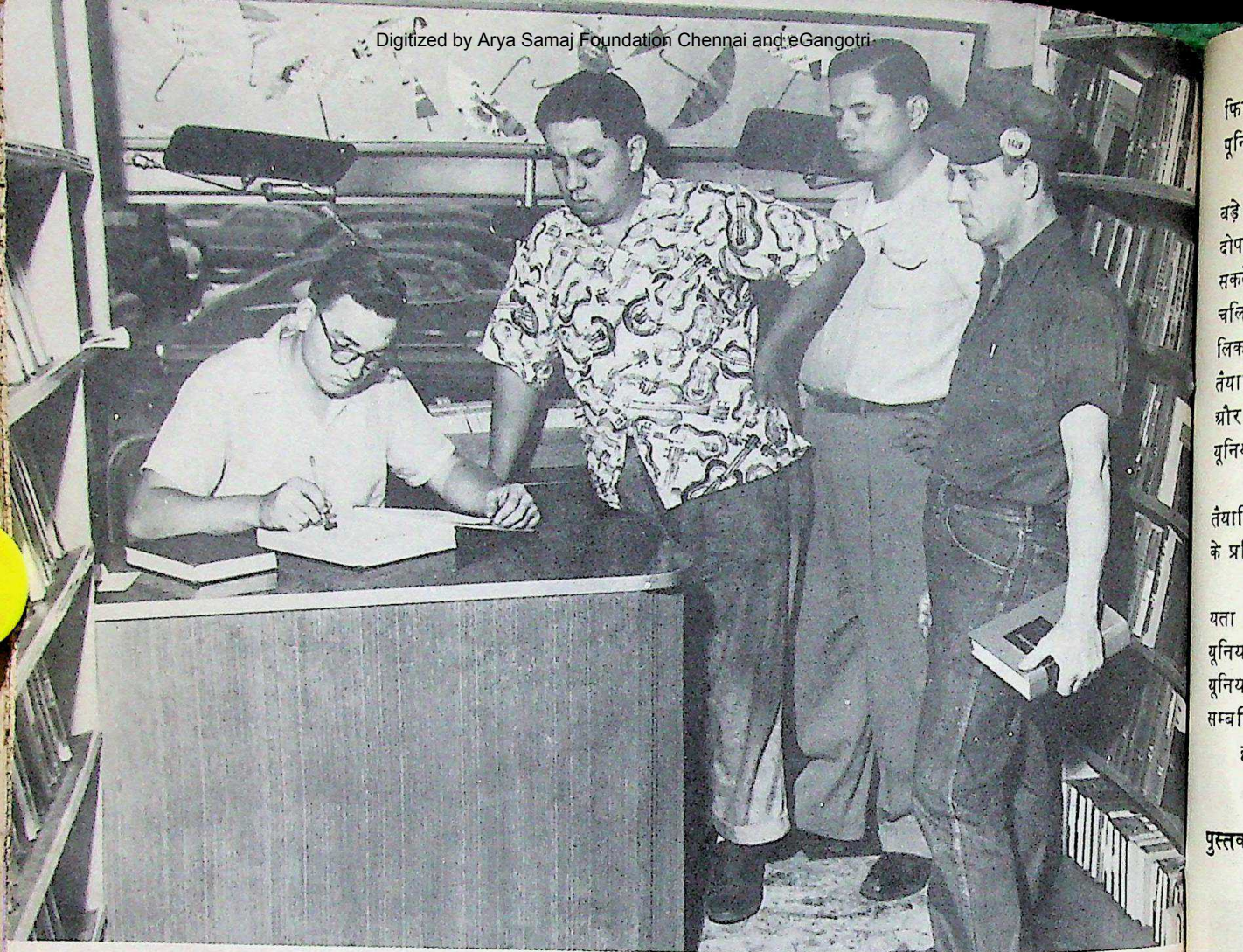
कन्सास नगर के इस्पात कर्मचारी अपने कारखाने में आए एक चलते-फिरते पुस्तकालय से पुस्तकें छांट रहे हैं

मज़दूरों के लिए विशेष पुस्तकालय सेवा

हाल ही में डाल्टन (जार्जिया) में अमरीका की कपड़ा मज़दूर यूनियन की एक छोटी स्थानीय शाखा के एक अधिकारी, मज़दूरों के नेतृत्व के बारे में एक प्रशिक्षण कक्षा में कारखाने के कारिन्दे के कार्यों पर एक फिल्म दिखाना चाहते थे।

यह फिल्म ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. के शिक्षा विभाग ने दी थी जिससे यूनियन सम्बन्धित है। लेकिन स्थानीय यूनियन अपने लिए एक कीमती प्रोजैक्टर नहीं खरीद सकती थी।

अधिकारी ने वहाँ के सार्वजनिक पुस्तकालय में एक अर्जी दी और उसे यह पता चला कि वह १६ मिलीमीटर का फिल्म प्रोजैक्टर बिना किसी किराए के उधार ले सकता है। उसे यह भी पता चला कि पुस्तकालय के पास सामाजिक और जातीय विषयों पर अनेक फिल्में हैं जिनमें सदस्यों की दिलचस्पी हो सकती है और जो स्थानीय यूनियनें अपने शिक्षा-कार्य में बेरोक टोक प्रयोग में ला सकती हैं। इस उदाहरण से उन अनेक विशेष सेवाओं में से एक पर ही प्रकाश पड़ता है जो अमरीका के सार्वजनिक पुस्तकालय आजकल श्रमिक वर्ग के लिए कर रहे हैं।

बहुत से पुस्तकालयों में विशेष मजदूर संगठन विभाग स्थापित किए गए हैं जिनमें मज़दूर आन्दोलन के बारे में उनके द्वारा तैयार की गई सामग्री होती है। मांग करने पर चलती-

फिरती प्रदर्शनियों की व्यवस्था की जाती है; जिनमें मजदूर यूनियनों से सम्बन्धित साहित्य रहता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में चलते-फिरते पुस्तकालय-वाहन सीधे बड़े-बड़े कारखानों में भेजे जाते हैं जिससे यूनियन सदस्य दोपहर के विश्राम के समय या छुट्टी हो जाने पर पुस्तकें चुन सकते हैं। पुस्तकालयाध्यक्ष, मज़दूर-इतिहास, कारखानों में स्वयं चलित मशीनों के प्रयोग और यूनियन सदस्यों के लिए तात्कालिक दिलचस्पी के दूसरे विषयों पर पठनीय सामग्री की सूची तैयार करते हैं। वे सदस्यों को अपनी सेवाओं से परिचित करने और उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं पर विचार करने के लिए यूनियन की सभाओं में जाते हैं।

वे अपने अनुसन्धान कार्य तथा सामूहिक सौदेबाज़ी की तैयारियों के सम्बन्ध में उपलब्ध आर्थिक सामग्री पर यूनियन के प्रतिनिधि-कर्मचारियों को सलाह देते हैं।

वे यूनियन को समाज सेवा कार्यक्रमों के विकास में सहायता देते हैं। मज़दूर दिवस तथा अन्य विशेष अवसरों पर यूनियन के प्रदर्शनों के लिए पुस्तकालयों में जगह देते हैं और यूनियन के समाचारपत्रों में प्रकाशन के लिए मज़दूरों से सम्बन्धित नई पुस्तकों पर समालोचनाएं लिखते हैं।

हाल के वर्षों में अधिकाधिक सार्वजनिक पुस्तकालयों ने अपने आकार-प्रकार तथा सुविधाओं के अनुसार अनेक प्रकार की मज़दूर सेवाओं का विकास करने का प्रयत्न किया है।

इस विकास के लिए अधिकांश श्रेय मज़दूर वर्गों को पुस्तकालय की सेवा मुहैया करने वाली संयुक्त समिति को है। इसमें ११ पुस्तकालयाध्यक्ष होते हैं, जो सब के सब अमरीकी लाइब्रेरी एसोसिएशन के सदस्य हैं और ए.एफ.एल.-सी.आई.ओ. द्वारा नियुक्त ५ मज़दूर-प्रतिनिधि भी।

इस समिति का उद्देश्य पुस्तकालयों और यूनियनों के बीच अधिक सहयोग और समझ बूझ की भावना पैदा करना है। इस उद्देश्य से वह एक पाक्षिक समाचार-चिट्ठी प्रकाशित करती है जिसमें पुस्तकालयों या मज़दूरों द्वारा की गई सहयोग की कार्रवाइयों का विवरण होता है और मज़दूर समस्याओं पर लेख होते हैं।

सन् १९५६ में प्रकाशित एक समाचार-चिट्ठी, जिसमें हाल में ही संशोधन किया गया है और जिसे नया रूप दिया गया है, मज़दूर दलों के लिए सामाजिक पुस्तकालय सेवा के विकास में निर्देशिका के रूप में है। इसमें उस पुस्तकालयाध्यक्ष के लिए विस्तृत और व्यावहारिक सुझाव दिए गए हैं जो अपने समाज में यूनियनों के लिए इन सेवाओं का विकास करना चाहता हों।

* * *

पुस्तकालयाध्यक्ष सामूहिक सोदेबाज़ी से सम्बन्धित आर्थिक सामग्री पर यूनियन-प्रतिनिधियों को सलाह दे रहा है

श्रमिकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम

सभी देशों में मज़दूरों के प्रशिक्षण और पुनः प्रशिक्षण की समस्या बड़ी महत्वपूर्ण समस्या है क्योंकि मज़दूरों की कुशलता औद्योगिक उत्पादन के स्वरूप और स्तर तथा औद्योगिक विकास की गति में भारी योग देती है। औद्योगिक दृष्टि से उन्नत देशों के अधिकांश संस्थानों में परिवर्तनशील बाज़ार की मांगों को पूरा करने के लिए उत्पादित वस्तुओं, सामग्री और तरीकों में बराबर परिवर्तन होते रहते हैं, सामग्री तैयार करने के तरीकों में सुधार होता है, नई अधिक जटिल मशीनें लगाई जाती हैं और नये संयंत्र स्थापित किए जाते हैं। विकासवान अर्थ-व्यवस्था में प्रशिक्षण की समस्या कभी खत्म ही नहीं होती क्योंकि सभी प्रकार के उत्पादन कार्यों में श्रम सम्बन्धी आवश्यकताएं लगातार बदलती रहती हैं।

जैसे-जैसे औद्योगिक तरीके बदलते हैं वैसे-वैसे श्रमिक वर्ग का स्वरूप भी बराबर बदलता रहता है —श्रमिक-बाज़ार में नए मज़दूर आते हैं, दूसरे उसे छोड़ जाते हैं। बहुत से मज़दूर एक काम से दूसरे काम पर चले जाते हैं, अक्सर यह होता है कि वे ऐसे धन्धों में जाते हैं जिन के बारे में उन्हें पूरी जानकारी नहीं होती, विशेषकर उस समय जबकि विशेष कुशलता वाले मज़दूर श्रमिक-बाज़ार में नहीं मिलते।

६ मास के प्रशिक्षण के पश्चात्, इस भूतपूर्व डाकिया ने एक कारखाने में कण्ट्रोल आपरेटर की योग्यता हासिल कर ली है।

अमरीका में मज़दूरों को तरह-तरह के कार्यों के लिए आवश्यक प्रशिक्षण देने के लिए विभिन्न कार्यक्रम तैयार किए गए हैं। मिसाल के तौर पर अत्यधिक योग्यता वाले कारीगरों के कामों के लिए प्रक्रियाओं के सामान्य ज्ञान से कहीं अधिक जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। उसमें स्वतंत्र रूप से निर्णय करने की क्षमता, उच्च किस्म की दक्षता और कुछ मामलों में मूल्यवान उत्पादनों या उपकरण के लिए जिम्मेदारी वहन करने की आवश्यकता भी होती है। शिक्षुता प्रशिक्षण जैसे दीर्घकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्देश्य ऐसे कुशल शिल्पी तैयार करना है जिन्हें एक विशिष्ट शिल्प का पूर्ण आधारभूत ज्ञान हो और जो उसे अपना जीवन भर का कार्य बनाने की क्षमता रखते हों।

अधिकांश मज़दूरों को अपने काम का प्रशिक्षण, कम औपचारिक अल्पकालीन कार्यक्रम द्वारा या कारखाने के अंदर ही काम करके मिल जाता है। इसका उद्देश्य मज़दूरों को केवल विशेष प्रकार के धन्धे सिखाना ही होता है। मज़दूर अन्य लोगों को काम करते हुए देखकर या काम करते हुए प्रशिक्षण प्राप्त करने के कार्य में पूर्व-निर्धारित विविधता ला कर अनौपचारिक रूप से भी विविध दक्षताएं प्राप्त कर सकते हैं।

प्रशिक्षण में यह विविधता लाने का उद्देश्य उत्पादन के क्षेत्र में या संयंत्र विभाग में मज़दूरों को अन्य कार्यों के लिए उपलब्ध करना है।

पब्लिक स्कूल, विशेष वाणिज्य या व्यवसाय के स्कूल, रात्रि-स्कूल, प्राविधिक संस्थान और सशस्त्र सेनाओं के प्रशिक्षण केन्द्र अक्सर विशेष काम या धन्धों में प्रवेश करने की इच्छा रखने वाले युवा मज़दूरों को मूल्यवान व्यावसायिक प्रशिक्षण देते हैं। इस प्रकार का प्रशिक्षण उद्योग या यूनियन की सहायता से या उनकी सहायता के बिना दिया जा सकता है। कुछ भी हो वे आम तौर पर श्रमिकों या प्रबन्धकों के नियंत्रण से अलग काम करते हैं और इस कारण उन पर इस रिपोर्ट में कुछ भी नहीं लिखा जा रहा है।

शिक्षुक प्रशिक्षण

कारीगरी के धन्धों में नौकरी पाने का सबसे सीधा रास्ता शिक्षुक-प्रशिक्षण है और इसमें ऐसे कोई भी विलम्ब या ऐसी

नल आदि का काम करने वालों के लिए कार्य-क्षमता सम्बन्धी परीक्षाओं में वाल्व, कण्ट्रोल तथा इस प्रकार की दूसरी चीज़ें जोड़ना शामिल है। यहां एक परीक्षार्थी कण्ट्रोल वाल्व जोड़ रहा है।

अनिश्चितताएं नहीं आतीं जो योंही बिना सोचे-समझे कोई धन्धा चुन लेने में आती हैं।

अमरीका में औपचारिक शिक्षुक-प्रशिक्षण का निर्देशन अमरीकी श्रम मंत्रालय का शिक्षुता प्रशिक्षण ब्यूरो करता है। इस ब्यूरो का मुख्य काम उद्योगों में शिक्षुता और प्रशिक्षण के ठोस कार्यक्रमों की स्थापना को प्रोत्साहन देना तथा इन कार्यक्रमों के संचालन में प्राविधिक—सहायता और प्रशिक्षण—सहायता साधनों और सामग्री की व्यवस्था करना है। यह वास्तविक प्रशिक्षण प्रदान नहीं करता। दूसरी ओर ब्यूरो के काम का निर्देशन शिक्षुता प्रणाली संबंधी एक संघीय समिति करती है। जिसमें प्रबंधकों, श्रमिकों और व्यावसायिक शिक्षा क्षेत्र के नेता शामिल होते हैं। ब्यूरो दफ्तर से बाहर काम करने वाले कर्मचारियों की मार्फत, जिनके दफ्तर लगभग १५० शहरों में हैं उद्योग को शिक्षुता प्रणाली तथा अन्य प्रशिक्षण कार्यक्रमों की स्थापना में मदद करता है। २९ राज्यों की सरकारी संस्थाएं इसी प्रकार के उद्देश्यों को लेकर काम कर रही हैं।

जैसा कि आधुनिक उद्योगों में होता है, शिक्षुता प्रणाली प्रशिक्षण की कामकाजी प्रणाली है जिसमें उद्योग में प्रवेश करने वाला युवा मज़दूर दक्षता की आवश्यकता वाले धन्धों में काम के व्यावहारिक और सैद्धान्तिक पहलुओं पर काम करते हुए और काम के समय से अतिरिक्त समय में शिक्षा तथा अनुभव प्राप्त करता है। प्रत्येक व्यवसाय के अनुसार प्रशिक्षण काल में भी परिवर्तन होता है। लेकिन आम तौर पर यह प्रशिक्षण काल कम से कम ३-४ साल का होता है। प्रशिक्षण कार्यों की योजना उनकी बढ़ती हुई कठिनाइयों की भीषणता को देखकर ही बनायी जाती है जिससे कि अपने शिक्षुता-काल के अन्त तक मज़दूर अपने धन्धे के सभी कामों से
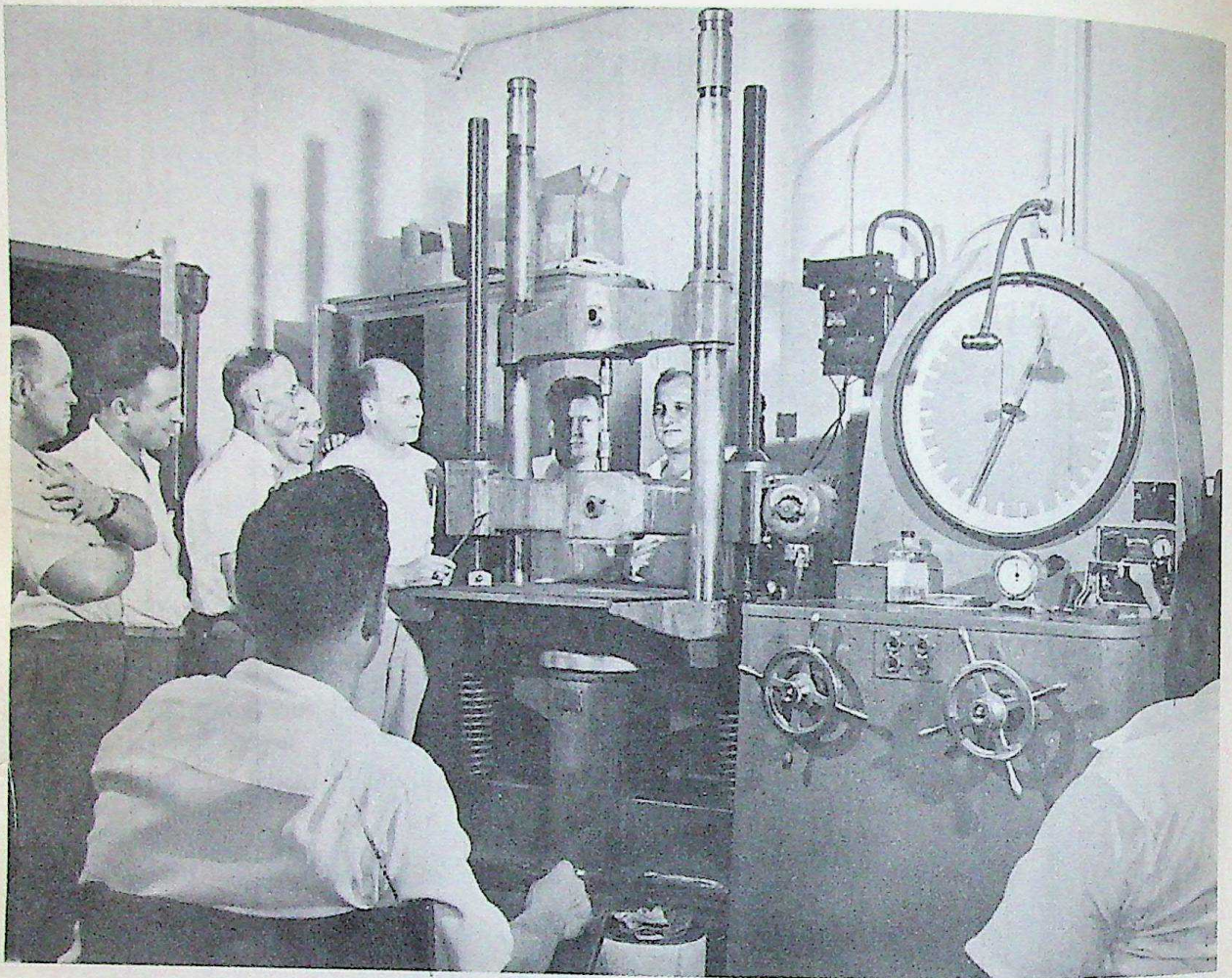
इस्पात कर्मचारियों के ग्रीष्म प्रतिष्ठान कार्यक्रम में मशीन की कार्यप्रणाली का अध्ययन किया जा रहा है

अवगत हो जायेगा। अच्छे शिक्षुता-प्रशिक्षण कार्यक्रम की आधारभूत बातों में जोकि शिक्षुता प्रणाली संबंधी संघीय समिति ने निर्धारित की है, निम्न बातों की व्यवस्था करना शामिल है :

शिक्षुता आरम्भ करने की आयु १६ साल से कम न हो।

उन कार्य-प्रणालियों की सूची तैयार करना जिनमें एक शिक्षुक को काम करते हुए प्रशिक्षण और अनुभव प्रदान किया जाता है।

संगठित शिक्षण व्यवस्था, जिसका उद्देश्य शिक्षुक को उसके धन्धे से संबंधित टेक्निकल विषयों पर जानकारी देना हो।

उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मजदूरी की तालिका।

काम पर होते हुए प्रशिक्षण की उचित देखरेख, जिसके साथ शिक्षुकों को प्रशिक्षित करने के पर्याप्त साधन हों।

अपने काम और उससे संबंधित शिक्षा इन दोनों चीज़ों में शिक्षुक की प्रगति का समय-समय पर मूल्यांकन तथा उपयुक्त रिकार्डों का रखना।

मालिक-मज़दूर सहयोग।

सफलतापूर्वक काम की समाप्ति को मान्यता।

स्वीकृत कार्यक्रमों को सामान्यतः ब्यूरो आव अप्रैन्टिस-शिप एण्ड ट्रेनिंग में स्वेच्छा से पंजीकरण की प्रक्रिया द्वारा सार्वजनिक मान्यता प्रदान की जाती है।

शिक्षुक स्वयं भी इस पंजीकरण कार्यक्रम द्वारा मान्यता प्राप्त करते हैं।

लेकिन सभी कार्यक्रमों का पंजीकरण नहीं होता। बहुत से अच्छे कार्यक्रम बिना किसी मान्यता के ही चलते हैं।

कोई काम सीखने तथा उद्योग में प्रवेश करने के एक तरीके के रूप में शिक्षुता प्रणाली के लाभों के बावजूद श्रम-बाज़ार में आने वाले मज़दूर एक निश्चित धन्धे या व्यवसाय में दक्ष होने के लिये आर्थिक दृष्टि से तीन या अधिक वर्ष का

एक शिक्षुक रेल के इंजन के ऐक्सल को, जिसे वह खराद पर घुमा रहा है, नापना सीख रहा है

प्रशिक्षण प्राप्त करने में प्रायः असमर्थ होते हैं, क्योंकि उन्हें अन्य नौकरियों के मुकाबले कम मजदूरी मिलती है। जो लोग प्रशिक्षण कार्यक्रम में हिस्सा लेते हैं उनमें से बहुत से कार्य-क्रम पूरा होने से पहले ही खिसक जाते हैं। अधिकांश मामलों में इसका कारण उनकी अधिक आय की आवश्यकता होती है। अक्सर शिक्षुक दूसरे कारखानों में चले जाते हैं और वहां उन्हें एकदम दिहाड़िये का वेतन मिल जाता है, विशेषकर तब, जब कि वे अपने काम की अच्छी जानकारी प्राप्त करने के लिये प्रशिक्षण में बहुत काफी प्रगति कर लेते हैं। दूसरों का अस्थायी तौर पर काम छुटा दिया जाता है, या उन्हें छुट्टी दे दी जाती है और वे अपनी शिक्षुता पुनः आरम्भ नहीं करते।

सन् १९५६ के अन्त में शिक्षुता कार्यक्रम में १,८८,१३७ सक्रिय शिक्षुक थे जो 'ब्यूरो ऑव अप्रेन्टिसशिप ऐण्ड ट्रेनिंग' में पंजीकृत थे। इनमें से १,१२,६०० निर्माण कार्य सम्बन्धी रोजगारों में, १४,५०० मुद्रण उद्योगों में, ३७,१०० धातु उद्योगों में और २३,९०० कई और दूसरे व्यवसायों और धन्धों में थे। इन शिक्षुकों की औसत आयु २५ वर्ष थी। इनमें से बहुत से शादी-शुदा थे और उन्हें अपने परिवारों का भी भरण-पोषण करना पड़ता था। ४८ में से केवल १२ राज्यों में ही कुल शिक्षुकों की दो-तिहाई संख्या थी। इन १२ राज्यों में से ५ राज्यों के ४० प्रतिशत शिक्षुक थे।

पंजीकृत शिक्षुक कार्यक्रमों के अन्तर्गत जो शिक्षुक आते हैं उनकी संख्या प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले शिक्षुकों की कुल संख्या से काफी कम है। कुछ भिन्न-भिन्न किस्म के गैर-पंजी-कृत प्रशिक्षण कार्यक्रमों के अन्तर्गत, जिनकी ठीक-ठीक संख्या मालूम नहीं है, लगभग औपचारिक शिक्षुता-प्रशिक्षण देने की भी व्यवस्था है।

राष्ट्रीय, राज्यीय और स्थानीय स्तरों पर समस्त शिक्षुता-प्रणाली प्रबन्धकों व मजदूरों, उद्योग और सरकार, कारखाना

और स्कूल के बीच स्वेच्छा से किए गए सहयोग पर आधारित है। यह सहयोग राष्ट्रीय समितियों में परिलक्षित होता है जो समितियाँ राष्ट्रीय मालिक संघों और मज़दूर यूनियनों द्वारा उनके अपने व्यवसायों और उद्योगों में प्रशिक्षण के विकास तथा सुधार के तरीके निकालने के लिये स्थापित की जाती हैं।

शिक्षुकों का वास्तविक कार्य-नियोजन और प्रशिक्षण चूंकि स्थानीय स्तर पर होता है इसलिए राष्ट्रीय तथा राज्यीय शिक्षुता-दलों का काम स्थानीय मालिकों और मज़दूरों में शिक्षुता-कार्यक्रमों के प्रति दिलचस्पी बढ़ाना है। अधिकांश शिक्षुता-कार्यक्रम निजी संस्थाओं में चलाए जाते हैं फिर भी सन् १९५८ में लगभग ६,००० संयुक्त शिक्षा समितियां समाज-स्तर तथा क्षेत्रीय-स्तर पर काम कर रही थीं।

रुचि-परीक्षाओं का भी अब देश में सामान्य रूप से प्रयोग होता है। मिसाल के तौर पर न्यूयार्क राज्य एक परीक्षा-कार्यक्रम का संचालन करता है जिसका उद्देश्य इस बात का पक्का पता चलाना होता है कि काम शिक्षुक के बिल्कुल अनुरूप है या नहीं। अमरीका के नौकरी-सुरक्षा ब्यूरो ने भी सामान्य प्रयोग के लिए कई परीक्षाएं निश्चित की हैं।

अधिकांश परीक्षा-कार्यक्रमों के अंतर्गत प्रार्थियों का चुनाव पहले उनकी शारीरिक योग्यताओं, पृष्ठभूमि, चरित्र, रुचियों और वर्तमान तथा भावी वित्तीय-स्थिति के आधार पर होती है। अंतिम बात यह तय करने में सहायता देती है कि कोई शिक्षुक कार्यक्रम पूरा करने में समर्थ हो सकेगा या नहीं। यदि कोई प्रार्थी इस प्रथम परीक्षा से सफलतापूर्वक निकल जाता है तो फिर उसकी बुद्धि, गणित ज्ञान, स्थान, और शारीरिक श्रम-सम्बन्धी योग्यताओं की परीक्षा ली जाती है। ये सब परीक्षाएं विशेष व्यवसायों को दिमाग में रखकर ली जाती हैं और लागू की जाती हैं।

जिन प्रतिमानों के आधार पर शिक्षकों को नौकरी दी जाती है, वे प्रायः मालिकों और मज़दूरों के बीच हुए सामूहिक सौदेबाज़ी के समझौतों में लिखे रहते हैं।

शिक्षुता-कार्यक्रमों के निर्देशन के लिए भी प्रायः अलग-अलग समझौते किए जाते हैं जो नियमित सामूहिक सौदेबाज़ी के समझौतों से भिन्न होते हैं। ये प्रायः आम समझौतों के पूरक होते हैं और संयुक्त समिति को कार्यक्रम चलाने के लिए विस्तृत निर्देश देते हैं।

फिलाडेलफिया में 'जनरल बिल्डिंग कांट्रैक्टर्स ऐसोसिएशन' और बढ़ई तथा ज्वाइनरों की यूनियन के बीच इस समय जो समझौता है उससे यह पता चलता है कि शिक्षुक प्रशिक्षण-कार्यक्रमों के प्रतिमानों को किस प्रकार तैयार किया जाता है। इस समझौते में कहा गया कि शिक्षुक १६ से २४ वर्ष के बीच के होने चाहिएं, उनका नैतिक चरित्र अच्छा होना चाहिए, वे अंग्रेजी बोल, पढ़ और लिख सकें तथा व्यवसाय से संबंधित शारीरिक श्रम करने योग्य हों। ४ साल तक लगातार नौकरी पर बने रहना शिक्षुता की अवधि निश्चित की गई है, इसके साथ ही उसे व्यवसाय के सम्बन्ध में प्रतिवर्ष १४४ घंटे कक्षा में पढ़ना पड़ेगा। भिन्न-भिन्न काम के अनुभव, क्षमता, रुचि, नौकरी की शर्तें आदि अन्य आवश्यकताएं शिक्षुक समझौते द्वारा निर्धारित की जाती हैं। शिक्षुकों को आरम्भ में दिहाड़िए से एक तिहाई वेतन मिलता है। शिक्षुता-अवधि की दूसरी छमाही पूरी होने पर उसमें ४० प्रतिशत तक की वृद्धि हो जाती है। इसके बाद मज़दूरी हर ६ महीने पर ८ प्रतिशत बढ़ती है और आठवीं छमाही में उसे दिहाड़िए की मज़दूरी का ८८ प्रतिशत मिलता है। निश्चित अवधि में कितने शिक्षुक नौकरी पर लगाने हैं, इसका निर्णय संयुक्त शिक्षुता-समिति करती है। इस समिति में ऐसोसिएशन और यूनियन के ३-३ सदस्य होते हैं। यह समिति शिक्षुता-कार्यक्रम की सभी छोटी-मोटी बातों का संचालन करती है। दूसरे समझौते में शिक्षुता की जो शर्तें आदि होती हैं, वे उस विशेष कारखाने या क्षेत्र में पाई जाने वाली परिस्थितियों के अनुसार होती हैं लेकिन वे आमतौर पर राष्ट्रीय शिक्षुता कार्यक्रम द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्दर ही आती हैं।

दूसरे समझौतों में शिक्षुता की जो शर्तें आदि होती हैं, वे उस विशेष कारखाने या क्षेत्र में पाई जाने वाली परिस्थितियों के अनुसार होती हैं लेकिन वे आमतौर पर राष्ट्रीय शिक्षुता कार्यक्रम द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्दर ही आती हैं। मिसाल के तौर पर बोइंग एरोप्लेन कम्पनी और इंटरनैशनल एसोसिएशन ऑव मैकेनिस्ट के बीच हुए १९५७ के एक शिक्षुता-समझौता में १.३५५ डालर प्रति घंटे की प्रारंभिक मज़दूरी के साथ-साथ ६ मास (१,००० घण्टे) के बाद मज़दूरी-वृद्धि की व्यवस्था है। चार साल के अन्त में मज़दूरी की दर २.३५५ डालर प्रति घण्टा है। ५ साल के शिक्षुकों को १०वीं छमाही की अवधि के अंत में मज़दूरी २.६०५ डालर प्रति घण्टा मिलती है। अधिकांश उद्योगों में शिक्षुता की अवधि उस व्यवसाय में दक्ष होने के लिए आवश्यक समय के अनुसार तय की जाती है। (अक्सर यह अवधि ३ या ४ साल होती है) कार्यक्रम के प्रत्येक दौर पर कितना-कितना समय लगाना है, यह भी निर्धारित किया जा सकता है। मिसाल के तौर पर हर मशीन पर और कक्षा में कितने घण्टे समय व्यतीत किया जाना चाहिए। हर कदम पर मज़दूरों की वेतन की राशि और उसमें वृद्धि की दर हमेशा लगभग निश्चित होती है।

(शेष आगामी अंक में)

मुद्रक : तेज प्रेस, दिल्ली।

सावधानी के साथ बनाये गये प्रशिक्षण कार्यक्रम कर्मचारियों को इस योग्य बनाते हैं कि वे नई दक्षताओं का विकास कर सकें। इस चित्र से ज्ञात होता है कि उद्योग एवं सरकार के एक सम्मिलित कार्यक्रम के अन्तर्गत कोयला - खदान कर्मचारियों को बढ़ईगीरी का विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है।

भारत की प्राचीन कलाकृति–१

बोधिसत्व की प्रस्तर प्रतिमा (दूसरी शताब्दी)—यह मूर्ति बोस्टन, (मैसाच्युसेट्स) के ललित कला संग्रहालय में संरक्षित है।

रजि० नं० डी-१०२४

अमरीका में
श्रम व्यवस्था

जुलाई १९५९

शान्ति के लिए सम्मिलित प्रयास [देखिये पृष्ठ २३]
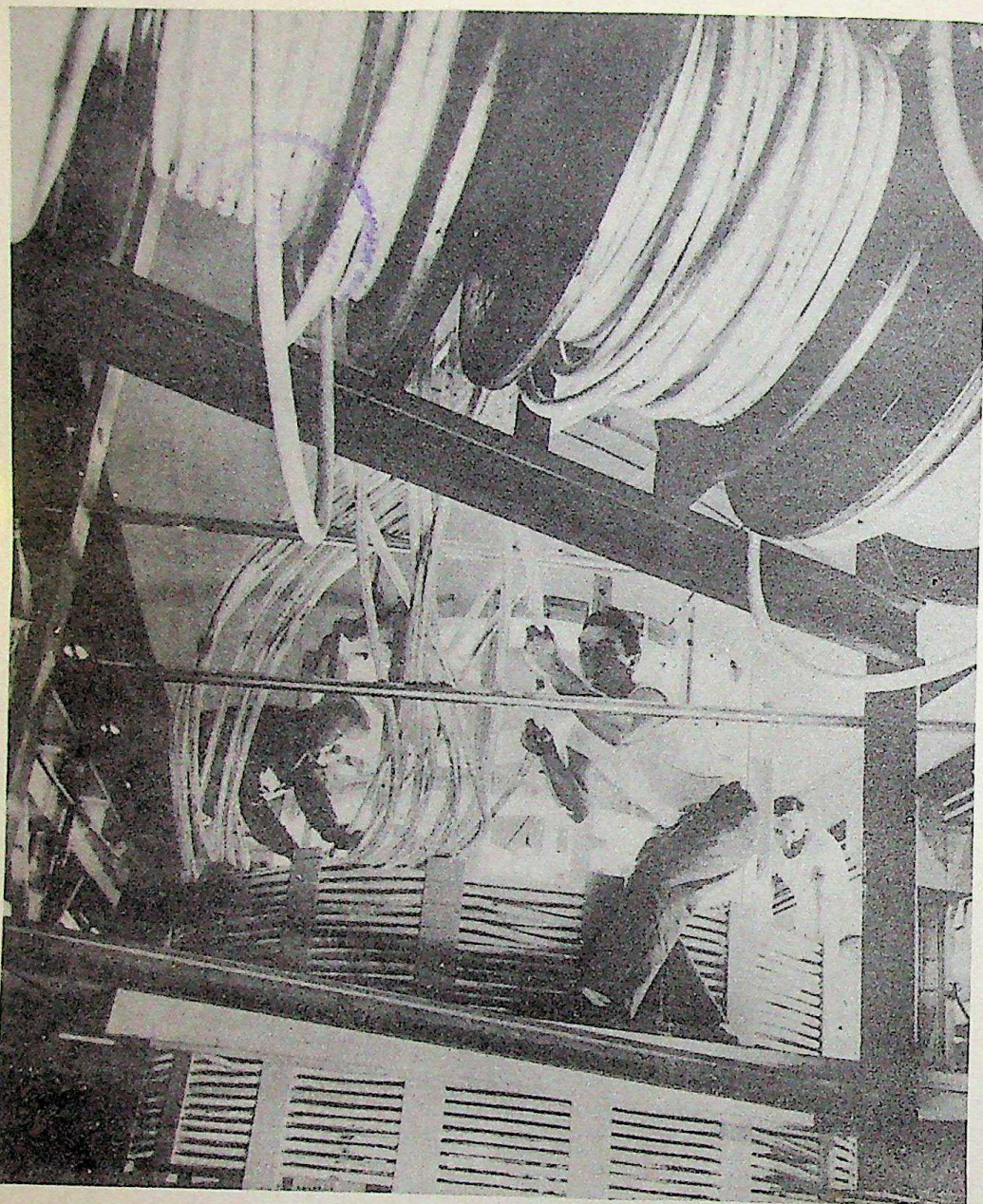
अन्तरिक्ष गवेषणा के कार्य में मज़दूरों का योग—मनुष्य को बाह्य अन्तरिक्ष में स्थापित करने के लम्बे कार्यक्रम के अन्तर्गत, अमरीकी वैज्ञानिकों द्वारा निर्मित बहुत तरह के राकेट और उपग्रह १९५९ में छोड़े जा रहे हैं। यह राष्ट्रव्यापी प्रयत्न केवल वैज्ञानिकों, इंजिनियरों, डिजाइनरों और टेक्निशियनों के भरोसे ही नहीं चलता, इसमें हज़ारों सुदक्ष मजदूरों का योग भी होता है। चित्र में : श्रमिक आज तक की सबसे बड़ी इण्डक्टेन्स कॉयल को जोड़ रहे हैं जिसके द्वारा अमरीकी अन्तरिक्ष-यानों की जांच-परख की जाती है।

वैस्टिंगहाउस इलेक्ट्रिक कारपोरेशन के सौजन्य से।

सम्पादक का पत्र

अमरीकी दूतावास,
नई दिल्ली, भारत,
१ जुलाई, १९५९

प्रिय मित्रो,

उद्योगों का विस्तार करने वाले, भारत जैसे सभी देशों में, टेक्निशियनों को विविध प्रकार के कौशलों का शीघ्र प्रशिक्षण देने पर उचित ही बल दिया जा रहा है। क्योंकि यदि कम लागत में वस्तुओं का उत्पादन करना है, मजदूरों को लाभप्रद रोज़गार देना है और उपभोक्ताओं को अधिक मात्रा में दैनिक उपभोग की आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त करानी हैं तो ऐसे टेक्निशियनों का होना बहुत ही आवश्यक है।

फिर भी तेज़ी से बढ़ती हुई औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था में एक खतरा है, जैसा कि हमें अमरीका में अनुभव से पता चला है। वह खतरा यह है कि वैज्ञानिक टेक्निशियनों के प्रशिक्षण की अवस्था पर तो बहुत अधिक बल दे दिया जाता है परन्तु उसके साथ-साथ ऐसे विशेषज्ञ तैयार करने की ओर ध्यान नहीं दिया जाता जो निजी और सरकारी दोनों क्षेत्रों में, श्रम-संगठनों के साथ सम्बन्ध रखने के कार्य में प्रबन्धकों का प्रतिनिधित्व कर सकें। भारत सरकार ने इस स्वाभाविक प्रवृत्ति का अंशतः प्रतिकार करने के लिए पांच सौ या अधिक कर्मचारियों वाली प्रत्येक फर्म के लिए एक या अधिक श्रम-कल्याण अधिकारी की नियुक्ति अनिवार्य कर दी है। इसके अतिरिक्त, भारत के प्रगतिशील व्यवसायियों ने ऐसे साधनों की व्यवस्था की है जिनसे उनके प्रबन्धक और व्यावसायिक कर्मचारी औद्योगिक सम्बन्धों का विशेष प्रशिक्षण पा सकें।

अमरीका में हमारा यह अनुभव रहा है कि औद्योगिक-सम्बन्धों के प्रबन्ध-विशेषज्ञों को केवल शिक्षित और कुशल ही नहीं होना चाहिए बल्कि उन्हें कम्पनी के अधिकारी-मण्डल में महत्वपूर्ण और शक्तिशाली पद भी मिलना चाहिए। अन्यथा वे विशेषज्ञ—चाहे आप उन्हें कर्मचारियों के प्रबन्धक का नाम दीजिये, अथवा श्रम-कल्याण अधिकारी का—प्रबन्ध-विभाग के शक्तिहीन प्रतिनिधि मात्र रह जाते हैं और इसलिए वे श्रमिकों के साथ सौदा करने में असफल भी सिद्ध होते हैं।

अमरीका में कर्मचारी-विशेषज्ञों को वास्तविक अधिकार दिए जाते हैं। बहुत सी अमरीकी कम्पनियों में कोई उपाध्यक्ष या डिप्टी मैनेजर औद्योगिक-सम्बन्धों का विशेषज्ञ होता है और उसे प्रायः कम्पनी के उस विभाग का काम सौंपा जाता है, जो मजदूरों की भर्ती, प्रशिक्षण और उनके सामान्य कल्याण के मामलों को संभालता है। पुराने ज़माने में ये अधिकारी मज़दूर-यूनियन के मज़दूरों को संगठित करने के प्रयत्न को व्यर्थ करने में निपुण हुआ करते थे। किंतु आज संगठित श्रमिक बहुत अनुभव और अनेक वर्षों तक सामूहिक सौदेबाज़ी से लाभ उठाने के फलस्वरूप इन अधिकारियों को प्रबन्ध-विभाग के सही प्रतिनिधि तथा मानवीय सम्बन्धों की कला में निपुण व्यक्ति के रूप में देखते हैं।

भवदीय—

Daniel S. Burgess

श्रम-सहचारी

वर्ष १२, अंक ७ | अमरीकी श्रम-व्यवस्था | १ जुलाई, १९५९

विषय - सूची

एक प्रति १० नए पैसे — वार्षिक मूल्य १ रुपया

सम्पादक तथा प्रकाशक : डेविड एस. बर्जेस, श्रम-सहचारी, अमरीकी दूतावास, नई दिल्ली
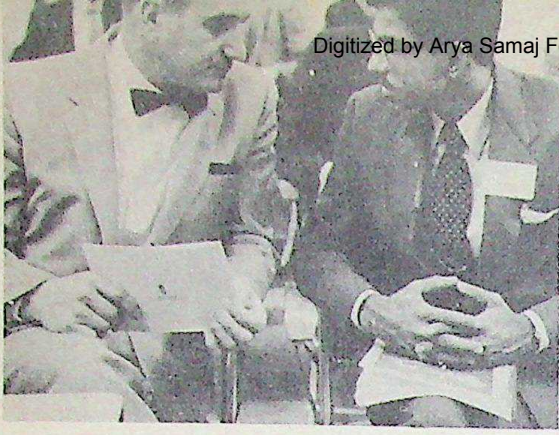
इनलैंड में भारत के

भारत के पन्द्रह तरुण स्नातक इन्जिनियर
'इण्डियाना हार्बर वर्क्स' में
अपनी एक वर्ष की शिक्षा आरम्भ कर रहे हैं

प्रशिक्षार्थी दल के पहले दिन इनलैंड पहुँचने पर 'इंडियाना हार्बर वर्क्स' के डीन मार्शल से बी० भास्करन की भेंट

एस० सुब्रमण्यन गैरी शहर में कपड़े खरीदते समय कारीगरों की टोपी पहन कर देख रहे हैं

त इस्पात प्रशिक्षार्थियों का स्वागत

इनलैंड के 'इण्डियाना हार्बर वर्क्स' में इस्पात का काम करने वाले पंद्रह आदमी अपने १६,००० सहकर्मियों से मुख्यतः अलग दिखाई देते हैं क्योंकि उनके सफेद टोपों पर उनके विभाग के नाम के स्थान पर **'इन्स्टैप'** शब्द अंकित है। जो "भारतीय इस्पात प्रशिक्षण और शैक्षिक कार्यक्रम" का सूचक है।

ये पन्द्रह नौजवान, २४ से २८ वर्ष की आयु के स्नातक इन्जिनियर हैं। ये लोग अपना अगला वर्ष इनलैंड में इस्पात बनाना सीखने में लगाएंगे। इसके बाद वे भारत लौट जाएंगे और वहाँ बनाई जा रही तीन नई इस्पात मिलों में सुपरवाइज़र हो जाएंगे। ये लोग तीन सौ छात्रों के उस दल में से हैं जो इनलैंड और ६ अन्य अमरीकी इस्पात कम्पनियों में इस्पात बनाने की विधियां सीख रहे हैं। इस कार्यक्रम का खर्च फोर्ड प्रतिष्ठान के १५ लाख डालर के एक अनुदान से चल रहा है।

'इन्स्टैप' एक बहुत ही निराले ढंग का अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय कार्यक्रम है। इसका आरम्भ इस बात से हुआ था कि भारत को कृषि का उत्पादन बढ़ाने के लिए आवश्यक उपकरणों का प्रबन्ध करना था और इसके लिए अपनी अर्थ-व्यवस्था में उद्योगों का प्रसार करना उसके लिए बहुत आवश्यक था। इससे एक गम्भीर परन्तु बड़ी पुरानी समस्या—भूख की समस्या—को हल होने में मदद मिलेगी।

अब तक इसमें सबसे बड़ी रुकावट यही थी कि भारत का इस्पात-उत्पादन अपर्याप्त था। अब वह अपना इस्पात-उत्पादन १९६१ तक तिगुना करने की कोशिश कर रहा है। इसका अर्थ यह है कि वह १५,००,००० टन के वर्तमान वार्षिक उत्पादन को ५५,००,००० टन तक बढ़ा सकेगा।

इस बहुत बड़े और कठिन कार्य को पूरा करने के लिए आवश्यक सामान भारत के पास पहले से मौजूद है—उसके पास लौह खनिज, चूने के पत्थर, कोयले और मैंगनीज़ के बहुत बड़े भण्डार हैं। शीघ्र ही वहां वे मिलें भी खड़ी हो जाएंगी, जिन्हें कई विदेशी फर्में वहां बना रही हैं, फिर भी उसके पास एक कीमती चीज़ की कमी रहेगी, अर्थात् पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित कर्मचारियों की। यों तो भारत में प्रतिवर्ष ३६०० इन्जीनियर प्राविधिक स्कूलों से स्नातक हो कर निकलते हैं पर उन्हें कारखाने में काम का प्रशिक्षण पाने का अवसर प्रायः नहीं मिलता, क्योंकि भारत में उद्योगों की कमी है। इसी समस्या को हल करने के लिए सोचा गया एक उपाय है—**'इन्स्टैप।'**

भारत ने ब्रिटेन से आज़ादी प्राप्त करने के बाद लोकतन्त्रीय शासन प्रणाली द्वारा आगे बढ़ते हुए, भीषण आर्थिक और सामाजिक समस्याओं के बावजूद, इतनी अधिक प्रगति की है कि विश्वास नहीं होता। उसे सब जगह स्वतंत्र राष्ट्रों जैसा आदर प्राप्त हुआ है और उनमें से काफी यह अनुभव कर रहे हैं कि भारत को औद्योगिक राष्ट्रों से जो भी मदद दी जा सके, अवश्य मिलनी चाहिए। इसी कारण अमरीका बड़ी दिलचस्पी से यह कोशिश कर रहा है कि भारत से आए हुए ३०० इन्जीनियरों को अच्छे से अच्छा प्रशिक्षण मिले।

इनलैंड के ये १५ प्रशिक्षार्थी, जो शिकागो विश्वविद्यालय क्षेत्र में बने अंतर्राष्ट्रीय भवन में रहते हैं, सप्ताह में चार दिन 'इण्डियाना हार्बर कारखाने' में काम करते हैं और पाँचवें दिन वे 'इलिनौय टेक्नौलोजी इन्स्टीट्यूट' में पढ़ने जाते हैं। भारतीय दल बड़ी गम्भीरता से अपने उद्देश्य की पूर्ती में लगा है।

काम की जगह से बाहर ये भारतीय लोग बहुत कुछ अमरीकियों जैसे ही बेतकल्लुफ और मौजी हैं। बहुत से ब्रिज, पिंग-पॉंग और शतरंज के अच्छे खिलाड़ी हैं और वे अन्तर्राष्ट्रीय-भवन में आम तौर से इन्हें खेला करते हैं। वे लोग अमरीकी चलचित्रों के भी बड़े शौकीन हैं। एक अमरीकी टाम बेरी, जो शिकागो विश्वविद्यालय में रूसी भाषा में डाक्टरेट कर रहा है, इस दल का सहायक है।

(अगले पृष्ठ पर देखें)

इनलैंड में कारखाने के क्रियात्मक प्रशिक्षण का वर्ष आरम्भ करने से पहले भारतीय प्रशिक्षणार्थी सामूहिक चित्र खिंचवा रहे हैं। मेज़ पर रखे सफेद टोपों पर "इन्स्टैप" शब्द अंकित है।
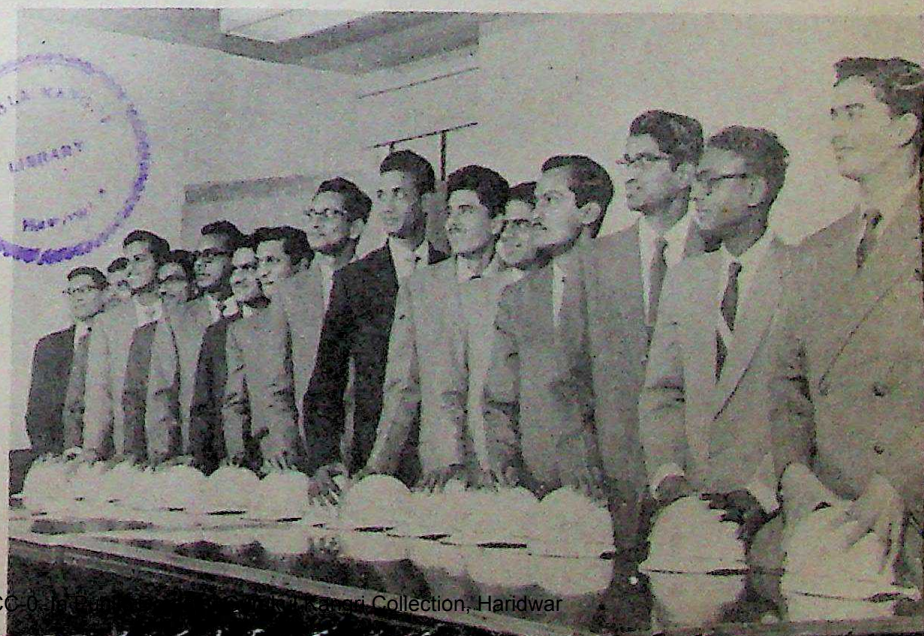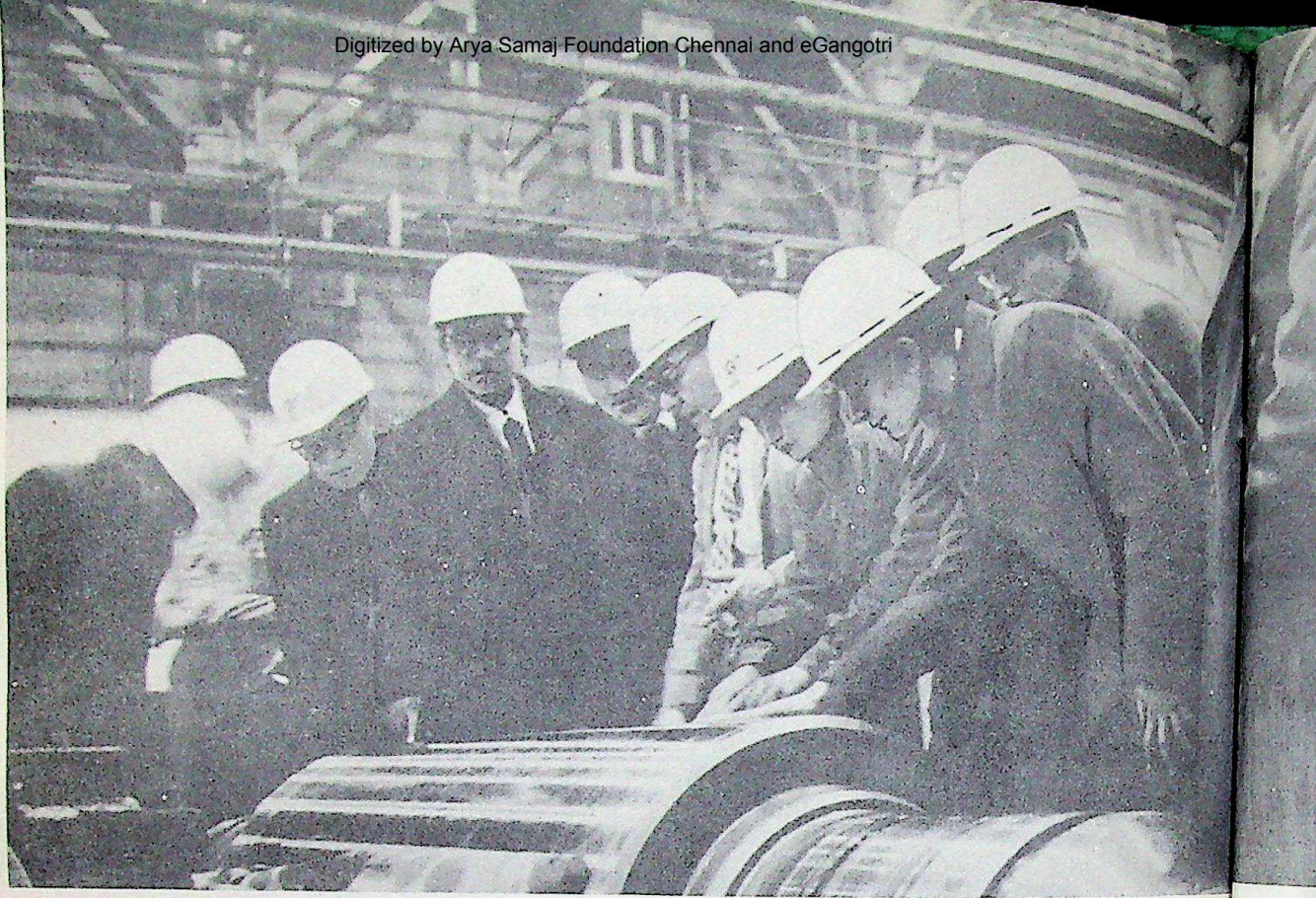
'इण्डियाना हार्बर वर्क्स' के दौरे पर आए हुए भारतीय प्रशिक्षणार्थी स्ट्रिप मिल देख रहे

"हम यहाँ काम करने आए हैं," भारतीय प्रशिक्षणार्थी कहते हैं

अन्तर्राष्ट्रीय भवन में प्रशिक्षणार्थी दल की 'फोर्ड प्रतिष्ठान' के कार्यक्रम-अधिकारी और 'इन्स्टंप' के डाइरेक्टर से मुलाकात।

उन्होंने उसका बोल-चाल का नाम "भैया" रखा है। दल के मनोरंजन की व्यवस्था करना भी उसका काम है।

दोपहर के भोजन को छोड़ कर वे अधिकतर भोजन अन्तर्राष्ट्रीय-भवन के भोजन-घर में ही करते हैं, पर सप्ताह में एक बार, प्रायः शनिवार को, वे बाहर भोजन करते हैं। उन्हें अमरीकी भोजन पसन्द हैं, पर 'चॉप सुए' और 'पिज़ा' विशेष पसन्द हैं, जिनका स्वाद वे दक्षिण भारत के 'दोसा' जैसा बताते हैं।

उनकी बातचीत से पता चलता है कि अमरीका के बारे में उन्हें बहुत अधिक जानकारी है। उनमें से एक ने बताया, "हम अपने देश में अमरीकी इतिहास और भूगोल भी पढ़ते हैं और आपकी औद्योगिक प्रणाली और प्रबन्ध-व्यवस्था का भी अध्ययन करते हैं" उसने यह भी बताया कि भारतीय स्कूलों में प्रयोग में आने वा[ली] अधिकतर टेक्निकल पुस्तकें अमरी[की] लेखकों की लिखी हुई हैं।

प्रशिक्षार्थी अमरीकी परिवारों [से] उनके घरों पर मिलने के लिये उत्सु[क] हैं। इण्डियाना हार्बर के प्रशिक्ष[ण] डायरेक्टर बेनेट क्लाईन के अनुसा[र] इनलैंड-निवासी इस दल के सदस्यों [को] अपने किसी भी सामाजिक कार्यक्रम [में] निमन्त्रित कर सकते हैं, बशर्ते [कि] अन्तर्राष्ट्रीय भवन तक उनके आने-जा[ने] की व्यवस्था कर दें।

क्लाईन ने बताया कि ये त[था] प्रशिक्षार्थी इनलैंड में अपने साथ [काम] करने वाले लोगों और सुपरवाइज़रों [के] साथ मित्रता के जो सम्बन्ध बनायेंगे [और] उन्हें शिकागो-क्षेत्र में लोगों से मि[लने] और बातचीत करने के जो अवसर मिले[ंगे]

शतरंज के खेल में बी. एम. शिनाय (बाएं) को जी. एम. एगरवे ने चक्कर में डाल दिया है। अनेक प्रशिक्षणार्थी पिंग-पाँग और ब्रिज के अच्छे खिलाड़ी हैं।

पियानो पर, प्रशिक्षणार्थी गोपालराव अमरीका की लोकप्रिय धुन बजाते हुए। 'जाज़' को प्रशिक्षणार्थी बहुत 'उत्तेजक वाद्य' मानते हैं।

दिन भर के काम के बाद भारतीय प्रशिक्षणार्थी "इन्स्टेप" सहायक टाम बेरी के कमरे में आराम करते हुए फ्रेंच गायिका लिली का रिकार्ड सुन रहे हैं। अब तक यह दल रायल बैले, शिकागो-सिंफोनी कन्सर्ट, और आइस कैपेड्स देख चुका है।

के बाद विनोद-प्रिय भी हैं।

इनका अमरीकी जीवन-पद्धति से परिचय हो जाने की आशा है।

लोग यह देखकर चकित हो गए हैं नलैंड कम्पनी १६,००० कर्मचारी र प्रतिवर्ष ५८,००,००० टन इस्पात ाती है, जबकि भारत में टाटा स्टील को १५,००,००० टन इस्पात के ३०,००० मज़दूर लगाने पड़ते हैं। अनुसार, इसका कारण यह है कि का प्रबन्ध और इस्पात के निर्माण धियाँ श्रेष्ठ हैं।

में से एक के शब्दों में "इनलैंड में फ़सी के काम का ढंग देखकर हम ह गए हैं। यहाँ बहुत "अफ़सरी" मालूम होती, और हर कोई मिलकर तरह कार्य करता है। हमें इनलैंड अच्छा लगा है कि हम अपने आप इनलैंड वाले" कहने लगे हैं।"

—"इनलैंड न्यूज़" से
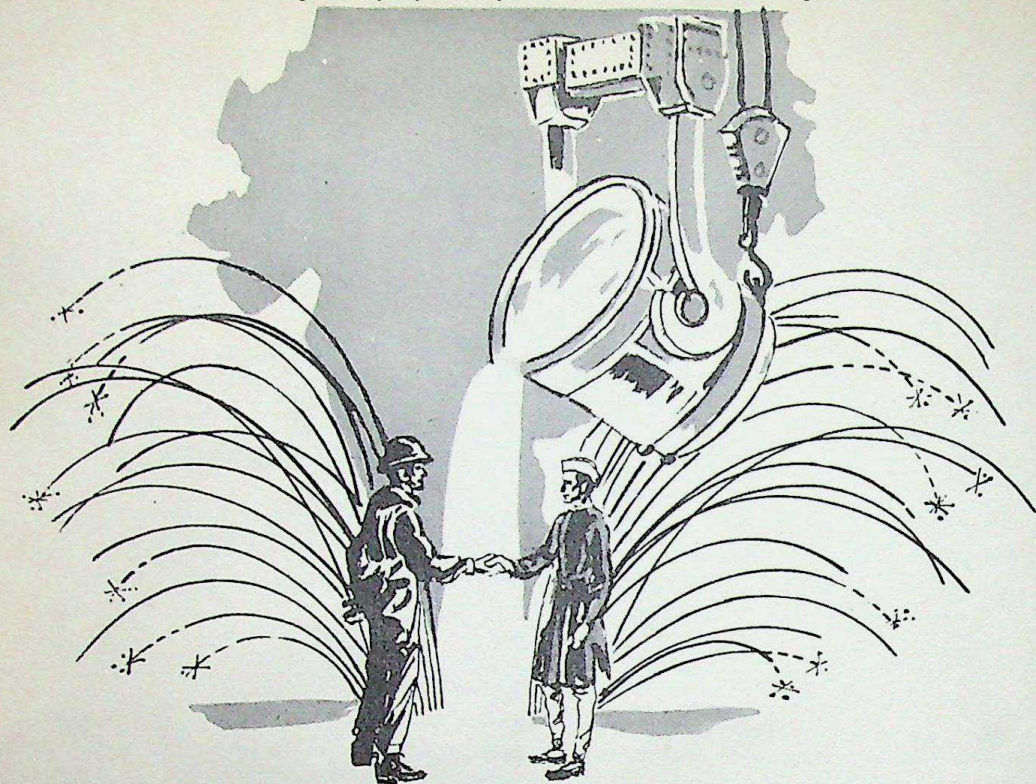
इस्पात विकास के लिए महत्वपूर्ण

भारतीय राजदूत के आर्थिक सलाहकार सी. एस. कृष्णमूर्ति का कहना है कि अमरीका में इस समय जो भारतीय इस्पात प्रशिक्षण कार्यक्रम चल रहा है, उसे भारत 'अपने इस्पात कारखानों के विकास के लिये. बहुत ही महत्वपूर्ण' मानता है ।

यह इस्पात कार्यक्रम फोर्ड प्रतिष्ठान, सात अमरीकी इस्पात कम्पनियों, विश्वविद्यालयों तथा भारत सरकार द्वारा आरम्भ किया गया है और इसके अंतर्गत कई सौ भारतीय इस्पात-कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया गया है । कृष्णमूर्ति ने कहा कि यह कार्यक्रम "कुछ-कुछ 'विशेषज्ञों के निर्यात' के कार्यक्रम जैसा है, जो आपने दूसरे देशों के लिए बनाया है और जिसमें आप कुछ अधिकारियों को, लोगों को उनके अपने देश में ही प्रशिक्षण देने के लिए, बाहर भेजते हैं । भारत को सैकड़ों प्रशिक्षित इस्पात-कर्मचारियों की आवश्यकता है, इसलिए हम उन्हें यहाँ भेजते हैं।" 'पिट्सवर्ग विदेश नीति-संघ' द्वारा बुलाई गई विश्व घटना-चक्र सम्बन्धी एक सभा में भाषण करते हुए भारतीय अधिकारी ने विस्तार से अपने देश में इस्पात का उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्नों का वर्णन किया और बताया कि पहली पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत यह दूना हो गया है । सरकार को आशा है कि यह रफ्तार तब तक जारी रहेगी, जब तक भारत विकसित राष्ट्रों की कोटि में नहीं आ जायगा ।

आपने कहा, "हमारे पास कच्चा लौह-खनिज और कोयला है और जल-विद्युत का बड़ा भण्डार भी है, पर इस्पात के उत्पादन में दो रुकावटें है— वित्तीय-प्रसाधनों, और काम करने वाले आदमियों की ।" भारतीय अधिकारी ने कहा : "इस समस्या को हल करने की दिशा में अमरीका में चलाया जा रहा इस्पात-प्रशिक्षण-कार्यक्रम कीमती सिद्ध हुआ है । निजी और सरकारी पूंजी-नियोजन से पैसे की समस्या भी हल हो जाएगी । उन्होंने बताया कि इस समय तक सबसे अधिक सरकारी पूंजी अमरीका ने लगाई है । जापान, ब्रिटेन, जर्मनी तथा रूस ने भी इस कार्यक्रम में सहायता दी है ।

* * *
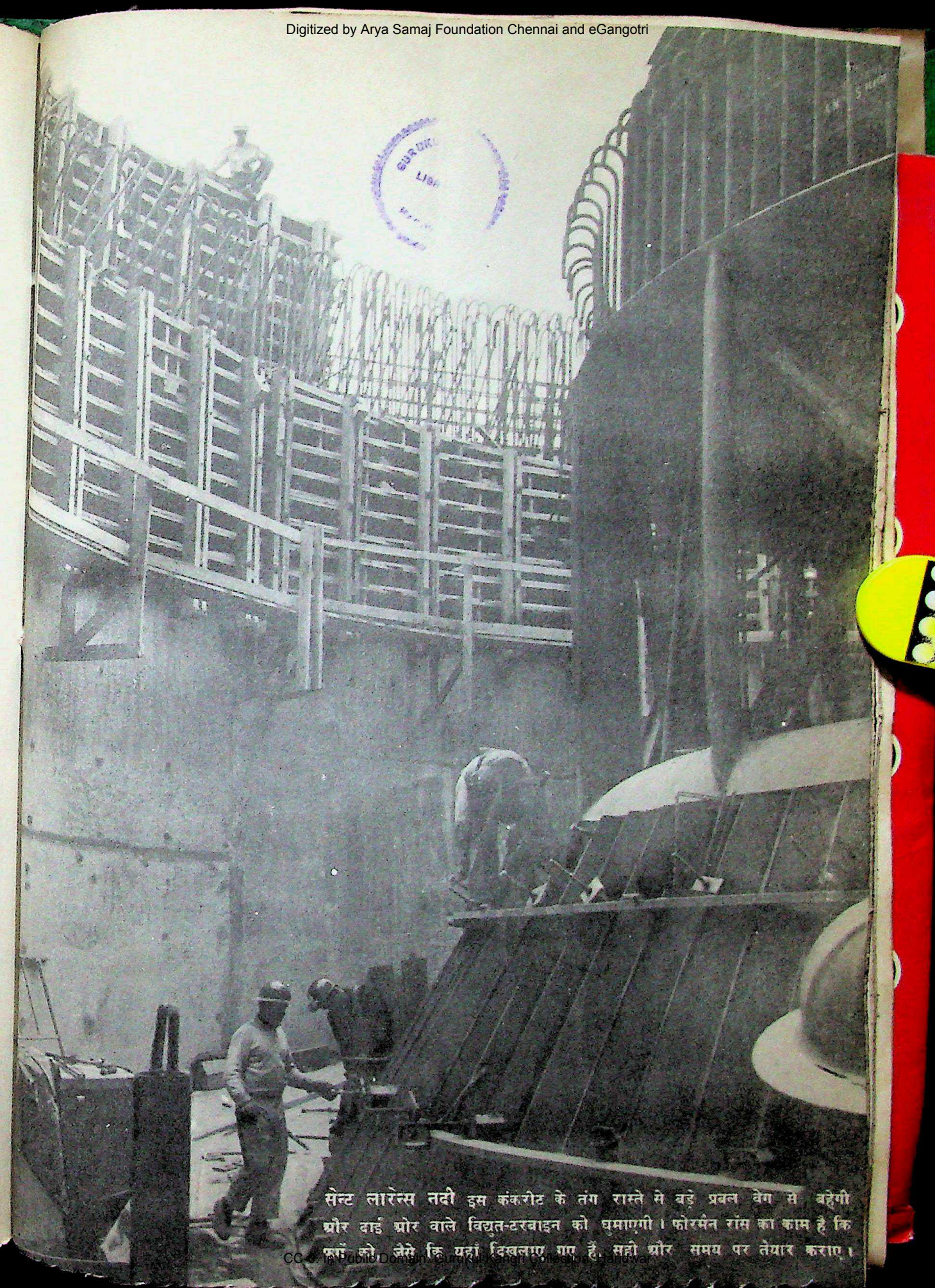
सेन्ट लारेन्स नदी इस कंकरीट के तंग रास्ते से बड़े प्रबल वेग से बहेगी और दाईं ओर वाले विद्युत-टरबाइन को घुमाएगी। फोरमैन रॉस का काम है कि फर्मों को, जैसे कि यहां दिखलाए गए हैं, सही और समय पर तैयार कराए।

२६ जून को राष्ट्रपति आइज़न हौवर और रानी एलिज़ाबेथ ने भीमकाय 'सेन्ट लारेन्स समुद्र-मार्ग परियोजना' का बाकायदा उद्घाटन किया। इस परियोजना ने, जो अमरीका और कनाडा के संयुक्त इन्जीनिर्यरिंग कौशल का नमूना है, अन्तर्राष्ट्रीय जहाज़ों के लिए एक नया मार्ग खोल दिया है क्योंकि इसके द्वारा समुद्र की ओर जाने वाले जहाज़ बड़ी झीलों के रास्ते होकर कनाडा और अमरीका के कई भीतरी नगरों तक पहुँच सकेंगे। सेन्ट लारेन्स नदी पर विद्युत-बाँध के निर्माण में लगे हुए एक फोरमैन के कार्यों का वर्णन अगले पृष्ठ पर पढ़िए।

किसी भी बड़े निर्माण-कार्य में फ़ोरमैन की स्थिति परियोजना का प्रबन्ध करने वाली कम्पनी तथा काम करने वाले श्रमिकों के बीच की होती है ।

उसकी सफलता का फैसला इस बात से होता है कि वह उन दोनों को उनके एक मात्र लक्ष्य—भरसक अच्छे तरीकों से परियोजना की पूर्ति—की ओर अग्रसर करता हुआ कितनी अच्छी तरह उन दोनों के हितों की रक्षा करता है ।

हौवर्ड एल. रॉस 'सेंट लारेन्स नदी विद्युत्-बांध' पर बढ़इयों का फ़ोरमैन है । उसे रोज़ ही इस चुनौती का सामना करना पड़ता है ।

रॉस की देखरेख में सौ से अधिक आदमी काम करते हैं । उसका मुख्य काम बांध बनाने में काम आने वाले फर्मों को बनाने और जमाने की देखभाल करना है । गीला कंकरीट फर्मों में डाला जाता है और जब यह कड़ा हो जाता है, तब फर्में हटा लिए जाते हैं और फिर उनसे कंकरीट की ऐसी ही और तहें बनाई जाती हैं। इसी तरह सेंट लारेन्स नदी के आर-पार, जो अमरीका और कनाडा के बीच उत्तर-पूर्वी सीमा बनाती है, बनने वाला लम्बा-चौड़ा बाँध तेजी से बनता जा रहा है । बाँध बनाने में दोनों देश सहयोग कर रहे हैं ।

रॉस में बहुत से गुणों का होना आवश्यक है, जैसे प्राविधिक कौशल, स्वयं आगे बढ़ने की भावना और सहयोग की प्रवृत्ति और सबसे अधिक महत्वपूर्ण गुण है—मनुष्यों से काम करा सकना । श्रमिक बहुत अधिक दक्ष हैं और इसलिए अनिवार्यतः स्वावलम्बी और स्वतंत्र मनोवृत्ति रखते हैं।

जब उसे अपने अधिकार का प्रयोग करना पड़ता है, तब उसमें कोई कमज़ोरी नहीं होती, क्योंकि उसने स्वयं वर्षों बढ़ई का कार्य किया है । वह उसी यूनियन का सदस्य है जिसमें उसके नीचे कार्य करने वाले श्रमिक हैं और वह यूनियन के अधिकारियों से मिलकर चलता है और इस बात का ध्यान रखता है कि काम करने की अवस्थाओं के बारे में बने हुए नियमों का पालन हो । साथ ही साथ, उसे प्रबन्ध-विभाग की जरूरतें भी सदा देखनी पड़ती हैं। उसके आदमियों का मुख्य काम यह है कि वे प्रतिदिन शाम के चार बजे तक इतने ज़्यादा फर्में जमा दें कि रात की पाली वाले लोग लगभग आठ घण्टे तक ककरीट डाल सकें। रोज़ इतने काम का मतलब यह है कि रॉस अपने आदमियों से कठोर और निरन्तर मेहनत कराए ।

मध्यस्थता की इस स्थिति में रॉस के लिए आवश्यक है कि वह संतुलित नेतृत्व प्रस्तुत करे । प्रकटतः उसे सफलता मिली है । परियोजना का इन्जिनियर उसे औरों से अच्छा फ़ोरमैन समझता है । दूसरी तरफ, उसके एक आदमी का कहना है, : "ओहदे से रॉस का दिमाग नहीं फिरा । वह अब भी वैसा ही खुशमिजाज़ और मिलनसार आदमी है जैसा बढ़ई का काम करते समय था ।"

[अगले पृष्ठ पर देखें]
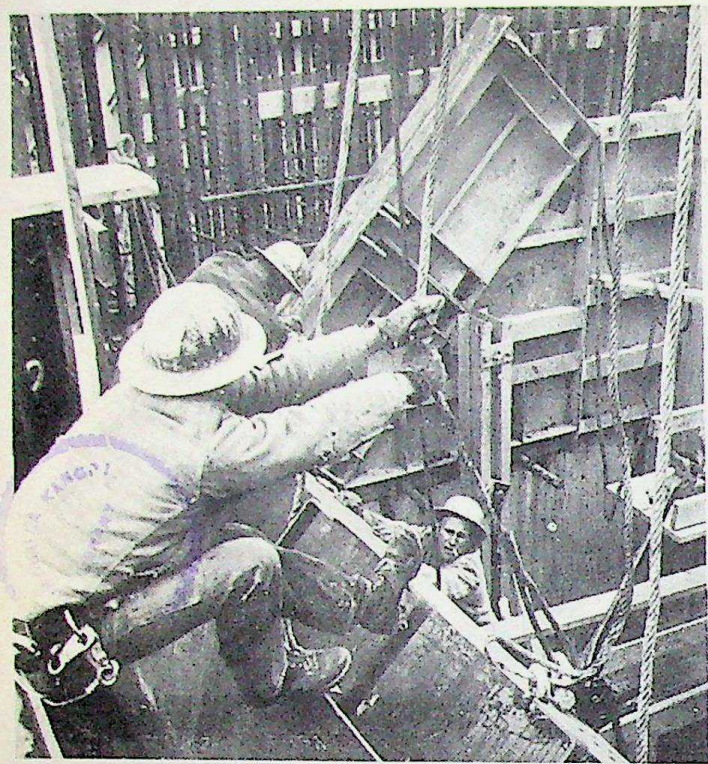
बाएं : जब इस्पात का भारी फर्मा झुलाकर जमाया जाता है तब रॉस (कैमरे की ओर मुंह किए हुए) कड़ी मेहनत के काम में अपने आदमियों के साथ स्वयं भी हाथ लगाता है।

दाएं : मजदूरों को सुरक्षा के नियमों पर चलने का बार-बार ध्यान दिलाया जाता है, फिर भी बहुत से खतरनाक काम करने पड़ते हैं। बांध के ऊपर के ऊंचे हिस्सों पर फर्मे जमाने के समय रॉस (कैमरे की ओर पीठ किए हुए) सबसे अधिक संकट वाले स्थान पर स्वयं खड़ा होता है।

नीचे : जिन कठिनाइयों का हिदायत-पत्र में उल्लेख नहीं होता, रॉस में उन्हें हल करने की प्रतिभा है। यहां वह ठीक तरह से न जमाए गए फर्मों की झुक कर जाँच कर रहा है।

अपना कार्य करने के बारे में रॉस का दृष्टिकोण बड़ा सीधा है। उसके अपने शब्दों में "मैं अपने आदमियों से वैसा सलूक करने की कोशिश करता हूँ जैसा मैं चाहता हूँ कि मुझ से किया जाए।" बांध बनाने वाली कम्पनी भी उसके, मनुष्य को महत्वपूर्ण मानने के, उदाहरण पर चलती है। उसकी नीति भी यथासम्भव यही है कि विशेष रूप से कुशल और उत्पादन में समर्थ श्रमिकों को तरक्की और अधिक अच्छे अवसर देकर पुरस्कृत किया जाए। इसका नतीजा यह होता है कि अच्छे आदमी संगठन के स्थायी अंग बन जाते हैं। सिंचाई के बांध, बड़े राजपथ आदि बड़ी परियोजनाओं पर काम करने वाले ठेकेदारों को स्थायी जत्था बनाना पड़ता है, जो एक परियोजना से दूसरी परियोजना पर पहुँच जाए। [शेष पृष्ठ १४ पर]
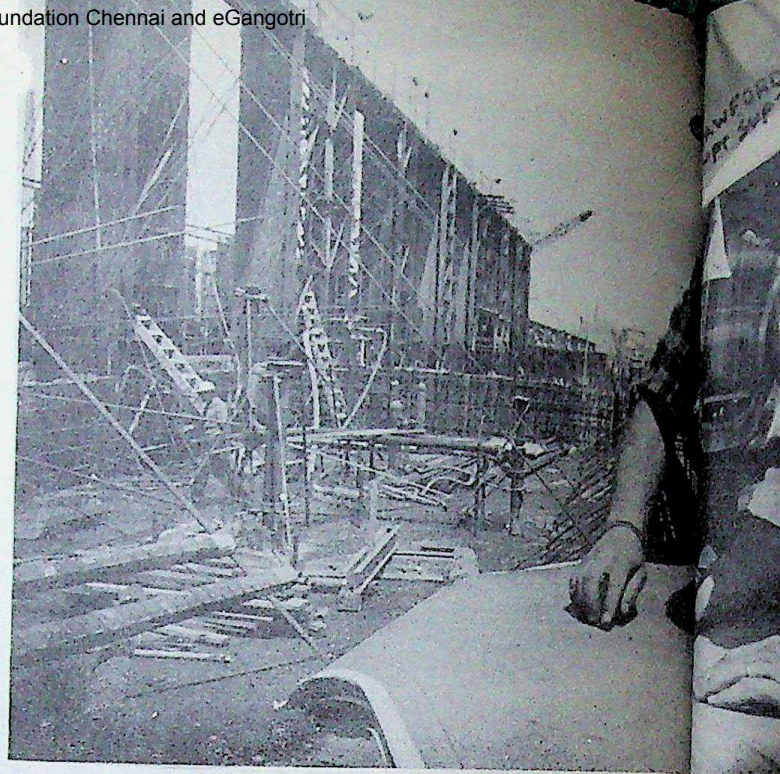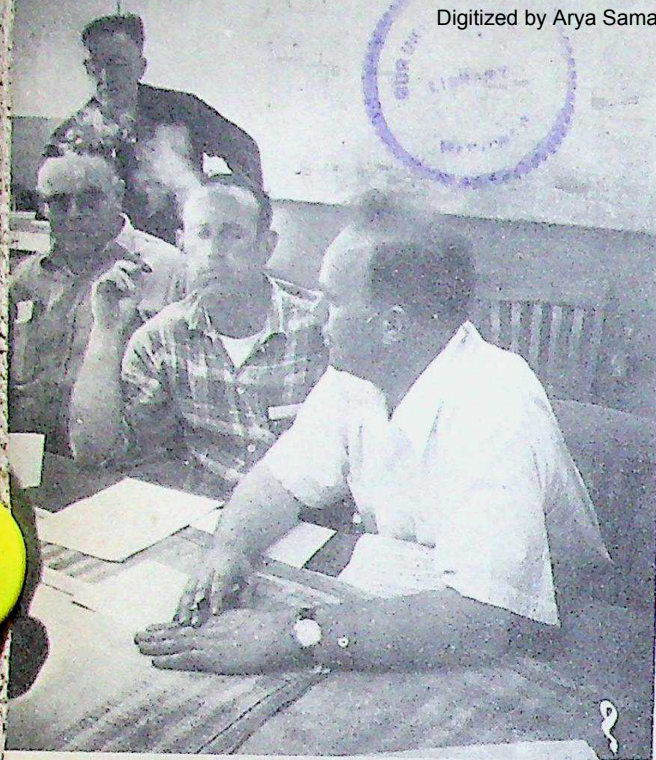
नौ साल पहले रॉस ने मकान बनाने के काम में बढ़ईगीरी शुरू की थी। उसने वह काम छोड़ दिया, क्योंकि जैसा कि उसने बताया है कि "जब आप एक मकान बना चुके, तब समझिए, सारे मकान बना चुके।" सात वर्ष तक उसने ओरेगान और वाशिंगटन राज्यों के बीच बहने वाली कोलम्बिया नदी पर बनाए गढ़ मैकनेरी और डलेस बांधों पर काम किया। इसके बाद वह सेन्ट लारेंस परियोजना में काम करने आया।

अब यह परियोजना करीब-करीब पूरी हो गई है। शीघ्र ही अमरीका और कनाडा के लिए जल-विद्युत पैदा होने लगेगी। दूसरी परियोजना पर काम करने के लिए चले जाने के बाद भी रॉस अपने कौशल, अपनी हिम्मत और सबसे बढ़कर, अपने नेतृत्व का स्पष्ट चित्र पीछे छोड़ जाएगा।

* * *

यूनियन से करार (कान्ट्रैक्ट) करके व्यवसायी क्या चाहते हैं? सबसे पहले तो हम अपने कारखानों में काम करने वालों का [...]हयोग से एक स्थायी समूह चाहते हैं। दूसरी बात यह कि हाज़िरी, [...]रीगरी और उत्पादन के स्तरों के बारे में करार के शब्दों के साथ-साथ [...]सकी भावना का पालन भी किया जाए।

हम चाहते हैं कि हर तरह की शिकायतें सप्ताहों और महीनों तक [...]ब देते रहने के बजाय जल्द और न्यायसंगत रीति से तय हो जाएं। [...] न्यायसंगत और उचित शिकायतों को तय करना चाहते हैं—राज[...]तिक कारणों से पैदा की गई शिकायतों को नहीं। हम एकाएक होने [...]ली हड़तालें या 'काम धीमे करो' आन्दोलन नहीं चाहते।

ये सभी चीज़ें संभव हैं, इसका हमें पता होना चाहिए। हमारे [...]छ कारखानों में ऐसी अवस्थाओं का सामना करना पड़ता था, और [...]नियन शॉप'-समझौतों में हमारे शामिल होने का यही मुख्य कारण [...]। मैं अपने निजी अनुभव से कह सकता हूँ कि एक बार कर्मचारी [...]काम और यूनियन के बारे में उचित निश्चिन्तता हो जाने पर उत्पा[...] जल्दी ही अपने सामान्य स्तर पर आ जाता है।

यूनियन शॉप एक आवश्यक चीज़ बन गयी है। करोड़ों अमरीकी [...]दूरों ने आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली मालिकों के साथ चलने वाली तिन[...] [...]वले [...]

भाग्य-सूत्र श्रम-संगठनों के हाथ सौंप दिया है। एक बार सौदेबाज़ी के [...] में यह ऐतिहासिक फैसला सिद्धान्त रूप में स्वीकार कर लेने के बाद [...] श्रम के लिए उसी प्रकार करार करना आरम्भ करेंगे जैसे पूंजी [...] प्रबन्ध के लिए करते हैं। इस विचारधारा में 'यूनियन शॉप' ए[...] व्यावसायिक लाभ की वस्तु बन जाती है। एक कारखाना-मालिक के नाते और कारखाना-मालिक के हित के दृष्टिकोण से, मैं तथाकथित 'काम करने के अधिकार' के कानून का दृढ़ विरोधी हूँ। जब किसी कारखाने के अधिकांश कर्मचारी किसी यूनियन के समर्थक हों, तब उस यूनियन को सामूहिक सौदेबाज़ी में उस कारखाने के प्रत्येक कर्मचारी का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार ही नहीं कर्तव्य भी हो जाता है।

यू[...]

औद्यो[...]

—जॉन आई[...]यर—

(अध्यक्ष, यू[...]न्का.)

जब हमारे किसी कारखाने में ऐसी चीज़ होती है और मैं उन[...] चारियों को अपने बारे में निश्चय करने का बेरोक अधिकार देने के [...] कहता हूँ, तब मैं यह चाहता हूँ कि हमारा प्रत्येक कर्मचारी [...] यूनियन के मामलों में जहाँ तक हो सके, अधिक से अधिक भाग ले [...]

यह बात मैं यूनियन की खातिर नहीं बल्कि मालिक के नाते [...] हित के लिए चाहता हूँ, यद्यपि ट्रेड यूनियन के ठीक कार्य के लिए भी [...]

१ **रॉस का आत्मविश्वास,** परियोजना का सुपरवाइज़र जब किसी समस्या पर बातचीत करता है, तब रॉस सिगार पीता हुआ मन ही मन उस पर विचार करता है। उसने एक ऐसा हल सुझाया, जो स्वीकार कर लिया गया।

२ **पूरी आयोजना** पर रॉस की नज़र रहती है। उसे ज्ञात है कि जब बड़ी मशीनें काम के लिए प्रस्तुत हों, तब मज़दूर और सामान उन्हें तैयार मिलें।

३ **कर्मचारियों से आत्मीयता,** रॉस अपने आदमियों के पास ही रहता है। उनके साथ भोजन करता है। अपने आदमियों के साथ उसका सम्बन्ध, दोस्ती, और पारस्परिक आदर के आधार पर बना हुआ है।

…य ढंग से भाग लेना इस बात की गारन्टी है कि हमारे लिए …क महत्वपूर्ण संगठन में किसी एक आदमी या छोटे से गुट की …ा खतरा नहीं रहेगा।
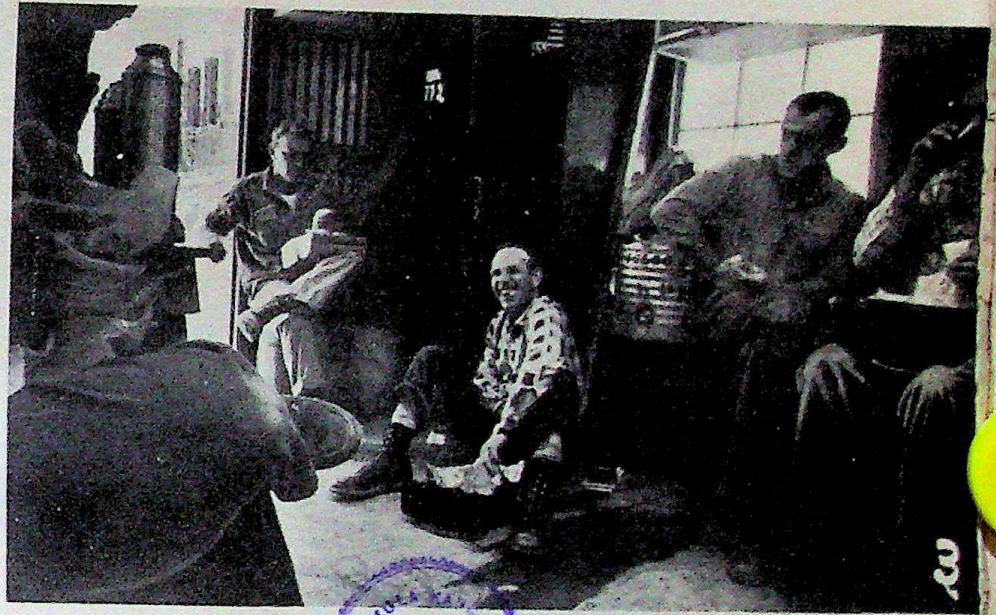
…दस्यों की वृद्धि में सुरक्षा देखता हूँ और मेरा विश्वास है कि उचित जानकारी वाला आम कर्मचारी अपने हित की दृष्टि से अन्त में ठीक फैसले पर ही पहुँचेगा। मेरा पक्का विश्वास है कि जिस बात से मेरे कर्मचारियों का अधिक से अधिक हित-साधन होता है, उसी से मेरी कम्पनी का भी अधिक से अधिक हित साधन होता है।

…दा कानून के अनुसार किसी यूनियन को तब तक यूनियन-शॉप की …का अधिकार नहीं है। जब तक अधिकांश कर्मचारी उस यूनियन …ओर से सौदेबाज़ी करने वाला न नियुक्त करें। इससे भी बड़ी …है कि जो कर्मचारी अपना चन्दा देता है, वह चाहे एक भी बैठक …उसे यूनियन की सदस्यता से हटाया नहीं जा सकता।

…मैं यह कहूँ कि हमारे श्रमिक सम्बन्धों में कभी उतार-चढ़ाव …तो झूठ होगा। जब मैं कम्पनियों और यूनियनों के अपने …अन्त में सारी बात के मूल में एक ही समस्या दिखाई देती है: विभिन्न स्तरों पर करार का अर्थ लगाने में अपेक्षित और अभीष्ट लोचशीलता का ध्यान रखने की दोनों पक्षों की अनिच्छा।

व्यवसाय अपने आपको सब तरह की मुसीबतों में डाल सकता है। ये मुसीबतें कभी उसकी अपनी बनाई होती हैं, और कभी दूसरों की बनाई। परिस्थितियां बदल जाने के कारण सम्भव है कि दूसरी वस्तुएं बनाना शुरू करना पड़े, कर्मचारियों के स्थान बदलने पड़ें, नए आदमी रखने पड़े और दूसरों को छुट्टी देनी पड़े। भविष्य की अज्ञात स्थितियां अनन्त हो सकती हैं। किसी भी करार में उन सबका समावेश नहीं हो सकता।

अब वह समय आ गया है, जब व्यवसाय को अपने वेतन-बिल तथा अन्य खर्च चुकाने और शेयर-होल्डरों को उचित लाभांश देने की समस्याओं के समाधान में श्रमिक से अपेक्षाकृत अधिक सहयोग मांगने का अधिकार है और वह अवश्य मांगना चाहिए।

प्रबन्ध-विभाग कर्मचारियों से जिस तरह के सहयोग की आशा कर सकता है, उसका इस बात से निकट सम्बन्ध है कि कर्मचारी यूनियन से कितना संतुष्ट है। मेरा विश्वास … कि … के स्तर पर एक स्वस्थ लोकतंत्री कार्यप्रणाली से …

कार्यशील अमरीकी

अमरीकी श्रमिक महासंघ एवं औद्योगिक संगठन संघ ('अमेरिकन फेडरेशन ऑव लेबर ऐंड कांग्रेस ऑव इण्डस्ट्रियल आरगेनाईज़ेशन्स) की सूचनाओं से पता चलता है कि इसकी नई टेलीविज़न फिल्म सिरीज़ "कार्यशील अमरीकी" बड़ी धूमधाम से शुरू हुई है। वह २२ राज्यों के ४० टेलीविज़न स्टेशनों से दिखाई जा रही है और आशा है कि १०० और स्टेशन नमूना देखने के बाद इसे चलाएंगे।

५२ सप्ताह की इस सिरीज़ को इस वर्ष जनवरी में शुरू किया गया था। इसका उद्देश्य यह दिखाना है कि यूनियनों वाले मज़दूरों का अमरीकी उद्योग और अमरीकी जीवन में क्या योगदान है। यह दर्शक को राष्ट्र के उन कारखानों की झांकी देती है, जिनमें आधुनिक मशीनों और मज़दूरों के कौशल से आज और कल के लिए वस्तुएं बनाई जा रही हैं।

ये फिल्में देश भर के स्टेशनों को जनसेवा-कार्यक्रम के रूप में, जिसमें मनोरंजन और शिक्षा का सुन्दर मेल है, दिखाने के लिए दी जाती हैं। 'अमरीकी मज़दूर महासंघ एवं औद्योगिक संगठन संघ' के अध्यक्ष जॉर्ज मीनी ने स्टेशन मैनेजरों को यह फिल्म मिल सकने की सूचना देने वाले पत्र में लिखा है :—

"हर आदमी हर जगह जो वस्तुएं उपयोग में लाता है, उन्हें जन्म देने वाली विशालकाय मशीनों की फिल्में तो बहुत बनी हैं, पर इनसे मशीनों को सम्भालने वाले आदमियों और माल का प्रवाह बनाए रखने वाले लोगों का महत्व कहीं अधिक है।"

श्री मीनी का कहना है कि "सिरीज़ का उद्देश्य" सीधा और स्पष्ट है। हम मज़दूरों में अपने काम के लिए और भी अधिक गर्व पैदा करना चाहते हैं, और निःसन्देह हम यह चाहते हैं कि हमारे अमरीकी देशवासी हमारे राष्ट्र के मज़दूरों पर और लोकतंत्र के स्वतन्त्र अध्यवसाय की प्रणाली में उनके योगदान पर गौरव का अनुभव करें।"

इस सिरीज़ की प्रत्येक फ़िल्म में किसी एक दस्तकारी या उद्योग की कहानी है। उदाहरण के लिए, पहली फ़िल्म में दैनिक अखबार के तैयार होने का वर्णन है। एक और फ़िल्म कांच की वस्तुएं बनाने के बारे में है। इस सिरीज़ की सबसे अधिक दिलचस्प फ़िल्मों में से एक में नलसाज़ों और प्लम्बरों का कार्य दिखाया गया है—इन लोगों को कभी-कभी १००० डालर प्रति फुट से भी अधिक मंहगे नल और ३५००० डालर से भी अधिक कीमत वाले वाल्व से काम करना होता है और आणविक भट्टियों तथा परमाणु-युग की अन्य अद्भुत चीज़ों में पीतल, तांबे और सीसे के साथ-साथ बेरीलियम और ज़िरकोनियम भी लगाने होते हैं।

इस फ़िल्म के एक भाग में वह विशाल प्रशिक्षण-कार्यक्रम दिखाया गया है, जो 'प्लम्बर्स एण्ड पाइप फिटर्स यूनियन' ने परमाणु-युग की जरूरतों को पूरा करने वाले नए कौशलों के लिए शिक्षक तैयार करने के वास्ते बनाया है। वाशिंगटन में यूनियन के दफ्तर में यूनियनों के अधिकारी और अध्यापक आकर प्रशिक्षण लेते हैं जिससे वे अपने हज़ारों सदस्यों को प्रशिक्षण दे सकें।

अन्य फ़िल्मों में, जो दिखाने के लिए दे दी गयी हैं या अभी बन रही हैं, बेकरी (डबल रोटी की भट्टी) के मज़दूरों, कुम्हारों, जिल्दसाज़ों, मोटरों-मज़दूरों, मशीन-मज़दूरों, कागज बनाने वालों, कपड़े सीने वालों, जूते बनाने वालों, होटल और रेस्टोरेन्ट कर्मचारियों और परिवहन मज़दूरों की कहानी चित्रित की गयी हैं।

एक के बाद दूसरे उद्योग में और एक के बाद दूसरे कारखाने में, 'अमरीकी मजदूर महासंघ एवं औद्योगिक संगठन संघ' के टेलीविज़न कार्यक्रमों द्वारा जनता को यह दिखाया जा रहा है कि किस तरह "कार्यशील अमरीकी" राष्ट्र की मौजूदा ज़रूरतों को उत्पादन और कल की माँगों की पूर्ति लिए उद्यत हो रहे हैं।

* * *

'कार्यशील अमरीकी' सिरीज़ की एक प्रारम्भिक फ़िल्म में उस विशाल प्रशिक्षण-कार्यक्रम का चित्र दिखाया गया है, जो 'प्लम्बर्स एण्ड पाइप फिटर्स यूनियन' ने अपने सदस्यों को परमाणु-युग की आवश्यकताएं पूरी करने वाले नए कौशलों को सिखाने के लिए बनाया है। एक और फ़िल्म कांच की वस्तुएं बनाने के बारे में है जिसमें दिखाया गया है (दाईं ओर) कि युगों पुरानी इस दस्तकारी को, जिसमें अब भी वही पुराना कच्चा सामान इस्तेमाल होता है, किस प्रकार इतना अधिक यंत्र-चालित कर दिया गया है कि प्रति मिनट २५० शीशियां या बर्तन बनते जाते हैं।

चोटों में कमी

वाशिंगटन—१९५८ में कारखानों में काम करते हुए अमरीकी मज़दूरों को अपंग बनाने वाली चोटों की कुल संख्या १८,१०,००० रही—यह संख्या १९४६ से आज तक के वर्षों में सबसे कम है। यह हिसाब अमरीकी श्रम-विभाग के श्रम आंकड़ा ब्यूरो ने आरम्भिक जांच के बाद लगाया है। कारखानों में लगी चोटों से हुई मौतों की संख्या घट कर १३३०० रह गई, जो ब्यूरो के तेईस वर्ष के रिकार्ड में सबसे कम है।

१९४३ में चोटों की संख्या २४,१४००० थी। कारखानों में मज़दूरों की संख्या लगातार बढ़ते जाने के बावजूद इसमें २५ प्रतिशत की कमी हुई है। थोड़े से मामूली उतार-चढ़ावों को छोड़कर मज़दूरों को लगी चोटों का अनुपात १९४३ के प्रति हज़ार ४५.७ से घटता-घटता १९५८ में २९.४ रह गया। १९५८ में चोटों की संख्या १९५७ के संशोधित तख्मीने, अर्थात् १८,९०,००० से ४ प्रतिशत नीचे थी। यद्यपि चोटों की इस कमी का कारण मज़दूरों की संख्या और उन के काम के घण्टों में कमी भी था, पर चोट लगने की घटनाओं की दर भी पहले कभी इतनी नीचे नहीं पहुँची।

नेत्र-रक्षा

क्लीवलैंड (ओहायो)—क्लीवलैंड की ९० मज़दूर यूनियनों ने, जो अपने १,००,००० सदस्यों की प्रतिनिधि हैं, हाल में ही यहाँ अपना नेत्र-रक्षा केन्द्र खोला है।

ऐड. मौस ने, जो मशीनिस्ट यूनियन डिस्ट्रिक्ट-५४ का सचिव-कोषाध्यक्ष और इस केन्द्र का कोषाध्यक्ष है, कहा है: "यह बिना मुनाफे चलाया जाने वाला संगठन होगा, और इसका उद्देश्य, खास तौर से यूनियन के सदस्यों को कम से कम कीमत पर चश्मे दिलाना होगा।

मौस ने बताया है कि एक वर्ष से कुछ पहले उसने और मशीनिस्ट यूनियन डिस्ट्रिक्ट-५४ के अध्यक्ष मैट डी-मोर ने अन्य यूनियनों में यह आन्दोलन शुरू किया था कि आंखों की देख-भाल का संयुक्त कार्यक्रम चलाया जाये। केन्द्र के लिए धन का प्रबन्ध करने के लिए यूनियन ने पच्चीस सेन्ट (१.२५ रुपया) प्रति सदस्य दिया और जब २५,००० डालर जमा हो गए तब ट्रस्टियों का एक मण्डल चुना गया और केन्द्र शुरू हो गया।

कपड़ा-आन्दोलन

मायेमी बीच (फ्लोरिडा)—अन्तर्राष्ट्रीय महिला वस्त्र मज़दूर यूनियन के अध्यक्ष डेविड डुबिन्सकी ने स्त्रियों के कोट और सूट उद्योग से अपील की है कि वह भी स्त्रियों के वस्त्रों का उत्पादन बढ़ाने के उस व्यापक आन्दोलन में शामिल हो जाए जो यूनियन शुरू करने वाली है।

डुबिन्सकी ने कहा कि कपड़ा-उद्योग को अलग-अलग निर्माता और खुदरा दुकानदार के विज्ञापन-कार्य को सफल बनाने के लिए अपना उत्पादन बढ़ाने का यत्न करना चाहिए। आपने कहा कि उद्योग का सारे का सारा उत्पादन बढ़ाने की जरूरत है, क्योंकि औसत छोटा कारखाना अपनी वस्तुओं के विज्ञापन पर अधिक धन खर्च नहीं कर सकता। आपने कहा कि यूनियन पोशाकों के धंन्धे में यूनियन के लेबलों की बिक्री से हर साल दस लाख डालर कमा रही है और इस आमदनी का उपयोग सारे उद्योग को आगे बढ़ाने में किया जायगा। आपने भविष्यवाणी की कि एक साल के भीतर कपड़ा-उद्योग के सभी अंग कार्यक्रम के अन्दर आजाएंगे।

मज़दूरी में पुनः वृद्धि

बोस्टन—न्यू इंगलैंड के लगभग ६०,००० मज़दूरों की मज़दूरी दस सेन्ट (५० नए पैसे) प्रति घण्टा बढ़ गई है—यह उद्योग-व्यापी वेतन-वृद्धि तीन वर्ष में पहली बार हुई है।

अमरीका की 'टैक्सटाईल वर्क्स यूनियन' के प्रादेशिक डाइरेक्टर जे० विलियम बिलेंगर ने कहा कि मज़दूरी के नए स्तर से रुई और नकली रेशम के मज़दूरों की औसत मज़दूरी बढ़ कर १.५१ डालर (७.५५ रुपये) प्रति घण्टा हो जायगी। ऊनी वस्त्र उद्योग में औसत मज़दूरी १.६५ डालर (८.२५ रु०) प्रति घण्टा है।

बिलैन्गर ने कहा कि ६०,००० मज़दूरों में से लगभग तिहाई मैंसाचूसैट्स के कारखानों में हैं।

सहकारी ऋण-समिति

बोस्टन (सहकारी समाचार सेवा)—'क्रेडिट यूनियन राष्ट्रीय संघ' के नेताओं ने अपने पच्चीसवें स्थापना-दिवस की पार्टी के बाद बताया कि पिछले वर्ष अमरीकी और कनाडियन 'क्रडिट यूनियनों' में दस लाख परिवार और शामिल हो गए हैं।

कुल मिलाकर इन सहकारी ऋण संस्थाओं के नए और पुराने १३० लाख सदस्यों ने १९५८ में एक अरब डालर और बचाये थे। सहकारी समितियों की पूंजी ५४३ करोड़ डालर पर पहुँच गई (१६ प्रतिशत वृद्धि) और सदस्यों ने अपनी बचत ४८७ करोड़ डालर तक (२६ प्रतिशत वृद्धि) एवं अपने उधार ३ अरब ७६ करोड़ डालर तक (१९ प्रतिशत वृद्धि) पहुँचा लिये।

* * *

"समानता जिन्दाबाद"

इतना ही काफी नहीं है कि जाति और धर्म के आधार पर समानता की बात यूनियन संविधानों और नियमावली में लिख दी जाए, जैसा कि अधिकतर अन्तर्राष्ट्रीय यूनियनों ने किया है, और न इतना काफी है कि करारों में भेद-भाव करने की रोक लगा दी जाए। एक महत्वपूर्ण काम यह है कि यूनियन के सदस्यों को पुराने कुसंस्कार छोड़ने के लिए शिक्षित और प्रोत्साहित भी किया जाये।

अर्ल हैरिंग्टन ने, जो किसी समय 'इलिनौय बेल् टेलिफोन कम्पनी' की स्वतन्त्र यूनियन का सचिव-कोषाध्यक्ष था, बताया है कि किस प्रकार दूसरे महायुद्ध के दिनों में, शिकागो में, शिक्षण और प्रेरणा के मेल से सफलता मिली।

यह सिलसिला तब शुरू हुआ जब प्रबन्ध-अधिकारियों ने यूनियन के कार्यकारी मण्डल को (जो सौदा करने वाली कमेटी के रूप में भी कार्य करता था) मैनेजर के

कार्यालय में बुलाकर यह बताया कि 'अर्बन लीग' (नगर-संघ) नीग्रो मज़दूर रखने के लिए कम्पनी पर ज़ोर डाल रही है। "हमने उनसे कह दिया है कि हम ऐसा नहीं कर सकते"—मैनेजर ने दृढ़ता से कहा।

"हमें पता है कि आपकी यूनियन के सदस्य नीग्रो लोगों के साथ काम करने से इन्कार कर देंगे, और इसके अलावा, हम उनके लिए अलग सुविधाओं की व्यवस्था नहीं कर सकते।"

धक्का खाने की बारी अब कम्पनी की थी।

यूनियन की कमेटी ने पूछा, "आप से किसने कहा कि आप हमारी ओर से बोल सकते हैं? हमें नीग्रो लोगों के साथ काम करने में कोई ऐतराज़ नहीं। नीग्रो चौकीदार हमारी यूनियन में हैं ही और यदि आप नीग्रो मिस्त्री रखेंगे तो हम उनके साथ भी काम करेंगे। यह बात भी जान लीजिए कि आपको उनके लिए अलग सुविधाओं की व्यवस्था नहीं करनी पड़ेगी। हम सब लोग एक ही चीजें प्रयोग में ला सकते हैं।"

फोन लगाने के लिए नीग्रो लोगों की एक सीमित संख्या रखने का प्रबन्ध किया गया और पहले उन नीग्रो लोगों को मौका दिया गया, जो चौकीदारों और कुलियों के रूप में पहले से नौकरी में थे। पर यह समझौता हो जाने पर भी आम मज़दूरों में विद्रोह शुरू हो गया। मैनेजर से मिलने और नीग्रो मज़दूर रखने पर अपना विरोध प्रकट करने के लिए उन्होंने एक कमेटी बनाई।

मैनेजर ने जवाब दिया, "मुझे अफसोस है, पर यह समझौता आपके मण्डल के साथ हो चुका है। अब यह कायम रहेगा।"

आम सदस्यों की कमेटी ने सदस्यों को यह बात बताई: "मण्डल ने हमें कुएं में डाल दिया। भले ही हम उन नीग्रो लोगों को कारखाने में घुसने से न रोक सकें, पर हम उन्हें यूनियन में घुसने से तो रोक ही सकते हैं।"

अगले महीने, जबकि कुछ नीग्रो मिस्त्री काम पर आ चुके थे, विरोधी सदस्यों को एक नई बात सूझी। उन्होंने कहा, "देखो, हमें अपनी यूनियन को चलाने के लिए बहुत सा धन देना पड़ता है। वे नीग्रो क्यों मुफ्त में मौज करें और एक सैन्ट भी दिए बिना हमारे सब लाभों में हिस्सेदार हों? उन्हें यूनियन में शामिल होना पड़ेगा और चन्दा देना पड़ेगा, पर हम उन्हें यूनियन को सभाओं में नहीं आने देंगे।"

एक महीना और गुज़रा। एक सभा और हुई और उसमें विरोधियों का स्वर फिर बदला:

"हमें यूनियन को मज़बूत रखने के लिए सभाओं में आना पड़ता है। क्या वजह है कि जब हम यूनियन की सभाओं में बैठे रहें, उस समय नीग्रो मिस्त्री सिनेमा-घरों में मौज करें। उन्हें सभाओं में भी आना पड़ेगा—और उन्हें एक अलग हिस्से में बैठना होगा।" कुछ समय बाद नीग्रो फोन-मजदूर यूनियन की सभाओं में आने लगे और इसके सब कामों में पूरा हिस्सा लेने लगे।

इस तरह के दृश्य मिशिगन से लेकर टेक्सास तक फोन-मजदूरों की स्थानीय यूनियनों में बार-बार घटित हुए हैं। कभी-कभी उनसे संबद्ध मज़दूर नीग्रो होते थे और कभी स्पेनिश अमरीकी। प्रायः हर मामले में क्वालिटी या श्रेष्ठता को ही महत्व दिया जाता था।

अब टेलीफोन कम्पनी की नौकरी में कुली बनकर आने वाले लोगों को प्राविधिक कामों के लिए कोशिश करने का मौका मिलने लगा। शिकागो में, जहां नीग्रो मिस्त्री पहली बार १९४२ में रखे गये थे, उनकी संख्या बड़ी तेजी से बढ़ी है। न्यूयार्क में संचार-कम्पनियाँ अब यहूदी, चीनी और नीग्रो अखबारों में तथा आम अखबारों में भी उनके लिए विज्ञापन निकालती हैं।

यद्यपि फोन यूनियन ने रास्ता साफ करने के लिए बहुत कुछ किया है, पर देश के कुछ भागों में बहुत कम प्रगति हुई है। १९४८ में लाराय पर्डी ने सबसे पहले उस राज्य में 'उचित रोज़गार आचरण बिल' पेश किया। दो साल बाद इस बिल का एक हल्का रूप पास किया गया जिसमें राज्य के रोज़गारों में भेद-भाव करने पर रोक लगाई गई थी।

बाद के वर्षों में यूनियन 'अर्बन लीग' (नगर-संघ) और टेलिफोन कम्पनियों ने मिलकर कोलोराडो के संचार-उद्योग में एकीकरण के विस्तृत कार्यक्रम पर बल दिया। और उन्हें सफलता मिली।

न्यूमैक्सिको में, जहाँ आबादी में बहुमत स्पेनिश अमरीकियों का है, उन्होंने पदों में भेद-भाव का परम्परागत-तरीके से मुकाबला किया है। १९४९ में यूनियनों और दूसरे नागरिक-संघों को रोज़गार में उचित आचरण विषयक जबरदस्त मुकदमे में सफलता मिली। तब से न्यू मैक्सिको के संचार-उद्योग में जातीय रुकावटें बहुत कम हो गई हैं। वाशिंगटन, डी.सी., में भी इस मामले में सफलता मिली है।

१९५७ तक राष्ट्र की बीस बड़ी टेलिफोन कम्पनियों में से सोलह नीग्रो तथा अन्य अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी प्राविधिक सेवाओं में तथा टेलिफोन आपरेटरों के रूप में नौकर रख रही थीं। अमरीका की 'कम्यूनिकेशन्स वर्कर्स यूनियन' इस बात का उल्लेख गौरव के साथ करती है।

न्यूयार्क मुद्रण विद्यालय

अमरीका की सार्वजनिक विद्यालय प्रणालियों में शिक्षकों प्रबन्धकों और श्रमिकों के संयुक्त प्रयत्नों से रोज़गार और शिक्षार्थी-प्रशिक्षण कार्यक्रमों के सफलतापूर्वक काम करने का एक उदाहरण।

न्यूयार्क मुद्रण विद्यालय को, जिसके नये भवन और सुविधाओं का, उद्घाटन कुछ सप्ताह पहले बड़े प्रभावशाली उत्सव में हुआ था, दर्शक लोग "अमरीका का अपने ढंग का सबसे बड़ा और अधिक साधन-सम्पन्न विद्यालय" बताते हैं।

नगर में छपाई के धंधे का यह नया शिक्षार्थी प्रशिक्षण केन्द्र मैनहटन के बीच में ४०,००० वर्ग फुट स्थान पर बना है। इसका मुख्य भाग, जिसमें दफ्तर और कक्षाओं के कमरे हैं, सात मंजिला और आग से न जल सकने वाला भवन है, जिसका सामने का हिस्सा ४०० फुट लम्बा है और दो सड़कों पर पड़ता है। इससे छोटा दूसरा भाग, जिसमें व्यायामशाला और सभा-भवन है, इस भवन के एक सिरे से समकोण बनाता है।

इसे अपनी आधुनिक सुविधाओं और स्थापत्य कला के रूपांकरण के कारण "स्वप्निल विद्यालय" कहा गया है। इसमें कक्षाओं के कमरे भी अधिक से अधिक उपयोगी चीज़ों से भरे हुए हैं और प्रेस भी लेटर-प्रेस, ऑफ़सेट तथा अन्य छपाई की विधियों, कम्पोजिंग, फोटो-इन्ग्रेविंग और जिल्दसाजी की अधिक से अधिक उन्नत मशीनों से सज्जित हैं।

सारे मकान में बिना चमक वाली रोशनी है और वह इस ढंग से लगाई गयी है कि छाया बिल्कुल नहीं पड़ती, और दिन की रोशनी से बहुत अधिक मिलती जुलती है जहाँ रंगों के मिलान आदि का बारीक काम किया जाता है, वहाँ इस चीज का बड़ा महत्व है।

सार्वजनिक प्रसारण-प्रणाली के द्वारा प्रिन्सिपल के कार्यालय से किए गये ऐलान बिल्डिग के सब क्षेत्रों में पहुँच जाते हैं। सब दफ्तर, कारखाने और कक्षाएं टेलिफोन द्वारा जुड़े हुए हैं।

नए क्वार्टरों में २७०० से अधिक छात्रों के रहने के लिए स्थान है। इनमें आधे से अधिक माध्यमिक विद्या-

शिक्षार्थी यहाँ शिक्षक जोजेफ रूबिनो (सब से दाईं ओर) से व्यापारिक लेबल की छपाई सम्बन्धी कुछ समस्याओं की जानकारी प्राप्त रहे हैं।

प्रूफ प्रेस के प्रयोग और प्रूफ देखने की शिक्षा इस विद्यालय के प्रशिक्षण-कार्य का एक महत्वपूर्ण अंग है।
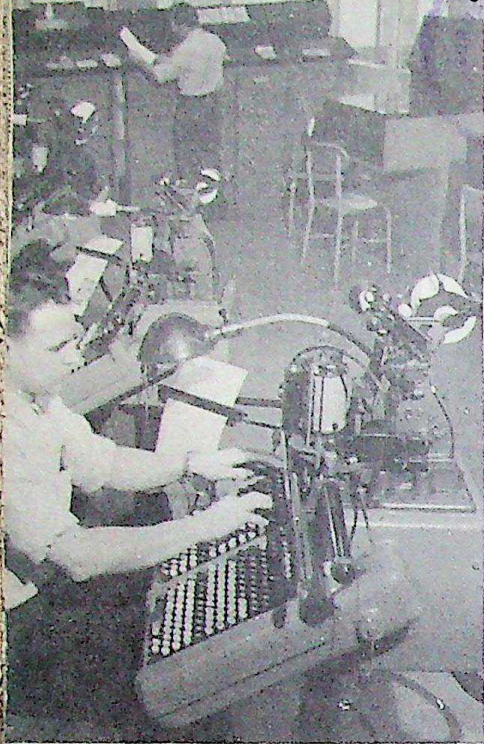
(बाएं) अलग-अलग टाइप ढालने के लिए मोनो टाइप का की-बोर्ड चलाने की शिक्षा
(दाएं) छात्र "कम्पोजिंग स्टिक" में एक-एक अक्षर रखकर कम्पोज कर रहे हैं।

के छात्र हैं, जो पढ़ाई तथा छपाई का कोर्स एक साथ लेते हैं। विद्यार्थी शिक्षार्थी-प्रशिक्षण-विभाग में उन प्रशिक्षित जर्नीमैनों की शाम कक्षाओं में भर्ती हुए हैं जो नई विधियों या विशेष कौशलों के बारे और अधिक सीखना चाहते हैं।

माध्यमिक विद्यालय विभाग नगर की सार्वजनिक शिक्षणप्रणाली का है। इसमें प्रेस के विषयों—कम्पोजिंग, छपाई, प्लेट बनाना, फोटो-वेंग और जिल्दसाजी तथा साथ ही नियमित पढ़ाई की शिक्षा जाती है।

शिक्षार्थी-विभाग उन नौजवानों को पूरक क्षण देता है जो पहले से इस धंधे में हैं, और क्षित छात्र के पद पर पहुँचने का यत्न कर रहे यह विद्यालय न्यूयार्क नगर के शिक्षा बोर्ड की ख में चलता है। इसके सब अध्यापकों को काम की क्रियात्मक शिक्षा मिली हुई है, और से बहुत से उद्योग में नौकर रहते ही कुछ समय के लिए विद्यालय में काम हैं।

विद्यालय के सलाहकार मण्डलों में शिक्षा-ग छपाई-प्रेसों, मालिकों, और यूनियनों के निधि हैं। उद्योग इसे धन की सहायता, परामर्श आवश्यक उपकरण भी देता है।

न्यूयार्क मुद्रण विद्यालय की स्थापना लगभग ४५ साल कम्पोजिंग का धंधा सिखाने वाले विद्यालय के रूप में हुई थी। इन व इसका क्षेत्र और महत्व लगातार बढ़ता गया है और आज इसकी विधि, धंधे और पढ़ाई की शिक्षा तथा नौजवानों को क्रियात्मक प्रशि का आदर्श नमूना मानी जाती है। यह न केवल छ कला के बल्कि अन्य धंधों के विद्यालयों के लिए भी अनुकरणीय गया है।

* *

विद्यार्थियों को दुरंगी छपाई करने वाली मशीन की विधि समझाई जा रही है।
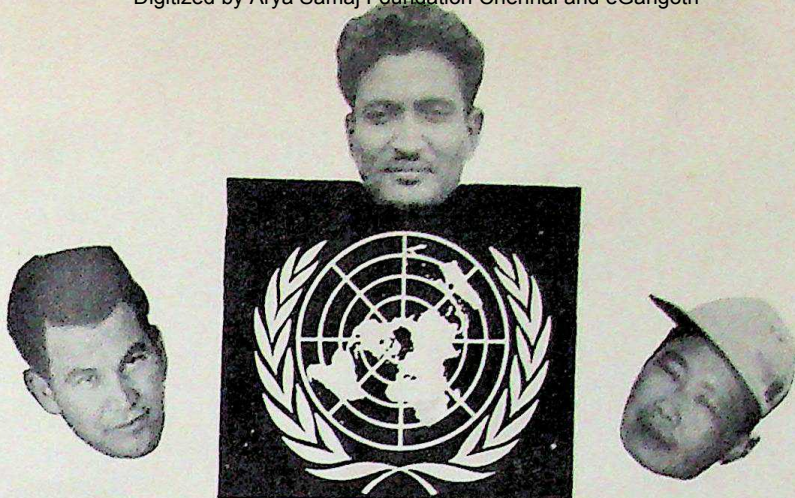
सब की भलाई के लिये

दूसरे महायुद्ध के बाद बहुत सी सरकारों ने गरीबी, बीमारी और अज्ञान के विरुद्ध व्यापक आन्दोलन शुरू किये हैं। इन कार्यक्रमों से इन देशों के लोगों के लिए अनाज का उत्पादन बढ़ रहा है, नए उद्योग शुरू हो रहे हैं, और शिक्षा एवं रोज़गार के नए अवसर पैदा हो रहे हैं।

इतनी लम्बी-चौड़ी आर्थिक और सामाजिक समस्याएं गैर-सरकारी सूत्रों की सहायता के बिना हल नहीं हो सकतीं। बहुत से देशों में प्रशिक्षित प्रशासकों, प्रबन्धकों, वैज्ञानिकों, टेक्नीशियनों और अन्य विशेषज्ञों की कमी है।

ऐसी सहायता पहुँचाने के लिए बहुत से कार्यक्रम बनाए गए हैं। उनमें से मुख्य हैं: संयुक्त राष्ट्र-संघ का प्राविधिक सहायता कार्यक्रम। इसमें संयुक्त राष्ट्रसंघ की सात विशिष्ट संस्थाएं हिस्सा ले रही हैं—'अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-संगठन'; 'खाद्य एवं कृषि संगठन;' 'संयुक्त राष्ट्रीय शिक्षा-विज्ञान-संस्कृति संगठन (यूनेस्को)'; 'विश्व स्वास्थ्य संगठन'; 'अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन'; अन्तर्राष्ट्रीय टेली-कम्युनिकेशन्स यूनियन' और 'विश्व ऋतु-विज्ञान संगठन'।

इन संगठनों के कार्यकलाप को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक संस्था के द्वारा चलाया और सूत्रबद्ध किया जाता है, जिसका नाम 'प्राविधिक सहायता बोर्ड' है। इस बोर्ड में प्रत्येक संस्था का एक प्रतिनिधि है और इसके अध्यक्ष का कार्यालय न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्रसंघ के मुख्य कार्यालय में है। इस बोर्ड की सहायता के लिए वहीं रहने वाले ३३ प्रतिनिधि और संसार भर में फैले हुए ३५ क्षेत्रीय-कार्यालयों में दस संवाददाता हैं।

प्राविधिक सहायता के विस्तृत कार्यक्रम का खर्च एक "विशेष खाते" से किया जाता है, जिसमें सदस्य-राष्ट्र स्वेच्छा से प्रतिवर्ष धन देते हैं। प्रतिवर्ष 'प्राविधिक सहायता बोर्ड' सरकारों को एक पत्र भेजकर यह सूचना देता है कि वह उनके देशों में सहायता के लिए लगभग कितनी धन-राशि मिलने की आशा करता है। प्रत्येक सरकार से कहा जाता है कि वह एक निश्चित राशि के अन्दर, जो उस देश के लिए नियत कर दी जाती है, महत्व के क्रम से अपनी आवश्यकताओं की सूची पेश करे। यह सूची आ जाने पर बोर्ड इस पर विचार करता है, और इसे आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् की प्राविधिक सहायता समिति को मन्जूरी के लिये भेजता है, और उसके बाद अन्तिम स्वीकृति के लिये संयुक्त राष्ट्रीय महासभा को भेजी जाती है।

प्राविधिक सहायता के लिए की गई प्रार्थना विशेषज्ञों की सेवाओं के लिए, सहायता-वृत्ति और छात्र-वृत्तियों के लिये, या किसी देश की परिवहन प्रणाली, बिजली की सुविधाओं या खेती के सर्वेक्षण के लिए हो सकती है। सबसे अधिक मांग ऐसे

[शेष पृष्ठ २६ पर]

भारत : तराई क्षेत्र में एफ.ए.ग्रो. तथा डब्लू.एच.ग्रो. जमीन को मलेरिया से मुक्त करने ग्रौर खाद्य-उत्पादन बढ़ाने के लिए मिल कर काम कर रहे हैं । बुलडोज़रों द्वारा ज़मीन की सफाई
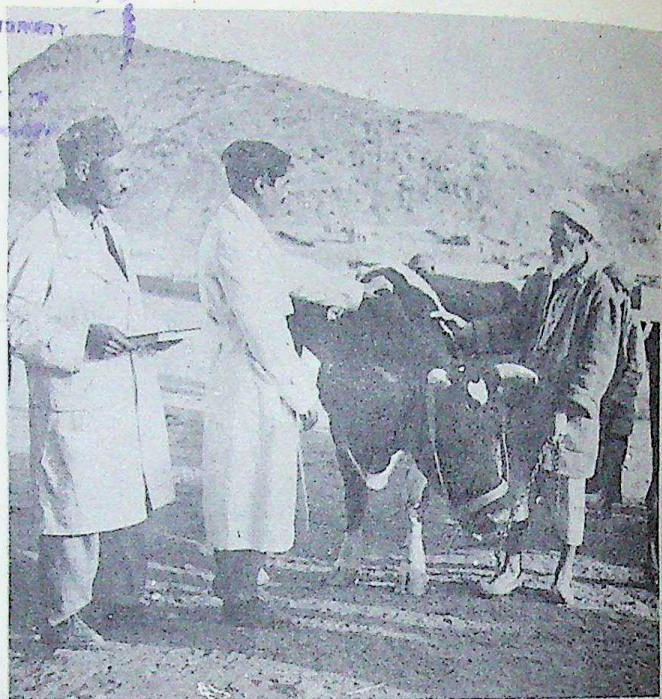
अफ़गानिस्तान : एफ.ए.ग्रो. तथा ग्रफ़गानिस्तान द्वारा मिलकर मालमारी रोग (रिण्डरपेस्ट) का नाश करने के लिए उक्त संगठन की ग्रोर से सारे देश में मवेशियों को टीके लगाये जा रहे हैं।
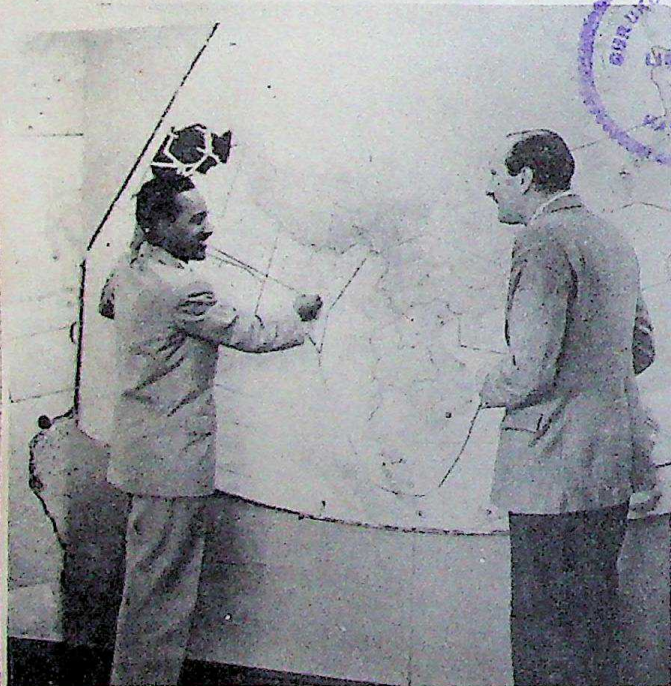
इंगलैण्ड : ग्राई.सी.ए.ग्रो. की छात्रवृत्ति से इथियोपिया के विमान-विशेषज्ञ ऊंचे प्रशिक्षण के लिए विदेश जा रहे हैं । 'एरो-नौटिकल इन्फौरमेशन सर्विस' में श्री बी० ग्रदीस (बाएं)
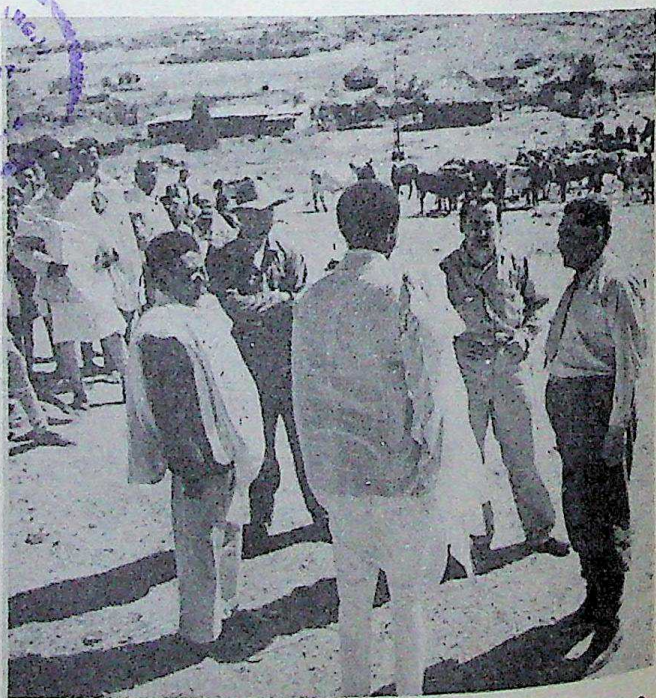
इथियोपिया : इथियोपिया में साल में दस लाख मवेशी मालमारी से मरजाते थे । किंतु एफ.ए.ग्रो. की सहायता से मवेशियों को टीके लगा देने से यह रोग बहुत काफी कम हो गया है।
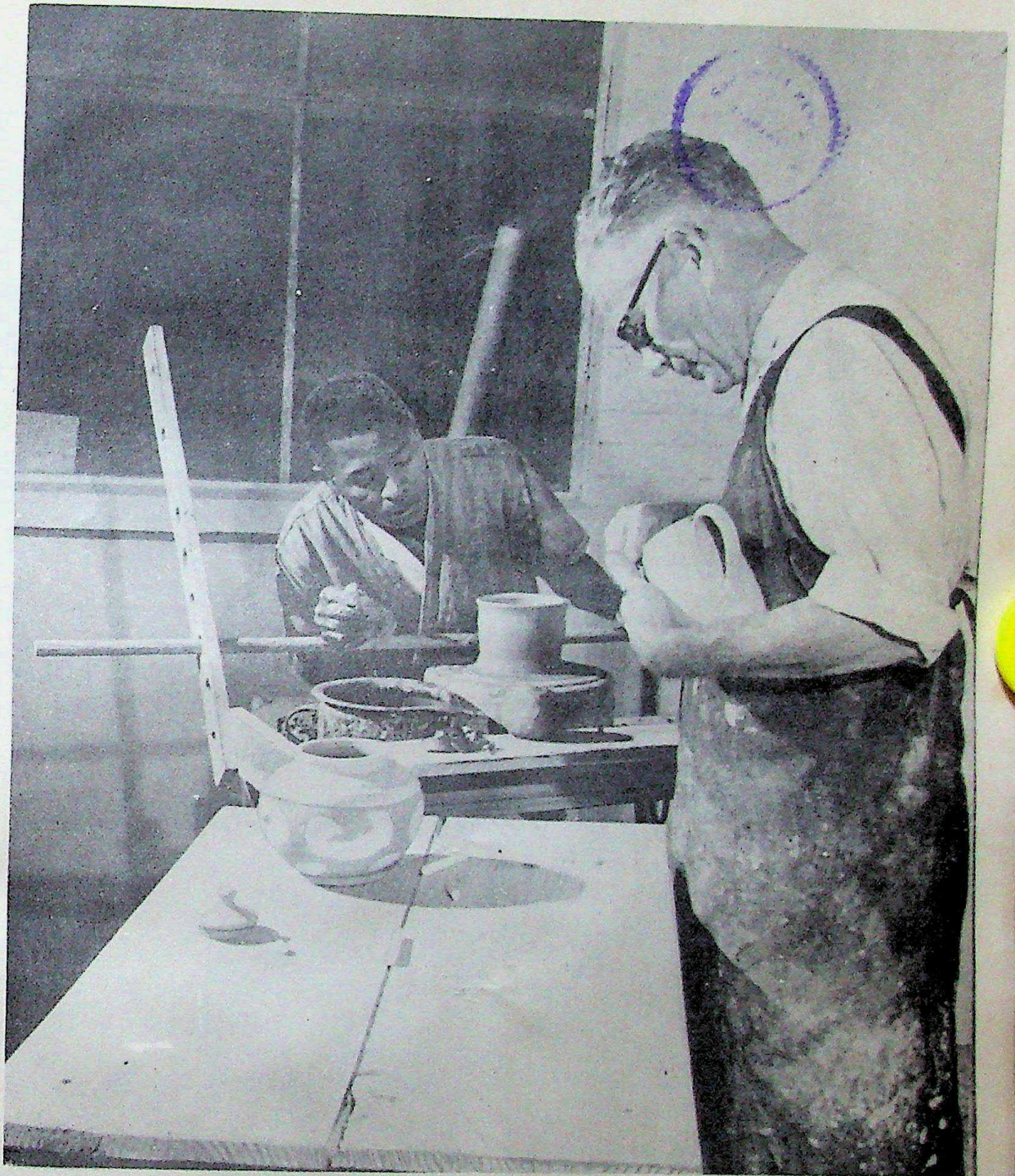
सं. रा. प्राविधिक सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत विशेष कुशलता प्राप्त लोगों को प्रशिक्षण-कार्यक्रम आरम्भ करने के लिए प्रार्थी देशों में भेजा जाता है। आज हज़ारों विशेषज्ञ अल्प विकसित क्षेत्रों में रहन-सहन का स्तर ऊंचा उठाने में सहायता देने के लिए कौशल सिखा रहे हैं। यहाँ एक विशेषज्ञ चीनी मिट्टी से दैनिक इस्तेमाल की वस्तुएं बनाने की शिक्षा दे रहा है।

संयुक्त राष्ट्र संघ में अमरीकी प्रतिनिधि, हेनरी कैबेट लॉज (दाएं) ने २६ जनवरी को संयुक्त राष्ट्रीय कोष के डाइरेक्टर, पॉल जी० हाफमैन (बीच में) को ५ लाख डालर का एक चेक भेंट किया, जो इस नए कोष में अमरीका का पहला योगदान है। इसमें से ८६० हज़ार डालर कलकत्ता के एक दस्तकारी प्रशिक्षण संस्थान को दी जाएगी।

विशेषज्ञों की होती है जो सरकार को अपने देश के कौशल और साधनों का विकास करने की योजनाओं को पूरा करने में सहायता दे सकें। विस्तृत कार्यक्रम के संचालन के पहले ६ वर्षों में लगभग ९० देशों और क्षेत्रों में ५०० से अधिक विशेषज्ञ भेजे गये।

इस कार्यक्रम की एक अपूर्व विशेषता यह है कि अधिक सम्पन्न राष्ट्रों के तथा अल्प-विकसित देशों के विशेषज्ञों के कौशलों का एक सम्मिलित कोष बना लिया जाता है। इससे यह सिद्धांत सामने आता है कि जिन देशों को सहायता मिलती है, वे भी अवसर बदले में सहायता देते हैं।

विकास-कोषों के कई ज़रिये उपलब्ध हैं—अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक ने, जो संयुक्त राष्ट्रसंघ से सम्बन्धित है, विविध देशों को ३५० करोड़ डालर से अधिक का कर्ज़ दिया है। अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम, जो प्राइवेट फर्मों की माँग पूरी करने के लिए १९५७ में बनाया गया था, और विकास-ऋण-कोष, जिसकी स्थापना अमरीकी सरकार ने हाल में ही की है, दीर्घ-कालीन आर्थिक विकास के लिये पूँजी की सहायता देते हैं।

यद्यपि यह विस्तृत कार्यक्रम फलदायक सिद्ध हुआ है, पर अभी इसके पास इतने साधन नहीं है कि वह सारे अल्प-विकसित देशों की प्राविधिक सहायता सम्बन्धी बहुत जरूरी आवश्यकताएं पूरी कर सके। इस समस्या को हल करने की दृष्टि से प्राविधिक सहायता बोर्ड ने १९५६ में यह प्रस्ताव रखा कि कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए अन्य साधन भी ढूंढ़े जाएं।

यह बात सोचकर संयुक्त राष्ट्रीय महासभा ने १९५७ में सर्वसम्मति से एक पृथक् कोष की स्थापना की, जिसमें सदस्य राष्ट्रों के स्वेच्छा से दिए गए चंदों से धन जमा होता है। १९५८ में संयुक्त राष्ट्रीय महासभा की आरम्भिक बैठकों में इस कोष विशेष के कार्यक्रम को अन्तिम मंजूरी मिली थी। इसका प्रबन्ध प्राविधिक सहायता के विस्तृत कार्यक्रम से अलग किया जाता है, पर अपने प्राविधिक सहायता के कामों में दोनों कार्यक्रम मिल कर चलेंगे।

छोटे रूप में शुरू होकर संयुक्त राष्ट्रसंघ का प्राविधिक सहायता कार्यक्रम बढ़ता जा रहा है। यह पहले ही बहुत कुछ सफलता पा चुका है। आने वाले वर्षों में इसकी दीर्घकालीन परियोजनाएं अल्प-विकसित देशों में रहन-सहन का स्तर ऊंचा उठाती रहेंगी।

* * *

मुद्रक : तेज प्रेस, नया बाजार दिल्ली

भारत के तराई क्षेत्र में, जहां धरती को मलेरिया से मुक्त करने की एक बड़ी भारी परियोजना योजना चल रही है, ट्रैक्टर-मरम्मत केन्द्र है। पीछे की तरफ स्कैंडिनेविया के दो विशेषज्ञ हैं, जो भारतीय मिस्त्रियों को ट्रैक्टरों की सम्भाल की शिक्षा देते हैं।

रजि० नं० डी-१०२४

तराई स्टेट फार्म में अनाज की छँटाई